मुख्य मंत्री

चाणक्य सेन

मुख्य मंत्री

प्रो० समर रंजन सेन

को सादर

सुरक्षा मंत्री

एक

कोशल मन्त्रिमण्डल टूटकर ही रहा।

तीन दिन पहले ही यह दुर्घटना हिन्दुस्तान के हर अखबार मे बड़े जोर-शोर स छपी थी। ऐसा एक भी अखबार न होगा, जिसके सम्पादक ने इस विषय पर गम्भीर विचार न प्रकट किये हो। मन्त्रिमण्डल जब अन्तिम साँसें गिन रहा था, तब राज्य की राजधानी देश के बड़े-बड़े नेताओ के पधारने से एकाएक गर्मी के मौसम के रेगिस्तान की तरह तपने लगी थी। कांग्रेस अध्यक्ष स्वय उपस्थित होकर दम तोडते मरीज के शरीर मे व्यर्थ ही प्राण-सचार की कोशिश कर चुके थे। दिल्ली मे नेताओ की आवश्यक बैठक हुई। इस राज्य के विभिन्न दल के नेताओं मे से कई एक दिल्ली गये। प्रधानमन्त्री के सीधे सीधे हस्तक्षेप न करने के कारण चारो तरफ तरह-तरह की कल्पना की तेज हवाएँ चल रही थी। वे अपनी बारी मे तीखी आलोचना की लहरें पैदा कर रही थी।

काफी दिनो स इस राज्य के राजनीतिक जीवन म एक अनोखी हलचल मची हुई थी। स्वतन्त्रता-सग्राम के समय भी इस हलचल का एक छोटा-सा अश तक यहाँ नही दिखायी दिया था। कांग्रेस और विरोधी दल मिलाकर विधानसभा म कुल १२६ सदस्य हैं। वे बार-बार इस शहर म आकर सवेर से रात के तीसरे पहर तक आलोचना, तर्क वितर्क और लेन-देन मे उलझे रहते हैं। मजे की बात है कि उन लोगो के गुप्त सलाह मशविरा का अधिकाश अखबारो में छपता रहता है। कांग्रेस के विभिन्न गुटों के प्रान्तीय स्तर से लेकर जिला स्तर तक के नेता अभूतपूर्व कार्य-तत्परता का अनोखा नमूना पेश कर रहे हैं। प्राय निर्जीव-सा इस प्रान्त म किसी जादू स अजीब ढग की उत्तेजना फैल गयी है।

काफी कोशिशो के बावजूद मन्त्रिमण्डल बचाया नही जा सका।

आखिरकार मुख्यमन्त्री श्री के० डी० कौशल न एक मनहूस दिन वे वसे ही मनहूस दोपहर म राज्यपाल से सक्षिप्त सी बातचीत के बाद अपने मन्त्रिमण्डल का त्याग पत्र दे दिया और जसा कि हमेशा होता है, राज्यपाल के अनुरोध पर नया मन्त्रिमण्डल बनने तक वह कायभार सभाले रहने पर तैयार हो गये।

इधर नया मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए जोड तोड जारी है। कल नये नेता का चुनाव होना है।

मैं जिस प्रा त की कहानी सुना रहा हूँ, उसका नाम है उदयाचल। आबादी का ६० प्रतिशत हिन्दी भाषी है ३० प्रतिशत महाराष्ट्रीय हैं और शेष १० प्रतिशत मे और सब लोग शामिल हैं। हिन्दी भाषियो की सख्या अधिक है, इसीलिए राज्य की बागडोर भी उन्ही के हाथो मे है—यानी उनके नेताओ के हाथ मे। मराठी भाषी अल्पसख्यक हैं फिर भी महत्त्वपूण हैं, राजनीतिक शक्ति के बटवारे मे उचित हिस्से स भी कुछ ज्यादा चाहते हैं और वह उन्ह मिला भी है। बाकी लोगो मे स राजधानी रतनपुर मे बगालियों की सख्या भी बहुत कम नही है। डाक्टरी वकालत, मास्टरी आदि क्षेत्रो मे उनकी प्रतिष्ठा पुरानी और पुश्तनी है। तमिलनाडु के कई हजार निवासी सरकारी नौकर हैं। कुछ गुजराती व्यापार करत हैं, यानी प्रा त के कुल उद्योग धन्धे अथात तीन कपडा मिलो के मालिक वे ही लोग हैं। कुछ सरदार टक्सी और बस चलाते हैं सदर बाजार म व्यापार करते हैं थोडे दिनो से ठेकेदारी के उपजाऊ क्षेत्र म भी उनकी तूती बोलने लगी है।

नाम जरूर उदयाचल है, पर प्रान्त कुछ पिछडा हुआ है। क्षेत्रफल के हिसाब से यह प्रा त भारत के तीन सबसे बडे प्रा तो मे है। अनाज की कमी तो है ही नही, बल्कि कुछ ज्यादा ही पैदा होता है पर उद्योग धन्धा कुछ खास नही है और जो है भी, वह दूसरे प्रा त के लोगो के क जे मे है। असल मे बहुतेरो का कहना है कि उदयाचल की सारी सम्पत्ति और उसके साथ साथ शासन की बागडोर जिन लोगों के हाथ म है, वे करीब करीब सभी बाहरी हैं। हिन्दी-भाषी जनसाधारण यही के निवासी है परन्तु सफेदपोश लोग कई पीढी पहले उत्तर प्रदेश म आकर बस हैं फिर भी वे यहाँ की जनता के साथ एक नही हो पाये या होना ही नही चाहा। मराठी भाषी समाज का अधिकाश गाड उप जाति का ही परिष्कृत सस्करण है पर जिनके हाथो मे शक्ति है उनम से कई महाराष्ट्र से आये हुए ब्राह्मण हैं। हाईकोट के जज, बडे डाक्टर, अच्छे अध्यापको में बहुत से बगाली हैं वे भी उदयाचली नाम स परिचित नही होना चाहते। फलस्वरूप उदयाचल ठीक किसी का भी प्रदेश नही है। सिफ उस जनता का है, जो न तो खुद शासन करती है, न किसी से कराती है।

इसी उदयाचल म मुख्यमन्त्री के० डी० कौशल निष्कण्टक शासन करते रहे और छ साल बाद अब उनके मन्त्रिमण्डल का पतन हो गया।

कृष्ण द्वैपायन कौशल।

केवल यही प्रान्त नही भारत के सभी प्रान्तो के लोग उन्ह पहचानते हैं, नाम से, प्रतिष्ठा से और अखबारो मे उजागर उनके खिल खिले चेहरे से।

खिला हुआ ही कहना ठीक होगा, क्योकि ऐसा गठा हुआ शरीर बहुत कम लोगो का होता है। गोरा चिट्टा रग, छ फुट की सीधी लम्बाई, रोमहीन तेजस्वी शरीर।

सूरत शक्ल मे सबसे पहले नाक पर ही नजर पडती है—माथे से एकाएक निकलकर किसी चीज की परवाह किये बिना सीधे होठो तक आकर थोडी सी नुकीली होकर झुक गयी है। कृष्ण द्वैपायन की सिर्फ नाक देखने से ही समझ मे आ जाता है कि उनकी प्रतिष्ठा क्या है और क्यो बदनामी है। नाक के दोनो ओर कोटर मे धँसी हुई आखें। माथा चौडा है, पर कुछ पिचका हुआ। गाल पर हैं दो आडी रेखाएँ। इन सबने मिलकर मानो उनकी नाक को और तीखी बना दिया है। कृष्ण द्वैपायन के चेहरे पर से अगर नाक का महत्त्व हटा दिया जाये तो और कुछ भी बाकी नही रह जाता। लोग कहते हैं—के० डी० कौशल को कोई नही समझ सकता। उनकी नाक की ओट मे ही सबकुछ छिपा रहता है।

उदयाचल मे के० डी० कौशल कडे आदमी के रूप मे मशहूर हैं। आम धारणा यही है कि शासन नीति को स्नातकोत्तर मर्यादा देकर कामयाब बनाने के लिए कम से कम एक कडे आदमी की जरूरत होती है जैसे कि सरदार पटेल को नयी दिल्ली का कडा आदमी कहते हैं। वास्तव मे इसका ठीक मतलब क्या है यह समझने की कोई खास विधि नही है। यदि कहा जाये कि कडे प्रशासक जनमत की परवाह नही करते, जनता जो चाहती है उसका बिलकुल उलटा करने म वे हिचकिचाते नही तो कृष्ण द्वैपायन को कडा प्रशासक नही कहा जा सकता क्योकि जिनके वोटो पर वह राज्य करते है, उन्ह खुश रखने के लिए उनकी कोशिशें कभी मद्धिम नही पडता।

और अगर कहा जाये कि कडा आदमी दुस्साहसी होता है, वह किसी भी तरह विरोधी दल से लोहा लेने म हिचकता नही, जोश मे आयी हुई जनता पर पुलिस को गोली चलाने का हुक्म देते समय उसकी आवाज एक बार भी भर्राती नहीं—तो भी के० डी० कौशल के लिए इस विशेषण का प्रयोग गलत होगा। यह बात सबको मालूम है कि हालत जब तक बिल्कुल कानू से बाहर न हो जाये, तब तक विरोधी दल से आमने सामने टक्कर की वह जरूरत ही नही समझते। हाँ, यह बात बहुतो को नही मालूम है कि उन्होने पुलिस को गोली चलाने का हुक्म खुद एक बार भी नही दिया है।

फिर भी के० डी० कौशल उदयाचल के राजनीतिक क्षेत्र मे बडे आदमी के नाम से ही परिचित हैं।

और इसके लिए उन्हे कुछ वयक्तिक शिकायत भी है, क्योंकि कृष्ण द्वैपायन कौशल कवि हैं, हिन्दी काव्य साहित्य म उनकी रचना 'कृष्णलीला' की वडी धाक है। राजनीति से अवकाश मिलने पर यदि किसी सामयिक उलझन म न फँस जायें, तो मनपसन्द और विश्वस्त साथी मिलने पर कृष्ण द्वपायन अब भी कभी कभी कवि बन जात हैं, जीवन के गूढ रहस्य की चचा करने मे मशगूल हो जात ह और तभी बडे अफसोस के साथ कहते हैं—'सभी मुझे बडा आदमी कहत हैं, पर मेरा मन कितना कोमल है यह किसी को नही मालूम। यदि पेड का एक पत्ता भी खडकता है तो मरा दिल धडकता है।'

और थोडा सा रुककर एक म्लान मुस्कान के साथ आगे जोड दत हैं—जब मैं राजनीति नही करता होता उस समय मैं कवि बन जाता हूँ।

रतनपुर पुराना शहर है भारत की बहुत पुरानी सभ्यता का प्रतीक। मराठो के साथ मुगलो की लडाई इसी शहर म हुई थी पुराना मराठा किला अभी तक उस लडाई के साक्षी के रूप म खडा है। उसके सालों बाद इसी किल स एक और मराठा राजा ने अग्रेजो के विरुद्ध शस्त्र उठाया था। वह लडाई भी इसी किले के दाहिनी ओर के बडे मदान म हुई थी। बाद मे सारे मदान और किले को घेरकर अग्रेज सरकार ने एक विशाल छावनी बनायी थी। उसी छावनी का नाम सिंहगढ है।

सिंहगढ से थोडी ही दूर पर अग्रेजा की बनायी हुई लेजिस्लेटिव असम्बली का भवन है उसी का नाम अब विधानसभा है। आलीशान महल है। चारो ओर विस्तत बाग हैं। जिस राजपथ पर विधानसभा भवन है उसके दोनो ओर ट्रफिक पुलिस खडी रहती है। उन्ह पार करके आओ तो गेट के सामने दो सशस्त्र पुलिस सिपाहियो से सामना होगा। पास जाचने के बाद वे रास्ता दे दें तभी साधारण आदमी भीतर कदम रख सकता है।

राजपथ का नाम भीमराव रोड है। जो मराठा राजा अग्रेजा के साथ लडे थे यह उन्ही का नाम है। अग्रेजो ने इस रास्ते का नाम वाटसन रोड रखा था। कनल वाटसन के हाथो भीमराव हार गये थे। मुख्यमन्त्री बनने के बाद कृष्ण द्वैपायन कौशल ने रास्त का नाम बदल दिया। इस पर बडा वाहवाही हुई। नया नाम देत समय एक सुन्दर समारोह भी किया गया था। अपन भाषण मे कृष्ण द्वपायन ने कहा—'यह नाम बदलना कोई मामूली बात नही है। पराधीन भारतवष का रूप बदलकर स्वतन्त्र भारत भूमिष्ठ हुआ है। इतिहास कुछ भी कहे भीमराव कभी पराजित नही हुए थे। वह कभी पराजित

हो ही नही सकते। हमारा मन हमेशा यही कहता रहा कि वह विजयी रहे।"
आमन्त्रित जनता की तालियो की गडगडाहट से सभा गूज उठी थी।

मन्त्रिमण्डल का पतन हो गया, पर कृष्ण द्वपायन ने भी हार नही मानी है, हार मान लेने की कोई इच्छा भी नही है। वह यह मानते हैं कि जिस पटुता से उन्होने कई गुटो म बिखरे कांग्रेस दल का छ साल से नेतत्व किया है, न जान कसे विधाता के किसी अन्यायपूण विधान से वही कौशल आज सामयिक रूप से असफल हो गया है। बस! कृष्ण द्वपायन उदयाचल की राजनीति की नस नस को पहचानते हैं। ऐसा एक भी गुट नेता नही है, जिसका पूरा हुलिया उनके पास न हो। एक तो बहुत लम्बे अर्से से वह इस प्रा त की राजनीति चला रहे हैं और इसी मे उनके बाल पके, हाथ पके और एक दिन उनके तरुण मन का अधखिला उष्ण आदशवाद धीरे धीरे शासन शिल्प म परिपक्व हो गया। इसके अलावा, मुख्यमन्त्री बनने के बाद से उनके अपने गुप्तचर हर गुट के नेता या उपनेता, नेता या नेता-पद के उम्मीदवारो पर कडी निगरानी रख रहे हैं और उनकी रिपोट कौशलजी को देते रहते हैं। कृष्ण द्वपायन को अच्छी तरह मालूम है कि दूसरे लोग कितने भी उच्चाकाक्षी हो और हाईकमान के कितने भी पिछलगुए हो, पर दल को एक साथ बाँधकर शासन सूत्र चलाने की शक्ति और किसी म नही है।

यह सिफ एक ही आदमी कर सकता है और उसका नाम है—कृष्ण द्वैपायन कौशल।

पर नही। एक और आदमी भी है। अधिक न डरते हुए भी कम्पित हृदय से कृष्ण द्वपायन उसके बारे म सोचते हैं। पिछले छ सालो म उदयाचल की राजनीति ने जो भयावक रूप ले लिया है इसमे वह आदमी अपने को नेता पद पर प्रतिष्ठित नही कर सकेगा यह विश्वास उनके मन मे खूब जमकर बैठ गया है। आदशवाद अच्छी चीज है, पर केवल आदशवाद के सहारे न तो शासन काय चलता है और न दलगत राजनीति के पहिये। कृष्ण द्वपायन फिर से अपन नतत्व मे नया मन्त्रिमण्डल बनाने के देशभक्तिमय प्रयत्नो म दिन रात निरत रहते हुए अपने इस एकमात्र प्रतिपक्षी के विरोध की कल्पना करते हैं। यह विरोध अभी तक प्रकट नही हुआ है और आशा है कि होगा भी नही। परन्तु यदि हुआ, तो कसकर लोहा लिया जायेगा।

विधानसभा भवन से होते हुए भीमराव रोड आगे दाहिनी और सीधे जाकर आध मील दूर जवाहरलाल एवेन्यू से मिल गया है। जवाहरलाल एवेन्यू भी नया नाम है। अंग्रेजो के जमाने मे इस सडक का नाम कजन रोड था।

जवाहरलाल एवेन्यू का एक ग्रौर भी नाम है—के० डी० एवेन्यू। इसी रास्ते पर मुख्यमन्त्री कृष्ण द्वैपायन का सरकारी निवास है।

बहुत बडा मकान है। पूरे छ एकड जमीन दीवार से घिरी हुई है। बडे बडे पेडो की छाया मे फैला शान्त सौन्दर्य। ग्राम मौलसिरी, जामुन, युकेलिप्टस, अर्जुन, नीम, गुलमोहर। चारो ग्रोर हरे ग्रौर समतल बडे बडे लान। बीच मे दुमजिला मकान, उसके साथ मुख्यमन्त्री का दफ्तर जो सिर्फ चार साल पहले बना है। कृष्ण द्वैपायन रोज दो घण्टे के लिए सेक्रेटेरियट मे जाते हैं, बाकी समय घर म यानी ग्रपने दफ्तर म बैठकर काम करते हैं।

दफ्तर का यह हिस्सा उन्होंने ग्रपनी सुविधा के ग्रनुसार बनवाया है। निचले हिस्से म सरकारी ग्रादमी काम करते हैं। प्रान्तीय शासन के बारह विभागो म से चार विभागो के पोर्टफोलियो कृष्ण द्वैपायन के ग्रपने हाथो म हैं। इसलिए बहुत छाँट छाँटकर बुलाने पर भी घर के दफ्तर म जो लोग काम करने ग्राते हैं उनकी सख्या कुछ कम नही है। दुमजिले पर सीढियो से ग्रानेवालो के बैठने के लिए प्रतीक्षालय है—यूरोपीय ढग से सजाया हुग्रा कमरा। दीवार पर देश के नेताग्रो की तस्वीरें जगमगा रही हैं। इस कमरे के साथ छोटे छोटे तीन ग्रौर कमरे हैं उनम मुख्यमन्त्री का निजी स्टाफ बैठा करता है। फिर निजी सचिव कामताप्रसाद का कमरा है। थोडा दक्षिण की ग्रोर जाने पर मुख्य सचिव का कमरा है। उसके बाद मुख्यमन्त्री का ग्रपना कमरा।

कमरा विशाल है पर एकदम भारतीय सस्कृति के ग्रनुसार सजा हुग्रा। फर्श पर मिर्जापुर की दरी जिस पर दूध की तरह सफेद चद्दर बिछी हुई है। चद्दर पर बडा-सा मिर्जापुरी कालीन बिछा हुग्रा है ग्रौर मुख्यमन्त्री के लिए बीचो बीच एक पर्शियन कारपेट। तीन गाव तकिये बडे सुन्दर ढग से सजाकर रखे हुए हैं। मुख्यमन्त्री सीधे उसी कारपेट पर बैठते हैं। सामने चौकी पर उनके कागज ग्रौर फाइलें रखी हैं। बीच बीच म वह तकिये की टेक लगा लेते हैं। बातचीत के समय जब तब वह ग्रपने को तकिये के सहारे बिल्कुल ढीला छोड देते हैं ग्रौर मिलनेवाले से कहते हैं—ग्राराम से बैठिए। कुर्सी पर बैठकर लोगो को क्या ग्राराम मिलता है, यह मेरी समझ म नही ग्राता। बचपन से मेरी ग्रादत है सीधे जमीन पर बैठने की। ग्रब बूढा हो रहा हूँ कभी कभार शरीर थोडा ग्राराम माँगता है।

कृष्ण द्वैपायन के दफ्तर के कमरे के साथ ही लगा हुग्रा गुसलखाना है। दूसरी ग्रोर एक ग्रौर कमरा है—विश्राम-कक्ष। पलग पर बिस्तर बिछा रहता हैं। दो ग्रारामकुर्सिया मेज ग्रौर शेल्फ। लकडी की छोटी सी ग्रलमारी म कुछ कपडे। रेफ्रिजेरेटर मे खाने पीने के लिए कुछ फल ग्रौर पेय पदार्थ।

ऐसी भी कई रातें होती हैं जब कृष्ण द्वैपायन घर नही लौट पाते, तब वह

इसी विश्राम कक्ष मे रात बिताते हैं।

दफ्तर के दूसरी ओर मन्त्रिमण्डल का बैठक घर है। यह कमरा भी बहुत बडा और ढग से सजाया हुआ है। महगनी लकडी की बडी सी गोल मेज, जिसके चारो ओर मन्त्रियो के लिए मोटे डनलपपिलो से मढी कुर्सिया, मेज के बीचोबीच बडा सा चीनी गुलदान। माली रोज उसमे फूल रख जाता है। हर गुरुवार को इसी कमरे म मन्त्रिमण्डल की बैठक होती है, इसके अलावा कभी कभी जरूरी बैठक भी बुलायी जाती है।

जिस दिन इस कहानी की शुरुआत और अन्त है, उस दिन भी गुरुवार था। दिन के ग्यारह बजे मन्त्रिमण्डल की बठक होगी।

कृष्ण द्वपायन अलस्सुबह चार बजे बिस्तर से उठ जाते हैं। आज भी वैसा ही हुआ है। लॉन पर पूरे घण्टे भर व लम्बे लम्बे डगो से चहलकदमी करते रहे, और साथ ही साथ राजनीतिक खेल का एक रोजमर्रावाला नक्शा मन ही मन तैयार करते जा रहे थे। आज सवेरे टहलते समय मन्त्रिमण्डल की होनेवाली बैठक ही उन्ह बार बार याद आ रही थी। इस बठक का महत्त्व कितना हो सकता है, कृष्ण द्वपायन को यह अच्छी तरह मालूम है। मन्त्रिमण्डल म तीन बडे गुट हैं उनमे से एक उनका अपना है। बाकी दो गुटो के एकाएक उनके विरोध मे मिल जाने से उन्ह इस्तीफा देने पर मजबूर होना पडा। अभी तक विरोधी गुटो के इस अचानक मेल को वह एकदम नही तोड सके पर हर कोशिश जारी है। केवल इतना ही नही, अन्तिम निणय के बारे म वह अब आशावादी भी बन गये हैं। मन्त्रिमण्डल की बैठक मे आज काफी हद तक यह मालूम हो जायेगा कि उनकी कोशिश किस हद तक सफल हुई है, और आग भी सम्भावनाएँ कितनी हैं। बैठक से पहले यानी आठ बजे स एक के बाद एक कई लोग उनसे भेंट करने आयेंगे। वे सबके-सब राजनीति के पक्के खिलाडी हैं। बारह कैबिनेट मिनिस्टरों म से कुल सात जनो के साथ कृष्ण द्वपायन पहले से ही बात कर लेंगे। सवेरे घण्टे भर टहलते समय इस होनेवाले सघष के शतरज का नक्शा उनके दिमाग मे एकदम तैयार हो गया।

सवेरे टहलने के बाद घर लौटकर कृष्ण द्वपायन एक गिलास सन्तर का रस लेते हैं। फिर स्नान करने के बाद पूजा के कमरे मे ही उन्ह जिनके साथ दिन-भर म सबसे अधिक समय तक देखा जाता है, वह ईश्वर अवश्य नहीं हैं हैं एक बहुत खूबसूरत वृद्धा, जिनके बाल सफेद होकर करीब-करीब चेहरे के रग के साथ मिल चुके हैं जिनके जीण शरीर पर तसर की लाल किनारी की साडी होती है। बड़ी-बड़ी लम्बी आँखों मे उदास, शान्त व्यथा भरी रहती है, जो बातें कम करती हैं, परन्तु जिनकी दृष्टि इतनी अथपूण होती है कि कृष्ण द्वैपायन उसे

ज्यादा देर सहन नही कर पाते। हरिहर की काले पत्थर की मूर्ति के सामने आँखें मूँदकर आधा घण्टा ध्यान करते समय उनके मानस-पटल पर जस शासन सम्बन्धी समस्याएँ जबदस्ती फल जाती हैं, उसी तरह आँखें मूँदकर पास बैठी वह महिला भी बार बार छा जाती है।

फिर भी कृष्ण द्वैपायन निष्ठा के साथ पूजा करते हैं। उम्र के साथ-साथ अधिकाश हिन्दुओं के मन म धम भावना जाग ही उठती है। पर कृष्ण द्वपायन का भजन पूजन उससे कहीं ज्यादा है। कारण यह है कि वह धम निष्ठ माता पिता के पुत्र हैं। उन्नीसवी सदी के अन्त मे पदा हुए हैं इसीलिए धम कम के प्रति स्वाभाविक प्रेम है। इसके अलावा भारत म धम के साथ राजनीति का जो घनिष्ठ सम्बन्ध है, उसे कृष्ण द्वैपायन अच्छी तरह जानते और मानते भी हैं। जो राजनीतिक नेता धार्मिक नही है यानी पूजा नही करता, देवता ब्राह्मण के प्रति श्रद्धा नही प्रकट करता मन्दिर स्थापना म रुचि नहीं लेता कभी-कभार बाहरी दिखावे से माथे पर तिलक आदि नहीं लगाता साधु सन्तो के साथ समय नहीं काटता और अपने भाषणो मे गीता महाभारत और रामायण आदि के श्लोकों की आवृत्ति नही कर सकता उसके लिए धमप्राण भारतवष म शासन करना मुश्किल है। मुख्यमन्त्री बन जाने के बाद कृष्ण द्वपायन कौशल यह बात और भी अच्छी तरह समझ गये हैं कि धम का प्रवाह देशवासियो के मन मे कितना गहरा और कितना व्यापक है। इस प्रभाव का जो इस्तेमाल न कर सके, वह व्यथ ही राजनीतिक नेता बनने का स्वप्न देखता है। इसीलिए कृष्ण द्वैपायन रोज घण्टा भर पूजा के कमरे मे बिताते हैं। गोर माथे पर चन्दन तिलक शरीर पर पवित्र रेशमी धोती गर्मी के मौसम म नग्न शरीर और सर्दी में केवल एक रेशमी चादर—पूजा के बाद वह बहुत सुन्दर दिखते हैं।

इसी वेश भूषा म कभी कभी वह दो चार जना स मिल भी लेते हैं। आगन्तुक भक्त निर्दिष्ट समय पर आ जाते हैं, तो चपरासी उन्हे बठक म बैठाकर कहता है—पण्डितजी पूजा कर रहे हैं, पूजा के बाद भेंट होगी।

कृष्ण द्वपायन पूजा के कमरे से सीध बठक मे आते हैं। एक सौम्य मुस्कान उनके चेहरे के हर हिस्से से फूट पडती है। उस समय उनकी नाक का जबदस्त प्रभाव मानो कुछ मन्द पड जाता है।

मिलनेवाले विस्मित होकर उन्ह देखते रह जाते हैं। ये क्या वही कृष्ण द्वैपायन हैं, जिनके डर से बाघ और बकरी एक ही घाट पर पानी पीते हैं और हजारों आदमी जिनकी बदनामी करते रहते हैं ?

कृष्ण द्वपायन बहुत ऊँचे, कुछ महान् भी और बहुत हद तक रहस्यमय दिखने लगते हैं।

आज पूजा के आसन पर कृष्ण द्वैपायन दत्तचित्त होकर नहीं बैठ पाये, केवल इसलिए नहीं कि बहुत दिनों से जानी-पहचानी फिर भी अनजान उस महिला का चेहरा आज भी उन्हें बार बार चंचल कर रहा था, बल्कि आज वह अधिक विचलित इसलिए थे कि दिन भर के संघर्ष और संकट की बातें उनके दिमाग से उतरी ही नहीं। हरिहर के सामने वह अपनी कमजोरी और त्रुटियों के लिए क्षमा माँगते रहे और साथ साथ लड़ाई जीतने का आशीर्वाद भी।

पूजा समाप्त करके प्रणाम करने के बाद वह उठ ही रहे थे कि आज की पहली घटना हुई।

नारी-कण्ठ से आवाज आयी—"तुमसे कुछ कहना है, कब समय मिलेगा ?"

पल भर के लिए कृष्ण द्वैपायन आश्चर्यचकित से खड़े रह गये, फिर बोले, "आज तो बहुत काम है।

"रहने दो। दोपहर में घर आकर खाना, फिर बातें भी होंगी।"

विस्मय से कृष्ण द्वैपायन अवाक् रह गये। आज तीन साल हो गये, यह जीर्ण शीर्ण महिला इतना जोर देकर एक बार भी नहीं बोली। कृष्ण द्वैपायन समझ गये कि इस आदेश की उपेक्षा नहीं की जा सकेगी, पर आसानी से मानते भी कैसे! बोले, "कोशिश करूँगा, समय बहुत कम है।"

पूजा घर से निकलकर कृष्ण द्वैपायन ने एक बार चारों ओर देखा। माघ महीने की नुकप्रात का एक सवेरा। कुछ-कुछ सर्दी अभी बाकी है वृद्धावस्था की लजीली कामना की तरह द्विधाग्रस्त और गोपनीय जैसी। युकलिप्टस के पत्ते झरने लगे हैं। पेड़ों के तने से छाल उतरनी शुरू हो गयी है। सुरसुराती हवा ने मानो सुबह को और भी मोहक और स्निग्ध बना दिया है। आकाश के चेहरे पर रंग चढ़ आया है। जवाहर एवेन्यू के जिस हिस्से में भीमराव रोड आकर मिला है कृष्ण द्वैपायन की नजर वहाँ तक दौड़ गयी। काले रंग की एक मोटर आ रही थी।

कृष्ण द्वैपायन इसी गाड़ी का तो इंतजार कर रहे थे। गाड़ी फाटक के अन्दर आयी। खद्दर की धोती कुर्ता पहने अधेड़ उम्र के एक नाटे से सज्जन गाड़ी से उतरे। सिर गंजा, पर माथे पर एकाएक बिना जरूरत के ललौंछ बालों का एक गुच्छा। शरीर छोटा है तो क्या, उनके चेहरे पर का सब कुछ बड़ा है और कुछ ज्यादा ही। माथा ज्यादा चौड़ा। आँखें बहुत बड़ी। नाक भी मोटी। बहुत भरे हुए गाल। ठुड्डी बहुत ही दबी हुई, होंठ मोटे, दाँत तम्बाकू के सेवन से बहुत ही काले और बदरंग। चेहरे पर की हर चीज मात्रा से अधिक होने के कारण हर वक्त एक असाधारण काय-तत्परता दिखायी देती है। ऐसा लगता है मानो वह बहुत ज्यादा देख सकते हैं, ज्यादा समझ सकते हैं और ज्यादा जान सकते हैं, उन्हें गंध अधिक मिलती है और वह अनुभव भी अधिक करते हैं।

ग्रामने सामने बैठकर बातें करने म जाने कैसी हिचक सी होती है।

गाडी रास्ते म देखते ही कृष्ण द्वपायन पूजा के कमरे मे लौट गये थे ग्रौर ग्रन्दर जात ही उन्होन उस महिला की ग्रोर देखा शायद यह सोचकर कि ग्रांखें मूंदे उस महिला के क्षीण चेहरे पर विद्रूप की एक तीखी रेखा जरूर दिखायी देगी।

गाडी स जो सज्जन उतरे, उनका नाम है सुदर्शन दुबे। चपरासी उन्हें सलाम करके स्वागत कर रहा था, तभी कृष्ण द्वैपायन पूजा के कमरे से फिर वाहर ग्राये। वह दशावतार स्तोत्र की ग्रावत्ति कर रहे थे—'केशवधतवामनरूप जय जगदीश हरे।'

कृष्ण द्वपायन ने सुदशन दुबे को ग्रालिगन बद्ध कर लिया।

'ग्राइए ग्राइए। कृष्ण पूजा के बाद ही सुदशन दर्शन हो गया ग्राज दिन ग्रच्छा बीतेगा।'

हँसत हुए सुदर्शन दुबे ने कहा, माफ कीजिएगा कुछ देर हो गयी। देखा कि ग्राप मरी प्रतीक्षा कर रहे थ।

कृष्ण द्वपायन मन ही मन चिढ गये, यानी पहली चाल म ही मात खा गये। इस शरस की ग्रांखें बहुत ज्यादा दखती हैं।

हँसत हुए जवाब दिया कुछ भी दर नहा हुई। ग्राज काम बहुत ग्रधिक है इसीलिए पूजा जल्दी खत्म कर देनी पडी।

दोनो जाकर कृष्ण द्वपायन के पूणत निजी मन्त्रणाकक्ष म बठ गय। इस कमर मे बहुत थाडे लोग ही ग्रा सकते हैं।

सुदर्शन दुबे ही पहल बाले 'ग्रापके साथ बहुत दिनो स सम्बन्ध है पर पूजा के बाद इस वेश मे मैंने ग्रापको ग्राज पहली बार दखा है।'

कृष्ण द्वपायन हसकर बोले ग्राप निराश ग्रवश्य नही हुए होगे।

'निराश होने की क्या बात है ? हम लोग ग्रापस कभी पुजारी ब्राह्मण रूप की ग्राशा नही करत थे।

'मेरे दादा पुजारी ब्राह्मण ही थ।'

'मेर दादा भी ग्रवश्य उनसे ग्रधिक या कुछ कम नही थे।

'ग्रवश्य कम नही थे। कहिए, क्या लेंगे ? चाय तो जरूर लेंगे न ?'

'चाय पीकर ग्राया हूँ। ग्राइए, काम की बातें हो। ग्राज ग्रापको बहुत काम है।

बात सही है। कहिए।

ग्राप क्या सुनना चाहत हैं ?'

'कहेंगे तो ग्राप ही।

कहूँगा ग्रौर उम्मीद करता हूँ कि ग्राप मुझे निराश नही करेंगे।'

"कहिए, जहा तक हो सके, दुबजी, मैं आपस मित्रता बनाये रखना चाहूँगा।"

"हरिशकर त्रिपाठी गृह विभाग माग रह हैं।

"माधव देशपाण्डे ?"

"वित्त म त्रालय।'

"महेन्द्र वाजपेयी ?"

'वाणिज्य और उद्योग।'

'प्रजापति शेवडे ?"

"उनके विरुद्ध शिकायतो को दबा देना होगा। वह जहाँ हैं वही रहग।'

कृष्ण द्वपायन उठकर खडे हो गये। च द मिनटो तक कमरे म चहलकदमी करत रह, फिर एकाएक सुदशन दुब के सामन खडे हो कुछ भुककर तीखे स्वर मे उन्होंने पूछा 'और आप ?'

सुदशन दुब इस प्रश्न के लिए तयार नही थे। उनके चहरे के बडौल बडे सार अग मानो एक साथ चौंक पडे। वह एकाएक कुछ नहा बोल पाये।

कृष्ण द्वपायन ने तीखी आवाज मे कहा, "कहिए आप क्या चाहते हैं ? लागो की जो माँगें आपने पश की ये केवल उन्ही की नही आपकी भी हैं। हरिशकर त्रिपाठी को गहमन्त्री बनाने के लिए आप पाँच साल से कोशिश कर रह हैं। माधव देशपाण्डे के वित्तमन्त्री बन जान पर प्रात मे अनथ हो जायगा, फिर भी उसकी महत्वाकाक्षा के लिए आप ईंधन जुटा रह हैं। महेन्द्र वाजपेयी को यदि उद्योग और वाणिज्य मन्त्रालय मिले, तो आपका क्या-क्या फायदा होगा, यह मुझे मालूम है। प्रजापति शेवडे को आप बचाना चाहत हैं तो देख लीजिए इन सबकी सारी माँगें आप ही की माँगें हैं। अगर मैं यह मान लू तो आप खुश हैं, या कुछ और भी चाहिए ?'

कृष्ण द्वपायन बोलते जा रह थ इस बीच सुदशन दुब ने अपने को सँभाल लिया था। अब जवाब दत समय उनके चेहरे पर प्रच्छन्न व्यग्य भरी मुस्कान फली थी—"आपकी बुद्धि की तारीफ करनी पडेगी कौशलजी यदि ऐसा न होता तो आपको भारत के एक धुर घर राजनीतिज्ञ के रूप में ख्याति न मिल पाती। आप अब साफ-साफ कह रह हैं तो मैं भी वैसा ही करूँगा। आपने ठीक कहा मैं इन सबकी माँगो का समथन करता हूँ। यदि आप इन्ह मान लें तो पार्टी बहुमत स आपको फिर नेता चुन लेगी। हाँ, पूरा वादा मैं अभी भी नही कर सकता, पर एसी आशा करता हूँ।"

थोडी देर रुककर उन्होंने फिर कहा 'आप पूछ रह हैं मरी भी कोई माँग है कि नही ? देखिए, हम दोनों करीब करीब एक ही साथ राजनीति मे उतर। आपकी उम्र अवश्य कुछ अधिक थी। उन दिनो हम राजनीति नही कहा करत

थे, स्वाधीनता संग्राम कहा करते थे। उन दिनों जेल जाना, चरखा कातना, दुकानों पर पिकेटिंग करना, जुलूस बनाकर अंग्रेजों को भगा देने का दावा करना— यह सब आज शासक बनने के लिए पतरेबाजी थी, सो हमने उन दिनों कभी सोचा नहीं था। जब देश स्वतन्त्र हुआ, हम देश सेवक से शासक बन गये और तब नये कर्तव्य की पुकार आयी। इस प्रान्त का शासन भार अपने हाथ में लेने की जिनमें सबसे अधिक योग्यता थी, वे निर्लिप्तता की पराकाष्ठा दिखाकर परे हट गये। बाकी केवल दो रह गये—सुदर्शन दुबे और कृष्ण द्वैपायन।"

सुदर्शन दुबे उठकर खिड़की के पास खड़े हो गये। बाहर देखते हुए बोले, "यदि नेताओं ने हमें लड़ने की इजाजत दी होती, तो मुझे दृढ़ विश्वास है कि आप हार जाते। वर्धा और दिल्ली में आपकी ही तूती बोली। आपका काम बन गया। आपका काम बना तो पर पूरा नहीं। मुख्यमन्त्री आप बने, पर कांग्रेस का नेतृत्व मेरे हाथ रहा। इसी हालत में छः साल बीत गये।'

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, 'पिछले छः सालों से मैं हर कदम पर आपका साथ देता आ रहा हूं।'

सुदर्शन दुबे की आवाज चढ़ गयी— ये सब बातें आप पार्क में भाषण देते समय कहिएगा। पिछले छः सालों से आप मेरी और मैं आपकी जड़ काटने की कोशिश करते आ रहे हैं। दो साल पहले आप हार से बाल बाल बच गये थे और मैं जीतते जीतते हार गया था। आज आप पूरी तरह हार गये हैं। पार्टी के अधिकांश सदस्य आप पर से आस्था खो चुके हैं। उनका विश्वास जीतना चाहें तो आपको मेरे साथ हाथ मिलाना पड़ेगा।"

"किस शर्त पर? क्या आप मन्त्रिमण्डल में शामिल होना चाहते हैं?

"नहीं। सुदर्शन दुबे और कृष्ण द्वैपायन कौशल एक मन्त्रिमण्डल में नहीं रह सकते। एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं। मैं ऐसे ही ठीक हूं। राज नहीं करता, पर राजा बनाता हूं। जिम्मेदारी नहीं है, पर आलोचना करने का हक है। मुख्यमन्त्री बनने की बजाय यह जगह कहीं अधिक आरामदेह है। मेरी शर्त कुछ और है।

कृष्ण द्वैपायन को चुप देखकर सुदर्शन दुबे ने कहा, 'शर्त कुछ भारी नहीं है, बस इतनी ही कि आप और मैं मिलकर यह घोषणा करेंगे कि प्रान्तीय शासन के महत्त्वपूर्ण विषयों पर अब से मुख्यमन्त्री हमेशा प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष से भी सलाह लिया करेंगे।'

यानी मुझे आप परिचालित करेंगे!

'इतना साहस मुझमें नहीं है कौशलजी! मेरी शक्ति भी बहुत नहीं है। जो थोड़ी सी है भी, उसका मैं प्रान्त के कल्याण कार्यों में उपयोग करना चाहूंगा। मेरा दृढ़ विश्वास है कि अगर आप मेरी सलाह लेंगे, तो फायदे के बदले नुकसान

मे नही रहेंगे।"

सुन्दशन दुबे उठ खडे हुए। हाथ जोडकर नमस्ते करत हुए बोले, "मेरे प्रस्ताव पर विचार कीजिएगा। ग्राज शाम को या कल सवेरे ग्रापके टेलीफोन का इतजार करूँगा।"

कृष्ण द्वपायन ने सुदशन दुबे को दरवाजे तक पहुचा दिया। गाडी मे बैठकर जाने से पहले सुदशन दुबे ने कहा, "कौशलजी, यह बात मत भूलिएगा। ग्रापके ग्रौर मेरे दादा—दोनों ही पुजारी ब्राह्मण थे।"

कृष्ण द्वैपायन फाटक से लौटत हुए सोचने लगे—जाति से ब्राह्मण हैं फिर भी राजा हैं। हम न तो ब्राह्मण हैं न क्षत्रिय न वश्य। हम सब एक एक विश्वामित्र हैं।

सुदशन दुबे की बातें याद ग्रात ही उनकी नाक कुछ सिकुड गयी। सुदशन धन बहुत हैं, पर बुद्धि ग्रधिक नहीं है। जिन लोगो को लेकर उन्होंने ग्रपना गुट बनाया है, उन्हें वह ग्रच्छी तरह नही जानत हैं ग्रौर कृष्ण द्वपायन उन लोगो को बहुत ग्रच्छी तरह पहचानते हैं।

दो

कृष्ण द्वपायन पूजा के कपडे उतारकर उज्ज्वल खादी के कुता धोती म प्रात काल के जलपान के लिए तयार हो गय। रसोइया-बेयरा ने नाश्ता खाने के कमरे मे लगा दिया। उस समय परिवार के सब पुरुष महिलाएँ भी ग्रौर बहुत पास के राजनीतिक कायकता, कभी-कभार मित्र या सहकर्मी भी निमन्त्रित होकर उपस्थित होत हैं।

कृष्ण द्वैपायन के पाँच लडके ग्रौर तीन लडकियाँ हैं। बेटियो की शादी हो गयी है, सब ग्रपनी ग्रपनी ससुराल मे हैं। लडकों मे से चार बाप के साथ रहत हैं। बडे बेटे मातृकाप्रसाद ने तीन बार फेल होने के बाद चौथी बार सेकिण्ड डिवीजन म वकालत पास की है। ग्रब वह ला-कालेज म ग्रध्यापक है। हाईकोट म भी ग्राता जाता रहता है। दूसरा लडका शीतलाप्रसाद कपडे के व्यापार म ग्रच्छी-खासी रकम पीट लेता है। चौथा लडका सूयप्रसाद राजनीति करता है ग्रौर विधानसभा का सदस्य है। पाँचवाँ लडका चन्द्रप्रसाद कुछ नहीं करता धरता, रतनपुर मे उसका परिचय बस इतना ही है कि वह मुख्यमन्त्री का लडका है।

तीसरा लडका दुर्गाप्रसाद अपने पिता के साथ नही रहता। बगावत के कसूर में उसे निवासन मिला है। पढाई म अच्छा था। एम० ए० तक लगातार पास होता रहा। उससे कृष्ण द्वपायन को बहुत उम्मीदें थी। सभी लडके खूबसूरत हैं, पर दुर्गाप्रसाद की बराबरी का कोई नही है। गोरा चिट्टा रग छ फुट दो इच लम्बे शरीर पर उसके व्यक्तित्व की आभा। कृष्ण द्वपायन ने सोचा था उसे एम० एल० ए० बना देंगे और दो-तीन साल बाद उपमन्त्री। मन्त्रिमण्डल म जितने उपमन्त्री हैं उन सबकी सम्मिलित योग्यता से भी कही अधिक योग्यता अकेले दुर्गाप्रसाद मे है, कृष्ण द्वपायन को इसका विश्वास है।

पर दुर्गाप्रसाद ने बगावत कर दी। उसकी राजनीति खतरनाक राह पर जाने लगी। पहले वह समाजवादी दल म मिला। कृष्ण द्वपायन को इसकी ज्यादा चिन्ता न थी। समाजवाद तो काग्रेस का आदश ही है। अगर कोई दे सकता है तो काग्रेस ही उसे वास्तविक रूप दे सकेगी। उन्हें स्वय समाजवाद के बारे म अच्छी तरह जानकारी नहीं है किताबें पढने का वक्त ही कहाँ मिलता है? पर वह स्वय उन्याचल को समाजवाद के रास्ते पर आगे बढ़ा रहे हैं इस विषय म उन्ह कभी तनिक भी स देह नही हुआ। बात सही है क्योंकि काग्रेस का आदश समाजवाद है और वह स्वय काग्रेस के मुख्यमन्त्री हैं। फिर तो उनके नेतत्व मे सरकारी उद्योगो के विस्तार से समाजवाद का ही रास्ता बनता जा रहा है। इतनी आसान सी बात को लेकर सिर खपाना वह जरूरी नही समझते।

दुर्गाप्रसाद जब समाजवादी दल मे जा मिला, तो कृष्ण द्वपायन ने सोचा था कि लडका अक्लम द है। कुछ समय विरोधी दल के साथ रहा तो जल्दी लोकप्रिय हो जायेगा। इसके अलावा इन दिनो कम उम्रवालो का राजनीति म कुछ 'प्रगतिवादी' होना भी आवश्यक है, तभी उन्होने दुर्गाप्रसाद के रास्ते मे रोडा अटकाना जरूरी नही समझा। पर छ महीने बाद जब एक दिन दुर्गाप्रसाद से बातें करने लगे, तो देखा कि लडके के विचार एकदम ठीक नहीं हैं। वह काग्रेस म शामिल होने के लिए बिल्कुल तयार नही हुआ।

'इसकी वजह ?'

'वजह यही है कि काग्रेस लक्ष्यच्युत हो गयी है।

उसकी जबान से काग्रेस सरकार पर जिसके प्रमुख वह स्वय है इतना तीव्र आरोप कृष्ण द्वपायन को सुनने को मिला जिसके आगे विरोधी पत्रो का सम्पादकीय भी फीका पड जाता। कृष्ण द्वपायन को मानो सिर से पाँव तक आग लग गयी।

बेटा होकर भी तुम बाप की शिकायत कर रहे हो? तुम नालायक हो।

दुर्गाप्रसाद चुप रहा।

बोलो तुम काग्रेस मे आ रहे हो या नही ?'

"नहीं।"

"आने पर तुम्हारा भला ही होगा।"

"ऐसी भलाई का मुझे कोई लोभ नहीं।'

"तीन साल के अन्दर मैं तुम्हें उपमन्त्री बना देता।

यह तो बहुत ही अन्याय होता।"

"जिस पार्टी में तुम हो, उसका भविष्य क्या है ?

"संघर्ष।'

'तुम मूर्ख हो। हमारे देश में आज ही क्या, आनेवाले बहुत दिनों तक किसी भी संघर्ष की सम्भावना नहीं है। जो संघर्ष हम लोगों ने किया है, उसी की खाद से हमारा देश उपजाऊ बन गया है। देश में तो अब संगठन हो रहा है संग्राम करके अब तुम कुछ नहीं बदल सकोगे।'

"फिर भी हम यही करेंगे।

'जेल जाना पड़ेगा।

जाऊँगा।'

'तो फिर जेल ही जाना।' कृष्ण द्वैपायन चिल्ला उठे थे।

बातचीत उस दिन वहीं पर रुक गयी। पर दुर्गाप्रसाद थोड़े दिनों के अन्दर ही काफी कुछ कर बैठा। ऐसे ही एक दिन वह सवेरे के नाश्ते के समय कमरे में आया। वह रहता तो इसी मकान में था, पर पारिवारिक महफिल में शायद ही कभी शामिल होता। सवेरे जाता तो रात को ही लौटता था।

पूरी का कौर मुंह में डालते डालते कृष्ण द्वैपायन पल भर के लिए रुक गये थे। दुर्गाप्रसाद उनके सामने आ गया—"आपसे कुछ कहना है, पिताजी!

कृष्ण द्वैपायन की भौंह तन गयी। वह देखते रहे।

मैं एक शुभकार्य के लिए आपकी अनुमति चाहता हूँ।'

कृष्ण द्वैपायन कौर चबाने लगे।

'मैं कल शादी कर रहा हूँ।

कमरे की निस्तब्धता को चीरकर कृष्ण द्वैपायन चिल्ला पड़े—'क्या कर रहे हो?'

'शादी कर रहा हूँ पिताजी! सुरेश तिवारी को आप जानते हैं, उन्हीं की लड़की कमला से।

वह तो विधवा है।'

'बस एक ही साल उसका पति जीवित था।"

वह तो दिन रात तुम्हारी पार्टी में बेहया-सी घूमती रहती है।'

पार्टी के काम में वह बहुत तेज है, पिताजी!'

तुम उससे ब्याह कर रहे हो ?"

"जी, हाँ।'

"इसके लिए मेरी अनुमति माँगते हो ?

"आप अगर दें तो अच्छा रहेगा।

"और न दूं तो ?

'मैं कल कमला से शादी कर रहा हूँ।'

तुम्हारी माँ राजी है ?

'राजी तो नहीं हैं पर कुछ खास एतराज भी नहीं है।'

कृष्ण द्वैपायन एकाएक कुछ कह नहीं पाये। पूरी का निवाला निगलकर चाय की चुस्की लेने लगे।

फिर बोले 'तुम अभी इसी क्षण मेरे घर से निकल जाओ। मैं एक चरित्रहीन विधवा को पुत्रवधू के रूप में नहीं स्वीकार कर सकता। तुम फिर कभी मेरे सामने मत आना।

तभी से पाँच लड़कों में से सिर्फ चार ही कृष्ण द्वैपायन के साथ रहते हैं। एक दुर्गाप्रसाद का इस घर से अब कोई सम्बन्ध नहीं है। शहर के जिस हिस्से में कपड़े की तीन मिलें हैं वहीं पर एक छोटे से दुमंजिले मकान के निचले हिस्से में वह रहता है—वह, उसकी पत्नी कमला और उनकी बेटी सुभद्रा।

आज सवेरे नाश्ते पर आकर कृष्ण द्वैपायन ने देखा कि उनके चारों बेटे वहाँ पहले से ही उपस्थित हैं। मातृकाप्रसाद की पत्नी राधा भी वहीं बैठी थी। रसोइया बेयरों ने बड़ी-सी मेज़ पर नाश्ता लगा दिया है। कमरे में आकर कृष्ण द्वैपायन ने एक बार चारों ओर देख लिया—यह उनकी एक खास आदत है। किसी भी कमरे में सभा में या महफिल में शामिल होते समय वह एक बार चारों ओर देखकर परिस्थिति को समझ लेने की कोशिश करते हैं।

आज खाने के कमरे की स्थिति का अध्ययन करके कृष्ण द्वैपायन कुछ खास प्रसन्न नहीं हुए। वह अपनी निश्चित कुर्सी पर चुपचाप बैठ गये। राधा ने संतरे का रस उनके आगे बढ़ा दिया। उन्होंने बिना कुछ बोले उसे पी लिया।

सवेरे नाश्ते के समय कृष्ण द्वैपायन कानफ्लेक्स मिलाकर एक कटोरी दूध पीते हैं। दूध सामने रखकर उन्होंने अब पहली बार मुँह खोला—"मातृकाप्रसाद!'

'जी, पिताजी।'

तुम्हारी नौकरी परमानेण्ट हुई कि अभी तक टेम्परेरी है ?"

'पिछले साल परमानेण्ट तो हो गयी थी, पर '

"पर अभी तक लेक्चरर ही हो न ?'

"जी हाँ। किसी भी तरह रीडर की पोस्ट नहीं दे रहे हैं।"

"तुम्हारे अन्दर योग्यता भी तो नहीं है।"
मातकाप्रसाद चुप रह गया।
"अड़चन कौन डाल रहा है ?"
"दुर्गा भाई।"
"हूँ। बड़े आदमी हैं। अपने लड़के को उन्होंने आज तक किसी भी तरह की मदद नहीं दी।"
'आपके नये केबिनेट में दुर्गा भाई शामिल होंगे क्या ?"
कृष्ण द्वैपायन के होंठों पर एक क्षुब्ध मुस्कान फैल गयी—"मेरा नया कैबिनेट कभी पैदा भी होगा कि नहीं, इसका अभी कोई ठिकाना नहीं है, मातका-प्रसाद! इसीलिए जरा समझ लेना चाहता हूँ कि तुम लोग कौन कैसे अपने पैरों पर खड़े हो सकते हो। मेरा क्या, इस बुढ़ापे में यह सब झमेला अब अच्छा नहीं लगता। एकमात्र देश तथा इन अकृतज्ञ उदयाचलवासियों की भलाई के लिए राज-काज का गुरुतर भार सभाले हूँ।"
अपने ही कानों को ये बातें कुछ अच्छी लग रही थीं, पर एकाएक उन्हें लगा जैसे कोई और नहीं सुन रहा है। उन्होंने देखा, राधा रसोइया को कुछ निर्देश दे रही है। मातकाप्रसाद अखबार पढ़ रहा था। शीतलाप्रसाद, सूर्यप्रसाद और चन्द्रप्रसाद धीरे धीरे कुछ बातें कर रहे थे।
आवाज कुछ ऊँची चढ़ाकर कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "अगर तुम्हारा बाप मुख्यमन्त्री न होता तो तुम लेक्चरर भी न हो पाते।"
चौंककर मातकाप्रसाद चुप रह गया।
'तनख्वाह कितनी है ?"
"जी, तीन सौ बत्तीस रुपये।"
'तुम्हारे तो तीन बच्चे हैं न ?"
मातकाप्रसाद राधा की ओर देखते हुए बोला, "जी।"
राधा चौथी बार मा बनने जा रही है।
'तुम्हारा गुजारा हो जायगा। इस गरीब मुल्क में तीन सौ बत्तीस रुपये थोड़े नहीं हैं। परीक्षा की कापियां देखकर भी तो कुछ कमा सकते हो।"
और अब शीतलाप्रसाद की ओर नजर घूमी—"व्यापार कैसा चल रहा है ?"
'ठीक ही है।"
"बाप का राज खत्म हो जाय, तब भी ठीक ही चलता रहेगा न ?"
"नहीं।"
'एकदम खत्म हो जायेगा ?"
ऐसा तो नहीं लगता।"
मैंने तुम्हें इस व्यापार को जमाने में कोई मदद दी थी क्या ?"

"नही।"
'तुम्हारी मदद करने के लिए किसी से सिफारिश की थी ?"
"नही।"
'तुम्हे परमिट दिलावायी थी ?"
'नही।"
"सरकारी कज का इन्तजाम करवाया था ?"
'नही।
'तो फिर मैं मुख्यमन्त्री न भी रहूँ तो तुम्हारे व्यापार का नुक्सान क्यों होगा ?
'वाह क्यो नही होगा नुक्सान ?'
शीतलाप्रसाद अधिक नही बोला। पिता को वह अच्छी तरह जानता है। वह ज्यादा बोले, इसे वह पसन्द नही करेंगे।
कृष्ण द्वपायन कुछ दर चुपचाप सोचते रहे फिर बोले, 'सुखनलाल काटन मिल की एजेन्सी मिल गयी ?
'जी हाँ, करीब एक साल हो गया।
'फिर तो तुम्हारा भी गुजारा अच्छा ही हो जायेगा।'
"हाँ, अगर एजेन्सी बनी रही तो।
'हूँ। अगर अपनी योग्यता से कुछ कर सको तो।'
उन्होने इस बात को और आगे नही बढाया। अब चौथे बटे पर नजर पडी।
"सूयप्रसाद!
"जी, पिताजी!"
"तुम्हारा क्या हाल है ?"
"कुछ कहना था, पिताजी!'
"कहो।'
'यही पर कहूँ ?"
'हाँ हाँ, यही कहो। भला तुम एसा क्या बता सकते हो, जिस तुम्हारे भाई जान जायें, तो मेरा नुक्सान हो जायेगा ?'
सूयप्रसाद का गोरा चेहरा अपमान से लाल हो गया।
उसने कहा, "दुर्गा भाई ने दिल्ली से एक जरूरी पत्र भेजा है।
थोडा मुस्कराकर कृष्ण द्वपायन ने कहा, 'मैं जानता हूँ।
सूयप्रसाद कुछ झेंप गया, फिर बोला, पत्र में क्या लिखा था, यह भी आपको मालूम है ?
'हाँ। उसका मसविदा मैंने ही तयार किया था।"

सूर्यप्रसाद की जबान पर कोई बात नहीं आयी।

"तुम मुझे एक बात बता सकते हो सूर्यप्रसाद ?"

'क्या पिताजी ?"

"हरिशंकर त्रिपाठी के घर में परसों रात को एक गुप्त बैठक हुई थी न ? जानते हो ?"

"जी हां जानता हूँ।'

"कौन कौन था ?"

'सबके नाम मुझे मालूम नहीं हैं।'

"तीस पतीस साल की एक महिला वहाँ आयी थी, मालूम है ?"

"जी हाँ।"

"उसका नाम सरोजिनी सहाय है ?"

"यह मैं नहीं जानता।"

"मीटिंग खत्म होने से पहले ही वह महिला चली गयी थी न ?"

"मुझे मालूम नहा है।"

"वह सुदर्शन दुबे की गाडी में चली गयी थी।"

"ओह !"

"उस गाडी मे तीन मर्द थे—सुदर्शन दुबे, हरिशंकर त्रिपाठी और एक और।"

सूर्यप्रसाद चुप रह गया।

एकाएक अधीर होकर मेज पर हाथ पटकते हुए कृष्ण द्वैपायन ने पूछा, "यह तीसरा आदमी कौन था ? मिसिंग थर्ड मैन, वह कौन था, इसका पता लगा सकोगे ?"

कृष्ण द्वैपायन सूर्यप्रसाद की आँखों मे ऐसे देखने लगे कि वह सहन नहीं कर पाया और उठकर खडा हो गया।

एक तीखी हँसी हँसकर कृष्ण द्वैपायन बोले, 'देखो, कोशिश करो, दो घण्टे का समय है। दो घण्टे के बाद माधव देशपाण्डे मेरे पास आयेंगे, उससे पहले मालूम हो जाना चाहिए।'

सूर्यप्रसाद दरवाजे तक चला गया, तो उन्होंने फिर बुलाया—"सुनो।"

सूर्यप्रसाद कुछ पास आ गया।

'तुम्हें अपने बडे भाई दुर्गाप्रसाद की याद है ?"

सूर्यप्रसाद सिर झुकाये खडा रह गया।

'वही, मेरा ही लडका दुर्गाप्रसाद है न, वही दुर्गाप्रसाद, तुम्हारा भाई दुर्गाप्रसाद। जो मेरे विरोध मे दिन रात प्रचार कर रहा है और जिसकी दुश्चरित्र पत्नी मिल मजदूरों को बहकाकर हडताल करवा रही है उसकी याद है ?"

'जी।"

"उदयाचल में मन्त्रिमण्डल का नेतृत्व कृष्ण द्वपायन से ले लिया जाय, इसी माँग को लेकर आज मिल मजदूरों का जुलूस निकलेगा।"

"जानता हूँ।"

"दिन के बारह बजे जुलूस निकलेगा। शहर के बडे बडे रास्तो पर घूमने के बाद शाम को गाधी पार्क में उनकी सभा होगी।"

"जानता हूँ पिताजी!"

"और यह भी जरूर जानते होगे कि इन कारवाइयो के पीछे सुदर्शन दुबे का समर्थन और सहायता है।"

'मैंने भी सुना है।"

'मजदूरो के जुलूस और सभा से मैं नही डरता। पर सुदर्शन दुबे की गुप्त चेष्टाओ के कारण कुछ और लोग भी सभा मे शामिल हो सकते हैं।"

'सुना है इसी सभा की माफत हाईकमान को वे लोग यह बताना चाहते हैं कि उदयाचल की जनता "

'रुक क्यो गये? जनता मुझे नही चाहती, यही न?"

"जी।"

'जनता किसे चाहती है?"

सूर्यप्रसाद चुप रह गया।

कृष्ण द्वपायन कहने लगे—"जनता कौन है? उसका अस्तित्व क्या है? कारखाने के मजदूर? खेत के किसान? गरीब किसान? स्कूल का मास्टर? कालेज से भागे हुए लडके? उन्हे राजनीति क्या मालूम? वे राज चला सकेंगे? उन्हे क्या इतना भी मालूम है कि वे क्या चाहते हैं और किसे चाहते हैं? वे कृष्ण द्वपायन कौशल को कितना जानते हैं? सुदर्शन दुबे को व तनिक भी नही जानते हैं। माधव देशपाण्डे हरिशंकर त्रिपाठी को वे जानते हैं? खर! वे चाहे या न चाहे, राज हमी लोग करेंगे—मैं या हरिशंकर त्रिपाठी या माधव देशपाण्डे या सुदर्शन दुबे। हो सकता है हम सब मिलकर राज करें, जैसा कि अब तक करते रहे हैं।"

सूर्यप्रसाद ने कहा, 'ठीक बात है।"

'जनसभा जनमत नही है, समझे? जनमत से शासन-काय नही चलता।"

"फिर भी गणतन्त्र म "

'तुम्हारे साथ आज राजनीतिक चर्चा करने का वक्त नही है। और ये बातें तुम समझोगे भी नही। बाप की ताकत से एम० एल० ए० बने हो। आज मेरी गद्दी चली जाय, तो कल तुम वह भी नही रहोगे। जिन्दगी मे इससे अधिक कुछ नही कर सकोगे।"

सूर्यप्रसाद की आँखें जमीन पर गड़ी रहीं।

"अच्छा, अब जो कह रहा हूँ, सुनो। महन्त गणेशप्रसाद के यहाँ चले जाओ, उनसे कहना कि दो बजे आकर मुझसे भेंट करें। तुम खुद जाकर कहना, टेलीफोन मत करना।"

"जी।"

"और कहना कि जुलूस तोड़ने की आवश्यकता नहीं है। जुलूस, सभा, सब शान्ति से होने दो।"

"जसी आज्ञा, पिताजी।"

"और कहना, परसों इसके बदले में हमारा जुलूस निकलेगा और सभा होगी। इसका काफी इन्तजाम हो गया है। सारी जिम्मेदारी महन्तजी को लेनी होगी।'

कलाई घड़ी देखते हुए कृष्ण द्वैपायन ने बाकी नाश्ता समाप्त किया। उठकर बाहर जाते समय सबसे छोटे लड़के चन्द्रप्रसाद पर नजर पड़ी।

आपके क्या हाल हैं, राजकुमार ?"

चन्द्रप्रसाद उठकर खड़ा हो गया।

"आज्ञा कीजिए, महाराज !"

कृष्ण द्वैपायन हँस पड़े।

"कैसा चल रहा है ?"

'पिछले क्षण तक तो मजा ही मजा रहा है।"

"कुछ काम-काज करोगे ?"

"जी नहीं।"

"ऐसे ही चलेगा ?"

'चल जायेगा पिताजी !"

उसका हँसमुख प्रसन्न चेहरा देखकर कृष्ण द्वैपायन खुश हो गये। उनका छोटा बेटा किसी भी काम का नहीं। दिन रात बेकार घूमता रहता है, फिर भी इसी लड़के के प्रति कृष्ण द्वैपायन की कुछ कमजोरी है। दुर्गाप्रसाद के जाने के बाद वह कमजोरी कुछ और बढ़ गयी है।

जब वह बाहर निकल रहे थे तभी चन्द्रप्रसाद फिर बोल उठा—"आप निश्चिन्त रहें, पिताजी उदयाचल की गद्दी से आपको हटाकर खुद बैठ सके, ऐसा और कोई नहीं है।"

आगे बढ़ते बढ़ते ही कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "एक आदमी तो है ही।"

'वह खुद गद्दी पर नहीं बैठेंगे पिताजी !" चन्द्रप्रसाद ने तुरन्त उत्तर देते हुए कहा, 'आपको कोई खतरा नहीं है।"

कृष्ण द्वैपायन बगल के दरवाजे से बाहर कदम रख रहे थे, तो चन्द्रप्रसाद

ने फिर पूछा, "पिताजी, मेरे लायक कुछ सेवा ?"

कृष्ण द्वैपायन ने भी प्रश्न किया, 'तुमसे ?"

"मैंने कुछ अजीब बात कर दी क्या पिताजी ?"

"भाइयों में से केवल तुम्हीं मुख्यमन्त्री के बेटे हो। सबका कुछ और भी परिचय है, पर तुम्हारा इसके अलावा कोई भी और परिचय नहीं है।"

'तभी तो आपका मुख्यमन्त्रित्व कायम रहने में मेरी ही भलाई सबसे ज्यादा है।"

"तुम मेरी क्या मदद कर सकते हो ? तुम्हारा तो सिर्फ एक ही काम है दूकानों पर घूमकर खरीदारी करना और बिलों पर दस्तखत कर देना।"

'वे सब बिल क्या आपके पास भेजे जाते हैं पिताजी ?"

'जरूर भेजे जाते हैं। दूकानदार तुम्हें मुफ्त में थोड़े ही सामान देगा।"

'बड़े अफसोस की बात है। मेरी धारणा थी कि उनमें से बहुत-से आपके सामने नहीं आते होंगे।"

कृष्ण द्वैपायन ने यह प्रसंग वहीं बन्द कर दिया, बोले, "तुम चारों भाई अपने पैरों पर क्यों नहीं खड़े हो सकते ?"

'पर कमजोर हैं पिताजी ! महत्त्वाकांक्षाओं का बोझ नहीं ढो सकते।"

'सुनो चन्द्रप्रसाद !"

कहिए।"

'तुम क्या सोचते हो ?"

मैं ?"

हाँ, तुम।"

'मैं राजनीति नहीं समझता पिताजी !"

'तभी तो तुमसे पूछा रहा हूँ !"

'मैं केवल एक बात समझता हूँ, अगर आप सुनना चाहें तो कहूँ।"

"कहो।"

'मुख्यमन्त्री बने रहना आपके लिए जरूरी है, और आपको बने रहना पड़ेगा।"

कृष्ण द्वैपायन की आँख चन्द्रप्रसाद पर बिजली की तरह कौंध गयी। उनके चेहरे पर खुशी चमक गयी पर उन्होंने मानो कठोर संकल्प से उसे समेट लिया।

तुम एक काम करोगे ?"

कहिए।"

'पाण्डेजी को खबर देना कि कल सवेरे मुझसे जरूर भेंट करें।"

"राज-ज्योतिषी को ?"

"सवा आठ बजे।"

"राजनीति मे ज्योतिष शास्त्र का भी स्थान है क्या, पिताजी ?"

"राजनीति मे सब चलता है।"

कृष्ण द्वैपायन घर से निकलकर तेज कदमों से बरामदे से होते हुए लान पार करके अपने दफ्तर की ओर बढने लगे। उनका हर कदम विजय का सकल्प लेकर बढ़ रहा था।

तीन

कोई खास जरूरत न होने पर कृष्ण द्वैपायन सवेरे पूजा और नाश्ता से पहले अखबार नही पढ़ते। हाँ, जब कभी प्रान्तीय या राष्ट्रीय राजनीति बहुत गम हो उठती है तब वह पहले अखबार पढते हैं और तब भी भरसक कृष्ण द्वैपायन हेड लाइनों के अलावा और कुछ पढ़कर सवेरे-सवेरे मन की क्षणिक शाति को नही नष्ट करना चाहते।

जिन्दगी भर राजनीतिक चर्चा के फलस्वरूप किसी भी विषय पर आतरिक रूप से बहुत कम उत्तेजित होते हैं, इसी से राजनीतिक साथी, दोस्त और दुश्मन, सब उन्हें 'कोल्डेस्ट कस्टमर' कहते हैं, यानी सबसे ठण्डे दिमागवाला खरीदार। उनके मन मे काफी जगह घेरकर एक रसज्ञ कलाकार बैठा है, इसीलिए कृष्ण द्वैपायन की राजनीतिक उत्तेजना के नीचे कई बार भूखी नगी प्रवचना देखने को मिलती है। अपने पतन की सम्भावना भी हर समय उन्हें अधीर नही बना सकती। कृष्ण द्वैपायन कहा करते हैं 'पतितावृत्ति के बाद राजनीति ही मनुष्य का सबसे पुराना पेशा है, यह हम निषिद्ध फलभोजी आदम से ही उत्तराधिकार में मिला है, जो अब कई धाराओ मे बँट गया है। इतना पुराना खेल और कोई दूसरा नही है। इस खेल म कोई निश्चित रास्ता नही है और न कोई नियम। इसके लिए रास्ते, नियम, रीति रिवाज रोज-के रोज तैयार करने पड़ते हैं। इस खेल म जो हमेशा हँसते हँसते हार मान लेने को तैयार नही है, वह कभी जीत नहीं सकता।'

कहते तो हैं, पर हँसते हुए मात खाने के लिए कृष्ण द्वैपायन खुद तैयार नहीं हैं। आज वह जिस राजनीतिक सकट का सामना कर रहे हैं, उसके लिए जितने भी तरह के उपायों की जरूरत है, वह उससे कहीं ज्यादा ही कर रहे हैं, पर उनके मन की गहराई मे मानो उनकी ही एक और सत्ता पराजय की सम्भावना मानकर चारो ओर का भविष्य बिना किसी उत्तेजना के समझ लेने के लिए

तत्पर है। हार जाने पर भी उसी हार से किस हद तक विजय प्राप्त की जा सकती है कृष्ण द्वपायन के मन की दूसरी सत्ता मे उसी का हिसाब किताब हो रहा है।

मन्त्रिमण्डल के टूटने की सम्भावनावाले दिनो म कृष्ण द्वैपायन के मन में सवेरे सवेरे अखबार देखने का आग्रह रहता था। अब यह आग्रह बहुत हद तक सिमट गया है। अब उन्ह मालूम हो गया है कि किस अखबार म क्या खबर छपेगी और क्या टिप्पणियाँ होगी। इस शहर मे दो अग्रेजी दनिक पत्र हैं—एक तो उनका अपना और दूसरा ऊपर से निदलीय भले ही कहा जाये, पर कृष्ण द्वैपायन को अच्छी तरह मालूम है कि उसके कणधार माधव देशपाण्ड हैं। कृष्ण द्वैपायन के अग्रेजी दनिक का नाम 'मानिंग टाइम्स' है और माधव देशपाण्डे के पत्र का 'पीपुल'। इसके अलावा रतनपुर से ही आठ हिन्दी और मराठी दनिक पत्र निकलते हैं। सारे उदयाचल प्रान्त के दनिक अखबारो की कुल सख्या छ बीस है। प्रान्त कुछ पिछडा हुआ है। किसी भी अखबार की बिक्री अधिक नही है। सबसे अधिक प्रभावशाली हिन्दी पत्रिका 'उदयाचल समाचार' लगभग दस हजार बिकती है। इसीलिए यहाँ पर प्रान्त के बाहरवाले अखबारो का ही ज्यादा सिक्का जमा है। बम्बई, दिल्ली, इलाहाबाद और कलकत्ता से हवाई जहाज से अखबार आते हैं। अभिजात श्रेणी के लोग उन्ही अखबारो को पढ़ते हैं।

कृष्ण द्वैपायन जब मन्थर गति से दफ्तर पहुचे तो उनकी वेशभूषा मे मुख-मुद्रा मे, आँखो की दृष्टि मे परेशानी या अनिश्चितता की कोई खास छाप नही दिखायी दे रही थी। सफेद खादी की महीन धोती के साथ वसा ही कुर्ता। पाँवों मे हिरन की खाल की चप्पलें। सिर पर गाधी टोपी। अच्छी तरह हजामत किये हुए चेहरे पर बडे ढग से सजायी गयी निश्चिन्त शान्ति। आँखो मे कुछ कौतूहल सा झाक रहा था—जीवन के रहस्य की फूट न सही पर जीवन यात्रा का रहस्य समझ पाने का कौतूहल।

दफ्तर के कमरे में जाकर कृष्ण द्वपायन फश पर बिछे कार्पेट पर बठ गय। उनकी नजर अखबारो पर पडी। उनका निजी चरा दीनदयाल रोज की तरह उन्हे सजाकर रख गया है। सेक्रेटरियो मे से जिनके जल्दी आने की बात थी, वे अभी तक नही आये हैं। उन्हें नौ बजे आने का हुक्म हुआ है। कृष्ण द्वपायन ने अखबार अपनी ओर खीच लिये।

सबसे पहले 'पीपुल' को देखा। खूब विस्तार से जो राजनीतिक गतिविधि छापी गयी है, उसे पढकर कृष्ण द्वैपायन के मन पर कोई असर नही हुआ। जो लोग अखबार के लिए खबरें तयार करते हैं, कृष्ण द्वपायन उन्ह अच्छी तरह जानते हैं। 'पीपुल' का खास प्रतिनिधि कल कृष्ण द्वपायन के पास आया था।

वह उन्हें कुछ खास खबर नहीं दे पाये थे। विधानसभा के कांग्रेसी सदस्य कल नये नेता के निर्वाचन के लिए इकट्ठे होंगे। कृष्ण द्वैपायन ने कहा था—"मैं कांग्रेस का आजीवन सेवक हूँ, देश का एक सामान्य सेवक। गणतन्त्र मे हम पूरा विश्वास रखते हैं। यदि दल के अधिकांश सदस्य चाहें, तभी मैं फिर मन्त्रिमण्डल गठित कर सकता हूँ। वे मुझे चाहते हैं कि नहीं, यह प्रश्न आप उन लोगों से ही करें। मेरी धारणा—केवल धारणा ही नहीं, निश्चित विश्वास है कि वे मुझे ही चाहते हैं। मेरी यह धारणा ठीक है या नहीं, यह कल प्रमाणित हो जायेगा।'

उनके इसी वक्तव्य को तोड़ मरोड़कर खास प्रतिनिधि ने दो कालम का लेख बना लिया है। 'मुख्यमन्त्री कृष्ण द्वैपायन कौशल ने मुझे बताया है कि इसमें उन्हें कोई सन्देह नहीं है कि वह फिर से कांग्रेस के नेता चुने जायेंगे। उन्होंने यह भी बताया, और उन्हें इसका दृढ़ विश्वास भी है कि दल के अधिकांश सदस्य उन्हें ही चाहते हैं, किन्तु इस विश्वास का आधार क्या है यह बताने से *उन्होंने इन्कार कर दिया।*

"उनके विरोधी अवश्य यह कहते हैं कि श्री कौशल के विश्वास का आधार केवल उनकी अपनी उच्चाकांक्षा है। जबान से वह जो कुछ भी कहें, गद्दी छोड़ने के लिए वह बिल्कुल तैयार नहीं हैं, और इसके लिए वह यथासाध्य कारवाइयाँ कर रहे हैं उनके विशेष प्रतिनिधि बनकर मन्त्रिमण्डल के एक सदस्य श्री निरंजनसिंह हाईकमान के साथ गम्भीर विचार विनिमय के लिए राजधानी गये हैं।

"रतनपुर की गरम राजनीतिक आबोहवा इन दिनों गुप्त लेन देन और मोल भाव से दूषित हो रही है। जानकार लोग बताते हैं कि श्री कौशल मन्त्री उपमन्त्री आदि पदों का लोभ देकर दल में अपना नेतृत्व बनाये रखने की कोशिश कर रहे हैं।

विरोधी गुट भी काफी तत्पर है। उसकी धारणा है कि यदि हाईकमान श्री कौशल के पक्ष में हस्तक्षेप न करे और विधानसभा के सदस्यों को वोट देने की स्वतन्त्रता मिले तो कम से कम कुछ दिनों के लिए तो श्री कौशल को सत्ता से हाथ धोना ही पड़ेगा। हाँ ऐसा तभी होगा, जबकि दिल्ली के नेता उन्हें काफी दिनों तक उदयाचल में सुशासन के पुरस्कार स्वरूप किसी और गद्दी पर न बैठा दें।'

थोड़ा मुस्कराकर कृष्ण द्वैपायन दूसरा अखबार देखने लगे। कुछ खास खबर न थी। उन्हें याद आया, आज प्रधानमन्त्री असम से दिल्ली लौटेंगे और निरंजनसिंह आज अवश्य ही उन्हें ट्रंककाल करेंगे। उनकी कल की रिपोर्ट पढ़ कर कृष्ण द्वैपायन को निराशा नहीं हुई थी। कल भोर में निरंजनसिंह हवाई

जहाज से सीधे उनके पास पहुचेंगे ।

पीपुल का सम्पादकीय देखकर कृष्ण द्वपायन को कुछ मजा आ गया । 'और कब तक' शीर्षक लेख मे विरोधी पत्र न बडी नम्रता से उनसे गद्दी से हटने का अनुरोध किया है—"श्री कृष्ण द्वपायन सामाय व्यक्ति नही हैं । मुख्यम त्री पद के त्याग के बाद भी वह उदयाचल के मुख्यमन्त्री ही हैं । पिछले छ साला के लम्बे अर्से से वह इस आसन को सुशोभित या कलकित कर रहे हैं । इन छ साला मे उदयाचल ने कोई उन्नति नही की है, ऐसा तो हम नही कहगे, पर उदयाचल के आकाश मे सवेरे स ही जो अँधेरा छा गया यह बात श्री कौशल जरूर मानेंगे । यह अँधेरा नेतत्व की कमजोरी से ही सम्भव हुआ, और यह कमजोरी श्री कौशल ने गुप्त षडय त्र अनुचित लेन देन तथा विभिन्न गुटों को एक दूसरे स लडाकर पूरा करने की कोशिश से पदा की है । इसके फल स्वरूप उन्हाने खुद तो काफी उन्नति की ही है, उनके परिवार के सदस्यो की भी पूरी भलाई हुई, पर उदयाचल के आकाश मे सवेर सवेरे ही अधेरा छा गया । उदयाचल के नर-नारियो के मन मे व्याकुल प्रश्न उठ रहा है—और कब तक के० डी० कौशल का जबदस्ती लादा हुआ राज चलेगा—और कब तक ?"

हँसी रोककर कृष्ण द्वपायन ने अखबार रख दिया ।

अब वह 'मार्निंग टाइम्स पढने लगे । सभी जानते हैं कि यह अखबार उनका अपना है । इसका मालिक और प्रबध सम्पादक उनका बडा लडका मातकाप्रसाद है और प्रकट मे उसके सम्पादक हैं, एक बगाली युवक सुभाषचद्र चट्टोपाध्याय । कलकत्ता के बहुत अच्छे अखबार से कृष्ण द्वपायन उसे स्वय यहाँ ले आये हैं । उम्र कोई पच्चीस वष । बुद्धिमान और विलक्षण लेखक । इससे पहले राजनीतिक कारण से उन्होने तीन साल तक एक महाराष्ट्रीय सम्पादक रखा था, पर राजनीतिक कारणा से ही उसे निकालना पडा ।

मार्निंग टाइम्स' की राजनीतिक खबर पढकर कृष्ण द्वैपायन बहुत खुश हुए—हाँ चटर्जी अक्लमन्द है । रिपोटर से जन-साधारण की जबान मे मुख्य मन्त्री की खालिस स्तुति लिखायी है । पहले पृष्ठ पर जो चित्र छापा गया है कृष्ण द्वैपायन के जीवन का सबसे बडा मूलधन है । अरसा पहले कभी वे अपने सिर पर पुलिस की लाठी झेलने गये थे । सिर पर तो नही, हाथ पर जरूर चोट आयी थी । भाग्यवश जाने किसने उस दृश्य का चित्र ले लिया था और राष्ट्रीय अखबारो म उसे छपाया गया था । चटर्जी ने खूब मेहनत करके उस चित्र को ढूढ निकाला । बम्बई से उसका बडा सा ब्लाक तैयार कराया और अखबार के पहले पृष्ठ पर छापा था ।

कृष्ण द्वपायन ने मानो अपनी आँखों की सारी ज्योति इकट्ठी करके उस चित्र

को देखा। पुलिस की लाठी जिसके ऊपर गिरी थी, बहुत दिन पहले, बहुत, बहुत पुराना भूले बिसरे दिनों का आधा अनचीन्हा सा चालीस वर्षीय वह मानो कोई और आदमी था।

चार

किसी और दिन, किसी और समय किसी और युग के उस आदमी को आज कृष्ण द्वपायन ने बड़े आग्रह से बार-बार देखा। पहले कभी याद ही नहीं आया कि इस चित्र के साथ उनका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध था। फिर उन्हें याद आया बहुत दिन पहले इसी हिन्दुस्तान में किसी जादुई लकड़ी के स्पर्श से हजारों आदमी मानो किसी विचित्र नदी में भरकर आलोक प्रवाह से चमत्कृत हो उठे थे, सैकड़ों वर्षों से छाये हुए अन्धकार को छेदकर उस प्रकाश किरण ने देश को एक अनोखे गौरव से उद्भासित कर दिया था। उस आलोक की अनन्य धाराओं में हजारों लोगों की अनेकों कलक कालिमाएँ धुलकर साफ हो गयी थीं। उनके मन में पवित्र मानवता झलक उठी थी। कृष्ण द्वपायन को याद आया कि किस तरह वे भी इसी प्रवाह में बह गये थे और इस प्रवाह ने उन्हें भी नहला धुलाकर साफ कर दिया था।

राजधानी रतनपुर है, पर कृष्ण द्वैपायन का जन्मस्थान रतनपुर नहीं है। पिता रामचरण असल में उत्तर प्रदेश के निवासी थे। छत्तीसगढ़ के किसी राज्य में नौकरी पर आये थे। धीरे धीरे वे उस राज्य के जीवन बन गये। उसी राज्य में कृष्ण द्वैपायन का जन्म और शिक्षा हुई थी। बी० ए० पास करके वकालत पढ़ने के लिए वह पहले पहल रतनपुर आये थे। फिर कृपाणपुर में वकालत आरम्भ की। कृपाणपुर जिला बहुत बड़ा न हो पर अन्यतम शहर जरूर है। कृपाणपुर से पिता का कर्मक्षेत्र वह राज्य भी बहुत दूर नहीं था और दोनों इलाकों में लेन देन, व्यापार आदि आसानी से होता रहता था। कृष्ण द्वैपायन की वकालत उन व्यापारियों को लेकर ही शुरू हुई जो किसी न किसी प्रकार उनके पिता से उपकृत थे।

धीरे धीरे कृष्ण द्वैपायन ने जिला अदालत में काफी नाम कमा लिया वकालत अच्छी जम गयी। उसी के साथ साथ राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा भी पैदा होती गयी। पिता के साथ सलाह मशविरा करके वह जिला परिषद का अध्यक्ष बनने के लिए पहली बार राजनीतिक संग्राम में उतरे। कुछ अधिक नहीं

लडना पडा। उन्होने पहल ही जिला मजिस्ट्रेट से दोस्ती करके अपने समर्थन का प्रबन्ध कर लिया था।

जिला परिषद का अध्यक्ष बनकर कृष्ण द्वैपायन ने समझ लिया था कि अंग्रेज सरकार का सहयोग करें तो पुरस्कारों की कमी नही होगी। बुद्धिमान, सुदर्शन और मेहनती के रूप मे प्रसिद्धि मिली। ख्याति बढने लगी। पांच साल तक जिला परिषद का अध्यक्ष रहने के बाद नगरपालिका का अध्यक्ष बनना चाहा। बहुत खर्च वर्च किया, सरकारी समर्थन मिला, काफी योजनाबद्ध और सुआयोजित ढग से लडाई लडी, पर अबकी बार उनकी जीत नही हुई। कांग्रेस के मनोनीत उम्मीदवार भरतराम के मुकाबले वे हार गये।

इसी पराजय ने कृष्ण द्वैपायन के जीवन प्रवाह को काफी हद तक बदल दिया। उन्होंने अपनी बुद्धि से समझ लिया कि भारत के वर्तमान और भविष्य म अगर वास्तव म शक्तिशाली बनना है तो अंग्रेजो के अनुग्रह का मोह छोडकर जनता को साथ लना पडेगा उसकी लडाई का नेतत्व करना होगा। अपनी बुद्धि से वह यह बात समझ तो गये, पर एकाएक किसी भी काम मे कूद पडने की जल्दबाजी उनमे नही थी। कोई भी काम शुरू करने से पहले वे खूब सोच विचार करके ही कार्यक्रम बनाते थे। कृष्ण द्वैपायन समझ गये कि राजनीतिक नेतत्व के लिए अपने को तयार करना चाह तो पहले काफी सोच विचार लेना पडेगा। सबसे ज्यादा जरूरत समय और सुविधा के उचित चुनाव की है। उनके कवि मन की भी राय मिल गयी। दुनिया को हम रगमच कहते हैं जहाँ हर आदमी नट या नटी है फिर भी हम जि दगी बनाने के लिए नाट्य कौशल से फायदा नही उठा पाते।

कृष्ण द्वैपायन जिला परिषद् के अध्यक्ष ही रह गये पर अब धीरे धीरे उनका ढर्रा कुछ बदलता दिख रहा था।

एक बार उस शहर से दूसरे शहर तक सडक बनाने की समस्या सामने आयी। किसी गाव के बीच मे से सडक बननी थी, गाँववाले इस पर नाराज थे। सडक का जो नक्शा मजूर हुआ उससे गाँववालो की खेती को नुकसान हो रहा था। सडक खेतों और नहर के बीच से होकर निकलनी थी। सडक बन जाने पर किसानो को नहर का पानी आसानी से नही मिल सकेगा। इतनी विचार बुद्धि किसानो मे कहाँ से आती अगर सरकार ने किसी देशसेवक को इस गाँव मे नजरबन्द करके न रखा होता। वहाँ पर नजरबन्द होते हुए भी युवक मोहन लाल सक्सना किसाना को सगठित करने की कोशिश कर रहा था। उसने किसाना से जिला परिषद मे स्मरणपत्र भिजवाया जिसमे उस तरह सडक बनाने का प्रतिवाद किया गया था। स्मरणपत्र मे यह सकेत भी था कि प्रतिरोध होने पर भी वहाँ से सडक बनाने की योजना न बदली गयी तो किसान सत्याग्रह करेंगे।

जिला परिषद की कई सभाओं में किसानों के स्मरणपत्र पर बहस हुई। करीब करीब सब सदस्य और उपाध्यक्ष रमाकान्त मिश्र सडक की योजना बदलने के विरोध में थे। उन लोगों का कहना था कि इंजीनियरों ने सडक का नक्शा तयार करने के पहले हर स्थिति पर अच्छी तरह विचार कर लिया होगा। एक गांधी मार्का युवक की धमकी से अगर वह नक्शा बदल देना पडे तो शासन-कार्य नहीं चल सकेगा।

फिर एक दिन देखा गया कि जिला परिषद की सीमा पार कर यह समस्या काफी आगे तक बढ गयी। रतनपुर के अन्यतम समाचार-पत्र में इस संघर्ष की खबर छपी। इस संघर्ष को लेकर समाचार-पत्रों के जरिये थोडे दिनों में ही हिन्दुस्तान के कोने कोने में चर्चा होने लगी। रतनपुर के अधिकारी कुपाणपुर दौड लगाने लगे। सत्याग्रह की धमकी देनेवाले गाँव को जरूरत पडने पर दबाने के लिए बाहर से और भी सशस्त्र पुलिस मँगा ली गयी। जिला-मजिस्ट्रेट के बँगले पर बार बार सभाएँ होने लगीं। पुलिस सुपरिटेंडेंट ने कहा कि इस कांग्रेसी गाँव को तुरन्त सही रास्ते पर न लाया जा सका, तो देश में अमन और शान्ति बनाये रखना मुश्किल हो जायेगा।

जिला परिषद् के अध्यक्ष के रूप में कृष्ण द्वैपायन भी इस संघर्ष से प्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध हो गये। किसानों का डर व्यर्थ नहीं है, यह बात वे समझ गये थे, पर समस्या इस तरह जटिल हो गयी। सडक की समस्या तो गौण हो गयी, बस सत्ता शक्ति के साथ जनता की माँग का होनेवाला संघर्ष ही प्रधान बन गया। इसलिए वे अपना विचार जोरदार ढंग से नहीं रख सके। किसानों के विरुद्ध खडा होना भी उनके लिए सम्भव नहीं हुआ। सहज कूटबुद्धि के सहारे उन्होंने यही तय किया कि ऐसी परिस्थिति में किसी एक ओर न जाकर बीच का रास्ता अपनाना ही ठीक होगा।

खूब सोच विचारकर कृष्ण द्वैपायन एक दिन जिला मजिस्ट्रेट के पास गये। जिला-मजिस्ट्रेट भी उत्तर प्रदेश के थे। कृष्ण द्वैपायन यह जान गये थे कि वह भी ऐसी ही ऊहापोह में पडे हैं। कुछ हद तक उनकी भी मनोदशा कृष्ण द्वैपायन जैसी ही थी।

दोनों में बातचीत हुई। कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "आज तक कुपाणपुर में एक भी राजनीतिक दुर्घटना नहीं हुई थी। यदि इस बार एक सडक को लेकर झगडा हो गया, रक्तपात हुआ तो कुपाणपुर बदनाम हो जायेगा। दूसरी बात यह है कि जो लोग संघर्ष के लिए तैयार हैं और जिनकी नीति ही संघर्ष करना है ऐसे लोगों के साथ संघर्ष होने से बचाना ही श्रेष्ठ राजनीति है। विरोधी पक्ष को ऐसा मौका नहीं देना चाहिए कि वह अपने अचूक अस्त्र का प्रयोग कर सके। यदि वह अस्त्र उससे छीना न जा सके, तो कम से-कम उसे बेकार तो कर ही

देना चाहिए।"

जिला मजिस्ट्रेट के मन पर इन बातों का असर पड़ा। उन्होंने सोचा, इस आदमी को वह जितना बेवकूफ समझते थे, उतना है नहीं कुछ अक्ल भी रखता है।

उन्होंने कहा 'संघर्ष अगर होगा तो व बहुत जल्दी हार जायेंगे। किसानों को इस तरह की लडाई छेडने देना ठीक नहीं है। अंकुर को ही नष्ट न कर दिया गया, तो परिणाम विषमय हो जायगा।'

कृष्ण द्वैपायन ने कहा लडाई हम तभी करेंगे जबकि इसके अलावा और कोई रास्ता न रहे और वह लडाई ऐसी हो कि विरोधी पक्ष एकदम टूट जाये। पर जो झगडा बिना लडाई के निपट सकता हो वहाँ लडाई मोल लेना सिर्फ बेमतलब ही नहीं, खतरनाक भी है। एक हिंसा से दूसरी हिंसा का सृजन होता है। हम यदि उन्हें मारें, तो व भी हमें मारेंगे। कम से कम मारना सीख लेंगे। हो सकता है वे आज मार खायेंगे हार भी जायेंगे, पर किसी और समय हमें मारकर खुद जीतने के लिए मन के कोने में छिपी हिंसा की छुरी तेज करते रहेंगे। स्वाधीनता आन्दोलनवाले तो चाहते ही हैं कि हम पहली चोट करें। उन्हें तो यही उम्मीद है कि हम उन्हें मार मारकर मुल्क की सोयी हुई जनता को जगा देंगे। आप अगर उन्हीं के फन्दे में फँसना चाहते हैं तो फिर मुझे कुछ नहीं कहना है।"

मजिस्ट्रेट ने पूछा 'तो फिर आप क्या सलाह दे रहे हैं?

कृष्ण द्वैपायन ने विनीत होकर कहा, 'मैं किस तरह यह झगडा निपटाना चाहता हूँ, यह तो आपसे कहूँगा ही, पर उससे भी पहले एक बात कहनी जरूरी है। आपको तो मालूम ही होगा कि गाँववालों की माँग के पीछे एक उचित तर्क है।'

सुनता हूँ सडक बन जाने से किसानों की खेती का कुछ नुकसान होगा।'

बुरा न मानें, आपने इसे बहुत घटाकर कहा है। सडक बन रही है यह बहुत अच्छी बात है। पर इसके बन जाने पर इन गाँवों की पैदावार शायद आधी हो जाये।

"मुझे आश्चर्य होता है कि इंजीनियर ये सब बातें पहले से क्यों नहीं सोचते।'

'उन्हें जरूरत ही क्या है? अगर दो चार गाँवों की खेती खत्म हो जाये तो उनका क्या बिगडेगा? सरकार ने रेल के लिए मार्ग बनाया, तब क्या इंजीनियरों ने देशवासियों के स्वास्थ्य या उनके खाने के बारे में कुछ सोचा था? कितने कम खर्च में रेल लाइन बन सकती है उन्हें बस एक इसी बात का खयाल था।

अच्छा अब अपनी राय बताइए!'

'आप जैसे बुद्धिमान और हमदर्द मजिस्ट्रेट बहुत नहीं मिलते। इसलिए मैं आपको सलाह देने की हिम्मत कर रहा हूँ। अगर आप रतनपुर से बड़े इंजीनियर और कृषि विशेषज्ञों को बुलाकर इस विषय पर अच्छी तरह जाच करायें तो अच्छा होगा। तब गाँववाले भी समझेंगे कि उनकी खेती-बारी की समस्या को सरकार सहानुभूति से देखती है और उनकी उचित माँगों पर सोच विचार करने के लिए हरदम तैयार रहती है। नये सिर से जाँच शुरू होने में समय लगेगा। आन्दोलन दब जायेगा। आग बुझ जायेगी। और तब यह प्रचार करना होगा कि सड़क का प्लान बदल दिया गया है। यानी सरकार खुद किसानों की भलाई के लिए ऐसा कर रही है। साथ ही इसी बीच उस युवक का नेतृत्व भी तोड़ना पड़ेगा। गाँव के लोग उससे नाराज हो जायें, ऐसा करना कुछ कठिन काम नहीं होगा। तब आप उसे जेल में डाल सकते हैं, या कहीं और नजरबन्द कर सकते हैं। तब सड़क बनवायी जाय, जाँच कमेटी की सिफारिशों को भरसक अपनाने की कोशिश की जाये। मेरी यही राय है।

कृष्ण द्वैपायन की योजना करीब करीब मान ली गयी थी और इसी घटना ने उनके जीवन रथ के चक्के को नये रास्ते पर चला दिया।

दो साल के अन्दर ही कृष्ण द्वैपायन किसान-नेता बन गये थे यानी कृपाणपुर किसान सभा के अध्यक्ष। और यही उनके राजनीतिक जीवन की नींव थी।

कृष्ण द्वैपायन का विवाह अठारह साल की उम्र में हुआ था। उनकी धर्मपत्नी पद्मादेवी काशी के एक अत्यन्त सम्भ्रान्त कान्य-कुब्ज ब्राह्मण की पुत्री थी। शादी के समय उनकी आयु आठ वर्ष थी। चार साल और मायके रहकर बारह वर्ष की आयु में वह पति के घर आयी। उनकी चौदह वर्ष की आयु में कृष्ण द्वैपायन के पहले पुत्र का जन्म हुआ। कृष्ण द्वैपायन जब कृपाणपुर किसान सभा के अध्यक्ष थे, वकालत अच्छी चल रही थी, जिला परिषद् के करीब करीब स्थायी अध्यक्ष थे तब तक उनके चार लड़के और दो लड़कियां पैदा हो चुकी थीं—यानी जीवन की राह चलते चलते वे सफलता के एक मामूली मंजिले तक पहुंच गये थे। पद्मादेवी सात्विक ब्राह्मण घर की लड़की थी, वह काफी पवित्रता और शुचिता लेकर पति के घर आयी थी। कृष्ण द्वैपायन उन्हें श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे उनकी इज्जत करते थे, पर पत्नी के साथ वह कभी भी प्रेम के उच्छ्वसित आनन्द का अनुभव नहीं कर सके थे।

उनके व्यक्तित्व का जो विराट अंश एक सफल नेता बनने की प्रचण्ड लौ में पनपा था उसमें तमोगुण का प्रभाव, आकांक्षा की जटिलता अनुचित कुटिलता के सहारे निरन्तर सफलता की राह ढूंढना ही था, और ऐसी जगह में धर्मपत्नी पद्मादेवी का कोई स्थान नहीं था। फिर भी कृष्ण द्वैपायन के व्यक्तित्व के दूसरे

हिस्से म—जो भले ही छोटा हो, पर एकदम प्रभावहीन नहीं था—उस हिस्से म पत्नी के लिए आदर का स्थान था। उन्ह मालूम था कि अच्छे काम, बड़े काम महान काम के लिए सबसे ज्यादा समथन और सहायता पत्नी पद्मादेवी से ही मिलती, और यह भी जानते थे कि अन्याय या अनुचित काय के बाद भी यदि पश्चात्ताप करें तो उन्ह पद्मादेवी का आश्रय मिलेगा।

पति पत्नी का यह सम्बन्ध न तो सुख का है, न दुख का। कृष्ण द्वपायन धीरे धीरे बदलते जा रहे थे। पद्मादेवी से दूर होते जा रहे थे। उस जमाने में पारिवारिक जीवन मे पत्नी का मुख्य स्थान घर के अन्दर होता था। पति, बच्चे, कुटुम्बजन की सेवा तथा घर की देखभाल—यही उसका काम होता था। कृष्ण द्वपायन अधिकाश समय बाहर रहते थे—अपनी वकालत जिला परिषद राजनीति, जननीति, क्षमता नीति के क्रमश बढ़ते हुए क्षेत्र म दोपहर को खाना खाने के विश्राम के समय और रात को अल्प प्रकाश के एकान्त म पति पत्नी के घनिष्ठ सान्निध्य म ही उन दोनो के जीवन सम्बन्ध का थोडा बहुत मूल्य रह गया था। उन दिनों तक कृष्ण द्वपायन की राजनीति म शक्ति का उन्माद प्रबल नहीं था और पत्नी के साथ सघष की सीमा भी छोटी थी।

कुपाणपुर किसान सभा का अध्यक्ष बन जाने के बाद वह सीमा कुछ बढ गयी।

कृष्ण द्वपायन किसान नहीं थे किसान के लड़के भी नहीं थे, फिर भी वह ग्रामसमाज के तो थे ही। गाँववालो के साथ उनका प्रत्यक्ष सम्बन्ध था। खेती की समस्याओं को वह भरसक समझते, गाँव की समस्याओ से वह अनजान नहीं थे, पर इन समस्याओ का असली रूप कुछ और भी हो सकता है, परिवतनशील समाज म किसानो का अपना अधिकार और सत्ता हो सकती है जमीन के मालिक और उसे जोतनेवाले किसानो के बीच किसी अनिवाय सघष की सम्भावना हो सकती है—यह बात उनके मन मे कभी नहीं आयी थी। उनका दृष्टिकोण एक जमींदार का दृष्टिकोण था। किसानो का कल्याण जमींदार ही करेंगे और किसान उन्ह पाकर भरसर खुश रहगे। गाँव की दरिद्र जनता को कृष्ण द्वपायन अल्प भाग्यवान सन्तान मानने को तैयार थे जिसकी एक पिता के मनोभावो के साथ तुलना की जा सकती है। उदार दृष्टिकोणवाले जमींदारो द्वारा ही गाँवो का मगल हो सकता है उसी से उनकी उन्नति सम्भव है, कृष्ण द्वैपायन को इसमे बिल्कुल सन्देह नहीं था। तभी जब वह किसान सभा गठित करके उसके अध्यक्ष बने तो कुपाणपुर के जमींदारो को कोई खतरा नहीं दिखा। दूसरी ओर उस गाँव की माँगें पूरी हो जाने के कारण भी किसानों के मन मे उनके लिए आस्था हो गयी थी। जिला अधिकारियो ने भी इसे अच्छे रूप मे ही लिया।

उन दिनों हिन्दुस्तान मे कई स्थानो पर किसान आन्दोलन सिर उठाने लगा

था। उदयाचल अपेक्षाकृत शान्त राज्य था। वहाँ पर यह अशान्ति नहीं दिखायी पडी थी। इस समय कृष्ण द्वैपायन जैसे जिम्मेदार नेता किसानों के रहनुमा बनें, तो शासन शक्ति को किसी खतरे का डर नहीं।

पहले पहल कृष्ण द्वैपायन की पत्नी पद्मादेवी के मन मे ही डर पैदा हुआ। एक दिन दोपहर को खाना खाने के बाद कृष्ण द्वैपायन आराम कर रहे थे। पद्मादवी बगल म बठकर उन्ह पखा झल रही थी, तभी पूछ बठी, 'एक बात सुनी है, मन बडा भारी हो रहा है।

"कौन सी बात ?"

'मोहनलाल के बारे मे।'

'कौन मोहनलाल ?'

पद्मादेवी कुछ चकित हुइ, कृष्ण द्वपायन मोहनलाल को नही पहचानते, यह कोई सहज स्वाभाविक बात तो नही है।

मोहनलाल नाम तो अवश्य ही मामूली है, पर कृपाणपुर मे तो एक खास आदमी को ही मोहनलाल जाना जाता है।"

'मैं दस माहनलाल को पहचानता हू।" कृष्ण द्वैपायन की आवाज में कुछ गरमी थी।

'मोहनलाल सक्सेना।"

"हाँ, उसके बारे मे बहुत सी बातें सुनने को मिलती हैं—बहुत सी शिकायतें भी हैं जिनमे से बहुत सारी सच हैं।"

तुम्ह अच्छी तरह मालूम है कि उनमे से एक भी सच नहा है।"

पद्मादवी ने अपनी बात इतने शान्त पर जोरदार ढग स कही और उनकी बातो म एसा कोमल, निश्छल विश्वास भरा था कि कृष्ण द्वपायन एकदम चुप हो गय।

साथ-ही साथ उनके मन मे क्रोध भी उमडा।

पद्मादेवी ने पूछा, "ऐसी अफवाहे फैलाकर कौन उस शरीफ लडके को बदनाम कर रहा है ?"

कृष्ण द्वपायन ने अधीर और तज आवाज म कहा, "मोहनलाल सक्सेना बिल्कुल अच्छा आदमी नहीं है।"

"क्या ? उसने क्या किया है ' उसका कसूर क्या है ?"

वह किसानो को जमीदारो के खिलाफ भडका रहा है, और सरकार के खिलाफ भी।"

'बस इतना ही न ?"

वह चरित्रहीन भी है।"

'झूठ बात है।'

"गाँववाले तो ऐसा ही कहते हैं।'

'नहीं, तुम लोग ऐसा कहते हो। उसको तुम्हीं लोग बदनाम कर रहे हो।"

अब कृष्ण द्वैपायन बहुत नाराज हो गये, बोले, "तुम्हें जो नहीं मालूम है या जो नहीं समझती उसके बारे में बातें मत किया करो।'

'मैं सब जानती हूँ और समझती भी हूँ, तभी बोल रही हूँ। पद्मादेवी की आवाज में गुस्सा नहीं, बल्कि व्यथा थी—"तुम किसान सभा के अध्यक्ष बने हो, गाँववालों का कल्याण कर रहे हो, पर इस मार्क्सवादी देशप्रेमी लड़के के पीछे क्यों पड़े हो, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। वह अपनी इच्छा से तो यहाँ नहीं आया है, उसे यहाँ सरकार ने नजरबन्द कर रखा है। वह हफ्ते में दो दिन से ज्यादा शहर नहीं आ सकता सो भी पुलिस से हुक्म लेकर ही। तुम अच्छी तरह जानते हो कि वह चरित्रहीन नहीं है और हो भी नहीं सकता। माँ बाप का इकलौता बेटा है। अच्छे घर का लड़का है। धन-दौलत, मोह माया सब छोड़कर वह देश सेवा कर रहा है, जेल काट रहा है पुलिस की मार खाता है, उसे पाप कैसे छू सकेगा? तुम उसे यहाँ से कहीं और भेज दो, पर उसे इस तरह बदनाम करके तुम लोगों को क्या मिलेगा? यह अधर्म नहीं है?

"तुम्हें उसके बारे में इतना सब कैसे मालूम हुआ?'

'केवल मुझे क्यों, तुम्हें नहीं मालूम है? तुम भी तो जानते हो।"

'बूटासिंह की लड़की हरप्यारी के साथ उसके सम्बन्ध की बात तुम जानती हो?"

"सुना है। एकदम झूठ बात है। हरप्यारी को उसने जमींदार के चंगुल से छुड़ाया है।

"खाक छुड़ाया है। रक्षक ही बाद में भक्षक बन जाता है।

'मोहनलाल उस मिट्टी का नहीं बना है।

'तुम तो उसकी भक्त बन गयी हो। जानती नहीं हो, वह मेरा दुश्मन है?'

पद्मादेवी चौंक पड़ी— 'दुश्मन? भला वह क्यों तुम्हारा दुश्मन बनेगा? वह परदेसी है, आज यहाँ है, कल चला जायगा।'

"फिर भी वह मेरा दुश्मन है।' कृष्ण द्वैपायन की आवाज खूंखार हो उठी—"वह मेरा विरोधी है।'

"विरोधी होने से ही क्या कोई दुश्मन बन जाता है? मैं भी तो कई बातों में तुम्हारा विरोध करती हूँ।

वह मेरा कट्टर दुश्मन है। किसान सभा के विरोध में उसने प्रचार शुरू किया है। कहता है मैं जमींदारों का दोस्त और सरकार का तावेदार हूँ। मेरा उद्देश्य किसानों का कल्याण नहीं है, बल्कि किसानों को कब्जे में रखकर जमींदारों की स्वार्थपूर्ति और सरकार की शक्ति को बनाये रखना मेरा उद्देश्य है।

पद्मादेवी थोडी देर चुप रही, फिर बोली, "इतना गहन विषय मैं आसानी से नहीं समझ सकती, पर यदि तुम्हारी बात सही हो, तो भी उसके चरित्र पर झूठा कलंक लगाकर, उसकी बेइज्जती करके निकालना बहुत बडा अन्याय है। तुम लोग भी किसानों को समझा दो कि मोहनलाल जो कुछ कह रहा है वह सच नहीं है। वह तुम्हारा मुकाबला थोडे ही कर सकता है।'

कृष्ण द्वपायन ने कहा, "राजनीति बडा मुश्किल खेल है। इसमें सच झूठ, न्याय अन्याय, पाप-पुण्य का कोई स्थान नहीं है। यहाँ तो सबकुछ मिलकर खिचडी पक जाती है। राजनीति का मूलतत्त्व तो यह है कि विरोधी को नीचा दिखाना होगा, जड से खत्म कर देना होगा। मोहनलाल सक्सेना केवल एक मनुष्यमात्र नहीं है, वह एक भावना है आदर्श है, शक्ति है। उसके और मेरे आदर्श, भावना और शक्ति के बीच संघर्ष है। उसे निर्मूल कर देना पडेगा। यदि आज वह सम्मान के साथ, अपना गौरव ज्यों-का त्यों बचाकर गाँव से विदा ले ले, तो उसका आदर्श यहाँ बचा रह जायगा, कइयों के मन में वही आदर्श और भाव अंकुरित होंगे और एक दिन बहुत बडे दानव की तरह हमारे खिलाफ उठकर खडे हो जायँगे। मोहनलाल के आदर्श को नष्ट करने के लिए ही उसका व्यक्तिगत सम्मान, मर्यादा—सबकुछ नष्ट कर देना होगा। गाँववाले यह समझेंगे कि वे गलत आदमी की गलत भावना को अपने मन में जगह दे रहे थे। यह उनका झूठ मूठ का मोह भर था और यह समझ जाने पर वे खुद ही मोहनलाल को यहां से निकाल बाहर करेंगे। मैंने जिला मजिस्ट्रेट से कह दिया है कि सरकार मोहनलाल को कहीं और नजरबन्द करने की गलती न करे। गाँववाले खुद ही मोहनलाल को हटाने की माँग करेंगे।'

उस दिन पद्मादेवी ने बातों को आगे नहीं बढने दिया, चुप बैठी पंखा झलती रह गयी थी और कृष्ण द्वपायन भी थोडी देर में निश्चिंत निद्रा में खो गये थे। उनके गोरे चेहरे पर निश्चिंत सफलता की छाप और तृप्ति की मृदु मुस्कान—दोनों मिलकर एक ऐसी प्रबल अभिव्यक्ति बन गयी थी कि उसे देखकर पद्मादेवी बार बार सिहर उठती थी।

मोहनलाल सक्सेना इज्जत से विदाई नहीं ले सका था। जिन गाँववालों को उसने सत्याग्रह के लिए संगठित किया था, उन्हीं में से कइ एक ने उसके उस गाँव से हटाये जाने की माँग करते हुए एक स्मरण पत्र पर बिना पढे ही अँगूठे का निशान लगाकर उसे कृष्ण द्वैपायन को दिया था और कृष्ण द्वपायन ने कृपाणपुर किसान सभा का अध्यक्ष होने के नाते उस स्मरण पत्र को जिला मजिस्ट्रेट के पास तक पहुंचा दिया था। जल्दी ही मोहनलाल को गिरफ्तार करके अदालत में हाजिर किया गया। अधिकारियों ने यह बात अवश्य समझ

ली थी कि गाँव की एक सुन्दर बाल विधवा के साथ अवध प्रणय के अभियोग मे उसे सजा देना आसान नही होगा। सीनाजोरी के बदले अक्ल से काम लिया गया और मुकदमे के बीच मे ही मोहनलाल को किसी भारी भरकम राजनीतिक अपराध का अभियोगी बनाकर एक और भी बडा न्याय का प्रहसन करने के लिए इलाहाबाद भेज दिया गया था।

इन सभी बातो मे कृष्ण द्वपायन का हाथ था, सिफ एक चीज को छोडकर—वह यह कि विदाई के समय मोहनलाल को सम्मानित करने के लिए एकाएक स्टेशन पर शहर की पच्चीस महिलाएँ पहुच गयी। उन महिलाम्रो ने मोहनलाल के माथे पर चदन लगाया था और गले मे माल पहनायी थी। कृष्ण द्वपायन गुस्से से तिलमिला उठे थे, क्योकि उन्हे मालूम हो गया था कि इस अभिनन्दन के पीछे उनकी पत्नी पद्मादेवी का हाथ था।

जो झूठा कलक कृष्ण द्वपायन ने मोहनलाल के सिर पर थोप दिया था, वही एक दिन जो शीघ्र आया, उनके अपने जीवन म सच हो गया। गाव की बाल विधवा हरप्यारी नही, बल्कि कृपाणपुर शहर के लडकियो के स्कूल की शिक्षिका कौशल्या। अपूव सुन्दरी लास्यमयी, सुसस्कृत तरुणी। उन दिनो कृष्ण द्वपायन के जीवन म निरन्तर उन्नति की लग्न चल रही थी। बढती हुई जिम्मदारी तथा नेतागिरी मे लडकियो के स्कूल की अध्यक्षता भी शामिल हो गयी थी। जीवन की अलिखित अनिवाय नियति के वशीभूत हो वह कौशल्या के प्रति आकृष्ट हो गय थे। वजिष्ठ, उष्णवीय पौरुष के विराट अश जिसम पद्मादेवी जसी पत्नी के साहचय स एक निराली स्वजनहीन शून्यता बनी हुई थी कौशल्या ने एकाएक बिना किसी पूव सूचना के उसे भर दिया था। उसकी प्रखरता ने पद्मादवी के स्निग्ध अस्तित्व को एक जोरदार धक्का दकर बहुत दूर हटा दिया था। ज्वलन्त जीवन की आग से तप्त कृष्ण द्वपायन को इससे कोई क्षोभ नहा था बल्कि उन्ही दिनो उनकी कवि प्रतिभा जसे किसी जादुई स्पश से उद्भासित हो उठी थी। किसी अदृश्य सम्मोहन के प्रभाव से मुग्ध होकर उन्होंने एक दुर्विनीत निलज्ज उल्लास से अपना श्रष्ठ काव्य कृष्णलीला लिखा था।

जीवन की प्राय ढलती बेला मे एक कोमल वल्लरी की बाँहो मे उलझकर कृष्ण द्वपायन मानो सबकुछ भूल गये। पर अदृष्ट देवता की अदृश्य व्यवस्था से सत्यानाश स थोडा पहले ही वह जाग उठे और उन्हे मुक्ति का रास्ता भी मिल गया।

उनके साथ कौशल्या का नाम जोडकर एक आधी उठने लगी थी, यह बात कृष्ण द्वपायन अच्छी तरह जान गये थे। कौशल्या कितनी भी रूपसी हो, उसका प्रेम कितना भी उन्मादभरा हो, पर कृष्ण द्वपायन जानते थे कि उनका अपना

जीवन बहुत मूल्यवान है। अपनी सहजात बुद्धि से वह समझ गये थे कि कौटाल्या काण्ड को छिपाने के लिए एक ऐसा तीव्र प्रकाश चाहिए जो उनके अभिनव गौरव से जनता की आँखों को चकाचौंध कर दे। 'कृष्णलीला' में राधा के कलंक प्रकरण में उन्होंने लिखा था—"चाँद के कलंक की भाँति राधा का कलंक भी उनका गौरव ही है।' कृष्ण द्वैपायन को फिर चाँद जैसा ही उज्ज्वल बनना पड़ेगा। कलंक का गौरव न सही, पर अपयश की कालिमा से वह अपना सारा जीवन अन्धकारमय नहीं करेंगे।

और उस आलोकप्रवाह की सृष्टि करने का अवसर भी एक दिन मिल ही गया। १९३१ के स्वाधीनता आन्दोलन की बाढ़ कुपाणपुर तक आ पहुँची। स्कूल, कालेज के विद्यार्थी, विदेशी सामान की दूकानों के सामने सत्याग्रह करने लगे। एक दिन पुलिस ने उन पर लाठी चार्ज किया। दूसरे दिन शहरवालों ने आश्चर्य तथा श्रद्धा के साथ देखा कि विद्यार्थियों के जुलूस में सबसे आगे स्वयं कृष्ण द्वैपायन थे। मोटी खादी का धोती कुर्ता, पर बिल्कुल नंगे। रास्ते पर भीड़ इकट्ठी हो गयी। जुलूस सबसे खतरनाक जगह की ओर बढ़ चला—यानी जिला मजिस्ट्रेट की अदालत की ओर। जिस अदालत में खड़े होकर कृष्ण द्वैपायन ने सालों वकालत की थी, आज वहीं जाकर वकीलों से अंग्रेजी अदालत छोड़ने का अनुरोध करेंगे। सदर के मैदान में सशस्त्र पुलिस की भीड़ खड़ी थी। कृष्ण द्वैपायन ने विजयी वीर की तरह पुलिस सुपरिटेंडेंट के सामने पहुँचकर कचहरी के अन्दर जाने की अनुमति माँगी। माँग नामंजूर हो गयी। उसी समय जुलूस की युवक-जनता को लेकर कृष्ण द्वैपायन ने वहीं पर सभा की। उन्होंने सिर्फ स्वतन्त्रता संग्राम में शामिल होने का आवाहन ही नहीं किया, बल्कि अपनी अक्षमता, कर्तव्य में त्रुटि और कमजोरियों के लिए कुपाणपुर निवासियों से क्षमा भी माँगी—"आज इस महान जनता के संकल्प में शामिल होने से पहले मैंने अपना चेहरा अच्छी तरह देखने की कोशिश की। अपने को देखकर मुझे गौरव तो क्या होता, लज्जा और ग्लानि से मेरा सिर झुक गया। स्वार्थपरता, अन्याय, कमजोरों पर ज्यादती, समर्थ के सामने अपनी मजबूरियों के कारण सिर झुकाना, कितना लोभ, लालसा, पाप—न जाने कितना जंजाल भरे जीवन में भरा हुआ है। फिर भी लोगों की आँखों में मैं एक सफल पुरुष हूँ। प्रसिद्धि यश—ये मेरी सफलता के साज हैं। पर मैं ही अपने मन में जानता हूँ कि इस सफलता के नीचे कितनी शून्यता है। इसीलिए आज मेरे मन में आया कि सारा पाप, अन्याय, अधःपतन तथा सफलता यदि कुछ हो तो, सबकुछ लेकर भारत माता के चरणों में आ खड़ा हो सकता हूँ। माँ के सामने सन्तान को कोई लज्जा नहीं। एक माँ ही ऐसी होती है जो सारे अपराधों को क्षमा करके सन्तान को स्वीकार कर लेती है। हम छोटे छोटे मनुष्य हैं, पर जब महान आदर्श की ज्योति हम पर छा

जाती है तो हम भी कुछ महान हो जाते हैं। हमारा जीवन भी आलोकित हो जाता है। हमारी कलंक कालिमा, हमारी कमजोरियाँ समाप्त हो जाती हैं। आज हमारे सामने महान बनने का एक मौका आया है, मान सम्मान-दौलत लेकर महान बनने का नहीं, बल्कि प्यार से, दुख से, वीरता से महान बनने का, अन्याय के विरोध में छाती तानकर खड़े होकर और देश के लिए अपना जीवन समर्पित कर देने के साहस से महान बनने का।

पुलिस की लाठी से उस दिन जनता तितर बितर कर दी गयी थी। कृष्ण द्वैपायन के दीर्घकाय बलिष्ठ शरीर पर भी लाठी पड़ी थी। उसी समय जाने किसने फोटो ले लिया। वह फोटो सभी अखबारों में छापा गया था। कृष्ण द्वैपायन एक दिन हवालात में रहे। दूसरे दिन उनके मामले पर विचार हुआ—छः महीने का सश्रम कारावास।

जेल जाने से पहले कृष्ण द्वैपायन कांग्रेस के सदस्य बने। जेल जाने के दूसरे दिन ही वह कृपाणपुर जिला कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये थे। जिन्दगी में एकदम मोड़ आ गया था।

पाँच

दफ्तर में अपने निश्चित आसन पर बैठकर कृष्ण द्वैपायन ने तीन बार अपने इष्टदेवता का नाम स्मरण किया। बगल में बड़े करीने से कुछ जरूरी कागज रखे थे, शासन कार्य की कुछ समस्याएँ थीं, उन पर तुरन्त मुख्यमन्त्री की राय लेनी जरूरी है। पहली फाइल खोलकर कृष्ण द्वैपायन ने आँखें टिका दीं। दूसरा पृष्ठ देख ही रहे थे कि टेलीफोन करने की जरूरत पड़ गयी। नम्बर घुमाकर कुछ क्षण प्रतीक्षा करते रहे। दूसरी ओर से आवाज आ गयी, तो बोले, "आप किस समय आ रहे हैं ?'

'दस बजे हाजिर होऊँगा, साहब!'

'उससे थोड़ा पहले ही आ जाइए।

राज्यपाल महोदय ने बुलाया है। साढ़े नौ बजे वहाँ पहुँचना है।

'तो फिर यहाँ सवा नौ बजे आ जाइए।'

'बहुत अच्छा सर!'

'हाँ एक बात और है।'

हुक्म कीजिए, सर!'

"अभी इस प्रान्त के मुख्यमन्त्री कृष्ण द्वैपायन कौशल ही हैं।"

"जरूर हैं सर!"

"इस बात को याद रखिएगा।'

टेलीफोन रखकर कृष्ण द्वैपायन थोड़ा मुस्कराये। फाइल अच्छी तरह बन्द करके एक ओर रख दी। दूसरी फाइल खोलकर करीब दस मिनट उसे देखते रहे, फिर उस पर अपना आदेश लिख दिया।

टेलीफान की घण्टी बजी।

"नमस्ते, देशपाण्डेजी!" मिठास भरी आवाज मे कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "सवेरे सवेरे दफ्तर आते ही आप ही की आवाज सुनायी पड़ी, आज दिन अच्छा बीतेगा।'

टेलीफोन के उस छोर पर माधव देशपाण्डे थे, बोले, 'विनय मे भी आप अजेय हैं।'

"अजेय कहाँ रह गया हूँ देशपाण्डेजी!' कृष्ण द्वैपायन की आवाज मे पराजय की तनिक भी खनक नही थी—'मेरा जो कुछ भी बल था, सब खासकर आपकी सहायता से था। आज तो मुझे बहुत कमजोरी महसूस हो रही है।"

'आप यह क्या कह रहे हैं, कौशलजी? आप जैसे शेर की जबान से ऐसी बातें शोभा नही देती। आप हमारे नेता हैं। मैं जैसा पहले था, वैसे ही अब भी आपके साथ हू।'

'देशपाण्डेजी, आप असत्य कह सकते हैं, पर अप्रिय कदापि नही कह सकते। मुझे कालिदास का श्लोक याद आ रहा है—अर्थोहि कन्या परकीय एव—वैसे ही सरकार भी तो परायी वस्तु है। काश्यप मुनि ने कहा था, 'कन्या परायी वस्तु है। आज उसे पति गृह भेजकर मेरी आत्मा वैसी ही शान्ति पा रही है, जैसे कि अमानत लौटा देने पर होता है।' कृष्ण द्वैपायन ने बड़े सुन्दर ढग से आवृत्ति की—'जातो ममाय विशद प्रकाम प्रत्यर्पितन्यास इवान्तरात्मा।' फिर आग अपनी ओर से जोड दिया—"मैं भी शासनसूत्र किसी के हाथ मे सौंपकर शान्ति पाना चाहता हूँ।"

माधव देशपाण्डे चकित हो गये, बाले, "यह क्या कह रहे हैं, कौशलजी? आपके अलावा यह जिम्मेदारी और कौन ले सकता है?'

"दुनिया म कुछ भी अविनाशी नही है देशपाण्डेजी, कोई भी स्थान रिक्त नही रह पाता। माँ की मृत्यु हो जाने पर सन्तान थोड़े दिन बाद शोक भूल जाती है। सन्तान के मर जाने पर भी कालान्तर म माँ के चेहरे पर हँसी फैलने लगती है।' एकाएक उनकी आवाज कुछ थकी हुई लगी। कहने लगे, "मैंने बहुत दिनो तक बोझ ढोया है। फूलो की मालाएँ मिली हैं, पर ईट पत्थर भी कुछ कम नहीं मिले। अब अच्छा नहा लगता। शरीर भी कुछ ठीक नही है। इसीलिए

कल से सोच रहा हूँ कि यह सब किसी और के हाथ मे सौप दू। आज सवेरे सुदर्शनजी आये थे। उनसे बातें हुइ। वह प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष हैं। योग्य व्यक्ति चुनने की जिम्मेदारी उन्ही पर है।'

माधव देशपाण्डे थोडी देर चुप रहे, फिर बोले 'आप मजाक कर रहे हैं, कौशलजी ?"

'नही माधव भाई मजाक नही। उम्र काफी हो गयी। कल स महाभारत के कुछ श्लोक मुझे बार बार याद आ रहे हैं। वन पर्व म पाण्डव नर नारायण के सुदर आश्रम मे पहुचते हैं— मनोन काननवरे सवतु-कुसुमोज्ज्वलो। इस मनोरजक कानन मे सभी ऋतुओ के फूलो स उज्ज्वल हर पड पर फूलो की बहार और फूलो के बोझ से झुके हुए वृक्ष हैं। 'दि यपुष्पसमाकीर्णा मन प्रीति विवधनीम्। माधव भाई, ये सब याद आ रहे हैं और मैं सोच रहा हू अब तो एक दिन यमराज सिर पर सवार होग ही। कम से कम उससे पहले थाडे दिन एकान्त म ईश्वर चितन कर लू।"

माधव देशपाण्डे उत्तेजित हो उठे ऐसा नही हो सकता है कौशलजी! आप यदि अवकाश ले लेंगे तो मुख्यमन्त्री सुदशन दुवे ही बनेंगे।

'नही-नही, देशपाण्डेजी आपके रहते सुदशन दुबे कैसे बनेंगे ?

"आप बहुत अच्छी तरह जानत हैं कि उदयाचल म मराठा राज्य नही चलेगा।'

'क्यो नही चलेगा ? उदयाचल मे हिदी मराठी के झगडे को खत्म करना ही होगा।

कहते तो सभी ऐसा हैं पर द्वेष भी वही लोग बढा देते हैं। खैर असली बात यह नही है। आपके साथ मेरा मतभेद जरूर है पर सुदशन दुबे को मुख्यमन्त्री नही बनने दूगा।

कृष्ण द्वैपायन आश्चर्यचकित-से बोले, 'यह क्या कह रहे हैं देशपाण्डेजी ? सुदशन दुबे ने तो कहा कि वह यदि मुख्यमन्त्री बनें तो आप वित्तमन्त्री बनना चाहेंगे, और आपकी माग वह मान भी लेंगे।

माधव देशपाण्डे ने कहा, "कौशलजी ये बातें फोन पर नही हो सकती मैं आ रहा हूँ आपके पास समय है ?

कृष्ण द्वैपायन बोले साढे दस बजे आइए। ग्यारह बजे कबिनट मीटिंग है, आप आध घण्टा पहल आ जाइए।

टलीफोन रखकर कृष्ण द्वैपायन सफलता की हसी हसे। माधव देशपाण्डे की महत्त्वाकाक्षा जितनी अधिक है, अक्ल उससे कही कम। फिर भी वह जानते हैं कि यदि सुदशन दुबे मुख्यमन्त्री बन जायें तो उदयाचल की मराठी राजनीति मे उनकी दाल अधिक दिन नही गल सकेगी। कृष्ण द्वैपायन को वह हटाना

नही चाहते, सुन्शन दुवे के साथ गठबन्धन करके वह कृष्ण द्वपायन के मन्त्रिमण्डल मे वित्तमन्त्री की गद्दी लेना चाहते हैं।

नौ बजते ही कृष्ण द्वैपायन के निजी सचिव जगमोहन अवस्थी आ गया। उम्र छियालिस, जवान, गजा सिर, नाटा कद, बड़े ढग से सजायी गयी बडी बडी मूछें। अवस्थी को कृष्ण द्वपायन बहुत दिनो से पाल रहे हैं—जब कुपाणपुर में वकालत करते थे, तब से मुख्यमन्त्री बन जाने के बाद उसे सरकारी नौकर बना लिया है। अवस्थी एक साथ ही उनका अगरक्षक, विवेकरक्षक और विश्वासी अनुचर भी है।

कमरे म आकर अवस्थी प्रणाम करके फश पर बठ गया। कृष्ण द्वपायन उसकी ओर दखने लगे।

अवस्थी न वहा, दुर्गा भाई।"

एकदम चकित होकर कृष्ण द्वपायन ने प्रश्न किया, 'तुम अच्छी तरह जानते हो?"

"जी हाँ।'

"दुगा भाई?"

"जी हा।'

"साथ म और कोई था?'

"नहा।'

'गाडी कहाँ जाकर रुकी?'

'हरिशकर त्रिपाठी के यहाँ।"

"सलाह मशवरा हुआ?"

"जी हा।"

कितनी दर तक?'

'रात दो बजे तक।

'सरोजनी अब कहा है?"

'सुदशनजी के मकान म।"

'आज दिन भर वही रहगी?"

रात को जाने का इरादा है।"

'कहाँ जायेगी?'

'इलाहाबाद।"

'गाडी से?"

'नहीं कार से।

किसकी कार से?

'सुन्शनजी की।'

कृष्ण द्वैपायन कुछ देर तक सोचते रहे। उनकी लम्बी नाक मानो और भी कठोर दिखने लगी। उनके चौड़े माथे पर चिन्ता की रेखाएँ प्रकट हो आयी। कुछ क्षणो बाद टलीफोन का नम्बर मिलाया—दूसरी ओर स आवाज आयी तो बोले, 'मैं के० डी० कौशल बोल रहा हूँ। दुगा भाई हैं?'

'अभी पूजा के कमरे म हैं।'

"इतनी दर तक?'

"कल बहुत रात को घर लौटे थे, सवेरे उठन मे दर हो गयी।

'तबीयत ठीक है न?

"जी हाँ। पिताजी से कह दूगी, आपको फोन करेंगे।"

'नही नहा मैं ही फिर फोन करूगा।

मुस्कराकर कृष्ण द्वैपायन न फोन रख दिया। अवस्थी की ओर देखकर बोले 'गुड वर्क। अब एक और काम करना है।

अवस्थी चुपचाप आदेश की प्रतीक्षा करने लगा।

'भारत टाइम्स के गोपाल कृष्ण स कहो, बारह बजे मुझसे भेंट करें।'

अवस्थी चला गया।

सवा नौ बजे उदयाचल के मुख्य सचिव के० सी० श्रीवास्तव हाजिर हुए। उन्हे बैठाकर कृष्ण द्वैपायन ने कहा 'आपको ज्यादा देर नहा रोकूगा, क्योंकि राज्यपाल के साथ आपका समय निश्चित है। यह फाइल मेरे पास आने से पहले हरिशकर त्रिपाठी के पास कसे चली गयी थी?

श्रीवास्तव फाइल पर सरसरी निगाह डालकर बोले लगता है गृह सचिव ने भेज दी होगी।

"नही, पाटिल न नही भेजी यह मुझे मालूम है।'

'तब शायद

'आपकी सलाह पर रामकृष्णन ने भेजी है।'

'मेरी सलाह से?"

'हाँ। यह आप अच्छी तरह जानते थे। इसीलिए मैंने आपस कहा था कि अभी मुख्यमन्त्री मैं ही हूँ कोई और नही यह आपको याद रखना चाहिए।

थोड़ा रुककर फिर बोले 'आपके तबादले के लिए मैंने दिल्ली लिख दिया है। इस तरह की राजनीति के चक्कर मे पड़कर आप यहाँ नही टिक सकेंगे। राजनीति मुख्य सचिव के लिए नही होती यह मामूली सी बात तो आपको मालूम ही होनी चाहिए।

फिर आवाज धीमी करके बोले, आपसे एक और बात कह रहा हूँ—नया मन्त्रिमण्डल तीन दिन के अन्दर ही बन जायेगा और मुख्यमन्त्री मैं ही बनूगा।

ग्रब ग्राप जा सकते हैं।"

श्रीवास्तव के खडे हो जाने के बाद उन्होंने फिर कहा, "मैं उम्मीद करता हूँ कि मन्त्रिमण्डल म शपथ ग्रहण के दूसरे दिन ही मैं नया मुख्य-सचिव नियुक्त कर लूगा, ग्राप तबादले के लिए तैयार रहिए।'

मुख्य सचिव के जाने के बाद कृष्ण द्वैपायन फिर राज काज म जुट गये। पन्द्रह मिनट मे ही उन्होंने बाकी खास खास फाइलें भी देख ली। दो बार टेलीफोन पर भी बातें की। इस बीच उनके निजी दफ्तर के कमचारी भी ग्रा गये। कृष्ण द्वैपायन ने इस दफ्तर म ज्यादा भीड नही रखी थी। तीन स्टेनो सेक्रेटरी पाच टाइपिस्ट ग्रौर ग्राठ ग्रन्य ग्रधिकारी, उनके इस सेक्रेटरिएट मे कुल इतने ही लोग हैं।

दुमजिल पर कृष्ण द्वैपायन के दफ्तर मे बहुत कम लोगा का ग्राना जाना हो पाता है। मिलनवाला को निचली मजिल पर बैठाकर पर्ची ऊपर भेज दी जाती है। कृष्ण द्वैपायन उन्हें बारी बारी से बुलाते हैं। कभी कभार किसी खास सम्मानित प्रतिथि का स्वागत करने के लिए वह खुद ही नीचे उतर ग्राते हैं ग्रौर उन्ह विदा करन वह मुख्यमन्त्री भवन के फाटक तक ग्राते हैं ग्रौर गाडी के चले जाने तक रुकते भी हैं। भेंट करनेवाला के विषय म कृष्ण द्वैपायन के कुछ *खास नियम* हैं। बहुत जरूरी काम होने पर ही वह सवेरे किसी स भेंट करते हैं। जहाँ तक सम्भव हो, वह हर दर्शनार्थी को बुलाते हैं। किसी को बहुत देर तक इतजार भी नही करना पडता। पर कभी कभी इस नियम को भी वह तोड देते हैं। मुलाकातियो मे लेखक शिक्षक, समाज सेवियो की कुछ ग्रधिक खातिर होती है। विरोधी दल के नेताग्रो को वह खुद नीचे ग्राकर ऊपर लिवा ले जाते हैं ग्रौर विदा करने फाटक तक जाते हैं। काग्रेसी नेताग्रो के साथ भी ऐसा ही करते हैं। उनके ग्रपने ग्रखबार के सम्पादक ग्रौर मुख्य सचिव ग्रगर साथ ही ग्रा जायें ग्रौर राजकाज के सम्बन्ध म ग्रगर कोई बहुत जरूरी निणय न लेना हो तो वह पहले सम्पादक को ही बुलाते हैं।

पेशेवर राजनीति का सबसे कठिन काम है गुट को ठीक स बनाये रखना ग्रौर उसका नेतत्व ग्रपनी मुट्ठी म रखना। इसके चलते तमाम किस्म के ग्रौर तरह-तरह के लोगों के साथ कृष्ण द्वैपायन को भेंट *मुलाकात करनी पडती है*, बातें करनी पडती हैं ग्रौर गुटनीति ग्रौर कूटनीति से काम लेना पडता है। इस तरह के लोगों के साथ वह भरसक शाम को ही मुलाकात करते हैं।

व शाम को खास मकान के निचले हिस्से की विशाल बैठक म ग्रा बैठते हैं। ग्रकेले ग्रकेले या दो-दो चार चार करके ऐस लोग हाजिरी देना शुरू करते

हैं। बरामदे मे कतार मे रखी हुई बेंत की कुर्सियो पर बैठे इन लोगो मे से कृष्ण द्वैपायन के कुछ खास लोग औरो के मुकाबले कुछ अधिक स्वतन्त्रता के साथ रहते हैं बाकी लोग उन्ह देखकर कुछ दब जाते हैं।

उनके खास-खास लोग मकान म इधर-उधर घूमते हैं। कृष्ण द्वैपायन के लडको के साथ गप लडाते हैं। अवस्थी के साथ दबी आवाज म सलाह-मशवरा करते हैं। कभी-कभी एकाध जन एसे भी होते हैं जो बात करते करते सीधे *कृष्ण द्वैपायन के पास तक पहुच जाते हैं उनके घुटने छूकर प्रणाम करते हैं और* लौटकर फिर बरामदे मे बठ जाते हैं। उनके चेहरे पर तृप्ति तथा गौरव मिश्रित मुस्कान साफ दिखायी देती रहती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि झुण्ड के झुण्ड उनके खास आदमी हल्ला करते हुए सीधे बठक म चल जाते हैं। कृष्ण द्वैपायन बातें बीच मे ही रोककर उठ खडे होते हैं। अभिवादनो का लेन-देन होता है। हल्ला गुल्ला से सारा घर भर उठता है। उसके बाद कृष्ण द्वैपायन उन्ह बरामदे मे बठाकर प्रस्तुत दर्शनार्थियो के साथ बीच ही म छोडी बात का सिलसिला फिर वहीं से पकड लेते हैं।

इन सब मुलाकातियो म राजनीतिक खेल के हर तरह के खिलाडी हैं छोटे मझोले बडे आदर्शवादी आदर्शहीन, आदर्शभ्रष्ट, ईमानदारी से काम करनेवाले और एकदम स्वार्थी, सभी हैं। गुटबाजी मे निपुण विश्वासी अनुचर हैं बार-बार विश्वास भग का काय करनेवाले भी हैं, जो चेहरे पर हमेशा विनय का मुखौटा लगाये रखने के अभ्यस्त हैं। ठकेदार, जमींदार, गाडी लारी-बस के लाइसेंस के इच्छुक, उद्योगपति किसान मजदूर, आन्दोलन के नेता सभी। यानी, सक्षेप म कहा जा सकता है कि उदयाचल के मानव-समाज के हर क्षेत्र के प्रतिनिधि प्रार्थी के रूप मे आते हैं।

सालो से रोज इनके चेहरे देखते देखते, रोज इनसे बातें करते करते कृष्ण द्वैपायन ने उन लोगो की एक एक नस पहचान ली है। उनके मुह खोलने से पहले ही कौशलजी उनके मन की बात ताड लेते हैं। उनके चेहरे की ओर देखते ही वह उनका अभिप्राय, इच्छा, मतलब—सब समझ लेते हैं।

राजनीतिक खल म जो नेता की भूमिका अदा कर रहे हैं कृष्ण द्वैपायन को उनमे से हरएक की पूरी पूरी जानकारी है। उन लोगो की कमजोरी स्खलन पतन और दृढता एव शक्ति के साथ भी उनका घनिष्ठ परिचय हो चुका है। गुप्त खबरें जुटाने के लिए कृष्ण द्वैपायन ने अवस्थी की देख भाल मे एक व्यवस्था कर रखी है। मौजूदा या सम्भावित प्रतिद्वन्द्वी या गुट का मुकाबला करने के लिए जिन लोगो के आने जाने काम काज, भावनाओ आदि की जानकारी रखना जरूरी है उनके बारे में जरूरत पडने से पहले ही कृष्ण द्वैपायन सब कुछ जान लेते हैं। दुष्टो का कहना है कि जनता के खच पर उनका निजी खुफिया विभाग

प्रात के कोन कोने मे काम कर रहा है।

पर वह जानते हैं कि राज काज चलाने के लिए ऐसी खबरें इकटठी करते रहना बहुत जरूरी है। प्रशासन के उच्च कर्मचारियो के चाल चलन, कमजोरिया, गलतिया के बारे मे भी वह अपने निजी सवाददाताओ से नियमित रूप स खबरें इकटठी करते रहते हैं।

प्रत्येक बडे अधिकारी के बारे मे उनका अपना एक 'डोसियर' है जो अवस्थी के निपुण हाथो से तैयार कराया गया है। जब तक खास जरूरत न हो वह इस अस्त्र का उपयोग नही करते। बडे अधिकारियो का अपमान करने की आदत कृष्ण द्वपायन म नही है बल्कि वह मानव चरित्र की हजारो कमजोरियो को जानते हैं, समझते हैं, और क्षमा भी कर देते हैं। साथ ही उन्हे यह भी मालूम है कि भारत की वतमान राजनीतिक स्थिति मे अफसरो पर पूरा काबू बनाये रखना मुख्यमन्त्री के लिए आसान नहा है। पर अगर ऐसा कर न पायें ता शासन तन्त्र निष्क्रिय हो जायेगा। इसीलिए उन्होने अपनी एक खास सचालन-नीति का आविष्कार किया और उसमे दिनो दिन दक्षता प्राप्त कर रहे हैं।

मुख्य सचिव के जाने के बाद कृष्ण द्वैपायन ने अवस्थी को बुलाया।

"श्रीवास्तव ने कल हरिशकर त्रिपाठी से भेंट की थी ?'

"जी हाँ।

"उसका विचार है कि हरिशकरजी ही नये मुख्यमन्त्री बनेंगे।'

अवस्थी के चेहरे पर विद्रूप भरी मुस्कान फल गयी।

"श्रीवास्तव की फाइल देना जरा।'

"बहुत अच्छा।'

'शायद एक बार मुझे दिल्ली जाना पडे।'

"कब जाना चाहते हैं ?'

"जाना नही चाहता, फिर भी शायद परसो जाना पडे।'

'हवाई जहाज की सीट का प्रबन्ध कर लूगा।'

"एक बात और है।"

'आज्ञा कीजिए।'

कृष्ण द्वपायन थोडी देर चुप रहे। अवस्थी ने देखा कि उनका गोरा, कठोर चेहरा एकाएक व्यथा से गम्भीर हो गया।

"दुर्गाप्रसाद शहर मे हैं ?"

"तिलकगढ गये थे, कल लौटे हैं।'

"उस एक बार यहाँ बुला सकते हो ?'

अवस्थी चुप रह गया।

पिछले दो सालों में पुत्र दुर्गाप्रसाद से कृष्ण द्वपायन की एक बार भी मुलाकात नहीं हुई थी। रूखी, व्यंग्य भरी आवाज में कृष्ण द्वपायन ने कहा "उससे कहना, मुझे उससे बहुत जरूरी काम है। मैं उसका दर्शनाभिलाषी पिता हूँ।

थोड़ी देर में टेलीफोन की घण्टी बजी। कृष्ण द्वपायन ने रिसीवर उठाकर कहा "कौशल।"

दूसरे छोर पर दुर्गा भाई देसाई थे।

कृष्ण द्वपायन ने कहा, 'नमस्ते दुर्गा भाई! आपने क्यों फोन किया मैं तो खुद ही फोन करने जा रहा था।"

दुर्गा भाई बोले, 'आपने जब याद किया था, उस समय तक पूजा नहीं खत्म हुई थी। अभी अभी पूजा खत्म करके आ रहा हूँ। कहिए, क्या हुक्म है?'

मुझे लज्जित न कीजिए दुर्गा भाई! आपको हुक्म दे सके उदयाचल में ऐसा कौन पैदा हुआ है?'

तो फिर कहिए क्या जरूरत है?"

'ग्यारह बजे कैबिनेट मीटिंग है। उससे पहले आपसे कुछ बातें करनी थीं।

'कहिए।

गोवर्धन बांध परियोजना के दो पुलों का ठेका देने की बात आज कैबिनेट में रखी जायगी।

'हूँ।

इस ठेके का काम उदयाचल कन्स्ट्रक्शन माँग रहा है।

'हूँ।

'उन लोगों का टेण्डर ठीक ही है।

'मैंने देखा नहीं पूरी फाइल आपके पास भेज दी है।"

'ठेके का काम उन्हें देने में मुझे कोई एतराज नहीं है।'

'मुझे एतराज है।

"क्या भला? बताइए तो?'

'कौशलजी, मंत्रियों की सबसे बड़ी समस्या शायद उनके लड़के बच्चे होते हैं। मुझे मालूम नहीं था कि उदयाचल कंस्ट्रक्शन के साथ मेरे लड़के शंकर का कोई सम्बन्ध है। यह बात मुझे सात दिन पहले मालूम हुई है। ठेका और किसी को भी मिले पर उदयाचल कंस्ट्रक्शन को कभी न मिले।'

कृष्ण द्वपायन कोमल आवाज में बोले, 'दुर्गाभाईजी, आपकी इस अटूट ईमानदारी का मैं आदर करता हूँ। भारत में आप जैसे चरित्रवान कांग्रेसी नेता अधिक नहीं हैं, फिर भी मेरा एक निवेदन है।'

"कहिए।'

'मन्त्री का बेटा होना क्या कोई पाप है ? मन्त्री के लडके अगर सच्चाई पर रहकर व्यापार करें, तो भी क्या उन्हें सुविधा नही मिल सकती ?"

दुर्गाभाई ने कहा, "कौशलजी, मन्त्री होना ही भारी अन्याय है। मन्त्री बनकर भी यदि हम आम लोगो की तरह रह सकते तो यह बोझ कुछ कम हो जाता। मेरी राय मे मन्त्रियो के लडकों का किसी ऐसे व्यापार म शामिल होना उचित नहीं है, जिसम बाप के पद से थोडा भी फायदा उठाने का मौका मिले। जहाँ तक मैं जानता हूँ, शकर बहुत चरित्रवान नही है। मुझे पता चला है कि दो एक बार मेरा नाम लेकर उसन छोट मोट फायदे उठाये हैं। आप कवि हैं, आप तो जानते ही हैं कि शेक्सपियर ने कहा है—एक बार अपयश फल जाने के बाद आदमी के पास कुछ नही रह जाता।'

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, आपने जो कहा है एकदम सच है। आपसे कहने में सकोच नही है। शकरभाई मुझसे भेंट करने आया था। मैंने उसके कागज देखे हैं। व्यापार म उसने यथासम्भव ईमानदारी से काम लिया है। उन दोनो पुलो के लिए उन्ही लोगो का टेण्डर सबसे ज्यादा उचित है। मैंने सोचा था, यह ठेका कायदे स उदयाचल कन्स्ट्रक्शन को ही मिलना चाहिए फिर भी एक बार आपसे पूछ लिया।'

दुर्गाभाई ने जवाब दिया, "इस विषय को कैबिनेट मे रखने की तो कोई आवश्यकता नही थी।"

कृष्ण द्वपायन ने कहा, "बिल्कुल नहीं।'

'फिर आया कसे ?

'त्रिपाठीजी ने चाहा इसीलिए।'

"हरिशकरजी ने ?"

'उन्होंने नोट भेजकर माँग की थी कि गोवधन बाँध से सम्बधित कान्ट्रक्टो पर कबिनेट में विचार हो।

"हूँ।'

"दुर्गाभाईजी, आपको कष्ट दिया क्षमा कीजिएगा। आपने जो किया, उससे मैं पूरी तरह सहमत हू। ठका शायद हनुमान नेशनलबिल्डिंग कम्पनी को मिलेगा।

दुर्गाभाई थोडी देर चुप रहे, फिर बोले, 'वह किसकी कम्पनी है, आप यह अच्छी तरह जानते होंगे।

"जितना आप जानते हैं, उससे अधिक नही।"

"तो फिर उन्हें क्या देंगे ?"

'देने की मेरी कोई इच्छा नही है, पर इस हालत मे मैं ऐसी बात पर जोर नही देना चाहता, लेकिन यदि आप आपत्ति करें तो मैं आपका साथ दे सकता हूँ।"

दुर्गाभाई ने कहा, 'देखूगा।

साढ दस बजे माधव देशपाण्डे की गाडी आकर मुख्यमन्त्री भवन के सामने खडी हुई। माधव देशपाण्डे का स्वागत करने के लिए कृष्ण द्वैपायन नीचे तक आये। दोनो हमेशा की तरह आलिगनबद्ध हो गये। मुस्कराहटो के बीच कुशल मगल पूछी गयी। कृष्ण द्वैपायन माधव देशपाण्डे को लेकर अपने दफ्तर म आये। खातिर स बैठाया। कुछ देर औपचारिक बातें होती रही, फिर दोनो दलगत राजनीति की बातें करने म तल्लीन हो गये।

छह

कई साल पहल जब भारत को विदेशी शासन से मुक्त करके स्वतन्त्र होने का सम्मोहक सग्राम छेडा गया था, तब बहुतेरे दूसरे लोगो की तरह कृष्ण द्वैपायन भी सग्राम मे उतर पडे थे। उस समय उन्होंने यह अवश्य ही नही सोचा होगा कि किसी दिन उन्हें एक पूरे प्रात का शासन भार उठाना पडेगा।

गाधीजी के नेतत्व मे उन्होंने अपने को देश का सेवक मान लिया था। सेवक एक दिन जाकर शासक बनेगा, शासन-काय सेवा भाव की ही चरम परिणति हो सकती है, महात्माजी ने इस बात की शिक्षा अपने शिष्यो को नही दी थी।

आज कृष्ण द्वैपायन अपने सजनशील मन के निराले भाव से समझ गये हैं कि नेतत्व नाम की रहस्यपूण भूमिका उन दिनो से ही किन्ही अदश्य कारणो से उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। जिस थोडी सी चेष्टा स वह कृपाणपुर के काग्रेसी नेता बन गये थे उसके मूल मे भी थी उनकी शिक्षा सामाजिक प्रभाव कुल गौरव, वकालत मे प्रसिद्धि, तीक्ष्ण बुद्धि तथा गुटबाजी की कला म निपुणता। जिला परिषद् की अध्यक्षता के वर्षों मे उन्हे तरह-तरह के लोगो के साथ घनिष्ठ परिचय की सुविधा मिली थी। अदालत मे उन्हे मानव-स्वभाव पर बुद्धि तथा कौतुक से विचार करने का पूरा मौका मिला था। आगे चलकर प्रत्यक्ष राजनीति आन्दोलन म कृपाणपुर के सगठित दल के ढाँचे मे अपने नेतत्व को सुन्दर रूप से जमाने के बाद उन्होंने अपने प्रान्तीय क्षेत्र की वृहत्तर सीमा मे विस्तत करने के लिए जिला परिषद् की अध्यक्षता और वकालत की परिपक्वता को बडे यत्न से इस्तेमाल किया था।

फिर भी बहुत दिना तक उदयाचल के मुख्यमन्त्री का पद सँभालते समय उनके कवि मन मे असह्य वेदना के साथ एक प्रश्न बार-बार उठा है जिसका

उत्तर उन्हें कभी नहीं मिला, वह यह कि इन आठ करोड़ लोगों का बोझ विधाता ने मुझ पर ही क्यों डाला है ? यह बोझ ढोने की योग्यता मुझमें कहां है ? किस जादुई लकड़ी के स्पर्श से मामूली आदमी भी एक असाधारण भूमिका निभा लेता है ? ऐसा क्यों होता है ? इतिहास जब उन पर विचार करता है तो क्या वह यह बात कभी याद रखता है कि दूसरे आम लोगों की तरह यह असाधारण आदमी भी एक मामूली आदमी ही होता है जिसका दृष्टिकोण अनिवार्य कारणों से सीमित ही होता है जिसका शरीर भूखा होता है, मन में कमजोरियाँ होती हैं, जिसका मन प्रेम के लिए व्याकुल होता है और जो प्रलुब्ध भी होता है, जिसकी शक्ति परिमित होती है और बुद्धि विवेक भी अधूरा ? राजा से प्रजा का शासन श्रेयस्कर हो सकता है पर कहीं-कहीं कठिन भी है। राजा के पास सबकुछ है। उसके मन में किसी चीज के लिए आकांक्षा नहीं होती। शासन उसके रक्त में है। प्रजा के पास कुछ भी नहीं होता, इसीलिए उसकी आकांक्षाएँ असीमित होती हैं। राज-काज से उसका प्रतिरोध अनिवार्य है। कृष्ण द्वैपायन ने कभी कभी यह अनुभव किया है कि राज काज केवल दो श्रेणी के लोग कर सकते हैं— राजा और ऋषि। इसीलिए सबसे सफल शासक राजर्षि होते हैं। जो राजा नहीं और ऋषि भी नहीं है, फिर भी शासक बना बैठा है उसे इतिहास कठोर विचारक की हैसियत से बड़े बड़े दण्ड देता है, क्योंकि हर कदम पर ऐसे शासक का पतन अनिवार्य होता है, उसकी गलतियों की कोई सीमा नहीं होती और उसकी कमजोरी विधवा रमणी की भोगेच्छा जैसी निन्दनीय होने पर भी स्वाभाविक ही होती है।

कृष्ण द्वैपायन के व्यक्तित्व में राजनीतिक नेता और कवि दोनों की धाराएँ समान रूप से प्रवाहित हैं। इसीलिए वह शासन कर सके और उन्होंने अपने दल को संगठित करके केवल संरक्षण ही नहीं दिया, बल्कि उसे सुदृढ़ भी बनाया है। रोम नगर जब जलकर खाक हो रहा था, तब जिस नीरो ने बेहला का तार छेड़ा था, वह शासक नहीं था बल्कि वास्तव में एक कवि और शिल्पी था। जलते हुए रोम का हाहाकार संगीतमग्न नीरो के कानों तक पहुंचा ही नहीं था, इतिहास नीरो की चाहे जितनी भी बुराई करे, उस भयंकर समय में वह अपराजेय था, इतिहास के हाथों से बहुत दूर वह सुर और सौन्दर्य के प्रेम में खोया हुआ था। कृष्ण द्वैपायन के मन में कई बार ऐसा आया कि शासन कार्य चलानेवाले हर आदमी का नीरो बनना बहुत जरूरी है। जब राज काज या दलगत राजनीति में भयानक उथल पुथल हुई, तब वह भी नीरो की तरह बस भागकर बेहला पर तान छेड़ना चाहते थे, यानी कविता और साहित्य के रस में या किसी भी दूसरे आनन्द में डूब जाना चाहते थे। ऐसा करने में वह कभी कभी सफल भी हुए हैं पर अधिकांश बार ऐसा नहीं हो पाया। घटनाओं

के भवर मे फँसकर वह ग्राहत हो गये थे। उन भँवरो से विध्वस्त होकर भी वह कसे बच पाये हैं, इसका यह कारण वह जानते हैं कि नेतत्व से बढकर उनके ग्रन्दर जो कविमन है उसके सहारे उन्होंने ग्रपनी कमजोरी को वृहत्तर दृष्टि से देख लिया है। सिफ ग्रपनी ही नही दूसरो की कमजोरियाँ भी देखी हैं। विश्व के विकास का ग्रमर साक्षी सदा ही मानो मृदु स्वर मे उनसे यह कहता रहा है—ग्रनन्तकाल के इस जोड तोड, भोग विराग, जीवन मरयु ग्रौर उत्थान पतन के ग्रनबूझे रहस्य का कोई समाधान नही हो सकेगा। तुम जो भी करो, जितना भी करो, एक न एक दिन सब खत्म हो जायेगा। तुम मनुष्य हो तुम्हारी सीमा ग्रनिवाय है। तुम्हारी शक्ति के ग्रन्दर दुबलता छिपी है क्षमा के ग्रन्दर प्रति हिंसा, प्रम के गभ म घणा त्याग के पीछे लोभ मत्री मे वर ग्रौर मित्रता म विश्वासघात छिपा है। तुम क्षत्रिय नही, ब्राह्मण नहा शूद्र नही तुम सबकुछ एकसाथ हो।"

दुर्गाभाई को टेलीफोन करके माधव देशपाण्डे क ग्राने की ग्रल्प प्रतीक्षा म ही उनके मन मे यह पुरानी चिन्ता फिर से कौध गयी। कृष्ण द्वपायन ने मन ही मन कहा—जिनका पेशा राजनीति है उन्ह सबसे पहले यह देखना पडेगा कि यह राजनीति उनका नशा कदापि न बनने पाये। ग्रौर दस बीस दूसरे पेशा की तरह राजनीति को भी यथासम्भव ग्रावेगहीन ढग से लेना चाहिए। राजनीति म उत्तेजना ग्रवश्य है विचित्रता भी है पर यदि ग्रावेगशून्य दूरदृष्टि न हो तो इस खेल म पार पाना बहुत कठिन है। पक्के राजनीतिज्ञो के मन में यदि ईर्ष्या द्वेष न हो यदि उनके मन की गहराई मे सबको लेकर यानी ग्रपने को लेकर भी कौतुक-बोध की शक्ति न हो, तो ग्राखिर तक उनके हार जाने की ही सम्भावना है। मैं जीत जाऊँगा, कृष्ण द्वपायन ने सोचा—क्योकि मैं ग्रावेग शून्य हूँ, 'सिनिक' हूँ। दुर्गाभाई हार जायेंगे, क्योकि वह राजनीति को बहुत ही सहालता के साथ निभाना चाहते हैं। ग्रौर माधव देशपाण्डे ? उनके होठो पर तीखी मुस्कान फल गयी।

दुर्गाभाई देसाई उदयाचल के मुख्यमन्त्री बन सकत थ। नही बन पाये, इसका एकमात्र कारण यही है कि उन्हें राजनीति का शतरज नही ग्राता। बहुत वष पहले दुर्गाभाई के पिता गुजरात से उदयाचल ग्रा बसे थे। चावल ग्रौर बाजरे का व्यापार करते थे। रतनपुर मे पढाई खत्म करके दुर्गाभाई वहीं के सरकारी कालेज मे ग्रध्यापक हो गये थे। छोटी सी ग्रौर सुदर ग्राकृति। चमकीले ताँबे का-सा रग। चेहरे पर ग्रादशवाद की शान्त ज्योति।

बचपन से ही बहुत नतिकतावादी। सच बोलनेवाले सीधे सादे ढग से बात करनेवाले। सन् १६३० मे गांधीजी के शिष्य बन गये। इक्तीस म गांधीजी के

सत्याग्रह के समय सरकारी कालेज की नौकरी से इस्तीफा दे दिया। पत्नी मनोरमा और चारो लडके-लडकियो को पसो की कमी न होती, अगर दुर्गाभाई अपने पिता के साथ मेल बनाये रखते। व्यापार के सहारे कृष्णलालभाई अमीर हुए थे और अंग्रेज सरकार की नजरो मे चढकर रायबहादुर बन गये थे। बेटा गांधी के साथ मिलकर अंग्रेजो के खिलाफ लडाई करे, इस पर उन्हे बहुत सख्त एतराज था। तो भी अगर दुर्गाभाई भी पिता की रायबहादुरी पर एतराज न कर बैठते तो उनका कुछ नहीं बिगडता। बाप ने चाहा कि लडका स्वतंत्रता आदोलन से हट जाय और लडके ने चाहा कि बाप रायबहादुरी का खिताब छोड दे। बात बिगड गयी। आदर्शवादी मन का एक बहुत बडा दुगुण यह है कि वह नीति पालन मे बडा कट्टर होता है और इसके चलते अपने को तकलीफ देने मे भी उसे एक छिपा हुआ सुख मिलता है। दुर्गाभाई ने सपरिवार पिता का घर छोड दिया। सत्याग्रह मे जब उन्हें सजा हो गयी तो कृष्णलालभाई ने मनोरमा तथा नाती-पोती को घर वापस बुलाना चाहा। मनोरमा को भी लौटने की इच्छा थी। पति के स्वाधीनता आदोलन पर वह भी मन से प्रसन्न नही थी, फिर भी श्वसुर के घर लौटकर पति का अपमान करने का साहस उसे नहीं हुआ। दो साल तक वह कष्ट सहती रही।

जेल से छूटकर दुर्गाभाई आम तो बिल्कुल बदल चुके थे। देशसेवा अब उनका नशा बन गया था। आदर्श और उत्तेजना एक दूसर में घुल गये थे। देश प्रेम और गाधी भक्ति इन दोनो की वेगमय धाराओ के सगम से मुग्ध होकर वह अपने आपको बिल्कुल भूल गये थे।

उन दिनो के काग्रेसी कायक्रम के अनुसार दुर्गाभाई ने पहले तो रतनपुर म एक राष्ट्रीय कालेज की स्थापना करने की कोशिश की, पर पैसे की कमी और योग्य शिक्षको के अभाव के कारण वह सफल नहीं हो पाये। तब उन्होने गाधी वादी स्तर पर एक स्कूल खोला। पत्नी मनोरमा को भी अपने साथ ले लिया।

स्कूल मे अधिक विद्यार्थी नहीं थे। तनख्वाह बहुत कम थी, इसीलिए दुर्गाभाई को काफी दिनो तक धन की कमी बनी रही। फिर धीरे धीरे काम आगे बढने लगा। स्कूल के साथ आश्रम भी बन गया। आश्रम के नियमों के अनुसार साधारण जनता के लिए एक नया कायक्रम बनाया गया, चर्खे खरीदकर आस पास के गांवो में, शहर की बस्तियो मे बांटे गये। कई चर्खा केन्द्र बने। विद्यार्थियों के बीच दुर्गाभाई का नेतृत्व बढता गया। युवक युवतियो को सगठित करके उन्होने स्वयसेवक दल बनाया, जिसका आदर्श पूरी तरह गाधीवादी था। शराब की दूकानो पर पिकेटिंग करना गाव-बस्तियो मे देश प्रेम जगाना, खादी तैयार करना विदेशी वस्तुओ का बहिष्कार करना ही उन लोगो का काम था।

उदयाचल म दुर्गाभाई गाधीजी के प्रधान शिष्य के रूप में माने जाने लगे।

सन् १९३७ में जब दुर्गाभाई ने उदयाचल में कांग्रेसी मुख्यमन्त्रीपद ग्रहण करने से बड़ी विनय के साथ इनकार कर दिया, तो यह सम्मान और बढ़ गया। उनमें केवल त्याग करने और कष्ट सहने का नशा ही नहीं था, उन्हें यह पूरा विश्वास था कि आजादी न मिलने तक अंग्रेजों से हाथ मिलाकर राज करना देश का अपमान करने जैसा है। पहले पहल गांधीजी खुद भी कांग्रेसियों के मन्त्री बनने की बात से सहमत नहीं थे, पर जब उन्होंने दूसरे नेताओं की इच्छा जानकर अपनी राय बदल दी तो पहली बार दुर्गाभाई का गुरु के साथ मतभेद हुआ। इस मतभेद ने उन्हें गांधीजी का और भी प्रिय बना दिया।

सन् १९३८ में दुर्गाभाई सुभाषचन्द्र बोस के समर्थक बन गये, साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई की ललकार से वह खुशी से नाच उठे। सन् १९३७ में अगर वह इनकार नहीं करते, तो उदयाचल का मुख्यमन्त्री पद कृष्ण द्वैपायन कौशल के हाथ कभी न आता। दुर्गाभाई मन्त्रिमण्डल में होने की नीति के खिलाफ थे, इसीलिए शासन सूत्र कृष्ण द्वैपायन के मजबूत हाथों में आया। उसके बाद दुर्गाभाई ने जब सुभाष बोस के कांग्रेस का अध्यक्ष चुने जाने का समर्थन किया, तो वह गांधीजी से कुछ दूर हो गये। किन्तु गांधीजी के नेतृत्व और गुरु के प्रति गहरी आस्था के कारण वह सुभाष बोस के साथ दूर तक नहीं जा सके, इसलिए वह राजनीतिक आत्महत्या से बच गये। त्रिपुरा कांग्रेस में वह फिर गांधी पक्षी दल में आ गये। फिर तो दूसरा विश्व युद्ध छिड़ गया और कांग्रेस के आखिरी संग्राम 'भारत छोड़ो' में दुर्गाभाई और कृष्ण द्वैपायन दोनों ही जेल चले गये पर स्वास्थ्य खराब होने के कारण कृष्ण द्वैपायन एक साल बाद ही छूट गये। दुर्गाभाई कांग्रेसी नेताओं के आखिरी दल के साथ जेल से रिहा हुए।

बहुत सारी बातचीत विचार विमर्श, लड़ाई झगड़ों मार काट के बीच एक दिन भारत स्वतन्त्र हो गया। दुर्गाभाई को दिखा कि सन् १९४५ से सन् १९४७ के बीच कांग्रेसी नेताओं में एक भारी परिवर्तन आ गया है। संघर्ष करने की लालसा बुझ सी गयी है। उन लोगों के मन में अनजाना सा समझौता करने के शान्तिपूर्ण रास्ते पर बढ़कर ही राज सत्ता लेने का आग्रह दिखायी पड़ा। दुर्गाभाई ने देखा कि उदयाचल में शासन शक्ति के हस्तान्तरण की स्थितियों का मुकाबला करने के लिए कृष्ण द्वैपायन ने गुटबाजी करके अपने को खूब मजबूती से जमा लिया है। दुर्गाभाई के मन में विद्रोह की आग भड़क उठी पर स्थिति को देखते हुए उन्होंने समझ लिया कि कांग्रेस ने जो रास्ता अपना लिया है, उसके विपरीत देशवासियों को ले जाने के लिए न कोई संगठन है और न कोई नेतृत्व। वाम पन्थी दलों में साम्यवादी दल कमजोर, चंचल और विक्षिप्त सा हो गया है। युद्ध के समय बार बार नीति बदलते रहने की वजह से उस पर से देशवासियों का विश्वास हट गया है। समाजवादी दल करीब करीब कांग्रेसी नेताओं से

सहमत है। देश के इतिहास को दूसरे माग पर सिर्फ एक ही आदमी ले जा सकता था—वही, सुभाषचन्द्र बोस। सो, पता नहीं, दुनिया को छोड़ गये या देश से दूर हैं। सालों के संघर्ष में तपे हुए दुर्गाभाई यह समझकर पहली बार शंकित हुए कि विदेशी साम्राज्य के साथ लड़ाई खत्म हो गयी अब समझौते का रास्ता शुरू हो गया है। वह जान गये कि चाहे या न चाहे, अगर समझौते में शामिल नहीं होते तो उनके राजनीतिक जीवन की यहीं इति हो जायेगी।

राजनीति करनी ही है, दुर्गाभाई इसके लिए बाध्य नहीं थे। उन्होंने गांधीजी के पास जाकर अपनी मानसिक परेशानी का हिसाब किताब करना चाहा। उन दिनों स्वयं गांधीजी भी भयंकर मानसिक संकट से गुजर रहे थे। जिस रास्ते उन्होंने इतने दिनों तक स्वाधीनता आंदोलन चलाया था, उस रास्ते की वास्तविक परिणति देखकर वह स्वयं ही भयभीत थे। भारत माँ की जिस मूर्ति ने उन्हें स्वाधीनता-संग्राम के लिए प्रेरणा दी थी उसका रूप महान् और शान्त था। आज वह संहारी, आत्मसंहारी बन गया है। पर उस ऐतिहासिक पुरुष को कोई और रास्ता नहीं मालूम था। इतिहास सर्जन करते करते अब आखिरी अध्याय में वह खुद मानो इतिहास के हाथों बन्दी हो चुके थे। 'भारत छोड़ो' संग्राम के समय उन्होंने कहा था—"अगर भारत को महान् विपत्ति में भी छोड़ना पड़े तब भी अंग्रेजो, तुम भारत छोड़ जाओ।' उस समय तक उनके मन में यह उम्मीद थी कि भारत इस विनाश से छुटकारा पाने की राह ढूंढ निकालेगा। अंग्रेजों के जाने के साथ ही सचमुच भारत के दो टुकड़े बन जायेंगे, सो भी धर्म के नाम पर, और टुकड़े हो जाने पर लाखों मनुष्य खुद भी जलेंगे और देश को जलायेंगे—यह सच्चाई गांधीजी प्रत्यक्ष नहीं कर पाये थे। पर घटना प्रवाह ऐसी बाढ़ की तरह उमड़ा कि वह असहाय क्षोभ से ठिठुरकर मुन्न रह गये।

दुर्गाभाई को गांधीजी से कोई, आशापूर्ण निर्देश नहीं मिला। उन दिनों गांधीजी का एकमात्र व्रत था—साम्प्रदायिक हत्या के कलंक से भारत और पाकिस्तान को मुक्त करना। दुर्गाभाई गांधीजी के साथी हो गये। थोड़े दिनों तक उनके साथ कलकत्ता और बिहार भी घूमे, पर उदयाचल से बुलावा आया। जिन्हें दुर्गाभाई ने देशसेवा में दीक्षित किया था, उन्होंने माँग की थी कि उन्हें मन्त्री बनना पड़ेगा, मुख्यमन्त्री बनना पड़ेगा। दुर्गाभाई पहले तो राजी नहीं हुए। उन दिनों गांधीजी कांग्रेस को राजनीतिक दल के रूप में खत्म करना चाहते थे। उन्होंने अपने निकटतम साथियों से इस पर कुछ विवाद भी किया था। चोटी के नेताओं ने गांधीजी की इस योजना में कोई खास दिलचस्पी नहीं ली थी और सबसे कम दिलचस्पी ली थी जवाहरलाल नेहरू ने। गांधीजी ने सोचा था—कांग्रेस ने अपना काम यानी भारत को स्वतन्त्र कराने का कार्य

समाप्त कर लिया है, भले ही वह पूरी तरह समाप्त न हुआ हो। उसकी ऐतिहासिक भूमिका खत्म हो गयी है। अब सन् १८८५ से आरम्भ किये हुए दीर्घ घटना-बहुल नाटक का पटाक्षेप हो जाय। जो राजनीति करना चाहें, जिन पर देश का नेतृत्व आ गया है, वे चाहें तो अलग से एक या एकाधिक दल बना लें। जवाहरलाल वामपन्थी नेता बनें, वल्लभभाई दक्षिणपन्थी नेता बनें। अगर ऐसा हो तभी भारत में गणतान्त्रिक शासन-व्यवस्था सुसंगठित ढंग से चल सकेगी। और ऐसा न हुआ तो कांग्रेस दीर्घकाल तक सत्ता का निर्विरोध तथा व्यापक उपभोग करते रहने से कमजोर, कलुषित और आत्म-सन्तुष्ट होकर रह जायगी। उसमें कोई एकता नहीं रहेगी—न मत की और न पथ की।

गांधीजी ने यह भी सोचा था कि जो लोग त्यक्त और राजनीति से बाहर रहकर देश की सेवा करना चाहते हैं, उन्हें लेकर वह नये सिरे से एक संगठन तैयार करेंगे। कांग्रेस की ऐतिहासिक भूमिका में गांधीयुग के विकास के उत्तराधिकारी वे ही बनेंगे। वे मन्त्री नहीं बनेंगे। उनके पास शक्ति नहीं होगी, इसलिए वे दम्भ से भी बचे रहेंगे। वे गाँवों में जाकर भारत की वास्तविक जनता को सर्वोदय से जाग्रत करेंगे।

दुर्गाभाई की इच्छा थी कि गांधीजी के साथ गांवों के सर्वोदय कार्यक्रम में वह भी जुट जायें, पर ऐसा नहीं हो पाया।

पहली बाधा गांधीजी की ओर से ही हुई। उन्होंने कहा कि उनकी योजना अभी सिर्फ भ्रूण की अवस्था में है। कभी कामयाबी मिलेगी कि नहीं, यह अभी अनिश्चित है। इस बीच हर प्रान्त में जहाँ तक हो सके शक्तिशाली मन्त्रिमण्डल बना लेना ही देश के लिए कल्याणकारी होगा। उदयाचल में राजनीतिक चेतना का स्तर निम्न कोटि का है। मन्त्री होने लायक नेता वहां की कांग्रेस में बहुत नहीं हैं। कृष्ण द्वैपायन कौशल दल में अपना प्रभाव काफी बढ़ा चुके थे। दुर्गाभाई शायद उन्हें हटाकर मुख्यमन्त्री नहीं बन सकेंगे, पर कृष्ण द्वैपायन की शक्ति को अगर कोई सीमा में बांध सकता है, तो वह दुर्गाभाई ही हैं। यह सब सोच-समझकर गांधीजी की यही राय थी कि दुर्गाभाई वर्तमान में उदयाचल की कमी पूरी करें। बाद में यदि गांधीजी की योजना कामयाब हुई, तो मन्त्रिपद छोड़कर वनवासी तो बन ही सकते हैं।

दुर्गाभाई रतनपुर लौट आये। कृष्ण द्वैपायन ने स्वयं स्टेशन पर आकर उनका स्वागत किया। तब वह उदयाचल प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे।

दुर्गाभाई की इच्छा थी कि थोड़े दिनों तक उदयाचल की कांग्रेसी राजनीति को अच्छी तरह समझ लिया जाय, पर इसके लिए पर्याप्त समय नहीं था। मन्त्रिमण्डल बनने ही वाला था। जिस दिन वह रतनपुर पहुँचे, उसी रात कई

कांग्रेसी साथी उनके घर आये। उन सबका अनुरोध और माग यही थी कि दुर्गाभाई मुख्यमन्त्री बनें।

दुर्गाभाई ने देखा कि इनमे से सब उनके द्वारा ही दीक्षित नही थे। कई ऐसे भी थे, जो कृष्ण द्वैपायन के खास आदमी थे। अपने पहले के अनुगत साथियों म से भी चार नही दिखायी पड़े। समझ गये कि मन्त्रिमण्डल बनाने के नय तरीके कामयाब हो रहे हैं। यह एक नयी किस्म की लड़ाई थी। यह लड़ाई विदेशी साम्राज्यवादियो के विरुद्ध नही थी, बल्कि आपस म ही सत्ता हथियाने के लिए थी। यह मित्र के साथ मित्र की और साथी के साथ साथी की लड़ाई थी। देश म यहीं से अन्तर्विरोध की शुरुआत हुई—आत्मघाती गृहयुद्ध—जिससे न तो भागा जा सकता है और न छुटकारा मिल सकता है।

कृष्ण द्वैपायन के खिलाफ इन लोगों के बहुत-से अभियोग थे—वह सच्चे माने मे कांग्रेसी नहीं हैं, कभी वह अंग्रेजों के दोस्त थे, जमींदारों के दोस्त रहे हैं। वह पूँजीवादियों से रुपया लेकर राजनीति करते हैं। गांधीजी के आदर्श और कार्यक्रम पर उनका विश्वास नहीं है। वह अवसरवादी हैं और उनका चरित्र भी निष्कलंक नहीं है। उनका दृष्टिकोण साम्प्रदायिक है। मुख्यमन्त्री बन जाने पर भी वह अपना दल दृढ़ करेंगे। शक्ति अर्जित करने की उनकी आकांक्षा असीमित है।

उत्पाचल म एक दुर्गाभाई ही उन्हें चुनौती दे सकते हैं। प्रान्त के प्रति, देश के प्रति यह उनका पहला कर्तव्य है।

दुर्गाभाई ने उनकी बातें गौर से सुनी, फिर पूछा, "अगर मैं कौशल भाई के विरोध म खड़ा होऊँ तो क्या आप मेरा समर्थन करेंगे?"

सभी ने कहा "जरूर।"

"चुनाव में कांग्रेसी मतदाताओं म से अधिकांश कौशल भाई की ओर हैं क्या यह सच नहीं है?'

"अगर आप हमारे नेता बनना स्वीकार करें तो वे सबके सब आपकी ओर ही जायेंगे।'

"माधव भाई आप तो कृष्ण द्वैपायनजी के खास मित्रों में से हैं।'

माधव देशपाण्डे ज्यादा नहीं बोलते। एकाएक कुछ बोल भी नहीं सके।'

दुर्गाभाई ने फिर पूछा, 'आप उन्हें क्यों छोड़ रहे हैं?"

माधव देशपाण्डे अब बोले "मराठे कौशलजी को नहीं चाहते। उनके हाथों मे हमारे स्वार्थ सुरक्षित नहीं हैं।'

दुर्गाभाई ने मन ही-मन कहा—तब तो विकास चक्र पूरा घूम गया है। अखण्ड भारत में हिन्दू मुसलमानों के परस्पर विरोधी स्वार्थों की लड़ाई के बाद अब खण्डित स्वतन्त्र भारत के उत्पाचल प्रान्त म मराठी हिन्दी म स्वार्थ विरोध

आ गया है।

उन्होंने पूछा, "क्या आप सोचते हैं कि महाराष्ट्रीय समाज का स्वार्थ मेरे हाथों में सुरक्षित रहेगा ?"

माधव देशपाण्डे ने कहा "आप कुछ और किस्म के आदमी हैं। आप अगर नेता बनें, तो हमें उचित अधिकार मिल सकेगा। हां, हमारे स्वार्थ किस ढंग से सुरक्षित हो सकते हैं इस पर विस्तृत चर्चा बाद में होगी।"

दुर्गाभाई ने मन-ही मन कहा—यानी महाराष्ट्रीय स्वार्थ के लिए कृष्ण द्वैपायन जो मूल्य देने को राजी हैं, मुझे उससे कहीं अधिक देना पड़ेगा।

अब उनकी नजर सुदर्शन दुबे पर पड़ी। सुदर्शन दुबे उदयाचल प्रदेश कांग्रेस के सचिव थे।

दुर्गाभाई ने कहा, "सुदर्शन, सुन रहा हूं तुम तो मन्त्री नहीं बनना चाहते।"

सुदर्शन बोले "आपने ठीक ही सुना है।"

"तुम क्यों कृष्ण द्वैपायन का विरोध कर रहे हो ?

"कांग्रेस के उच्चतर स्वार्थ के लिए।

"समझाकर कहो।

"आप कभी कांग्रेस संगठन के अन्दर अधिक नहीं रहे। ज्यादातर बाहर रहकर ही देश-सेवा करते रहे। संगठन के अन्दर जो दुर्नीति और अनाचार फल रहा है, शायद आपको उस सबका पता नहीं है।"

"इतने दिनों तक तुम्हीं लोगों ने कांग्रेस को चलाया है अब इसके भीतर दुर्नीति और अनाचार भर जाय तो इसमें दोष भी तुम्हीं लोगों का है।

"जब तक कौशलजी कांग्रेस के अध्यक्ष बने रहेंगे तब तक कुछ नहीं हो सकता।

"मन्त्री तो तुम हो।"

"मेरी कोई ताकत नहीं।

"सुनता हूं अबकी बार तुम अध्यक्ष बनना चाहते हो ?"

माधव देशपाण्डे बोले "हम लोग भी यही चाहते हैं।

"रुचि नहीं है, दुर्गाभाई! मैं कांग्रेस का सेवक ही बना रहना चाहता हूं।"

थकी हँसी हँसकर दुर्गाभाई ने टिप्पणी की—"सेवक नहीं सुदर्शन। अब तुममें से कोई भी सेवक नहीं है सब नेता बनना चाहते हैं।"

रात जब गहरी हो गयी, तो ये लोग चले गये। बिस्तर पर लेटे-लेटे दुर्गाभाई ने मनोरमा से पूछा "तुम्हें मालूम है वे लोग क्यों आये थे ?"

मनोरमा ने कहा "हाँ, मालूम है।

"तुम चाहती हो कि मैं मुख्यमन्त्री बनूं ?"

मैं सब दिन तुम्हारे साथ रही हूं। स्वाधीनता आन्दोलन में कूदने से पहले

तो कभी तुमने यह नही जानना चाहा कि मैं क्या चाहती हूँ।"

"नही जानना चाहा, क्योंकि मुझे मालूम था कि तुम नही चाहती थी।"

"तो फिर आज क्या पूछ रहे हो?"

आज बडा मजा आता है आश्चर्य होता है। आज सब चाह रहे हैं, न चाहनेवालो की पंक्ति मे अब कोई नही है। सब चाहते हैं कि कुछ-न कुछ मिल जाय, देना कोई नही चाहता। सब सत्ता चाहते हैं सब शक्ति की माग करते हैं। सेवा के लिए, त्याग के लिए अब कोई भी राजी नही है।"

'जमाना बदल गया।"

"अवश्य।"

देश स्वतन्त्र हुआ है। अब उसे सँभालना भी होगा, राजकाज भी चलाना पडेगा।'

'सेवा की जरूरत अब नही है?'

'शासन से सेवा नही की जा सकती क्या?"

"की जा सकती है, पर उसके लिए राम और युधिष्ठिर जैसा राजा चाहिए।'

"बेकार की बातें है।"

"हो सकता है। मेरी बात का जवाब नही दिया?

'यह सवाल तुम्हारा ही है और तुम्ही जवाब दोगे। मेरा सवाल नही है।'

दुर्गाभाई लम्बी साँस खीचकर चुप रह गये। सत्रह साल पहले जो मनोरमा थी, अब वह नही है। सत्रह साल पहले गाधीजी का शिष्य बनते समय उन्होंने पत्नी की अनुमति नही माँगी थी। उन्हें मालूम था कि मनोरमा अनुमति नही देगी। बाप की दौलत, सरकारी कॉलेज के सम्मानित अध्यापक की नौकरी—सबकुछ छोडकर स्वतन्त्रता आन्दोलन के ऊबड-खाबड खतरनाक रास्ते पर पति को बढने देने की उसकी कोई इच्छा नही थी पत्नी की अनुमति न मिलने पर भी दुर्गाभाई को जाना ही था। वह पत्नी के साथ सघर्ष नही करना चाहते थे।

बाद मे मनोरमा उनके साथ ही रही, पर वह विरोध गुप्त रूप से उसके मन में बना रहा। वह श्वसुर के साथ विरोध नही करना चाहती थी, और पति के साथ भय-कष्ट उसने अपनी इच्छा से ही सिर पर लिया था, इसे मानते हुए भी उसने इस कोई महत्त्व नहीं दिया। उसने पति का साथ दिया है। कुछ डर की वजह से या कुछ और समझकर ही वह साथ बनी रही। प्रेम या आदर के कारण नही। दुर्गाभाई की जेल यात्रा के समय मनोरमा ने कमे दिन बिताये, उसका विवरण पति को देना उसने जरूरी नही समझा। फिर भी दुर्गाभाई को यह मालूम है कि पिता के धन का लालच उन्हें भले ही न हो, मनोरमा को है। मनोरमा ने बच्चों को श्वसुर के पास ही रखा है खुद भी बीच बीच म वहीं हो आती थी। बच्चे गरीब रहे यह उनके लिए असह्नीय

था। मनोरमा ने पति के प्रश्न का उत्तर नही दिया, पर दुर्गाभाई जानते हैं कि पत्नी की यही इच्छा है कि उन्हें राज सम्मान मिले। उदयाचल के मुख्यमन्त्री बनकर वह अपनी इच्छा से ही सहे हुए इतने सालो के पूरे दुख का मुआवजा वसूल करें।

दुर्गाभाई रात भर अच्छी तरह सो नही सके। तरह तरह की चिन्ताओ के बीच फँस वह छटपटाते रहे। मुह अँधेरे ही बिस्तर से उठ गये। जिस चिन्ता मे वह रातभर जागते रहे, उससे वह अभी तक छुटकारा नही पा सके थे। थकावट महसूस हो रही थी। नहाकर और दिनो की अपेक्षा काफी देर तक पूजा करते रहे फिर भी मन को शान्ति नहीं मिली। पूजा से उठने के बाद वह थोडा सा नाश्ता करके बैठक मे आकर रोज की तरह जरूरी कामो के बारे मे मन ही मन सोच रहे थे कि बाहर से गम्भीर आवाज सुनायी पडी।

"दुर्गाभाई है क्या?

दरवाजा खोलकर दुर्गाभाई ने देखा, वहाँ पर कृष्ण द्वैपायन कौशल खडे थे।

दुर्गाभाई और कृष्ण द्वैपायन दोनो के चेहरे एक दूसरे से उलटे हैं। कृष्ण द्वैपायन लम्बे कद के हैं दुर्गाभाई छोटे कद के। दोनो ही गोरे हैं। फिर दुर्गाभाई का रंग कुछ गेहुआ है। बहुत गोरे नहीं हैं। सारा सिर गंजा। माथे और आँखो के किनारे पर गहरी सिकुडनें पडी हैं। कृष्ण द्वैपायन की नाक की गढ़न गठन मे एक दम्भ झलकता है, दुर्गाभाई की नाक दबी हुई और चौडी है। नाक और ठुडडी मे एक अनोखा सा कोमल भाव है। उनके व्यक्तित्व मे नम्रता और विनय स्पष्ट है। वह कृष्ण द्वैपायन की तरह तेज नही हैं। बातें बहुत धीरे धीरे करते हैं और हँसते भी हैं तो बहुत लजीले और अप्रस्तुत ढंग से। फिर भी उनके व्यक्तित्व मे ऐसी दृढता और स्थिरता है जो कृष्ण द्वैपायन मे नहीं है। कृष्ण द्वैपायन गर्मी की दोपहर की तरह तपते हुए हैं और दुर्गाभाई प्रभात की तरह शान्त।

देशसेवा के कारण ही दोनो का बहुत पुराना परिचय है। वे एक दूसरे को अच्छी तरह जानते पहचानते हैं। परिचय कभी गहरी मित्रता तक नहीं पहुंच सका था पर दोनो ही विपरीत कारणो से एक दूसरे का आदर करते हैं। कृष्ण द्वैपायन जानते हैं कि दुर्गाभाई मे ऐसे कई गुण हैं जो उनमे नही हैं और दुर्गाभाई जानते हैं कि कृष्ण द्वैपायन मे जन्म से ही शासन करने का जो गुण है वह उनमे नही है।

दोनों के बीच एक और भी बन्धनसूत्र है जो बहुत से लोगो को नही मालूम। उसे सिर्फ कृष्ण द्वैपायन जानते हैं दुर्गाभाई जानते हैं और उन दोनो

की पत्नियाँ जानती हैं। कृष्ण द्वैपायन की पत्नी और दुर्गाभाई के बीच एक आदर तथा श्रद्धा का भाव है। आश्रम तथा विद्यालय चलाते समय दुर्गाभाई को सबसे अधिक पैसे कृष्ण द्वैपायन की पत्नी से ही मिले थे। इससे मनोरमा खुश नहीं हुई थी, कृष्ण द्वैपायन भी नहीं। फिर भी दो दिलों के बीच मानो एक सुरंग सा बन गयी है। कृष्ण द्वैपायन जानते हैं कि वह जरूरत पड़ने पर इसका इस्तेमाल कर सकते हैं।

दुर्गाभाई ने कृष्ण द्वैपायन को बड़े आदर से अन्दर बठाया।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "कल आप सफर से थके हुए थे, नहीं तो मैं रात को ही आता। आपसे कुछ जरूरी बातें करना हैं।'

मैं भी सोच रहा था कि थोड़ी देर म आपके पास जाऊँगा।'

'तो फिर देखिए कुछ ऐसा जरूर है जो हम दोनों को एक दूसरे के पास खींच रहा है।" कृष्ण द्वैपायन ने हँसकर कहा।

"ऐसा ही लगता है।'

"मुझे ही ज्यादा खीच रहा है इसीलिए आपसे पहले मैं आ गया।"

'आप नेता हैं। सौजन्य मे भी आप महान हैं।'

कृष्ण द्वैपायन ने दो चार और इधर उधर की बातों के बाद काम की बात शुरू की।

"आपके साथ मेरा सम्बन्ध आज का नहीं है। हम दोनों के बीच काफी अन्तर है मतभेद है फिर भी आप इतना तो जरूर मानेंगे कि हम एक दूसरे को जानते हैं।

दुर्गाभाई ने मौन रहकर सहमति जतायी।

"इसीलिए मैं आपसे अच्छी तरह बात कर लेना चाहता हूँ।'

"यही ठीक भी होगा।"

'आपने और मैंने, दोनों ने यथाशक्ति देशसेवा की है। कई कारणों से उदयाचल कांग्रेस संगठन का नेतृत्व मेरे हाथों में आया। आपने कभी दल के साथ ज्यादा सम्पर्क नहीं रखा।'

'ठीक है।"

'देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़ाई लड़ना और दल का संगठन करना एक-जैसी बात नहीं है दुर्गाभाई!' कृष्ण द्वैपायन के चेहरे पर एक तीखी मुस्कान आ गयी।

'वह तो मैं जानता हूँ।"

"आप जलती लौ की तरह रहे और रोशनी फैलाते रहे, दीपक के नीचे के घने अँधेरे का लेकर कभी आपको सिर नहीं खपाना पड़ा।'

"आपने यह एक कवि की ही तरह बातें की हैं, और ठीक भी कहा है। फिर भी मैं एक बात कहूँगा, दीये के नीचे के अँधेरे में उसकी अपनी भी कालिमा घुली मिली होती है।

"जरूर होती है दुर्गाभाईजी! आपके सामने मैं हजार बार भी इस बात को मानूंगा कि मेरे अन्दर की कालिमा किसी और की कालिमा से कम काली नहीं है।"

'बुद्धि और वाक्पटुता की लड़ाई में मैं आपका मुकाबला नहीं कर सकूंगा। कहिए, क्या कह रहे थे?

"स्वतन्त्रता संग्राम खत्म हो गया है। स्वराज्य मिल गया है। शासन भार अब हम लोगों को संभालना होगा। उदयाचल में कांग्रेस का संगठन कभी प्रभावशाली नहीं रहा। सन् १९४२ में भी हम बड़ी मुश्किल से ४३६ स्वयंसेवकों को जेल जाने के लिए तैयार कर पाये थे। पर कांग्रेस प्रतिद्वन्द्वविहीन है। किसी और राजनीतिक संस्था का हम कोई डर नहीं है। चुनाव में हमें आसानी से बहुमत मिल जायेगा यह निश्चित है।

मेरी भी यही धारणा है।

'पर इसमें और भी बहुत सी बातें हैं। पिछले चन्द महीनों में कांग्रेसी सदस्यों की संख्या कितनी ज्यादा बढ़ गयी है यह आपको मालूम है?

कितनी?

दस हजार।

क्या कहते हैं?'

'और ये नये सदस्य हैं कौन? जमींदार व्यापारी ताल्लुकेदार सूदखोर महाजन, ठेकेदार, कुतियों के सरदार, मिलों के गुण्डे, कालाबाजारी घूसखोर यानी सब हैं। शायद उदयाचल में एक भी आदमी ऐसा नहीं होगा जो चार आना देकर कांग्रेस का सदस्य न बना हो।

'इसमें आश्चर्य प्रकट करने की बात तो कोई नहीं है।"

पर डरने की बात तो है। शिक्षित युवक कांग्रेस में कुछ खास नहीं आ रहे हैं। किसान मजदूरों का संगठन भी उदयाचल में कम है। उनके बीच भी कांग्रेस का संगठित प्रभाव नहीं है।

फिर भी वे कांग्रेस को ही वोट देंगे।'

'सो तो देंगे ही। पर हमारी समस्या वोट पाने की नहीं है। कुछ इलाकों में हम हार जायेंगे। यहाँ के सामन्त राजाओं में से कुछ तो कांग्रेस में आ गये, बाकी स्वतन्त्र उम्मीदवार बनकर चुनाव लड़ेंगे। उनमें से कुछ जीत भी जायेंगे। हमारी असली समस्या कुछ और है। ज्यादातर इलाकों में जमींदार लोग कांग्रेस से टिकट माँग रहे हैं। उन्हें टिकट देने पर ही कांग्रेस जीतेगी, अगर उन्हें टिकट

न दिये गये तो चुनाव लडने के लिए हम काफी रुपयो की जरूरत पडेगी। ढेर-सारे कार्यकर्त्ता चाहिए। जमीदारो के खिलाफ खडे होने योग्य सगठन चाहिए। पार्टी के खजाने म ज्यादा पसा नही हैं। चुनाव लडने के लिए जितना पैसा चाहिए, हम लोगो के पास उसका आधा भी नहीं है। इसके अलावा नामनाक होने पर भी यह बात सच है कि सारे उदयाचल मे ३२६ सीटो के लिए इसी अनुपात मे योग्य कायकर्त्ता हमारे पास नही हैं।"

दुर्गाभाई कुछ नही बोले।

कृष्ण द्वैपायन कहते रहे "शासन शक्ति हाथो म आने की सम्भावना के साथ ही हमारी राजनीति ने एक नया मोड ले लिया है। अब भारत का सघष विदेशियो के साथ नहीं, बल्कि भारतीयो के ही साथ है। नये-नये स्वार्थ पदा हो रहे हैं। वण-सघष अब वग-सघष की अपेक्षा तेज हो गया है। जमीदार और असामियो का सगठित द्वन्द्व नहीं है, पर ब्राह्मण-कायस्थ मे है। पूर्वी इलाके के साथ दूसरे हिन्दीभाषी इलाको का झगडा है। छोटी जाति के साथ बडी जाति, हिन्दू के साथ मुसलमान हिन्दी के साथ मराठी—अब ये सब झगडे हो गय हैं। हरएक वग अपनी अपनी माँग कर रहा है—इतने सदस्य चुने जाने चाहिए, इतनो को मन्त्री बनाना पडेगा। जिसके भी पास कुछ पसे और प्रभाव है, वही नेता बनना चाहता है। इस शहर म रोज कम से कम चालीस मीटिंगें होती हैं जिनका एक ही उद्देश्य होता है—गुटबाजी करना और सत्ता अपने हाथो में लेना। और इधर जमीदार, मिल मालिक, ठेकेदार, व्यापारी महाजन-सभी काग्रेस को चुनाव के खर्चे के लिए रुपये देने को तयार हैं। अभी तो वे चुप हैं, पर चुनाव के बाद उनकी माँगें क्या होंगी, यह अभी से समझ लेना मुश्किल काम नही है।'

दुर्गाभाई ने कहा, कल रात को कुछ लोग हमारे यहाँ आये थे।"

कृष्ण द्वैपायन ने हँसकर कहा "मुझे मालूम है। कौन कौन आये थे, इसका भी अन्दाज लगा सकता हूँ।

'सुदशन दुबे को तो मैं आपका ही आदमी समझता था।

कृष्ण द्वैपायन सूखी हँसी हँसकर बोले, 'दुर्गाभाईजी, राजनीति म कोई अपना पराया नही है। यह बडा कठिन व्यापार है। आज जो दोस्त है, कल वह विभीषण बनकर कुलबोरन हो सकता है।"

"सुदशन दुबे क्या चाहता है?'

मन्त्री बनना।"

'उसने तो कहा कि वह मन्त्री नही बनना चाहता।

'मन्त्री बनने के लिए कोई शोर गुल थोडे ही मचाता है! गुप्त रूप से ही चाहता है।'

'इसकी कोई उम्मीद नहीं है ?'

'अगर आप मंत्रिमण्डल बनायें तो क्या आप सुदर्शन दुबे को लेंगे, दुर्गाभाईजी ?"

नहीं।

"तो फिर समझ लीजिए।'

'माधव देशपाण्डे क्या चाहते हैं ?'

अपने लिए एक खास पोर्टफोलियो और कम से कम चालीस प्रतिशत मराठे मन्त्री।'

"सत्यानाश! यह तो जिन्नासाहब की ही आवाज है।'

"हां। आखिरी दम तक कुछ न कुछ सीखते ही रहना चाहिए।"

कृष्ण द्वैपायन कुछ देर चुप रहे फिर बोले, "दुर्गाभाईजी, मैं आपके पास यह सब खबर देने नहीं इससे कहीं बड़ा उद्देश्य लेकर आया हूं। मैं जानता हूं कि सभी कांग्रेसी नेता मुझ पर एक जैसी कृपा नहीं रखते। उसकी योग्यता भी मेरे अन्दर नहीं है। शक्ति तो मुझमें है, पर कमजोरियां भी अनेक हैं। एक इन्सान और देशसेवक होने के नाते आप मुझसे श्रेष्ठ हैं। उदयाचल का आज जो भी सम्मान और गौरव है उसका अधिकांश आपके ही कारण है। आपका सबसे बड़ा गुण यह है कि आप नैतिकता पर कड़ाई से जमे रहते हैं। आप निर्लोभी हैं। नहीं नहीं दुर्गाभाई मैं आपकी चापलूसी नहीं कर रहा हूं। उससे कोई फायदा भी नहीं क्योंकि आप चापलूसी से बहकनेवाले नहीं हैं। मैं सिर्फ सच्ची बात कर रहा हूं। दूसरी ओर राजनीति को मैं आपसे ज्यादा अच्छी तरह समझता हूं। दल को संगठित बनाये रखने के कौशल में आपसे अधिक जानकार और पटु हूं। आपको चाहे कोई आसानी से ठग ले, पर मुझसे ऐसा नहीं कर सकेगा। मैं महान के साथ महान व्यवहार कर सकता हूं, पर पर का कांटा भी कांटे से ही निकाल सकता हूं जो आप नहीं कर सकते।"

दुर्गाभाई कृष्ण द्वैपायन की इस स्पष्टवादिता पर मुग्ध रह गये।

आज स्वतन्त्रता के बाद उदयाचल में कांग्रेसी शासन की तैयारी हो रही है। दल में छोटे बड़े, बहुत से संघर्ष होंगे, पर एक संघर्ष कभी न होने पाये, दुर्गाभाईजी!

कौन सा संघर्ष ?'

'आपके और मेरे बीच।

थोड़ी देर दोनों चुप रहे। बात का मतलब अच्छी तरह पचाने के लिए मानो दोनों ने कुछ समय लगाया।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "यदि ऐसा हो गया तो आप हार जायेंगे। कारण यह नहीं है कि मैं मुख्यमन्त्री बनना चाहता हूं। मन्त्रिमण्डल बनाने की तरकीबों

को आप काम मे नहीं ला सकेंगे। सुदर्शन दुबे को किस तरह बिना मन्त्री बनाये भी अपने साथ बनाये रखा जा सकता है, यह तरकीब आप नहीं जानते। आप राजनीति की गन्दगी नहीं खा पायेंगे। फिर भी मैं मन से कह रहा हूँ,' कृष्ण द्वैपायन की आवाज मे गम्भीरता के साथ-साथ मानो कोमल तार भी बज उठे, 'मैं पूरे मन से कह रहा हूँ कि यदि आप मन्त्रिमण्डल बनाने की जिम्मेदारी लेना चाहते हैं, तो मैं उसे छोड़ देने को तैयार हूँ।'

दुर्गाभाई के मुँह से एक भी बात नहीं निकली।

कृष्ण द्वैपायन बोले, "आप और मैं, अगर दोनों ने एक-दूसरे का साथ न दिया तो उदयाचल कांग्रेस नहीं टिक सकेगी। सारा प्रान्त बदनाम हो जायगा। जो आदर्श लेकर हम इतने सालों तक देश की सेवा करते रहे, उनमें से एक पर भी अमल नहीं किया जा सकेगा। आप अगर नेता बनें तो मैं अपना नेतृत्व छोड़ दूँगा। सिर्फ यही नहीं, बल्कि आपका साथ देने के लिए भी मैं अपनी पूरी ताकत लगा दूँगा। और साफ कह दूँ यदि आप चाहेंगे तो आपके अधीन मन्त्रिमण्डल में कोई भी पद लेने को तैयार हूँ और आप चाहें तो मन्त्रि-मण्डल से बाहर रहकर कांग्रेस संगठन का काम करने में भी मुझे खुशी ही होगी।

दुर्गाभाई अभिभूत से रह गये। कृष्ण द्वैपायन के विषय में उनकी धारणा एकदम बदल गयी। उन्होंने दोनों हाथों से कृष्ण द्वैपायन का आलिंगन करके कहा 'आपने मुझे निश्चिन्त कर दिया।'

'तो फिर यह जिम्मेदारी आप ले रहे हैं न ?'

'नहीं। यह जिम्मेदारी सिर्फ आप ही ले सकते हैं। राजनीति गुटबाजी आदि के बारे में मैं कुछ नहीं जानता। यह काम आप ही कीजिए।"

आप अच्छी तरह सोच लीजिए, दुर्गाभाईजी !'

'मैंने बहुत सोच लिया है। कल रात भर सो नहीं सका। जितना सोचा, उतना ही डर गया। फिर भी शंकाएँ नहीं मिटीं। आपको मैं पूरी तरह नहीं पहचान पाया था। बहुत से लोगों की तरह-तरह की बातों ने मन में सन्देह पैदा कर दिया था। अब यह शंका दूर हो गयी। उदयाचल में यदि कांग्रेसी शासन कोई कर सकता है तो केवल आप।'

'पर मेरी एक माँग है, अनुरोध भी, जो आपको हर हालत में माननी पड़ेगी।

'असाध्य न हुआ तो मैं अवश्य मानूँगा।'

जिस भावना से मैं आपके साथ काम करने को तैयार हूँ, उसी भावना से आपको मेरा साथ देना पड़ेगा।'

'मुझे अगर मन्त्रिपरिषद से दूर रखें तो खुशी होगी।

'एसा होन स उदयाचल का ही नुक्सान होगा।'

'अगर एसी बात है तो मैं आपका साथ दूगा।

अबकी बार कृष्ण द्वपायन न दुगाभाई का आलिंगन कर लिया—' आपकी इस उदारता की मैं हमशा इज्जत करूँगा।'

राजनीति के पहले पव मे कृष्ण द्वपायन उस दिन एक महान विजय लेकर घर लौट थ।

सात

मराठा को मिलाय रखने की राजनीतिक निपुणता म कृष्ण द्वपायन को जिनस सबस ज्यादा सहायता मिली है वह हैं माधव देशपाण्ड। वह चितपावन ब्राह्मण हैं। उनकी नसो मे राजनीति कूटनीति हजारो सालो से कूट कूटकर भरी हुई है। माधव देशपाण्डे के जीण शीण शरीर पर ढलते हुए दिन का रग चढा है। एकाएक दखने से शुद्ध ब्राह्मण जानकर मन म श्रद्धा भर उठती है। पाँच फुट छ इच लम्बा शरीर, विधाता ने अपने हाथो जसे हथौडी से पीट पीटकर ठोस बना दिया है, कही तनिक भी चर्बी नहा छूटी है। सिर पर के छोटे छोटे खिचडी बाल कदम्ब के फूल की तरह लगत है। छाटे स माथे पर गहरी सिकुडना का ढर लग गया है। चौडे जबडे का कुछ अजीब ढग से एकाएक मानो टूटकर ठुडडी पर त्रिकोण बन गया है जिसस देशपाण्डे के चेहरे पर का सन्तुलन खत्म हो गया है। नाक चपटी पतले होठ बिल्ली जैसी आखें।

माधव देशपाण्डे ने भी कभी वकालत पास करके जिले की अदालत में वकालत शुरू की थी। बाप का पैसा था। उत्साह भी जरूरत से कुछ ज्यादा था। सो, शहर से ही उन्होंने एक मराठी साप्ताहिक निकालना शुरू कर दिया। उदयाचल के उस जिले म महाराष्ट्रियो की सख्या अधिक थी और माधव देशपाण्डे की पत्रिका मातभूमि ने महाराष्ट्रियो का मुखपत्र बनने का दावा किया था इसीलिए थोडे ही दिनो के अन्दर वह काफी लाकप्रिय हो गयी। माधव देशपाण्डे को बम्बई के महाराष्ट्रीय नेताओ के साथ परिचित होने का मौका मिल गया। फिर एक दिन वह मातभूमि पत्रिका के साथ रतनपुर आकर जम गये। तभी से उनका असली कमक्षेत्र 'मातभूमि ही रहा। उन्होंने उसे साप्ताहिक स दनिक का रूप दे दिया। कुछ दिन असहयोग आन्दोलन म शामिल रहकर वह बडी सावधानी से राजनीति की ओर बढे। तभी से उनको 'माडरेट'

कहा जाने लगा। जेल तो नही जाना पडा, हाँ, पत्रिका के व्यापार में भले कुछ फायदा हो गया। पर जब सन् १६३७ म माधव देशपाण्डे मन्त्री बन तो उनकी 'मातभूमि' की भूमिका वदल गयी। 'मातृभूमि' अब बिल्कुल काग्रेसी बन गयी। माधव देशपाण्डे कृष्ण द्वैपायन के साथ मिल गये। सन् १६४२ के आन्दोलन मे उन्हें थोड दिनों के लिए कैद की सजा मिली थी। ब्रिटिश सरकार के 'भारत रक्षा कानून के प्रतिवाद मे 'मातभूमि' तीन महीने तक बिना सम्पादकीय लेख के ही छपती रही। देशसेवा की नियमित दीक्षा पाकर माधव देशपाण्डे नेतृत्व भी पा गये। 'मातभूमि से जो मुनाफा हुआ था, उसी के सहारे माधव देशपाण्डे अब एक अंग्रेजी पत्र भी निकालने लगे थे, जिसका नाम हुआ 'दि पीपुल।

जब कृष्ण द्वपायन स्थायी मन्त्रिमण्डल बनाने लगे, तो माधव देशपाण्डे उनके लिए एक समस्या बन गये।

महाराष्ट्रीय वग मे माधव देशपाण्डे के प्रतिद्वन्द्वी हैं प्रजापति दोवडे। सन् १६३७ से माधव देशपाण्डे कृष्ण द्वपायन के राजनीतिक सहकर्मी थे। प्रजापति दोवडे महाराष्ट्रीय समाज म माधव देशपाण्डे को हिन्दीभाषियो का मित्र कहकर बदनाम करते हैं। प्रजापति की उम्र अभी कम ही है। छात्रा और मजदूरा म उनका प्रभाव है। काग्रेस म रहकर भी वह उदयाचल के मराठी जिलो को इकट्ठा करके एक अलग प्रदेश बनवाने मे आस्था रखते हैं। इस तरह का स्वतन्त्र मराठीभाषी प्रान्त बनाने म माधव देशपाण्डे की भी आस्था है। पर उनकी धारणा है कि इस राजनीतिक दु स्वप्न के सफल होने की कोई आशा नही है। इसीलिए हिन्दीवाला के साथ बने रहने के रास्ते को ही वह बेहतर समझते हैं। प्रजापति शेवड भी जानत हैं कि उदयाचल से निकालकर स्वतन्त्र मराठीभाषी प्रान्त बनाना सम्भव नही है। यह केवल तभी सम्भव हो सकता है, जब वे बम्बई के मराठीभाषी इलाके के साथ मिल जायँ। पर माधव देशपाण्डे यह भी जानते हैं कि यदि उस तरह का सयुक्त प्रान्त बने तो उसमे उनका कुछ अधिक प्रभाव नही रहगा। बम्बई के मराठी नेता अपना ही नेतत्व बनाये रहेगे। इसीलिए मराठीभाषी प्रान्त के आन्दोलन को अधमना समथन देते हुए भी वह फिलहाल हिन्दीवालो के साथ मिलकर ही राजनीति मे बन रहने के पक्ष म हैं। प्रजापति शेवडे उदयाचल मन्त्रिमण्डल म सिर्फ उपमन्त्री हैं इसीलिए सयुक्त मराठीभाषी प्रान्त बनाने का उत्साह उनमें बहुत अधिक है। क्षमता की सीमा का विस्तार म होने पर उनकी महत्वाकाक्षा नहीं सफल होगी, इतनी समझ उनमें है।

कौशल मन्त्रिमण्डल बनने के शुरु के दिनों में माधव देशपाण्डे का कृष्ण द्वपायन के साथ बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था, फिर भी दोनो एक दूसरे का पूरा विश्वास नहीं करते थे। कृष्ण द्वपायन उदयाचल काग्रेस सगठन के नेता थे।

मोटे तौर पर 'मातृभूमि' उनका समर्थन करती थी। बाहर दोनो मे प्रीति और मित्रता दिखायी देती थी। पर माधव देशपाण्डे कभी कृष्ण द्वपायन को अच्छी तरह समझ नही पाये। कभी ऐसा लगता कि उस मनुष्य म कुछ राजनीतिक ईमानदारी है। कम-से कम कुछ देश प्रम तो है ही। पर कभी-कभी ऐसा लगता कि कृष्ण द्वैपायन में असाधारण आत्मविश्वास, पराकाष्ठा की धूतता, सिद्धान्त तथा काय तत्परता और अवसरवादी दार्शनिकता—केवल यही चीजें हैं। फिर कभी-कभी जब कृष्ण द्वपायन राजनीति नही बल्कि काव्य और जीवन रहस्य की चर्चा करते तो माधव देशपाण्ड की आँखों म वह बिल्कुल दूसरे आदमी लगते। राजनीतिक चाल म कृष्ण द्वपायन के सामने वह अपने को बिल्कुल नौसिखिया की तरह महसूस करते। उनके उज्ज्वल तथा नाक प्रमुख चेहरे का देखकर माधव देशपाण्डे का रक्त-प्रवाह एकाएक मन्द हो जाता। उन्ह मालूम था कि कृष्ण द्वपायन को साथ लिये बिना उदयाचल मे राज नही किया जा सकेगा। पर साथ ही वह यह भी समझते थे कि कृष्ण द्वपायन से गले मिलने पर उनका अपना स्वतन्त्र अस्तित्व कुछ भी नही रह जायेगा।

माधव देशपाण्ड के प्रति कृष्ण द्वपायन के मनोभाव उसी समय जाने जा सकते, जब वह किसी बहुत ही निकट के साथी से कहते थे—"किसी भी मराठा ब्राह्मण का पूरा विश्वास नही करना चाहिए। उनके खून में रग बदलना युगों से छिपा है।'

दुर्गाभाई देसाई को मुख्यमन्त्री बनाने के इस प्रयास के पीछे माधव देशपाण्डे का ही हाथ था। दुर्गाभाई उनका सहयोग खरीदने के लिए बहुत बडी कीमत देंगे, इसका उन्हें पूरा विश्वास था। दुर्गाभाई सीधे-सादे आदमी, गाधीजी के चेले थे। उनकी आदशवादिता से सभी परिचित थे। राजनीतिक दाँव-पेंच में उनसे हार जाने की बहुत कम सम्भावना थी और मात खा जाने पर भी अपने को छोटा महसूस करने की जलन न होती। दुर्गाभाई से मुख्यमन्त्री बनने का अनुरोध करने के लिए रात को जो लोग उनके पास आये थे उनका साथ देने में माधव देशपाण्डे को कोई खास हिचक नही हुई थी। यह सन्देह तो उनके मन मे था ही कि अगर दुर्गाभाई मुख्यमन्त्री न हुए तो कृष्ण द्वपायन जरूर माधव देशपाण्डे से बदला लेंगे। पर राजनीतिक एकनिष्ठता का कोई पट्टा नही होता, इस मामूली सी बात को सभी राजनीतिज्ञ जानते हैं।

मन्त्रिमण्डल बनाने के पहले चरण म ही कृष्ण द्वपायन ने कई बार माधव देशपाण्डे को चौंका दिया था। उन्होंने जिस ढग से दुर्गाभाई को अपने साथ ले लिया था उससे उनके बडे बडे विरोधी भी हक्काबक्का रह गये। दुर्गाभाई खुद तो मुख्यमन्त्री बने ही नही, उल्टे उनके प्रधान सहयोगी के रूप में बिल्कुल निश्छल सहयोग देने के लिए कृष्ण द्वपायन की बगल मे आ गये। माधव

देशपाण्डे ने ऐसा कभी सोचा भी नहीं था। दो महारथियों के इस आकस्मिक मिलन के कारण विरोधी गुटों के नेता मानो तितर बितर हो गये। माधव देशपाण्डे का बुरा हाल रहा। कृष्ण द्वैपायन के सामने वह षडयन्त्रकारी, अविश्वासी और दुर्गाभाई के सामने अस्थिरचित्त प्रमाणित हो गये। इसके अलावा उनके राजनीतिक जीवन का इतिहास भी कुछ कम ही था। बहुत सालों तक वह 'माडरेट' रहे, जेल जाने का गौरव करीब-करीब नहीं के बराबर था। उनका बस एक ही दावा था कि वह मराठों के नेता हैं। दावा साम्प्रदायिक था, पर कमजोर नहीं, क्योंकि माधव देशपाण्डे समझ गये थे कि स्वतन्त्र भारत में साम्प्रदायिक आन्दोलन घटेगा नहीं, बल्कि और जोर ही पकड़ेगा। आंचलिक माग पर जोर देकर, आदमियों की क्षुद्र राजनीतिक चेतना को भड़काकर उनके-जैसे लोग बहुत दिनों तक नेतागीरी बनाये रख सकते हैं।

इसीलिए कांग्रेसी राज के शुरू में ही माधव देशपाण्डे आन्तरिक रूप से मराठों के नेता बन गये। 'मातृभूमि' तथा 'दि पीपुल' के हर कालम में मराठा गौरव की ज्योति बिखरने लगी। छत्रपति शिवाजी, नाना पाटिल, महामति गोखले, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, मनीषी रानाडे, वीर सावरकर की जय जयकार से उनके दोनों अखबार भरे रहते थे। सिर्फ इतना ही नहीं एकाएक 'महाराष्ट्र संस्कृति संघ' की स्थापना करके उन्होंने रतनपुर में मराठों की कीर्ति की प्रखर ज्योति फैला दी। कई हजार रुपये खर्च हुए, पर मौका कंजूसी करने का नहीं था।

तैयारी की पूरी कीमत वसूल की जायेगी, इसकी पूरी उम्मीद माधव देशपाण्डे को थी। पर उन्होंने एक बार और कृष्ण द्वैपायन से हार खायी।

सुना कि मन्त्रिमण्डल की सूची में उनका नाम ही नहीं है। न तो कृष्ण द्वैपायन कौशल की बनायी सूची में उनका नाम है और न दुर्गाभाई की।

सिर्फ इतना ही नहीं, कृष्ण द्वैपायन की सूची में एक मराठा नेता का नाम शामिल हुआ है—शंकरराव पाटिल—महाराष्ट्र समाज का एक सम्मानित नाम।

शंकरराव पाटिल ने राजनीति नहीं की है, वह संगठन के काम में ही व्यस्त रहे। उदयाचल के मराठा समाज में शिक्षा प्रसार के क्षेत्र में उनकी देन महत्त्वपूर्ण है। स्कूल, कालेज, टेक्निकल इंस्टीट्यूट आदि की स्थापना की है। कई प्रतिभाशाली युवकों को ऊँची शिक्षा पाने में सहायता दी है।

छाती में भयंकर दर्द महसूस करते हुए भी माधव देशपाण्डे ने समझ लिया कि शंकरराव पाटिल के मन्त्री बन जाने पर वह चुप भी नहीं रह सकेंगे, बल्कि उन्हें कृष्ण द्वैपायन की इस चाल की सराहना करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा।

माधव देशपाण्डे ने 'महाराष्ट्र संस्कृति' के प्रदर्शन का जो तीन दिन का आयोजन किया, उसका अध्यक्ष उन्होंने शंकरराव पाटिल को ही बनाया था।

हतबुद्धि माधव देशपाण्डे को एक बात और भी मालूम हुई कि कृष्ण द्वपायन की सूची मे प्रजापति शेवडे का भी नाम है—महाराष्ट्रीय समाज के तरुण तथा नये नेता।

मन्त्रिमण्डल की सूची को अन्तिम रूप देने से पहले कृष्ण द्वैपायन ने खुद ही बडी सावधानी से अखबार के सवाददाताओ को मन्त्रिमण्डल के सम्भावित सदस्यो के नाम बता दिये।

माधव देशपाण्डे कुछ क्षण किंकर्तव्यविमूढ से रह गये। शकरराव पाटिल को मन्त्रिमण्डल मे लेने के प्रयास की 'मातभूमि' के सम्पादकीय मे प्रशसा की गयी। प्रजापति शेवडे की खुशकिस्मती पर कोई टिप्पणी नही की गयी। माधव देशपाण्डे ने खुद अपने लेख मे बडी सावधानी से उदयाचल के दोना बडे नेताओ को सदुपदेश दिया—"मराठा समाज अल्पसख्यक है पर इसका महत्त्व कम नही है। तीस प्रतिशत को एकदम अल्पसख्यक भी नही कहा जा सकता। उदयाचल के जीवन मे यह समाज घुला मिला है। प्रान्त के सगठन और प्रगति मे इस समाज की काफी देन है। मन्त्रिमण्डल के गठन में मराठा समाज को उचित स्थान देना केवल उदारता ही नही, बुद्धिमानी भी होगी। ऐसा न होने पर कई तरह के सकट आने की सम्भावना है। मन्त्रिमण्डल मे मराठा समाज के प्रतिनिधि चुनने के पहले दोनो नेताओ को काफी सोच विचार करना पड़ेगा। सिर्फ राजनीतिक चाल से काम लेना आगे चलकर नुकसानदेह हो सकता है।'

स्पष्ट सकेत कर देने से भी काम नही बना।

अब माधव देशपाण्डे ने दुर्गाभाई के पास दूत भेजा—मातभूमि के सम्पादक और अपने विश्वस्त कर्मचारी—अर्जुन घोरपडे। नतीजा और भी खराब निकला।

अर्जुन घोरपडे सालो से 'मातभूमि' का सम्पादन करते करते बूढे हो गये थे। इस उम्र में उनकी याददाश्त अच्छी नही रह गयी थी। दूत भेजने की सलाह उन्होने ही माधव देशपाण्डे को दी थी।

दुर्गाभाइ देसाई पुरानी बातें भूले नही थे। माडरेट पत्र 'मातभूमि' कभी स्वाधीनता आन्दोलन की कडी आवाज म निन्दा करता था यह उन्ह याद था। यह सब अर्जुन घोरपडे की ही करतूत होती थी यह बात भी वह नही भूले थे।

इसीलिए दूत भेजना भी बेकार रहा। दुर्गाभाई ने कहा, आप लोग कौशल जी के पास जाइए। वही नेता है वही मुख्यमन्त्री हैं। मैंने तो जेलो में ही जिन्दगी बितायी। आप लोगो ने मेरे काम को कुछ अच्छी नजरों से नही देखा, कौशलजी आप लोगों को अच्छी तरह जानते पहचानत हैं।"

अर्जुन घोरपडे को अब याद आया। समझ गये कि गलत चाल चल दी। बोले, "वह तो बहुत दिन पुरानी बात है। तब कुछ और ही समय था। आज

उन बातों का क्या महत्व रह गया है ?"

दुर्गाभाई ने कहा, "आप लोगो के लिए नही, पर मेरे लिए है।"

अर्जुन घोरपड़े बोले, "आप तो महान पुरुष हैं !"

दुर्गाभाई ने गुस्से से कहा, "मैं महान व्यक्ति नही हूँ। मैं दुर्गाभाई देसाई, गांधीजी का चेला हूँ। देश का एक साधारण सेवक हूँ। मेरे ऊपर चापलूसी का कोई असर नहीं पड़ेगा।'

अर्जुन घोरपड़े की जवान पर कोई बात नही आयी।

दुर्गाभाई कहते रहे, "स्वतन्त्रता सग्राम से अलग करके स्वतन्त्रता का मेरे लिए कोई अर्थ नही है। हम क्यो स्वतन्त्रता के लिए लड़े, हमारा उद्देश्य किस लक्ष्य पर पहुचना था, किस रास्ते पर हम बढना है, अगर हम यह सब भूल जायें तो हमारे लिए स्वराज्य का कोई मतलब नही है। और अब मिला हुआ स्वराज्य शक्ति की शराब भर है, उसे पीकर चारो ओर गन्दा शोरगुल हो रहा है। आपके सामने स्वतन्त्रता सग्राम का कोई महत्व नही है, सिर्फ स्वराज्य का है। इसी से लड़ाई के समय आप 'माडरेट' बनते हैं और लड़ाई खत्म होने पर सत्ता चाहते हैं। आज की राजनीति यही है। मैं इस सबमे शामिल नहा हूँ। यह सब कौशलजी जानते हैं, आप उन्ही के पास जाइए।"

मजबूर होकर माधव देशपाण्डे को कृष्ण द्वैपायन के ही दरबार मे खडा होना पडा। काम आसान नही था। लाज शरम या इज्जत से बढ़कर डर था— राजनीतिक चाल का डर। कृष्ण द्वैपायन के भयकर व्यक्तित्व का डर, उन्हें समझ न सकने का डर।

माधव देशपाण्डे कौशलजी के दरबार मे जाने की तरकीब ढूढ़ ही रहे थे कि कृष्ण द्वैपायन ने स्वय उन्हे बुलाया। रतनपुर शहर के पूरब म एक पुराना शिवालय है। इन दिनो माधव देशपाण्डे हर रविवार को वहाँ पूजा करते थे। ऐसे ही एक रविवार को पूजा के बाद मन्दिर से बाहर आकर उन्होने मन्दिर से सटे बरगद से नीचे एक तरुण को बठे देखा। वह कृष्ण द्वपायन का छोटा लडका चन्द्रप्रसाद था। आकर उसने माधव देशपाण्डे को सर झुकाकर प्रणाम किया—"तबियत तो ठीक है, देशपाण्डेजी ?"

'महादेवजी ने जैसा रखा है। तुम लोगो का क्या हाल है ? पिताजी कुशल मगल से हैं न ?'

'काकाजी, कौशलजी का कुशल मगल मालूम करने का मौका हम लोगों को नहीं मिलता। यह भाग्य तो आप लोगो का ही है। आप लोगा म कौन कौन मन्त्रिमण्डल म रहेगे और कौन कौन नही, अब तो पिताजी को उठते बठते यही चिन्ता रहती है।'

माधव देशपाण्डे की देह मानो जलने लगी, पर मन म अनन्य कौतूहल था।

एक आवारा नौजवान के साथ ऐसे महत्वपूर्ण व्यक्तिगत विषय पर बात करने मे उनकी रुचि नहीं थी, पर उससे हाल समाचार जान लेने का आग्रह वह नही रोक पाये।

"हाँ हाँ ऐसा तो होगा ही,' माधव देशपाण्डे कहने लगे, "एक पूरे प्रात का राज काज सँभालना बहुत बडी जिम्मेदारी होती है। रोज ही सकडो लोगों का आना जाना लगा रहता होगा है न सही बात ?'

'बहुत आते हैं, काकाजी ! आज सवेरे ही देखिए न—दुर्गाभाई देसाईजी प्रजापति शेवडेजी सुदर्शन दुबेजी, हरिशकर त्रिपाठीजी, निरजनसिंहजी और ।" उसने दाँता से होठ दबाते हुए जीभ से एक अजीब आवाज करके कहा, "बाजपेयीजी।'

माधव देशपाण्डे का कौतूहल और भी बढ गया "सुदर्शनजी भी आये थे क्या ?

वे तो रोज आते हैं।"

"रोज ?'

"कभी कभी दिन भर म दो बार भी।

यह खबर माधव देशपाण्डे के लिए शुभ नही थी। अगर कृष्ण द्वपायन कौशल और सुदर्शन दुबे मिल गये तो हिन्दीवाला का जोर बढ जायगा और मराठीवाले कमजोर हो जायेंगे।

'प्रजापति आज भी आये थे क्या ?"

'जी हाँ वह भी खूब आ रहे हैं।

"शकररावजी नही आते ?'

'एक दिन उन्हे भी देखा था, चन्द्रप्रसाद ने आवाज जरा धीमी करके कहा, 'पिताजी से बहुत उत्तेजित होकर बातें कर रहे थे।" फिर आवाज और धीमी करके बोला 'सबेरे चाय पीते वक्त पिताजी बहुत गम्भीर रहे किसी से एक बात तक नही की उन्होंने।

'ऐसी बात ? पर ऐसा क्यो हुआ ?"

'सो मुझे क्या मालूम काकाजी, पर मुझ ऐसा लगा कि "

'क्या ?'

'मुझे लगा कि शकररावजी से पिताजी बहुत नाराज थे।'

नाराज हो गये ?'

"ऐसा ही मालूम होता है।

'पर मैंने तो सुना कि अच्छा जाने दो वह बात शकररावजी फिर नही आये ?'

आये होंगे लेकिन मैंने नही देखा।"

"तुमने नहीं देखा।"
"जी नही, पर "
"क्या ?"
'उन्हें मन्त्री बनने का बडा शौक है।"
"यह बात है ? तुमने कैसे जाना ?"
"मुझे तो ऐसा ही लगा।"
'हूं। मन्त्री होने का मन तो सबको है।'
"सबको तो नही है। अपने को ही लीजिए, आपको तो मन्त्री बनने का मन नहीं है।"
'मुझे ? मेरे बारे मे तुम्हें कैसे मालूम हुआ ?'
"ऐसा ही लगता है, आप तो पिताजी के पास नही आते।"
'मन्त्री बनने का लालच मुझे नही है। मैं जिन्दगी भर देश का सेवक हूं, अब तक देश की सेवा करता रहा आखिरी दम तक करता रहूंगा। मन्त्री बनने का लालच मुझे बिल्कुल नहीं है।"
"यह तो सभी को मालूम है। पिताजी भी यही कह रहे थे।"
'हां ? कौशलजी भी यह कह रहे थे ? क्या कह रहे थे ?"
"कल सबेरे चाय के समय मैंने ही कहा, 'पिताजी, मराठा समाज के सबसे नामी नेता तो माधव देशपाण्डे हैं। उन्हें आप जरूर मन्त्रिमण्डल मे शामिल कर रहे हैं।' पिताजी बोले, 'माधवजी को तुम नही जानते। मन्त्री बनने का उन्हें बिल्कुल लालच नही है। वे देशसेवक हैं। देशसेवा में ही उन्हें आनन्द और सन्तुष्टि है। पिताजी ने यह भी कहा कि माधवजी जैसे लोगों की ही देश म सबसे ज्यादा जरूरत है।'
'अच्छा, ऐसा कह रहे थे ? तुम्हारे पिताजी महान नेता हैं। उनके सामने तो हम नगण्य हैं।'
'देखिए काकाजी, मन्त्रिमण्डल बनने लगा तो मानो छीना झपटी शुरू हो गयी। पिताजी को हम लोगो ने इतना व्यस्त, उत्तेजित, थका हुआ और दुखी पहले कभी भी नहीं देखा। एक दिन वे कह रहे थे —'मन्त्रिमण्डल मे यदि दो सौ चालीस लोगो का शामिल किया जा सकता तो कोई समस्या न होती, क्योकि तब हम हर एम० एल० ए० को मन्त्री उपमन्त्री या कुछ-न कुछ बना लेते।'
माधव देशपाण्डे के चेहरे पर उदास हंसी फल गयी।
'पिताजी के लिए दुख होता है काकाजी! कई लोग उन्हें गलत समझते हैं। असल में वह राजनीतिज्ञ नही, कवि हैं। मुझे तो डर लगता है कि इस झमेले में उनका स्वास्थ्य न गिर जाये।'

"क्यों ? उनकी तबियत ठीक नही है क्या ?"

'तबियत की बात नही है, काकाजी, मैं तो उनके मन की बात कर रहा हूँ। आप एक दिन आकर उन्हें देख जाइए न। आप तो मन्त्री बनने के लिए लडाई करने नही आयेंगे, आपके साथ दो चार दूसरी बातें करके उन्हे शांति मिलेगी।"

"तुमने ठीक ही कहा है। मैं भी एक दिन आने की सोच रहा था। पर कौशलजी व्यस्त रहते हैं। इस समय उनका वक्त लेना ठीक नहा।'

"आपसे मिलने पर पिताजी जरूर खुश होंगे। उस दिन कह रहे थे कि माधवजी से बहुत दिनो से मुलाकात नहीं हुई।'

"ऐसा कह रहे थे ?"

'कह रहे थे कि तुम लोग जरा कुशल मगल पता कर लना। अभी तो मुझे मरने की भी फुरसत नही है। मन्त्रिमण्डल बनने के बाद मैं खुद उनसे मिलने जाऊँगा।"

मन्दिर से घर लौटकर माधव देशपाण्डे ने कृष्ण द्वपायन कौशल को टेलीफोन किया। रात को दोनो की मुलाकात हुई।

फलस्वरूप माधव देशपाण्डे कौशल मन्त्रिमण्डल म सिचाई तथा विद्युत मन्त्री बने। उनके और कृष्ण द्वपायन के बीच यह समझौता हुआ कि वह बिना किसी शत के मुख्यमन्त्री गुट का समथन करते रहगे। मराठा समाज का भी पूरा सहयोग मिलता रहेगा। माधव देशपाण्ड को खुश करने के लिए कृष्ण द्वैपायन ने प्रजापति शेवडे को उपमन्त्री के पद पर उतार दिया।

शकरराव पाटिल विधान सभा के स्पीकर निर्वाचित हुए।

दुर्गाभाई ने एक बार आपत्ति की—'माधव देशपाण्डे एकदम अवसरवादी है। केवल तीन महीने ही जेल मे रहा बाकी जिन्दगी भर अपना और अपने स्वार्थों का खयाल रखा। आपके विरुद्ध षड्यन्त्र करके मेरे पास आया था, कहता था कि मराठा लोग कौशल जी को नही चाहते। और आप उसे ही मन्त्री बना रहे हैं ? आपकी राजनीति मेरी समझ मे नही आ रही है कृष्ण द्वपायन जी।

कृष्ण द्वपायन ने हँसकर जवाब दिया— दुर्गाभाईजी राजनीति की सबसे बडी प्रेरणा स्वाथ और सुविधा है। आदश की बात उसके बाद आती है। आदश को लेकर जितना झगडा है उससे कही ज्यादा झगडा है रास्ते को लेकर दाँव पेंच और कूटनीति को लेकर। दुर्गाभाईजी मैंने कई बार महाभारत पढा है और अभी भी पढता हूँ, सो केवल जीवन का रहस्य समझने के लिए ही नही, राजनीतिक महाकाव्य दुनिया भर म और कहीं नही लिखा गया। उद्योगपव को

याद कीजिए। कौरव-पाण्डव, दोनों शिविरों में लड़ाई की तैयारी हो रही है। राजनीति और कूटनीति का अनोखा खेल। नकुल सहदेव के मामा मद्रराज शल्य बड़ी भारी सेना लेकर पाण्डवों का साथ देने आ रहे थे, पर बीच रास्ते में ही दुर्योधन ने उन्हें रोक लिया—बलप्रयोग से नहीं बल्कि अद्भुत अभिनन्दन करके। ज़रा दुर्योधन की राजनीतिक चाल तो देखिए—दुर्योधन के आदेश से शिल्पियों ने जगह जगह पर विचित्र सभा मण्डल, कुएँ, तालाब, विश्रामघर बनवाये। खेल कूद, आमोद प्रमोद और खाने-पीने की ढेर सी तैयारियाँ करायीं। शल्य पहुंचे तो दुर्योधन के मन्त्रियों ने देवता की तरह उनका स्वागत किया। उस स्वागत-सभा का सौन्दर्य देखकर शल्य तो मुग्ध हो गये। बोले—'किस शिल्पी ने यह सब बनाया है? उसे मेरे पास लाओ, मैं पुरस्कार दूंगा।' दुर्योधन स्वयं उपस्थित हुआ। शल्य ने प्रसन्न होकर कहा—तुम क्या चाहते हो? मैं तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा। दुर्योधन ने कहा—आप मेरे प्रधान सेनापति बनें। और शल्य राजी हो गये। अब देखिए दुर्गाभाईजी, राजनीति के खेल में तो दुर्योधन जीत ही गया। युधिष्ठिर को पहले ही सोच लेना था कि शल्य को दुर्योधन रास्ते में ही रोक सकता है। इस सम्भावना को उन्होंने नहीं देखा था, इससे उनमें राजनीतिक दूरदर्शिता कम दिखती है कि नहीं? पर युधिष्ठिर भी कम बुद्धिमान नहीं थे। वह भी जानते थे कि राजनीति में किसी की हार सम्पूर्ण या जीत सम्पूर्ण नहीं है। सबसे बड़ी जीत पर भी पराजय की काली छाया पड़ती ही है। सबसे बड़ी पराजय में भी कम से-कम सही, कुछ हद तक जीत का अंश होता ही है। युधिष्ठिर के शिविर में जाकर जब शल्य ने बताया कि उन्होंने दुर्योधन का सेनापति बनना स्वीकार कर लिया है, तो पाण्डवराज दुखी तो हुए पर उसे प्रकट नहीं किया। बोले—दुर्योधन के व्यवहार से सन्तुष्ट होकर आपने जो किया सो ठीक ही किया। अब हमारे लिए भी एक काम कीजिए। अनुचित होने पर भी इसे आपको करना ही होगा क्योंकि हमारी भलाई के लिए यह बहुत जरूरी है। युद्ध में आप वासुदेव के समान हैं। जब कर्ण और अर्जुन में युद्ध होगा, अर्जुन के सारथी कृष्ण रहेंगे। आपको कर्ण का सारथी बनना पड़ेगा। कर्ण का सारथी बनकर आपको दो काम करने होंगे—एक तो अर्जुन की रक्षा और दूसरे कर्ण का तेज नष्ट करना।' शल्य ने उत्तर दिया—मैं यह जरूर करूँगा। युद्ध के समय मैं कर्ण से ऐसी प्रतिकूल और अहितकर बातें करूंगा जिससे उसका तेज नष्ट हो जायेगा और अर्जुन उसे अनायास ही मार सकेगा। सिर्फ इतना ही क्यों तुम्हारी भलाई के लिए मैं और भी बहुत कुछ करूँगा।'

कृष्ण द्वैपायन कहते जा रहे थे—'दुर्गाभाईजी, इस राजनीति पर ज़रा गौर कीजिए। विराट सेना के साथ साथ शल्य-जैसे सेनापति को भी दुर्योधन ने अपने साथ ले लिया, और इतनी करारी हार से भी युधिष्ठिर बिल्कुल निराश नहीं

हुए। इस घटना का पता चलते ही उनके दिमाग में यह बात कौंध गयी कि इस भारी विपत्ति के बाद भी कस ज्यादा से ज्यादा अपना फायदा कर लिया जाये और उन्होंने तुरन्त एक कौशल खोज लिया। युधिष्ठिर यह जानते थे कि पाण्डवों को यदि किसी से डर है तो वह कर्ण से ही। एकमात्र कर्ण ही है जो जी जान से दुर्योधन के लिए लड़ेगा—अपनी सारी शक्ति, इच्छा, अपमान, हिंसा, क्रोध और महाविक्रम—सब कुछ युद्ध में लगा देगा। युधिष्ठिर को सबसे बड़ा डर अर्जुन के लिए था। कहीं कर्ण के हाथों अर्जुन मारा न जाये। इसीलिए शल्य के शत्रुपक्ष का सेनापति बन जाने से युधिष्ठिर प्रसन्न हुए। शल्य कृष्ण के समान योद्धा थे। कर्ण और अर्जुन के युद्ध में कृष्ण अर्जुन के सारथी होंगे, इस हालत में सेनापति शल्य भाग्ति कर्ण के सारथी बने तो दुर्योधन के मन में कोई सन्देह नहीं उठेगा। सारथी बनकर रथ चलाने के कौशल से शल्य अर्जुन को विपत्तियों से बचा सकेंगे। कर्ण एक महान योद्धा जरूर है, पर बहुत दम्भी और आत्माभिमानी है। अगर शल्य ने उसके अहंकार को चोट पहुँचानेवाली बातें कीं तो कर्ण उत्तेजित हो जायेगा युद्ध में गलतियाँ करेगा और उसका तेज भी घट जायेगा। इतने थोड़े समय में इतनी बड़ी कूटनीति युधिष्ठिर ने सोच ली। और दुर्गाभाई जी, आप लोग युधिष्ठिर को सीधा-सादा कहकर उपेक्षा करते हैं या धर्मपुत्र कहकर पूजा करते हैं।

दुर्गाभाई के आश्चर्यचकित और प्रभावित चेहरे को देखकर कृष्ण द्वैपायन कहते ही गये— माधव देशपाण्डे अवसरवादी हैं यह तो सभी जानते हैं। कांग्रेस के आन्दोलन में उन्होंने खास भाग नहीं लिया। जिसे सचमुच जेल काटना कहते हैं, वह उन्होंने कभी नहीं किया। उनकी पत्रिका मातृभूमि ने बार-बार आपको और मुझे बदनाम किया है। यह सब सच है पर पुराने दिन तो अब इतिहास बन गये हैं। सन् १९४२ के बाद देश का भविष्य समझकर माधव देशपाण्डे कांग्रेसी बन गये। आज वह मराठा का नेतृत्व कर रहे हैं। मातृभूमि प्रभावशाली समाचार पत्र बन गया है। 'पीपुल' की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। एक माधव देशपाण्डे ही उदयाचल के प्रेस मैगनेट हैं। मराठों के बीच से मन्त्री का चुनाव करना आसान नहीं है। शंकरराव पाटिल को मन्त्री बनाया जा सकता है। पर वह शिक्षा मन्त्रालय को छोड़कर कुछ और लेने को तैयार नहीं हैं। और इस महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में उनके और हमारे आपके मतों में एकदम मेल नहीं है। हम लोगों ने सामाजिक शिक्षा और हर गाँव में नये आदर्श का विद्यालय स्थापित करने का जो संकल्प किया है उस काम में वह पैसे और शक्ति का दुरुपयोग ही सोचते हैं। इस विषय में उनके साथ मेरी बातें हुई हैं। आपने भी उनसे बातचीत की है। इसके अलावा शंकरराव शिक्षा विशेषज्ञ हैं, राजनीतिज्ञ नहीं। मराठों की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा वह नहीं पूरी कर

सकेंगे। विधान सभा के मराठा सदस्य जो हमारे दल के ही हैं—शंकरराव का नेतृत्व नहीं स्वीकार करेंगे। उनके नेता हैं माधव देशपाण्डे और प्रजापति दीवडे। इसलिए माधव देशपाण्डे को मन्त्री बनाना ही पड़ेगा।"

"अगर बनाना ही था तो पहले क्यों नहीं बनाया?"

"उसके कई कारण हैं, दुर्गाभाईजी! माधव देशपाण्डे की बुद्धि जितनी मोटी है, उनकी महत्त्वाकांक्षा उतनी ही ऊँची है। अगर आप उन्हें पहले ही यह बात समझा दें कि वह मराठा के नेता हैं तो वह न जाने क्या क्या शर्तें पेश कर देंगे। शायद कहें कि मन्त्रिमण्डल के दस में से चार मन्त्री और छः उपमन्त्रियों में से दो उपमन्त्री मराठे होने चाहिए। कभी जो मुस्लिम लीग करती थी, वही एक-दूसरे के विरोध में आज हम खुद कर रहे हैं। सिर्फ इतना ही नहीं—माधव देशपाण्डे यह भी कहेंगे कि जिन्हें मैं चाहूँ मन्त्री बन सकेंगे। अर्थात् आप खुद ही माधव देशपाण्डे को मराठा का अद्वितीय नेता बना रहे हैं। फिर एक दिन आप क्या देखेंगे कि आपको हटाकर स्वयं मुख्यमन्त्री बनने की महत्त्वाकांक्षा के कारण माधव देशपाण्डे षड्यन्त्र में डूब गये हैं।'

'इसीलिए आपने उस टुकड़े टुकड़े तोड़कर जोड़ा है?"

सो आप कह सकते हैं, दुर्गाभाईजी! माधव देशपाण्डे की सबसे बड़ी गलती यह थी कि वह आपके पास मेरी शिकायत लेकर उपस्थित हुए। उसके बाद उन्हें मेरे पास आने की हिम्मत नहीं पड़ी। मन्त्री बनने के लिए वह कितने बेचैन थे, यह मैं जानता था और साथ ही यह भी जानता था कि इसके लिए वह मुँहमाँगा दाम दे सकते हैं। माधव देशपाण्डे का अभिमान तोड़ना जरूरी था। उन्हें यह समझा देना भी जरूरी हो गया था कि मराठा में उनके-जैसे कांग्रेसी नेता और भी हैं और उनका मन्त्री बनने का हक भी है।'

"उन्हें अपने पास बुलाया कैसे?"

कृष्ण द्वैपायन हँसकर बोले, थोड़ा कौशल से काम किया था, दुर्गाभाई, यह जानकर आप क्या करेंगे? आप आदर्शवादी, पुण्यात्मा मनुष्य हैं, आपको बताऊँगा तो आपको दुःख होगा और मेरे लिए आपके मन में जो थोड़ी-सी श्रद्धा है वह भी खत्म हो जायेगी।"

दुर्गाभाई चुप रह गये। उनकी आँखों में अपनी थकी और उदास दृष्टि डालकर कृष्ण द्वैपायन ने और भी कहा था—'महाभारत के कुछ श्लोक याद आ रहे हैं दुर्गाभाईजी! शान्तिपर्व में भीष्म युधिष्ठिर को उपदेश दे रहे हैं—ये च मूढतमा लोके ये च बुद्धेः परं गताः। ते नराः सुखमेधन्ते क्लिश्यत्यन्तरितो जनः॥ यानी जो मूढतम हैं जिनमें बुद्धि नहीं है, अर्थात् जो निर्बोध हैं और जो परमबुद्धिमान हैं—दुनिया में वही दोनों सुख भोग सकते हैं। जो बीचवाले लोग हैं उन्हें ही दुःख झेलना पड़ता है। दुर्गाभाईजी राजनीति में भी यही

बात सच है। माधव देशपाण्डे जसा मूढ और आप जैसा परमबुद्धिमान—आप लोगों को कम कष्ट होता है। कष्ट का बोझ मेरे-जसे बीचवाले लोगों के लिए ही है इसलिए मैं कई बार भीष्म का दूसरा उपदेश याद करता हूँ—सुख वा यदि वा दुःख प्रिय वा यदि वा प्रिय। प्राप्त प्राप्तमुपासित हृदयेनापरा जित ।। सुख या दुख, प्रिय या अप्रिय जो कुछ भी आये, उससे पराजित अथवा अभिभूत हुए बिना उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। और इस उपदेश की आधुनिक व्याख्या यह है कि सुख दुख, हार या जीत किसी मे भी मन को लहकने या बहकने नही देना चाहिए। यानी अंग्रेजी म कहा जा सकता है कि यथासम्भव 'डिटच्ड रहना है। निर्लिप्त। सबसे अलग। सिनिक हुए बिना राजनीति करना सम्भव नहीं है, दुर्गाभाईजी!'

आठ

कौशल मन्त्रिमण्डल के पहले कुछ सालो तक उदयाचल का राज काज ठीक ही चला था। मन्त्रिमण्डल मे कुछ खास अन्तर्विरोध नही थे। कभी कुछ छोटे मोटे झगडे जो होते भी थे तो वे नीति के लिए नही व्यक्ति तथा गुट के स्वार्थ को लेकर होते थ सो तो किसी भी मन्त्रिमण्डल म होते ही रहते हैं। पूरे शासन सूत्र पर उससे कोई तनाव नही पडने पाता था। माधव देशपाण्ड कृष्ण द्वपायन को पूरा सहयोग दे रहे थे। वह सिंचाई और विद्युत मन्त्रालय पाकर बहुत खुश नही थे, गृह मन्त्रालय या वित्त मन्त्रालय चाहते थे। फिर भी धीरे धीरे इन दोनो महत्त्वपूर्ण मन्त्रालयो के बढते हुए कामों म माधव देशपाण्डे को भी उदयाचल की उन्नति तथा कल्याण के लिए बहुत कुछ करने का मौका मिला था, इसलिए वह सन्तुष्ट थे। तीन नये बिजलीघर स्थापित करके उदयाचल को अन्धकार से प्रकाश मे लाने के महान कर्तव्य की नीव डालकर माधव देशपाण्ड खुशी म फूलकर कुप्पा हो गये थे। शरीर कुछ भरा भरा लगने लगा। उठने बठने के ढग मे भी कुछ वजन आ गया था। विद्युत यानी पावर लेकर सिर खपाते खपाते माधव देशपाण्डे धीरे धीरे पावर का गूढ रहस्य समझने लगे थे। उनके मानस पटल के अन्धकार में छिपी महत्त्वाकांक्षा एक नये प्रकाश मे चमकने लगी थी। पर यह सब-कुछ साल बाद ही हुआ।

कृष्ण द्वपायन के असन्तोष का भी कोई कारण नही था। मातृभूमि तथा 'पीपुल' दोनो समाचार पत्रों का पूरा समर्थन उन्हें मिल रहा था, यानी उदयाचल

का प्रेस उनका ही साथ दे रहा था। जरूरत पडने पर वह माधव देशपाण्डे से दो चार और भी काम ले लेते थे। उदयाचल मे सिंचाई एव विद्युत विभाग की दिशा म सब काम ठीक ही हो रहे थे। यानी तीन बिजलीघरा के अलावा दो नदियो पर साधारण लम्बाई के पुल बनाये गये थे और उदयाचल की सबसे बडी नदी सोनामुखी को बे द्र बनाकर एक बहुत बडी योजना भी शुरू हो गयी थी, जिसमे कई उप योजनाएँ भी थी। माधव देशपाण्डे मराठो को कुछ हद तक शात रखे हुए थे और इनका राजनीतिक नेतत्व काफी मजबूत हो गया था।

कृष्ण द्वपायन ने माधव देशपाण्डे स सोनामुखी योजना का ठेका नवभारत सगठन नाम के किसी सस्थान को देने का अनुरोध किया था। उनका वह अनुरोध पूरा भी हुआ था। कृष्ण द्वपायन यह बात अच्छी तरह जानते थे कि 'नवभारत सगठन' का जो साठ प्रतिशत हिस्सा उनके तीन बटों के नाम है वह माधव देशपाण्डे को नही मालूम है। यह बात उनके और जगमोहन अवस्थी के अलावा और किसी को नही मालूम है, उनके उन तीनो लडका को भी नही।

दुर्गाभाई न कभी-कभी उनसे कहा भी था, 'माधव देशपाण्डे बहुत ज्यादती कर रहे हैं कौशलजी।"

'क्यो, क्या बात है ?"

"आपको कुछ नही मालूम क्या ?"

सुना तो बहुत कुछ है और मुझे मालूम भी बहुत कुछ है, पर आपकी और मेरी जानकारी एक ही होगी, यह कम समझू ?"

'मन्त्री बनने के बाद माधव देशपाण्डे ने कितने रिश्तेदारा को नौकरी दी है, यह आप जानते हैं ?"

'सत्रह।'

"हनुमान नेशनबिल्डिंग कम्पनी असल मे किसकी है, यह आप जानत हैं ?'

हरीश देशपाण्डेजी।

"यानी माधव देशपाण्डे के बडे लडके की। और बिजली घर और सिंचाई-योजना आदि के सबसे ज्यादा ठेके इसी को मिल रहे हैं।'

"सही है।'

'किसी मन्त्री को यह सब शोभा देनेवाला है ? यह क्या भ्रष्टाचार नही है ?"

कृष्ण द्वपायन ने थोडा मुस्कराकर कहा था, "दुर्गाभाईजी, मन्त्री देवता नहा है, ऋषि भी नही है। मन्त्री भी तो औरो की तरह इन्सान ही है।'

'पर वह बहुतरो की आस्था, विश्वास और आदर का पात्र होता है। वह जिस महान शक्ति का अधिकारी होता है, वह न उसकी अर्जित की हुई है और न उत्तराधिकार म मिली है। लोगों ने यह शक्ति बडे विश्वास स उसके हाथो

मे दी है। इसके छोटे से छोटे हिस्से का भी उपयोग जनता के कल्याण के लिए होना चाहिए। इसका तनिक भी उपयोग मन्त्री अपने लिए नहीं कर सकते।"

कृष्ण द्वारा ने मानभान होकर कहा, "नीति के दृष्टिकोण से मैं आपकी हर बात मानता हूं दुर्गाभाई, पर नीति का कठोर और नियम विचार करने से कितने लोग टिके मिलेंगे? अगर सभी आप जैसे आदर्शवादी और सज्जन होते, तो यह दुनिया स्वर्ग से भी महान बन जाती क्योंकि मनुष्य में तो बहुत से गुण हैं जो देवताओं में नहीं हैं।'

'तो आप माधव देशपाण्डे के कामों को भ्रष्टाचार नहीं समझते हैं?"

"समझता हूं। जरूर समझता हूं। माधव देशपाण्डे को मैंने एक-दो बार चेतावनी भी दी है। पर असलियत यह है कि आप उन्हें जितना कसूरवार समझते हैं, वह उतने कसूरवार नहीं हैं।

"आपकी बात मेरी समझ में नहीं आयी।'

'कसूर माधव देशपाण्डे का नहीं कसूर है सारे भारत का हिन्दू समाज का, धर्म का। कसूर है इस मुल्क के पानी का हवा का, कसूर है इतिहास का।'

छि छि कौशलजी, आप भी अंग्रेजों की तरह बात करने लगे! जैसा मैकाले साहब ने कहा था आप भी ठीक वही कह रहे हैं।

'नहीं दुर्गाभाईजी, मैं वह नहीं कह रहा हूं। मैं तो बिल्कुल ही दूसरी बात कह रहा हूं। यदि आप अनुमति दें, तो साफ-साफ समझा दूं।

दुर्गाभाई ने मौन सम्मति प्रकट की।

'नीति दो तरह की होती है दुर्गाभाई! एक तो सार्वजनिक नीति। यह देश काल पात्र, समाज, सभ्यता—सबसे ऊपर है। यह आदर्शवादी नीति है। इतिहास में कभी कभार ही ऐसे आदमी पैदा होते हैं जिनके लिए नीति या आदर्श का स्थान सर्वोपरि हो। उनकी महानता को हम प्रणाम करते हैं। पर वर्गों को लेकर ही पूरा संसार नहीं है। दूसरी नीति है व्यावहारिक, जो समाज, धर्म आर्थिक व्यवस्था और ऐतिहासिक विकास के आधार पर स्थिर होती है। इसी को लीजिए, आजकल हम कहा करते हैं कि अंग्रेजों का नीति ज्ञान बहुत प्रबल है फिर भी हम लोग जानते हैं कि साम्राज्य बनाने के लिए एक भी दुर्नीति ऐसी नहीं, जिसे अंग्रेजों ने न अपनाया हो। हम आजकल कहा करते हैं कि अंग्रेज व्यापारी चीजों में मिलावट नहीं करते जैसा कि भारतीय व्यापारी करते हैं। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दुष्ट व्यापारियों की सजा की जो विस्तृत और कठोर व्यवस्था है, हमारे कांग्रेसी राज्य में उसका तिलमात्र भी नहीं है। इससे तो यही जाहिर होता है कि भारतीय व्यापारी सब दिन से ऐसे नहीं थे और एक जमाना था जब दुष्ट व्यापारियों को कड़ी सजा मिला करती थी।

अफीम का व्यापार करके अंग्रेज व्यापारी-वर्ग ने चीन को नष्ट कर दिया था और उसके पीछे शासन शक्ति का भी पूर्ण समर्थन था। फिर आप उन्हें ईमानदार व्यापारी कैसे कह सकते हैं ?"

"इससे क्या प्रमाणित होता है ?'

'बस इतना ही कि नीति दुर्नीति का शाश्वत मानदण्ड व्यावहारिक दुनिया में नहीं है। आज अंग्रेजों का नीति-ज्ञान हमसे ज्यादा है। इसका कारण यही है कि जिन्दा रहने के लिए मूल समस्याओं को उन्होंने सुलझा लिया है। नौकरी की ही बात लीजिए। यूरोप में अब कोई भी बिल्कुल बेकार नहीं है। काम करनेवालों की संख्या से काम कहीं अधिक हैं। इसीलिए वहां लोग नौकरी के लिए किसी अन्य, यानी रिश्तेदार या मित्र के दरवाजे पर नहीं जाते। भाई-भतीजावाद की जो दुर्नीति हमारे यहां चल रही है यूरोप में वैसी नहीं है और जो है भी वह दूसरे किस्म की है।'

"बात तो सही है।'

"हमारे मुल्क की आबादी बहुत अधिक है और नौकरियां कम हैं। बेकार लोगों की कोई गिनती नहीं है।'

सिर्फ इसीलिए तो योग्यता के आधार पर ही नौकरी मिलनी चाहिए।'

यथासम्भव पर उससे ज्यादा नहीं। जो अयोग्य है उसे भी तो नौकरी चाहिए, *दुर्गाभाईजी ! उसे भी तो भूख लगती है। जिन्दगी की मार उस पर* भी तो कम नहीं पड़ती।'

'फिर भी हमें एक नीति का आश्रय तो लेना ही पड़ेगा।"

"जरूर। पर उसमें तनिक सा व्यतिक्रम हो जाने से उत्तेजित हो जाना ठीक नहीं होगा। आप सोचकर देखिए, भारत में कितनी सदियों से सामाजिक नीति या न्यायबोध नहीं है, यानी अंग्रेजी में जिसे सोशल मोरालिटी कहते हैं। व्यक्तिगत रूप से न्याय तथा नीति को हम जन्म से पालते आ रहे हैं, पर दूसरी ओर सामाजिक क्षेत्र की बहुत सारी दुर्नीतियों को भी हम हजारों साल से सहते आ रहे हैं।"

"जैसे ?"

"उदाहरणों की कोई गिनती नहीं है, दुर्गाभाईजी। एक विधवा की अवस्था से लेकर संयुक्त परिवार के असंख्य आलसी, निकम्मे लोगों का पालन-पोषण तक सबकुछ सामाजिक दुर्नीति और अन्याय ही तो है। आत्मीयजनों का पोषण तो *हमारे धर्म का निर्देश है। जब भी कोई अपने पैरों पर खड़ा होता है, उसके* रिश्तेदार तमाम आशाएं, विश्वास मांगें लेकर उसके दरवाजे पर पहुंच जाते हैं। आप उन्हें निकाल दें, तो वे सब मिलकर आपको ऐसा बदनाम करेंगे कि आप रह नहीं पायेंगे। फिर आप उन्हें निकालेंगे ही क्यों ? इतनी सदियों की

शिक्षा तथा सस्कारों ने आपको उनके साथ बाँध रखा है। आप स्वय ही यह चाहेगे कि आप उनके लिए कुछ करें, क्योकि उन सबको छोडकर आपका अस्तित्व ही नही पूरा होता। हजारो साल से हमारे मुल्क मे रिश्वतखोरी रोजमर्रे की नीति बनी आ रही है। जिसकी तनखाह दस रुपये थी, जमीदारी प्रथा के वरदान से उसकी रोज की ऊपरी आमदनी तनखाह से कई गुनी अधिक होती थी। अग्रेजो न यहाँ आकर देखा कि यह हमारी पुरानी व्यवस्था है, तो उन्होंने भी इसे बदलने की कोई कोशिश नही की। हालत यहाँ तक पहुची और ऐसा भी जमाना आ गया कि बडे बूढे छोटो को आशीर्वाद देते थे कि 'तुम दारोगा बनो। अग्रेज शासन काय मे नियुक्त भारतीय कमचारियो को कम तनखाह देते थे क्योकि यह जानी मानी बात थी कि वे रिश्वत जरूर लेंगे। खाने पीने म मिलावट करने की प्रथा भारत मे कितनी सदियो से चली आ रही है इसका किसी के पास कोइ हिसाब है ? बचपन म मैं सुनता था कि सुनार अपनी माँ या पत्नी के लिए गहना बनाते समय भी सोना चुरा लेगा। यानी वह सोना चुरायेगा ही यह बात समाज ने मान ली थी। फिर जब अग्रेजी राज की नीव हिलने लगी तो सामाजिक दुर्नीति और भी बढ गयी। एक के बाद एक लडाई आयी तो भ्रष्टाचार का रास्ता मानो और साफ होता गया। दूसरे विश्व-युद्ध मे रिश्वतखोरी मिलावट और रता का व्यापार मानो प्रमुख उद्योग बन गये। इसीलिए तो दलिए न कि सामाजिक भ्रष्टाचार हमारी सभ्यता और सस्कार के साथ सदियो से एसा घुल मिल गया है कि उसे एकाएक खत्म करना बिल्कुल सम्भव नही है। ऐसा करने की कोशिश भी की जायेगी तो खतरा पदा हो जायेगा।

नही कौशलजी मैं यह बात मानने के लिए तयार नही हूँ। जब काग्रेस मन्त्रिमण्डल बना देश स्वतन्त्र हुआ तब भ्रष्टाचारी व्यापारियों तथा राजकमचारियो को डर के मारे कँपकपी हो आयी थी। पण्डितजी की वह बात मुझे याद है— रिश्वतखोर और बेईमान व्यापारियो को सबसे नजदीकवाले लम्पपोस्ट से लटका दिया जायेगा। उस चेतावनी का नतीजा क्या हुआ था आप जरा याद तो कीजिए। मैंने सुना काग्रेसी राज्य के शुरू के दिनो मे मामूली पुलिसवाले ने भी रिश्वत लेना बन्द कर दिया था। हम लोग ही उन सम्भावनाओ से फायदा नही उठा सके। मन्त्रित्व पाकर अगर हम सच्चे गाधीवादी बनकर रहते तो आज यह नौबत न आने पाती। हम लोगो मे से कोइ अमीर नही है—न आप, न मैं न माधव देशपाण्डे और न हरिशकर त्रिपाठी। फिर भी देखिए मन्त्री का पद लेकर हम लोगो ने जो जिन्दगी चुनी, वह बिल्कुल ही कुछ और है। हमने सहज सरल और सामान्य आदमियो का जीवन मान क्यों नही ग्रहण किया ? ये बडे बडे महल, बेहतरीन फर्नीचर, अनगिनत नौकर,

प्यादे, माली, चपरासी और चारों ओर आंखों को चकाचौंध कर देनेवाली आडम्बर की जगमगाहट, यहीं से हमारा पतन शुरू हुआ। अंग्रेज गवर्नरों के महलों में हमने स्कूल, कालेज, अस्पताल या अजायबघर क्यों नहीं बनवा दिये? स्वतन्त्र भारत के हमारे राज्यपाल क्यों उन महलों में आडम्बरों के बीच रहने लगे? हम पैदल या रिक्शा में बैठकर शहर में क्यों नहीं आते जाते? तीसरे दर्जे के डिब्बे में क्यों नहीं सफर करते? सुना है, पश्चिमी बंगाल के एक देशसेवक मन्त्री होने के बाद नंगे पाँव राजभवन में जा रहे थे, तो दरबान ने उनका उपहास किया। आजीवन गांधी के चेले के रूप में जब हम नंगे पाँवों देशसेवा करते रहे तो आज मन्त्री बनते ही रातोंरात हमारा जीवन मूल्य बदल कैसे गया? इसी रतनपुर शहर में जब राज्यपाल की मोटर चलती है, तो पुलिस दूसरी ओर गाड़ियों को रास्ते में ही रोक देती है। क्या सचमुच इसकी जरूरत है? राज्यपाल तो जनता के सेवकमात्र हैं। वह साम्राज्यवादी आडम्बर क्यों करें? ये सारे प्रश्न हर कांग्रेस कार्यकर्ता के मन में जरूर उठते होंगे, पर किसी ने उन्हें प्रकट रूप में उठाने का साहस नहीं किया। इतने दिनों के इतने बड़े संघर्ष का इतना महान आदर्श इतनी आसानी से कैसे सड़ गया, यह मैं किसी तरह नहीं सोच पाता।"

कृष्ण द्वैपायन के मन में भी ये प्रश्न कांटे की तरह न चुभे हों ऐसी बात नहीं है, पर दुर्गाभाई देसाई की तरह वास्तविकता को न मान लेने के क्षोभ से वह कसमसाहट का अनुभव नहीं करते थे। उन्हें यह मालूम है कि जिन्दगी में ऐसा बहुत-कुछ होता है, जिसके न होने पर मनुष्य के इतिहास में इतना उतार-चढ़ाव न आये। फिर नीति और न्याय के आदर्श को सामने रखकर वास्तव में जहाँ तक सम्भव हो आगे बढ़ा जाये, इतने भर से ही वह सन्तुष्ट थे। जो नहीं हो सकता, उसके लिए सोच सोचकर बेकार की चिन्ताओं में अपने को गलाना उनकी आदत नहीं है। राजनीतिक कारबार वास्तविकता को देखते हुए ही चल सकता है। आदर्श उसकी मंजिल है, पर आदर्श के साथ वास्तविकता की दूरी को भी वह हमेशा मानते रहते हैं। कृष्ण द्वैपायन यह भी जानते हैं कि मनुष्य अपनी सारी कमजोरियों को लेकर ही मनुष्य है। हर तरह के स्खलन, पतन, त्रुटियों के बावजूद वह मनुष्य है। शासन शक्ति रोजमर्रा का प्रयोगमात्र है। शासन करने जायें तो शासक और प्रजा के बीच की दूरी बनाये रखना जरूरी है। गणतन्त्र सभी का राज्य है पर राजा सभी नहीं होते। सबका राजा होना तभी सम्भव हो सकता है, जब सभी की चेतना, नागरिकता का बोध बहुत ऊपर तक पहुँच जाये और पहुँचकर वहीं डटा रहे। उस हालत में शासन की कोई खास जरूरत नहीं पड़ेगी। भारत जैसे देश में गणतन्त्र तब तक नहीं सफल

हो सकता, जब तक कि उस राजतन्त्र की खोल न पहना दी जाय। जनता अनिश्चित और अज्ञान में डूबी है, काफी ऊपर बठे बिना उस पर शासन करना सम्भव नही है। इसका कारण भी है—भारतीय गणतन्त्र के मूल म कमजोरी है, और वह कमजोरी क्या है ? गरीबी ! गणतन्त्र म हर नागरिक का अधिकार समान माना जाता है। भारतीय गणतन्त्र म अकबर बादशाह और हरिपद रक म कोई अन्तर नही है। लेकिन वास्तव म भेदो का अन्त नही है। केवल अकबर बादशाह और हरिपद रक म ही नही, हरिपद रक और किसना चाण्डाल म भी काफी फर्क है। गणतन्त्र सबको सबकुछ दने का वादा करता है। शिक्षा, धन्धा घर, स्वास्थ्य—सबकुछ देने के लिए वह वचनबद्ध है। धम जाति भाषा का कोई भी भेद किये बिना। पर भारतीय गणतन्त्र मे इन वचनो को पूरा करने की शक्ति बहुत ही सीमित है। कृष्ण द्वपायन कौशल सोचते हैं—वोट मागते समय हम वादो की कोई सीमा नही बाधते, जब कि हम अच्छी तरह जानते हैं कि हमम उन्ह पूरा करने की ताकत नही है। जानबूझकर हम धोखा देते हैं। हमारे गणतन्त्र मे ऐसी धोखेबाजी है। मामूली आदमी अपना अधिकार नही पहचानता, इसीलिए यह गणतन्त्र चल रहा है अगर वह पहचान जाता तो ढह जाता। तब क्रान्ति हो जाती, अनाचार फल जाता। पर हमने आनेवाले दिनों के लिए रंगीले ख्वाब दिखाकर और आदर्शवाद के गम प्रकाश से जनता के मन को सेंककर उस बाता मे वादों म बहला रखा है। अगर ऐसा नहीं करते तो फिर उसको किसी और भ्रम मे डाल देते हैं। राजनीति के वास्तविक और कुत्सित चेहरे को देखकर डरने से काम नही चलेगा। इस खेल म ये तो कई बार के आजमाये हुए पुराने अस्त्र हैं। शासक से शासित को दूर रखने का कौशल भी वैसा ही एक अस्त्र है।

चार साल तक कौशल-मन्त्रिमण्डल अच्छा चलता रहा।

पाचवें साल स टूटन शुरू हो गयी।

आँधी से एकाएक मन्त्रिमण्डल नही टूट गया पर अन्दर ही अन्दर सुलगते लडाई झगडे और मतभेद मन्त्रिमण्डल की नीव काटते जा रहे थे। कृष्ण द्वपायन की बडे यत्न से बनायी हुई ऊपरी एकता की आड में तमाम छोटे मोटे और बडे-बडे मतभेद स्वार्थलिप्सा, व्यक्तित्व का टकराव गुटबन्दी के द्वन्द्व जमा होते जा रहे थे।

एकाएक वे सबके सब प्रकाश मे आ गये।

पहला सघर्ष प्रदेश काग्रेस के नेतत्व को लेकर हुआ। मन्त्रिमण्डल बनाते समय कृष्ण द्वपायन स्वय प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष थ और सुदर्शन थे सचिव।

साल भर भी नही बीता था कि सुदर्शन दुबे ने प्रस्ताव रखा कि प्रदेश

काग्रेस और मन्त्रिमण्डल दोना का नेतृत्व एक ही व्यक्ति के हाथो मे रहना गैर मुनासिब है। एसी हालत मे पार्टी मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण नही रख सकेगी।

सुदर्शन दुबे का प्रस्ताव युक्तिसगत था। कृष्ण द्वैपायन के समर्थको मे से भी कई इस प्रस्ताव की ओर झुक गये। हाई कमान की राय मांगी गयी। कृष्ण द्वपायन ने स्वय दिल्ली जाकर काग्रेस अध्यक्ष और प्रधानमन्त्री की हाजिरी बजायी, पर उन्हे हार जाना पडा। हाई कमान के आदेश के अनुसार उन्ह प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष पद से इस्तीफा दे देना पडा।

अब नया झगडा शुरू हुआ। कृष्ण द्वपायन ने कोई अपना ही आदमी प्रदेश काग्रेस का अध्यक्ष बनाना चाहा। सुदर्शन दुबे ने भी उनका समथन अपने लिए मांगा पर सफल नही हुए। दोनो के बीच जमकर दुश्मनी हो गयी।

कृष्ण द्वपायन के मनोनीत उम्मीदवार कुजविहारी मिश्र थे। बहुत दिना से उदयाचल म बस हैं, पर थे वह उत्तर प्रदेश के निवासी। सुदर्शन दुबे ने उन्हें एक नये ढग के दाँव पेंच से परास्त कर दिया और उदयाचल म इससे पहले जो कभी नही हुआ था, अब वही हुआ। सुदर्शन दुबे न प्रचार किया कि वास्तव म कृष्ण द्वपायन उदयाचल के निवासी नही हैं, वह भी तो उत्तरप्रदेश के ही हैं। वह उदयाचल के मराठो को तो क्या हिन्दीभाषियो को भी हीन समझते हैं। तथ्य सग्रह करके सुदर्शन दुबे ने यह साफ साफ कह दिया कि मुख्यमन्त्री ने एक साल के अन्दर ही उत्तरप्रदेशवासियो को बहुत बडी सख्या म बडी बडी नौकरियो पर बैठा दिया। यहाँ तक कि कई सचिव भी उन्होंने उत्तरप्रदेश से ही लिये हैं। वतमान मे प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष पद पर कुजविहारी मिश्र को बैठाने की कोशिश करके उन्हाने अपने उत्तरप्रदेश के प्रति मोह का ही चूडान्त प्रमाण दिया है।

इस प्रचार का मुकाबला कृष्ण द्वपायन नही कर सके और सुदर्शन दुबे उदयाचल प्रदेश काग्रेस के अध्यक्ष चुन लिय गये।

मन्त्रिमण्डल मे भी छोटे बडे विरोध उठने लगे। महाराष्ट्रीय समाज के नेतृत्व को लेकर प्रजापति दोवडे और माधव देशपाण्डे के बीच विरोध पैदा हो गया। माधव देशपाण्डे के भ्रष्टाचार से दुर्गाभाई रुष्ट हो गये, और उनके साथ पक्षपात करने का आरोप उन्हाने कृष्ण द्वपायन पर भी लगाया।

इस बीच, यानी मन्त्रिमण्डल के चौथे साल म कृष्ण द्वैपायन को सुदर्शन दुबे स बदला लेने का एक मौका मिल गया। उनके गुप्तचर ने पता लगाया कि सुदर्शन दुबे एक खूबसूरत महिला पर आसक्त हो गय हैं।

उस महिला का नाम सरोजिनी सहाय है और वह ट्रेड यूनियन म काम करती है।

कृष्ण द्वैपायन शायद सुदर्शन दुबे की इस कमजोरी स फायदा न उठाते, अगर एक मन्त्री की सहायता से उन्होने सरोजिनी सहाय के लिए एक मोटी

रकम की व्यवस्था न करवा दी होती। कृष्ण द्वैपायन ने बडी होशियारी से तथ्य इकट्ठे कर लिये और 'अत्यन्त गोपनीय' का शीर्षक देकर वह फाइल दुर्गाभाई देसाइ के पास भेज दी।

काग्रेस के अध्यक्ष उस समय रतनपुर मे ही थे। दुर्गाभाई ने उनके पास जाकर सुदर्शन दुबे पर अभियोग लगाये।

मामूली स्तर पर एक जाच हुई, तो पता चला कि सरोजिनी सहाय केवल सुदर्शन दुबे की ही नही, हरिशकर त्रिपाठी की भी कृपापात्री है।

जल्दी से बातो को दबा दिया गया। काग्रेस अध्यक्ष के आदेश से सरोजिनी सहाय का कार्यक्षेत्र रतनपुर से उत्तरप्रदेश कर दिया गया। कृष्ण द्वैपायन सुदर्शन दुबे को घायल नही कर पाये, पर दुर्गाभाई के साथ सुदर्शन दुबे के राजनीतिक सहयोग का रास्ता उन्होने करीब-करीब बन्द कर दिया।

अब सुदर्शन दुबे के दाँवपेंच जारी हुए, कृष्ण द्वैपायन को गद्दी से हटाने के लिए।

यह खेल पहले तो बहुत गुप्त रहा और 'षडयन्त्र' की गति काफी मन्द रही।

पहले इन्होने हरिशकर त्रिपाठी को अपनी ओर मिला लिया। सरोजिनी सहाय वाली घटना से हरिशकर त्रिपाठी कृष्ण द्वैपायन से नाराज हो गये थे। सुदर्शन दुबे ने उन्हे समझाया कि कृष्ण द्वैपायन का असली उद्देश्य उन्हे मन्त्रिमण्डल से हटाना था। उन्होने त्रिपाठी को आश्वासन दिया कि नया मन्त्रिमण्डल बनने पर उन्हे गृह मन्त्रालय मिल जायेगा।

माधव देशपाण्डे के साथ सुदर्शन दुबे की कभी भी ज्यादा मित्रता नही रही। वह दुबेजी पर कतई विश्वास नही कर सकते थे। अब सुदर्शन दुबे ने माधव देशपाण्डे को लालच और डर एकसाथ दिया। लालच तो दिया कि वह वित्तमन्त्री बनेंगे और धमकी दी वनवास की। सिंचाई और विद्युत मन्त्रालय के भ्रष्टाचार के बारे मे सबको मालूम हो गया था। नये मुख्यमन्त्री अगर माधव देशपाण्डे को मन्त्रिपद से बिल्कुल हटा देंगे तो लोग उनकी बुराई नही बल्कि प्रशसा ही करेंगे।

मन्त्रिमण्डल के अधिकाश सदस्यो को किसी-न किसी तरह सुदर्शन दुबे ने अपनी ओर कर लिया। बस अब दुर्गाभाई देसाई को लेकर ही समस्या थी।

दुर्गाभाइ कौशल-मन्त्रिमण्डल के नेता न सही पर अन्यतम प्रमुख स्तम्भ थे। असल मे वही उस मन्त्रिमण्डल के सर्वश्रेष्ठ अलकार भी थे। उनके जैसा आदर्शवादी सज्जन मन्त्रिमण्डल मे है, केवल इस कारण से ही सारे प्रान्त मे कृष्ण द्वैपायन की काफी इज्जत होती थी। यदि दुर्गाभाई को कृष्ण द्वैपायन के

विरोध मे न लिया जाये तो मन्त्रिमण्डल को नष्ट करना सम्भव नहीं होगा।

सुदर्शन दुबे को मालूम था कि दुर्गाभाई उन्हें पसन्द नहीं करते। उनके चरित्र, न्याय बुद्धि और नीति के प्रति दुर्गाभाई को तनिक भी आस्था नहीं है। दुर्गाभाई कृष्ण द्वैपायन को भी पूरी तरह पसन्द नहीं करते और उनकी कमजोरियो, खामियो के बारे में भी जानते हैं पर सब जानते हुए भी कृष्ण द्वैपायन के असाधारण व्यक्तित्व के प्रति दुर्गाभाई को बहुत श्रद्धा है। एक बात और भी है। कृष्ण द्वैपायन दुर्गाभाई की कभी भी प्रताडना नहीं करते। अपनी कमजोरियो, को उनके सामने छिपाने की बेकार कोशिश नहीं करते। चार साल तक साथ साथ काम करने के कारण दोनो मे काफी हद तक एक दूसरे को समझने की क्षमता आ गयी है।

कृष्ण द्वैपायन दुर्गाभाई को शुरू से ही योग्य सम्मान देते आये हैं। कौशल-मन्त्रिमण्डल की कमजोरी तथा असफलता के बारे मे दुर्गाभाई को मालूम था, पर उन्हें यह भी मालूम था कि इस दिशा मे उदयाचल करीब-करीब अन्य प्रान्तो जैसा ही है। अन्य मन्त्री यदि दुर्बलचरित्र हो, लालची हो विनम्र होने की बजाय अगर दम्भी और असहिष्णु हो जायें तो केवल मुख्यमन्त्री को दोष देने से क्या बनेगा?

कृष्ण द्वैपायन को हटा देने से ही उदयाचल का प्रशासन अच्छा हो जायेगा, सुदर्शन दुबे का यह दावा दुर्गाभाई को कमजोर और खोखला लगता है।

उन्होंने कृष्ण द्वैपायन के विरोध में जाने से इन्कार कर दिया।

इस तरह कौशल मन्त्रिमण्डल ने पाँचवें वर्ष मे पैर रखा।

संकटो से भरा हुआ साल। अगले वर्ष आम चुनाव होने थे। सुदर्शन दुबे समझ गये कि आम चुनाव के समय कृष्ण द्वैपायन यदि मुख्यमन्त्री बने रहकर ही काम करते रहे तो मन्त्रिमण्डल का नेतृत्व उनके पास ही बना रह जायेगा और तब वह अपनी इच्छा के अनुसार सदस्य निर्वाचन के लिए काफी मौका पा जायेंगे, नया मन्त्रिमण्डल भी वह अपनी इच्छानुसार बनायेंगे। ऐसा होने पर उन्हें फिर कभी मुख्यमन्त्री के पद से नहीं हटाया जा सकेगा।

अतएव मन्त्रिमण्डल को खत्म करना जल्दी ही जरूरी है, देर होने पर कृष्ण द्वैपायन की जीत होगी और सुदर्शन दुबे की हार।

दुर्गाभाई दमाई को लेकर समस्या बनी रही। पर इस संकट के समय भाग्य मानो एकाएक कृष्ण द्वैपायन से रुष्ट हो गया।

तीन घटनाएँ ऐसे आकस्मिक ढंग से हो गयी कि इतने धुरन्धर राजनीतिक नेता कृष्ण द्वैपायन अपने को बचा नहीं पाये।

उदयाचल साधारणत अधिक उपजाऊ प्रात है। शिल्प, व्यापार, उद्योग आदि मे पिछडा हुआ है, पर आबादी के मुकाबले खेती की पैदावार जरूरत स कुछ अधिक होती है। लोग गरीब जरूर हैं, पर भूखे नही। उदयाचल म काफी चावल, बाजरा, मक्की तिल और मूगफली पदा होती है। भारत के दूसरे प्रात उदयाचल स चावल और बाजरा खरीदते हैं। राजस्व का प्रमुख आधार है चावल।

पिछले साल म बरसात की कमी है। फसल अच्छी नही हुई, खासकर चावल। बाजार मे पर्याप्त चावल नही आ रहा है और दाम भी चढ़ता जा रहा है। काग्रसी राज्य म पहली बार लोगो को भूख का अनुभव करना पडा। इसे लेकर मंत्रिमण्डल म काफी हलचल मच गयी।

खाद्य पदार्थों की कमी, चावल और बाजरे के चढते हुए दामो के कारण जनता की दृष्टि प्रान्त की सिचाई-व्यवस्था पर पडी। एकाएक महसूस हुआ कि कई छोटी और मँझोली सिचाई योजनाएँ कागजो म तो पूरी हैं पर वास्तव म नदारद। उनमे से कइयों का तो बिल्कुल अस्तित्व ही नही है।

विधान सभा म यह बताया गया था कि आठ हजार नलकूप लगाये गये हैं। 'भारत टाइम्स' ने एकाएक एक दिन खबर छापी कि चार हजार से अधिक नलकूप हर्गिज नही लगाये गये। उनमे स भी केवल दो हजार तीस चालू हैं।

विधान सभा में विरोधी दल ने कामरोको प्रस्ताव रखा।

माधव देशपाण्डे ने भारत टाइम्स के समाचार का बडी जोरदार आवाज मे खण्डन किया—आठ हजार नलकूप सचमुच लगाये गये हैं हाँ उनम से सभी काम नही कर रहे हैं।

किस किस गाँव मे नलकूप लगाये गये हैं विरोधी दल ने इसकी सूची माँगी।

माधव देशपाण्डे जल्दी नहा माने। बोले 'फसल की वर्तमान स्थिति से सरकार चिंतित है। सिचाई विभाग पूरी शक्ति स अपना काम कर रहा है ताकि समुचित सिचाई व्यवस्था की जा सके। इस समय आठ हजार गाँवो की फेहरिस्त बनाने मे काफी समय और खच बढ जायेगा।

विरोधी दल बिगड खडा हुआ। विधान सभा मे हगामा मच गया। माधव देशपाण्डे के उत्तर स अध्यक्ष महोदय भी सन्तुष्ट नहा हुए बोले नलकूप का विषय महत्त्वपूर्ण है। सरकार की ओर से जो स्पष्टीकरण किया गया है विरोधी दल को उसकी सच्चाई के बारे म शक है।

एक विरोधी नेता ने कहा, 'हम जानते हैं कि सरकारी दावा झूठा है।"

अध्यक्ष ने इसकी भर्त्सना की, पर साथ ही यह भी कहा 'सरकार अनायास ही विरोधी दल के सन्देह और अभियोग को दूर कर सकती है। जिन जिन गाँवो मे नलकूप लगाये गये हैं उनकी लिस्ट बनाने मे अधिक समय और खच लगने

की बात कुछ जमती नही है, अत मैं मन्त्री महोदय से अनुरोध करूँगा कि एक माह के अन्दर वह सूची विधान सभा म पेश करें।"

मन्त्रिमण्डल मे तहलका मच गया। दुर्गाभाई न जानना चाहा कि नलकूप सचमुच लगाये गये हैं या नहीं।

माधव देशपाण्डे न अपने को बहुत अपमानित महसूस किया। इस प्रश्न का अर्थ उनके प्रति अविश्वास प्रकट करने के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ?

दुर्गाभाई ने कहा, "उदयाचल का 'ट्यूबवेल स्कैण्डल' सारे भारत म फल गया है। इस बात को लेकर अखबारो मे कडी आलोचनाएँ छप रही हैं। मन्त्रि मण्डल बदनाम हो रहा है। इस सम्बन्ध मे उदयाचल की गुप चुप नीति बर्दाश्त करने को मैं हर्गिज तैयार नही हूँ।"

कृष्ण द्वपायन ने कहा, सूची तैयार हो रही है। दो हफ्ते म असलियत खुल जायेगी।'

दो हफ्ते बाद विधान सभा म आठ हजार नलकूपों की फेहरिस्त पेश की गया।

तीन दिन बाद 'भारत टाइम्स' न घोषणा की कि फेहरिस्त मे जिन गाँवों के नाम गिनाये गये हैं, उनमे से कम स कम एक तिहाई गाँवो का कोई अस्तित्व ही नही है। अगर उनका कोई अस्तित्व है, तो वह केवल माधव देशपाण्डे की कल्पना म। भारत टाइम्स' न यह भी लिखा कि फेहरिस्त मे गिनाये गये दूसरे वर्ग गाँवो मे भी नलकूप नही हैं। गाँव तो है, पर नलकूप न तो इस समय हैं और न कभी थे।

माधव देशपाण्डे ने सारा दोष विभागीय कर्मचारियों के मत्थे मढ दिया। तीन सिचाई इंजीनियर बर्खास्त कर दिये गये।

दुर्गाभाई ने कृष्ण द्वपायन स इससे भी कडी सजा की माँग की—मुहजबानी नहीं, बाकायदे कागज-कलम स लिखत पढत करके।

'मन्त्री लोग सीजर की पत्नी नही। उन्ह सन्देह से ऊपर नही माना जा सकता वे कलक से परे नही हैं। मन्त्रियो के भ्रष्टाचार स देश का सवनाश हो जायेगा। इतनी शमनाक घटना म सिचाई मन्त्री की व्यक्तिगत जिम्मेदारी बिल्कुल नही है यह मैं हर्गिज नही मान सकता। उन्ह अभी पद त्याग कर देना चाहिए और यदि वह स्वय ऐसा न करे तो मुख्यमन्त्री का कतव्य है कि वह उन्ह बर्खास्त कर दें या फिर सारा का-सारा मन्त्रिमण्डल त्याग-पत्र दे दे। फिर नलकूप के विषय मे निरपेक्ष जाँच के लिए उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के अधीन एक अदालत बैठनी चाहिए। इससे कम मे मन्त्रिमण्डल की बदनामी नही दूर हागी और जनता भी शान्त नही होगी।'

कृष्ण द्वैपायन दुर्गाभाई की माँग पूरी नही कर सके, बोले, 'माधव देशपाण्डे

ने अन्याय किया है, मैं यह तो मानता हू, पर उन्होंने जान बूझकर यह लज्जा जनक काण्ड होने दिया, इस पर मुझे विश्वास नही है। माधव देशपाण्डे को मैं जानता हूँ कोई बहुत बडा अन्याय करन का दुस्साहस उनम नही है।

दुर्गाभाई ने कहा 'यह मनोविज्ञान की गुत्थी नहीं है कौशलजी, यह सत्य और तथ्य की बात है।"

"मान लिया जाये कि हमने माधव देशपाण्डे को त्यागपत्र देने पर मजबूर किया, पर उससे फायदा किसका होगा दुर्गाभाइ ?

"उदयाचल का।

'नही, फायदा बस एक ही जन को होगा, और वह है सुदर्शन दुबे। वह चाहते हैं कि मन्त्रिमण्डल टूट जाय। अगर हम इस घटना के सामने सिर झुका लें तो मन्त्रिमण्डल नही टिक सकेगा।'

दुर्गाभाई ने कहा "चाहे जो हो जाये पर मन्त्रिमण्डल को बचाय रखना है क्या आप यही चाहते हैं ?

सालभर भी बाकी नही है। अगर इस समय मन्त्रिमण्डल टूट जाये, तो परिस्थिति कितनी जटिल हो जायेगी ? चुनाव के बाद यदि माधव देशपाण्डे को नये मन्त्रिमण्डल मे न लिया जाये तब तो आपकी माँग पूरी हो जायगी! है न ?'

नही! नही पूरी होगी। मैं चाहता हूँ कि वर्तमान भ्रष्टाचार का तुरन्त प्रतिकार हो। साल-डेढ साल बाद क्या होगा यह कोई नही कह सकता। माधव देशपाण्डे शायद कोई ऐसी तरकीब लगायें कि आपको उन्हें मन्त्रिमण्डल मे शामिल करना ही पडे।'

कृष्ण द्वैपायन ने कहा दुर्गाभाईजी जरा सोच लीजिए माधव देशपाण्डे से अगर हम त्यागपत्र मागें तो उसका नतीजा क्या होगा ? इसका मतलब हमे जनता के सामने यह मान लेना होगा कि नलकूप के मामले म मन्त्रिमण्डल एक इतने बडे भ्रष्टाचार को प्रश्रय देता रहा है। मानता हूँ कि इससे काग्रेसी शासन नही खत्म हो जायगा क्योंकि उदयाचल म काग्रेस को हरा सके एसी शक्ति किसी मे नही है और अभी बहुत दिनो तक होगी भी नही। पर सुदर्शन दुबे के सामने हमारी हार होगी। सुदर्शन दुबे माधव देशपाण्डे को त्यागपत्र न देने की सलाह देंगे। उस सलाह के साथ आनेवाले दिन के लिए रिश्वत का समझौता होगा और माधव देशपाण्डे उसे अवश्य ही मान लेंगे। उस हालत म सारे मन्त्रिमण्डल का पतन अनिवाय हो जाता है। मन्त्रिमण्डल के पदत्याग के बाद सुदर्शन अपने नेतृत्व म नया मन्त्रिमण्डल बनाना चाहेगे। यदि ऐसा न भी करें तो भी आगामी चुनाव मे काग्रेसी उम्मीदवार मनोनीत करने म उनका हाथ सबसे अधिक रहेगा और चुनाव के बाद वह मन्त्रिमण्डल अपने नेतृत्व म या फिर कम

स कम अपनी इच्छा के अनुसार बनायेंगे।'

दुर्गाभाई ने कहा, "कुछ भी हो, मन्त्री बने ही रहना है, कम से कम मैंने तो ऐसे किसी दस्तावेज पर दस्तखत नहीं किया है।'

कृष्ण द्वैपायन ने जवाब दिया—"यह मैं जानता हूँ। आप यकीन मानिए, मुहमांगी कीमत देकर किसी भी तरह मुख्यमन्त्री बने ही रहना है, ऐसा विचार मेरा भी नहीं है। मैं मुख्यमन्त्रित्व छोडने के लिए तैयार हूँ, पर सुदर्शन दुबे के लिए नहीं। आज यदि मैं रास्ते से हट जाऊँ या वह मुझे हटा सकें तो उदयाचल का मुख्यमन्त्री कौन बनेगा, यह क्या आप नहीं जानते ? स्वय सुदर्शन दुबे, और नहीं तो माधव देशपाण्डे या हरिशकर त्रिपाठी। मेरे नेतृत्व मे कई खामियां या कमजोरियां हो सकती हैं और हैं भी, पर बिना लडाई किये उदयाचल का भाग्य मैं सुदर्शन दुबे के हाथो में नहीं दूगा। उदयाचल स म इतना प्यार तो करता ही हू।'

कृष्ण द्वैपायन की बातें दो कारणो स दुर्गाभाई के मन को नहीं भायी—एक तो यह कि वह भ्रष्टाचार को जानकर भी उसका प्रतिकार करने म असमर्थ हैं। कौशनजी मुह से चाहे जो कुछ कहे, पर वास्तव मे वह स्वय मुख्यमन्त्री का पद छोडने को तैयार नहीं हैं। सुदर्शन दुबे के साथ प्रत्यक्ष शक्ति संघर्ष ही उनके सामने प्रमुख विषय बन गया है और इसके लिए वह आदर्श, न्याय, नीति जनता का स्वार्थ, सबकुछ छोड सकते हैं।

और दूसरा कारण जिससे दुर्गाभाई नाराज हुए वह बहुत व्यक्तिगत था, और सूक्ष्म भी। दुर्गाभाई स्वय उसे प्रकट रूप में नहीं मानेंगे। कृष्ण द्वैपायन ने कहा था कि यदि वह मुख्यमन्त्री का पद छोड दें तो गद्दी पर सुदर्शन दुबे या माधव देशपाण्डे या फिर हरिशकर त्रिपाठी बैठेंगे। दुर्गाभाई ने इससे अपने को कुछ अपमानित सा महसूस किया। दुर्गाभाई देसाई इच्छा करते ही मुख्यमन्त्री बन सकते हैं, क्या कृष्ण द्वैपायन यह बात भूल गये हैं ? कृष्ण द्वैपायन बडी होशियारी से बातें करते हैं। उनकी असावधानी स कोई ऐसी वैसी बात उनकी जबान पर नहीं आ पाती। तो क्या उन्होंने जानबूझकर परोक्ष रूप म समझाया है कि वह अब दुर्गाभाई को प्रतिद्वन्द्वी नहीं समझते ?

दुर्गाभाई आदर्शवादी, ईमानदार, नीतिवादी हैं। साथ ही वह आत्माभिमानी, दम्भी और प्रशसा प्रिय भी हैं। अपनी तारीफें सुनना पसन्द करते हैं, सुनकर खुश होते हैं और ऐसा न होने पर वह अपने को अपमानित महसूस करते हैं। उनके असाधारण उज्ज्वल व्यक्तित्व की इस छोटी सी कमजोरी को कृष्ण द्वैपायन जानते हैं, इसीलिए वह हमेशा बडे ढग स उनकी प्रशसा करते हैं। आज उत्तेजना के कारण वह सतर्क नहीं रह पाये। दुर्गाभाई इससे आहत हुए वह इस बात को समझ भी नहीं पाये।

दूसरी जो घटना हुई वह कृष्ण द्वैपायन के अनजाने में ही हुई।

उदयाचल के कल-कारखानों में तीन ही प्रमुख हैं और तीनों कपड़े की मिलें हैं। मालिक तीन गुजराती परिवार हैं। विवाह सूत्र से एक दूसरे के साथ बँधे गये हैं। तीनों मिलों के अधिकांश शेयर इन्हीं तीनों परिवारों के पास हैं। तीनों मिलों में से सबसे बड़ी मिल का नाम 'सुखनलाल कॉटन मिल्स' है, यह केवल धोती और साड़ियाँ तैयार करती है।

चावल, गेहूँ, बाजरा के भाव चढ़ने के साथ-साथ धीरे-धीरे कपड़े के दाम भी चढ़ गये हैं। फुटकर दुकानदारों ने आरोप लगाया कि थोक व्यापारियों ने माल दबा लिया है और थोक व्यापारियों ने कहा कि 'सुखनलाल कॉटन मिल्स' खुद ही माल को गोदाम में रख रही है, बेच नहीं रही है।

उद्योगमन्त्री हरिशंकर त्रिपाठी ने सुखनलाल विट्ठलदास पटेल को बुलवाया। सुखनलाल ने कहा कि कपड़े का उत्पादन बहुत घट गया है। बारिश की कमी की वजह से कपास अच्छी नहीं हुई थी। रुई की कमी है। विदेशी रुई का बहुत कम आयात हो रहा है। विदेशी मुद्रा कहाँ से मिले? इसीलिए उन्हें मजबूर होकर उत्पादन घटाना पड़ा है। यह बिल्कुल झूठा आरोप है कि उन्होंने माल गोदामों में दबा रखा है। हरिशंकर त्रिपाठी चाहें तो पुलिस से तलाशी करवा सकते हैं।

हरिशंकर ने मुख्यमन्त्री को रिपोर्ट भेजी और प्रस्ताव रखा कि पुलिस भेजकर 'सुखनलाल कॉटन मिल्स' की तलाशी ली जाय।

हरिशंकर त्रिपाठी की रिपोर्ट मिलते ही कृष्ण द्वैपायन ने पुलिस कमिश्नर को तलाशी का हुक्म दे दिया।

तीन दिन बाद ही रिपोर्ट मिली कि 'सुखनलाल कॉटन मिल्स' के मालिकों के निजी गोदामों में माल होने का कोई प्रमाण नहीं मिला।

कैबिनेट मीटिंग में कृष्ण द्वैपायन ने हरिशंकर त्रिपाठी की रिपोर्ट, अपनी टिप्पणी और पुलिस कमिश्नर की रिपोर्ट भी सामने रखी।

इस घटना के तीन दिन बाद किसी नागरिक का लिखा हुआ एक पत्र दुर्गा भाई को मिला जिसमें लिखा था— उदयाचल के अँधेरे आकाश में एकमात्र आप ही की तरह नक्षत्र चमक रहे हैं। जिस राजनीतिक अन्धकार ने इस प्रान्त को घेर और ग्रस लिया है उसमें एक आप ही प्रकाश-स्तम्भ की तरह बचे हैं इसलिए आपके अलावा और किसे पत्र लिखूँ? 'सुखनलाल कॉटन मिल्स' का उत्पादन घटा नहीं बल्कि बढ़ा है। रोज रात के अँधेरे में ट्रकों में धोतियाँ और साड़ियाँ भरकर कलकत्ता निर्यात की जा रही हैं। ये सब खबरें मुख्यमन्त्री को अच्छी तरह मालूम हैं पर वह सुखनलाल के खिलाफ कुछ नहीं करेंगे क्योंकि उनका लड़का [illegible] कृपालपुर में 'सुखनलाल कॉटन मिल्स' की

सोल एजेंसी चाहता है। अगर आपको यकीन न हो तो मेरी बात की जांच करा लीजिए।'

दुर्गाभाई ने गुप्त रूप से जाच की। कलकत्ता मान भेजे जान का तो कोई प्रमाण नही मिला, पर शीतलाप्रसाद न कृपाणपुर जिले मे 'सुखनलाल काटन मिल्स' की सोल एजेंसी मांगी है, यह खबर उन्हे मिल गयी।

यह खबर उन्हे हरिशंकर त्रिपाठी ने ही दी।

तीसरी घटना कृष्ण द्वैपायन के महल के अन्दर ही हुई।

दोपहर को दुर्गाभाई के घर म कृष्ण द्वैपायन की पत्नी पद्मादेवी की बुढिया नौकरानी आयी। दुर्गाभाई भोजन के बाद विश्राम कर रहे थे। नौकरानी न घूघट निकालकर दरवाजे की ओर से निवेदन किया—'अगर समय निकल सके, तो चार बजे शाम को दुर्गाभाई जरा पद्मादेवी से भेंट कर लें।'

यह पहले ही कहा जा चुका है कि दुर्गाभाई और पद्मादेवी के बीच काफी आदर और श्रद्धा का सम्बन्ध था। दुर्गाभाई को मालूम था कि पद्मादेवी ने आजकल घर गहस्थी से करीब करीब हाथ खीच लिया है। दिन रात ज्यादातर पूजा पाठ मे ही व्यस्त रहती हैं। कृष्ण द्वैपायन के साथ भी सम्बन्ध ठण्डा पड गया है। चार बजे दुर्गाभाई मुख्यमन्त्री के महल मे नही, बल्कि पद्मादेवी के अन्तःपुर म पहुचे।

कृष्ण द्वैपायन उस दिन एक जिले के कृषि मेले के उद्घाटन म गये थे। नौकरानी आकर दुर्गाभाई को पद्मादेवी के पूजाघर मे लिवा ले गयी।

पद्मादेवी के जीर्ण शीर्ण गोरे चेहरे को देखकर दुर्गाभाई न आदर से प्रणाम किया बोले, 'मुझे बुलाया है भाभीजी ?'

एक मलिन मुस्कान के साथ पद्मादेवी न कहा, "बुलाना ही पडा, भैया! बिना बुलाये आपके दर्शन कहाँ मिलते हैं ?

दुर्गाभाई न नम्र स्वर मे कहा, 'राज काज म दिन रात बीत जाते हैं, समय कहाँ मिलता है ?"

पद्मादेवी न कहा "यह बात क्या मैं नही जानती भैया ? आप राज चलाते हैं या राज आपको चलाता है बस, मैं यही ठीक ठीक नही समझ पाती।'

'यह आपने खूब कही, भाभीजी, हम राज नही चलाते बल्कि राज ही हम चलाता है।

"यह एक अजीब चीज है भैया, जिसे आप पालिटिक्स कहते हैं। इसमे न कोई मित्र बन्धु न स्नेह प्रेम न्याय धर्म नीति कुछ भी नही है। इसमे कोई किसी का अनुगत नही किसी का विश्वास नही, किसी का भरोसा नही। यह तो एक खूंखार जगली जिन्दगी को छोडकर और कुछ भी नही है।'

दुर्गाभाई कुछ नही बोल सके।

पद्मादवी न कहा "उस दिन की याद है, जब आप लोग देशसवा का बीडा उठाय हुए थे ? उन दिनो आदश था, सहानुभूति, विश्वास सबकुछ था। विपत्ति म छलाँग लगा जान की हिम्मत थी आप लोगा म। आपमे से बहुतेरो म काफी इमानदारी भी थी।'

'बात ठीक ही है।'

आज वे सब गुण कहाँ चले गये ?"

दुर्गाभाई इसका जवाब नही दे सके, तो उलटकर सवाल किया—"क्या उसम स कुछ भी बाकी नही बचा है, भाभीजी ?

एसा कस कहूँ कि कुछ भी नही बाकी बचा है ? अभी आप तो हैं। सुना है आपने उमानाथ को उदयाचल भर म कही नौकरी के लिए दरख्वास्त तक नही भेजने दी।'

दुर्गाभाई खुश होकर बोल 'हाँ भाभीजी ! उदयाचल म सभी मुझे जानते हैं, इसीलिए एसा करना पडा। उमानाथ म योग्यता है। अगर वह इस प्रात मे नौकरी न करे तब भी अपने परो पर खडा हो जायेगा। आप शायद जानती हो कि उसे इलाहाबाद विश्वविद्यालय म नौकरी मिल गयी है।'

आप क्या सोचत हैं कि उदयाचल मे उमानाथ के नौकरी करन से आपका अपमान होता ?'

'नही ऐसी बात नहीं है। मैंने सोचा वह जहाँ भी नौकरी करना चाहेगा अधिकारी जान जायेंगे कि वह मेरा लडका है, इसस शायद उस कुछ अनुचित सुविधाए मिल जाती।

पद्मादवी पल भर चुप रही, फिर बोली, आपको मालूम है भैया कि मातकाप्रसाद को लॉ कालेज म स्थायी नौकरी मिल गयी है ?

'हाँ मालूम है।

मातकाप्रसाद वकालत की परीक्षा मे द्वितीय श्रेणी मे पास हुआ था। एम० ए० मे भी यही हुआ था। फिर भी वह लॉ कालेज म लेक्चरर बना है। मैंन सुना है, शुरु शुरू म लडके उससे पढना तक नही चाहते थे। अब उसे हाई कोट के भी मुकदमे मिलते हैं।

आप ये बातें क्यों कह रही हैं, भाभीजी ?'

सिफ इसलिए कि मातका को देखने पर मुझे दुख होता है। उसके पिता अपनी योग्यता के बल पर ऊपर उठे हैं पर उसे अपनी योग्यता के सहारे कुछ करने का मौका नही मिला। सिर्फ वही क्यो, मेरे पाँच लडको म स दुर्गाप्रसाद के अलावा किसी को भी मौका नही मिला।'

दुर्गाभाई कुछ नहीं बोले।

पद्मादेवी ने गहरी साँस लेकर कहा, "भैया बेटों के बारे में क्षोभ व्यक्त करने के लिए आपको नहीं बुलाया है, कुछ जरूरी बातें हैं।"

"कहिए।"

"आपके मन्त्रिमण्डल के लिए तो जोरों में जोड़ तोड़ हो रही है।"

"हाँ, कुछ झगड़े बखेड़े तो हैं ही।"

'कुछ नहीं, बहुत हैं। वे मुझसे कुछ नहीं कहते, पर मुझे मालूम है।'

दुर्गाभाई ने कहा "अभी तक तो आपकी चिन्ता का कोई कारण नहीं है। कौशलजी का नेतृत्व सुरक्षित है।'

फिर वही मलिन मुस्कान। बोली, "अब आपने एक गलती की है भैया! कौशलजी की हार निश्चित होने से मुझे कोई चिन्ता न होती विजय सुनिश्चित है, इसीलिए मैं चिन्तित हूँ।'

दुर्गाभाई अवाक रह गये।

पद्मादेवी ने कहा, "आपको आश्चर्य हो रहा है न? पर आश्चर्य करने की कोई बात तो नहीं है, भैया! पाँच साल से कौशलजी मुख्यमन्त्री हैं। जितना मैं उन्हें जानती हूँ उतना और कोई नहीं। उनके चरित्र में बल के साथ साथ कुछ कमजोरियाँ भी हैं। पर मुख्यमन्त्री बनने के बाद उन्होंने उन कमजोरियों को ज्यादा प्रश्रय नहीं दिया, यह भी सही है। हाँ, लड़कों के लिए मेरा प्रतिवाद मान बिना उन्होंने कुछ सुविधाएँ जरूर दिला दी हैं। पर दूसरे मन्त्रियों ने—आपको छोड़कर—जितना भाई भतीजावाद चलाया है उसके मुकाबले में कौशलजी ने कम ही किया है। अपनी और कमजोरियों पर भी, बिल्कुल न सही, कुछ हद तक उन्होंने काबू पा लिया है।

सो तो मैं जानता हूँ भाभीजी।'

पर मन्त्रिमण्डल के लिए जोड़-तोड़ शुरू होने के कारण कौशलजी बदलते जा रहे हैं। सुदर्शन दुबे किस चरित्र के आदमी हैं, सो आप जानते हैं। उनका मुकाबला करने के लिए कौशलजी दूसरे सुदर्शन दुबे बनते जा रहे हैं। राज करने के नशे ने उन्हें मुग्ध कर दिया है। वह गद्दी छोड़ने के लिए कतई तैयार नहीं हैं। शठता के बदले शठता कर रहे हैं और झूठ का जवाब झूठ से दे रहे हैं। एक गन्दी लड़ाई छिड़ गयी है। पिछले कुछ महीनों में कौशलजी ने जो कुछ किया, उतना पाँच सालों में भी कोई उनसे नहीं करवा पाया था।'

दुर्गाभाई विस्मय से पद्मादेवी की ओर ताकते रह गये।

मुझे न जाने कैसा डर सा लगने लगा है, भैया! राजनीति का यह कैसा भयंकर रूप है? यह तो एक तरह का गृह-युद्ध है, आत्महत्या है। जो कुछ भी हाथ लग जाये, उसके सहारे यह लड़ाई लड़ रहे हैं। पर मैं जानती हूँ कि यदि यह जीत जायें, तो उनका सर्वनाश हो जायेगा। जिन राक्षसी और तामसिक

अस्त्रों का प्रयोग करके वह जीतेंगे जीतने के बाद उन्हें फिर समेट नहीं पायेंगे। व अस्त्र उन्हें ग्रस लेंगे। जिनके सहारे वह अन्तर्विरोध की यह लड़ाई लड़ रहे हैं उन्हीं की माँगें पूरी करने में उन्हें आदर्श भ्रष्ट हो जाना पड़ेगा। यह बहुत खतरनाक स्थिति है।

भाभीजी आपने इतना सब कैसे समझा? यह सब तो मैं भी नहीं समझ पाता।

'भैया, आप लोग मर्द हैं। आप सभी चीजें पूरी नजर से नहीं देख पाते। स्वराज्य के लिए आप बहुत दिनों से लड़ते आ रहे हैं और हम लोग आप सबकी ओर देखती आ रही हैं। गौरव के साथ अगौरव, शक्ति के साथ कमजोरी, त्याग के साथ लोभ और विनय के पीछे दम्भ हमने सबकुछ देखा है। आपके गौरव से हम भी गौरवान्वित हुई पर मुँह छिपाकर हम जो टेढ़ी हँसी हँसती रहीं, उसे आपने नहीं देखा। राजनीति की बड़ी-बड़ी बातें तो हम नहीं समझतीं, पर आप जैसों को अच्छी तरह देखा है और समझा भी है।

'आपकी बातें सुनकर मुझे तो डर लग रहा है भाभीजी! मेरे अवगुणों की थाह आपने पा ली है क्या?

'आप तो सज्जन हैं। सभी आपका आदर करते हैं। आप उदयाचल के गौरव हैं।'

"भाभीजी मुझे शर्मिन्दा न कीजिए।

"भैया पवित्रता वांछनीय है, पर कठमुल्लापनवाली पवित्रता अवांछित है।"

'मतलब?

सड़क चलते आप देखेंगे कि भिखमंगों ने बड़ी तैयारियों से अपने घावों को जिला रखा है। वह उनका रोजगार है। बुरा न मानें भैया आप ठीक उनसे उलटे हैं।

दुर्गाभाई का चेहरा तमतमा गया।

आपने अपनी ईमानदारी का दामन ऐसे बचा रखा है मानो वही अपने में आपके लिए सबसे बड़ी चीज है—उदयाचल से पूरे भारत से भी।

यह कुछ अनुचित है क्या, भाभीजी?'

उचित अनुचित का प्रश्न नहीं है। मेरा कहना तो बस इतना है कि यह ईमानदारी ही आपको कमजोर बना रही है।

कमजोर?

और नहीं तो क्या? आप अपना यश बचाये रखने के लिए अपनी सबसे बड़ी जिम्मेदारी से विरत रहे हैं।

'सबसे बड़ी जिम्मेदारी? किसकी जिम्मेदारी?

उदयाचल के नेतृत्व की जिम्मेदारी। मुख्यमन्त्री की जिम्मेदारी।'

जिन्दगी म शायद पहली बार दुर्गाभाई का दिल दहल उठा।

पद्मादेवी कडे स्वर म बोलती रही, यह जिम्मेदारी ग्राज नही, बल्कि पाच साल पहले ही आपको लेनी चाहिए थी। राजनीति की गन्दी शक्ल देखकर आप जा सहमे और डरे, तो फिर उससे कभी छुटकारा नही पा सकें।'

दुर्गाभाई न मृदु स्वर म कहा, "सही बात है।'

"अगर आप डरते ही रहग तो फिर इस रास्ते पर क्यो आय ? राजनीति और राज करने के अलावा आपके लिए क्या और कोइ काम नही था ?"

'कौशलजी के साथ सहयोग करना मैंन उस दिन अपना सबसे बडा कर्तव्य माना था।

'याद है मन्त्रिमण्डल बनने से पहले उस दिन मैंने आपसे कहा था— नेतृत्व करने का साहस आपम नही है ? आपने जवाब दिया था कि उस हिम्मत की कुछ खास जरूरत आज नही है, अगर कभी हुई, तो निराश नही करेंगे।"

याद है।'

इसीलिए आज आपको याद किया है, भया ! अगर आपम हिम्मत है तो उसका प्रमाण दीजिए।

आप यह क्या कह रही हैं भाभीजी ?"

तो मैं और भी खुलकर कहू। कौशलजी न पाच साल से भी ज्यादा उदयाचल का नेतृत्व किया है। उनके लिए जितना सम्भव था, उन्होंने उदयाचल की सेवा की अब उनके पास देने लायक कुछ नही रह गया है। अब जो सघर्ष चल रहा है उसम यदि वह जीत गय तो वह फिर उदयाचल की सेवा नही कर सकेंगे। इसलिए उनकी हार ही आवश्यक है। हार मे ही उनकी अपनी भलाई है, उदयाचल की भी।'

दुर्गाभाई की आश्चर्यचकित आखो म झाकते हुए पद्मादेवी न कहा 'पति की पराजय की कामना करती हू, इसी पर आप आश्चर्य कर रह हैं ? मैं उन्हें प्यार करती हूँ उनका आदर करती हूँ इसीलिए यह कामना कर रही हू।'

'भाभीजी, आपका देखकर आज मैं जीवन मे पहली बार आश्चर्यचकित नहीं हो रहा हूँ।'

'कौशलजी की पराजय केवल आपके सहारे ही हो सकती है।

'मेरे सहारे ?'

'हाँ! कभी आपने उचित कर्तव्य के लिए उनसे सहयोग किया था, अब उसी कारण से उनके विरुद्ध खडा होना आपके लिए जरूरी हो गया है।'

दुर्गाभाई थोडी देर चुप रहे फिर बोले, भाभीजी, कृष्ण द्वपायन कौशल को पराजित करना आज कोई मुश्किल काम नहीं है। मुश्किल काम तो उसके बाद होगा। कौशलजी के बाद मुख्यमन्त्री कौन बनेगा ?'

पद्मादेवी की आँखों म आग सी दहक उठी। उनके होंठो पर तीखी मुस्कान फल गयी—' अगर आपम हिम्मत हो तो आप बनेंगे और अगर न हो तो "

इस नाटकीय घटना के पांच दिन बाद दुर्गाभाई ने कृष्ण द्वैपायन कौशल के पास एक छोटी सी चिट्ठी भेजी जो एकदम स व्यक्तिगत और गोपनीय थी।

"अगले हफ्ते विधान सभा के काग्रेसी दल की बठक होगी। आप तो जानत ही हैं कि इस बठक म बहस का एकमात्र विषय वतमान मन्त्रिमण्डल का परिवतन ही है। मैं बडे खेद के साथ आपको सूचित कर रहा हूँ कि इस प्रस्ताव के विरुद्ध जाना मरे लिए सम्भव नही होगा। इस निणय पर पहुचने म मुझे बडी कठिनाइया हुई हैं पर मैं कतव्य की अवहेलना नही कर सका। मेरी शुभ कामनाएँ।'

दल की बैठक मे सुदशन दुबे विशेष अतिथि के रूप मे आमन्त्रित थे। हाईकमान के एक प्रतिनिधि बठक के अध्यक्ष थे। हरिशकर त्रिपाठी ने प्रस्ताव रखा चूकि वतमान मन्त्रिमण्डल दल के अधिकाश सदस्यो का विश्वास खो चुका है इसलिए सभा प्रस्ताव रखती है कि नया मन्त्रिमण्डल बनाया जाये।

गुप्त मतदान हुआ।

कृष्ण द्वैपायन पाच मतो से हार गये।

सुदशन दुबे खुश नही हुए। वह कृष्ण द्वपायन के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पास करवाना चाहते थे पर दुर्गाभाइ को राजी नही कर पाये थे। हार जाने पर भी कृष्ण द्वपायन की पूरी हार नही हुई। नया मन्त्रिमण्डल बनान का माग उनके लिए भी खुला रहा। सुदशन दुबे यह भी समझ गये कि कृष्ण द्वैपायन को सिफ पाँच मतो से हराना उनके लिए शायद निश्चित विजय न साबित हो।

दुगाभाई कृष्ण द्वैपायन की सफलता पर आश्चयचकित रह गय। केवल पाच मता से हारकर कृष्ण द्वैपायन ने अपन नेतत्व की कामयाबी को बडी अच्छी तरह प्रमाणित कर दिया था।

नये नेता के चुनाव को लेकर गडबडी मच गयी। सुदशन दुबे चाहते थे कि उसी समय नय नेता का भी चुनाव हो।

कृष्ण द्वपायन ने आपत्ति की—'केवल पाच मतो से प्रस्ताव पास हुआ है। विरोधी पक्ष हर तरह की कोशिशें करने के बाद भी कोइ खास करामात नही दिखा पाया। आज ही नये नेता का चुनाव होने पर बाद म मन्त्रिमण्डल क कमजोर होने का डर है। मेरा यह दढ विश्वास है कि समय मिलने पर सदस्यो को फिर दुबारा सोचने का मौका मिलगा। नेता चाहे जो बने उसके साथ स्पष्ट समथन रहना जरूरी है।

सुदशन दुबे ने जवाब दिया 'वतमान मुख्यमन्त्री के प्रति दल के अधिकाश

का विश्वास समाप्त हो गया है। इसलिए दल का नेता बनने का अब उनको अधिकार नहीं रहा। नये नेता के चुनाव के साथ-साथ सदस्य यह समझ जायेंगे कि मुख्यमन्त्री ने किस उपाय से अधिकाधिक सदस्यों का समर्थन प्राप्त किया था और मेरा यह निश्चित विश्वास है कि उनमें से बहुतेरे नये नेता का साथ देंगे।'

कृष्ण द्वैपायन ने प्रतिवाद किया—'अविश्वास प्रस्ताव में मुख्यमन्त्री का उल्लेख नहीं था बल्कि वह मन्त्रिमण्डल के खिलाफ था। मन्त्रिमण्डल में कई बुराइयाँ आ गयी थीं। एकाधिक मन्त्रियों ने जनता का विश्वास खो दिया है। पर नया नेता कौन बनेगा, यह तय होना बाकी है। दल का नेतृत्व किसी का एकाधिपत्य नहीं है। गणतन्त्र में हर सदस्य को समान अधिकार है। नये नेता-पद के लिए मुझे उम्मीदवार बनने का अधिकार है या नहीं, मैं इस विषय पर अध्यक्ष महोदय का स्पष्ट निर्णय चाहता हूँ।"

अध्यक्ष ने निर्णय दिया— है।"

कृष्ण द्वैपायन बोले, "अब मेरा प्रस्ताव यह है कि नये नेता का चुनाव चार दिन के लिए स्थगित रहे। यह चुनाव अगले सप्ताह मंगलवार की शाम को सात बजे हो।"

सुदर्शन दुबे ने दृढ़ता से आपत्ति की।

महेन्द्र बाजपेयी, माधव देशपाण्डे, हरिशंकर त्रिपाठी ने उनका समर्थन किया।

अध्यक्ष ने अब दुर्गाभाई की ओर देखा।

कुछ समय तक दुर्गाभाई कुछ नहीं कह सके, फिर जब बोले, तो उनकी आवाज थोड़ी काँप सी गयी—' मैं मुख्यमन्त्री के प्रस्ताव का समर्थन करता हूँ।'

सुदर्शन दुबे के मुँह से निकल गया—"हाय राम!"

कृष्ण द्वैपायन कौशल पत्थर के बुत की तरह स्तब्ध बैठे रहे। दुर्गाभाई के बात खत्म करते ही उन्होंने आँखें बन्द कर लीं मानो ध्यानस्थ हो गये हों।

हाथ उठाकर मतदान हुआ। चौवालिस मतों से कृष्ण द्वैपायन का प्रस्ताव पास हो गया।

हारकर भी वह जीत गये या यों कहिए, पद्मादेवी ने जो शंका की थी—जीतकर भी वह हारे।

नौ

कृष्ण द्वैपायन ने माधव देशपाण्डे को बड़े आदर और सम्मान के साथ अपने निजी कमरे में बठाया।

एक बड़ा सा तकिया आगे करके बोल, 'बठिए माधव भाई बठिए। आराम से बैठिए। राजनीति और राजकाज मे आराम तो हराम हो गया है। तबियत ठीक है न? स्वास्थ्य पर नजर जरूर रखिए। बठिए आराम स बठिए।

फिर उन्होने बेयरा को बुलाया—"देशपाण्डेजी के लिए बादाम का शब्रत लाओ।

माधव देशपाण्डे तकिये से टिककर बैठ गये, पर उन्हे आराम नही मिल पा रहा था। कृष्ण द्वपायन के पास आकर वह कभी सहज नही रह पाते। उन्हें ऐसा लगता है—यह आदमी मेरे अन्दर की सारी बात जाने ले रहा है। यह आदमी मेरी पसली तक देख रहा है और मैं मानो कंकाल की तरह बठा हूँ।

हुआ भी वसा ही। माधव देशपाण्डे के मन के सारे सकोच और शका का जो असली कारण था, कृष्ण द्वपायन ने उसे बाहर खीच लिया। बोले 'माधव भाई, आप असुविधा महसूस कर रहे हैं। आप सोचते होगे कि मेरे विरोध में खड़े होकर आपने मुझे नाराज कर दिया है। सोचते होंगे सुदर्शन दुबे का समथन करके आपने मुझे सब दिन के लिए अपना दुश्मन बना लिया। यही सब सोच रहे होगे आप?'

माधव देशपाण्डे का चेहरा पीला पड गया।

"ऐसा नही होता, माधव भाई! राजनीति को इतनी गम्भीरता से नहीं लेना चाहिए। यह भी तो एक खेल ही है। मैं सब दिन से विश्वास करता आया हूँ कि राजनीति में कोई शत्रु नही कोई मित्र नही। आज जो विरोध मे है, कल वह अपना होता है। आज जो मेरे साथ है, कल वह दूसरे के साथ। यदि राजनीति हमारे व्यक्तिगत जीवन को कडवा बना दे, तो काम ही बिगड जाये।'

अब भी माधव देशपाण्डे की जबान नहीं खुली।

"मैंने आपकी बात पर बहुत गौर किया है माधव भाई! आप क्यों मेरे विरुद्ध गये, मैंने इसे समझने की कोशिश की है। मेरे खिलाफ जरूर आपको बहुत ज्यादा शिकायतें हैं। पर आपने स्पष्ट रूप से कभी मुझे बताया ही नही। यदि ऐसा किया होता, तो आपको दिखता कि मेरे प्रति आपको शिकायत होना नामुमकिन है। वास्तव म मैं अपनी शक्ति से अधिक अनुचित रूप स भी आपको बचाता आया हूँ। अगर न बचता तो नलकूप स्कैण्डल और भी आगे बढ़ जाता माधव भाई!'

अब माधव देशपाण्डे का मुह खुला—"मुझे बचाया है, यह तो मैं जानता हूँ, पर वह मेरे लिए नहा, स्वय अपने लिए।"

कृष्ण द्वपायन न मुस्कराकर कहा, "यह आपकी बात नही है, माधव भाई, यह ता सुदशन दुबे की बात है। उन्होंन आपका ऐसा ही समझाया है।"

माधव देशपाण्डे ने प्रतिपाद किया—'सुदशन दुबजी न जो कुछ कहा है, उसके साथ मैं सहमत हूँ।"

कृष्ण द्वैपायन ने बात मान ली—"जरूर जरूर, सहमत न होने पर आप उनका साथ कैसे देते? किसी दूसरे की बातो म आकर उठने बठनेवाले आप नहा हैं सो क्या मैं नही जानता?"

माधव देशपाण्डे के कानो मे गलन सी होने लगी। वह ठीक से समझ नही पाये कि कृष्ण द्वपायन व्यग्य कर रहे हैं या अपने मन की बात कह रहे हैं।

"आपको यह नहीं मालूम है कि सुदशन दुबे ने ही सबसे ज्यादा जोरदार ढग से टयूबवल स्कैण्डल की 'पब्लिक जुडिशियल इन्क्वायरी' के लिए माग की थी।"

'मैं इस पर विश्वास नही करता।' माधव दशपाण्डे सीधे हाकर बठ गये।

थोडा मुस्कराकर कृष्ण द्वपायन ने कहा, "विश्वास करना सचमुच कठिन है। पर माधव भाई, इतने दिना मे आपको यह जरूर मालूम हो जाना चाहिए था कि कृष्ण द्वैपायन कौशल झूठ नही बोलते।"

माधव देशपाण्डे चुप रह गये।

अपनी बायी ओर रखे टीन के एक बक्से को खोलकर कृष्ण द्वपायन ने कागज का एक टुकडा निकाला—'पढिए।'

कृष्ण द्वैपायन को लिखी हुई सुदशन दुबे की चिट्ठी थी। पडकर माधव देशपाण्डे स्तब्ध रह गये।

कृष्ण द्वपायन ने चिट्ठी को फिर यत्न से बक्से मे रख दिया। एक टेढी मुस्कान से उनके होठ धनुष की तरह सिकुड गये—'अब यकीन आया, माधव भाई?'

फिर थोडा रुककर बोले, 'जाने दीजिए, ये बातें। मैं सुदशन के खिलाफ आपका मन विपाक्त करना नही चाहता। आप यदि उनसे प्रश्न करें कि यह पत्र उन्हान क्यो मुझे लिखा था, तो वह जरूर एक अच्छी सी सफाई पेश कर देंगे। शायद कह कि उनका लक्ष्य मैं ही था, आप नही।

करीब एक मिनट चुप रहकर वह फिर बोले, 'अगर पता लगाएँ तो आपको मालूम होगा कि इस मन्त्रिमण्डल मे जो जिम्मेदारी आप पर है, उसी विभाग का मन्त्रिपद उन्होंने शेवडे को देने का वादा किया है।'

सुनकर माधव देशपाण्डे विचलित नही हुए।

"मैं जानता हूँ कि उन्होने आपसे किसी और भी बडे पद के लिए वादा किया है—मुख्यमन्त्री या वित्त मन्त्री का पद।'

अब माधव देशपाण्डे कुछ बेचैन दीखे।

'पता लगाकर देखिए, यही लालच उन्होने कम से कम तीन लोगो को और दिया है।'

बेयरा ने सगमरमर के गिलास मे शरबत लाकर माधव देशपाण्डे के सामने रख दिया। माधव देशपाण्डे उसका स्पर्श भी नही कर सके।

टेलीफोन की घण्टी बजी। कृष्ण द्वैपायन ने रिसीवर उठाकर कहा, 'जी हाँ मैं बोल रहा हूँ। अच्छी बात है, तीन बजे आइए। जी हाँ, तीन बजे।

टेलीफोन रखकर वह तकिये से उठ गये। बोले, अब यह सब मुझे अच्छा नही लग रहा है माधव भाई! देश स्वतन्त्र हुआ। शासन का बोझ विदेशियो के हाथ से एकाएक हमारे कन्धो पर आ गया था। नयी जिम्मेदारियो, नय कतव्यो का भार सिर पर उठाने का उन दिनो साहस भी था और इसम खुशी हुई थी। योग्यता अयोग्यता जसी भी थी उसक साथ ही यह जिम्मेदारी उठायी थी। यथाशक्ति कतव्य पालन किया। उन दिनो मैंने यह कभी नही सोचा था कि इस नयी जिम्मेदारी के पीछे इतना बडा अन्तर्विरोध छिपा है। नही सोचा था कि स्वतन्त्रता के बाद इतनी जल्दी हम सत्ता के लिए इतने गन्दे आपसी कलह मे उलझ जायेंगे। अब मेरी सब साध पूरी हो गयी है माधव भाई! मैं अपने अन्दर प्रकृति का आवाहन अनुभव कर रहा हूँ। यह जिम्मेदारी अब और नही चाहिए। दुर्गाभाई को राजी कर सका तो यह जिम्मेदारी उन्हे दे दूगा और अगर वह राजी न हुए तो सुदशन दुबे को ही सही। उन्हें मुख्यमन्त्री बनने का शौक है अब देख लें जरा। काँटो की सेज किसे कहत हैं यह भी जान जायेंगे।'

माधव देशपाण्डे शकित हो उठे।

दुर्गाभाई अगर मुख्यमन्त्री हुए, तो उस मन्त्रिमण्डल मे उनका स्थान नही होगा इसे वह अच्छी तरह जानते हैं। सुदशन दुबे की ओर गये थे तो कुछ डर, कुछ लालच और कुछ राजनीतिक कूट बुद्धि के कारण। डरे इसीलिए थे कि सुदशन दुबे ने उन्हे साफ साफ धमकी दी थी कि साथ न आने पर मलकूप काण्ड का भण्डाफोड करके ही मानेंगे। लालच भी थी क्योकि सुदशन दुबे ने मुख्यमन्त्री या वित्तमन्त्री के पद की आशा दिलायी थी। फिर उन्होने यह भी सोचा था कि कृष्ण द्वैपायन की नाव तो डूब ही गयी, अब सुदशन दुबे की नाव की बारी आयी है। जीतनवाले के साथ रहने के तकाजे पर ही वह सुदशन दुबे के शिविर में आये थ।

जहाँ तक कूट बुद्धि का सवाल है, वह माधव देशपाण्डे की बिलकुल अपनी

थी। उन्हें यह बात मालूम थी कि जिस भी कारण से हो, सुदर्शन दुवे नलकूप-काण्ड को दबा देंगे। वह यह भी जानते थे कि वह कृष्ण द्वैपायन को भले ही न समझ सके हो, उनके पास आकर कितना ही आश्वासन का अनुभव करें, एक इन्सान के लिहाज से उनके साथ सुदर्शन दुबे का कोई मुकाबला नहीं हो सकता। कृष्ण द्वैपायन शक्तिशाली हैं। उनकी बातचीत, काम काज में शक्ति का आभास मिलता है। कमजोर लोगों का सा विश्वासघात वह नहीं करते। सुदर्शन दुबे के साथ रहकर राजनीतिक कारोबार करना जितना कठिन है कृष्ण द्वैपायन के साथ उतना ही आसान है। कृष्ण द्वैपायन माधव देशपाण्डे जैसों को छोटा मान कर हमेशा दूर ही रखते हैं, समता का व्यवहार नहीं करते, पर उनका संरक्षण जरूर मिलता रहता है, जैसे एक विशाल बरगद की छाया में बैठे हों। बरगद थके मांदे मुसाफिरों को अपने से बहुत छोटा जरूर मानता है, पर उन्हें अपनी छाया से वंचित नहीं करता। थोड़े से पत्ते या टहनियाँ तोड़ लेने से नाराज भी नहीं होता।

सुदर्शन दुबे बरगद नहीं। उनके साथ रहने का मतलब है काई से ढंके खड़े तालाब के किनारे खड़ा होना। कब फिसलकर गन्दे पानी में जा गिरे, इसका कोई ठिकाना नहीं।

माधव देशपाण्डे ने सोचा था, सुदर्शन दुबे के राग में सुर मिलाकर चला जा सकेगा। हाँ, अगर यह देखा जाये कि कृष्ण द्वैपायन जीत रहे हैं, तो अंतिम समय में कृष्ण द्वैपायन के साथ कोई समझौता कर लेंगे। उम्मीद थी कि वह संकट से बचने के लिए माधव देशपाण्डे को समर्थन के लिए अच्छा-खासा मूल्य देंगे।

पर कृष्ण द्वैपायन अगर बिना लड़े ही हार मान लें तो यह सारी चाल बेकार हो जायगी।

माधव देशपाण्डे बोल उठे, 'ऐसा नहीं हो सकता, कौशलजी ! एक बार उदयाचल का भविष्य भी सोचिए।

थकी आवाज में कृष्ण द्वैपायन ने कहा, 'मैंने साढ़े पाँच साल तक सोचा है माधव भाई, अब आप सोचिए। सोचा तो आप लोगों ने भी है, पर अब कुछ ज्यादा सोचेंगे।'

'कौशलजी, मैं एक बात कहना चाहता हूँ।"

'कहिए।'

'आप ऐसा न सोचें कि मैं एकदम आपके खिलाफ चला गया हूँ।

'ऐसा तो मैं कभी भी नहीं सोचता, माधव भाई ! आज मुख्यमन्त्री के रूप में आप मुझे नहीं चाहते, पर आप एकदम मेरे खिलाफ क्या जायेंगे भला ? माधव भाई, कृष्ण द्वैपायन का एकमात्र परिचय उदयाचल का मुख्यमन्त्री ही

नहीं है एक और भी परिचय है। मैं जानता हूँ, आप मेरे 'कृष्ण लीला' काव्य के उत्साही पाठक हैं। कवि कृष्ण द्वैपायन के साथ आपका कोई विरोध नहीं है, सो क्या मैं नहीं जानता ?'

माधव देशपाण्डे पसीने से तर हो गये। इनके साथ बातें करना भी कठिन है—"एक कवि के नाते तो आप अजातशत्रु हैं, कौशलजी, पर आप ऐसा न सोचें कि दल नेता के रूप में भी मैं निश्चित रूप से आपके विरोध में हूँ। आप जानते हैं कि नये नेता के चुनाव-सम्बन्धी प्रस्ताव पर मैंने आपका समर्थन किया था।'

एकाएक कृष्ण द्वैपायन अनमने से हो गये। चेहरे पर इतनी चिन्ता-सी उभर आयी, मानो माधव देशपाण्डे की बात उन्होंने सुनी ही नहीं।

थोड़ी देर तक एक निस्तब्धता छायी रही जिसमें घुटन-सी भरी हुई थी।

एकाएक कृष्ण द्वैपायन बोल उठे, 'आपके लिए मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है माधव भाई !"

माधव देशपाण्डे चौंक पड़े—' चिन्ता मेरे लिए ? आपको ? क्यों ?'

"आज आप सुदर्शन दुबे के साथ चाहे जितना कदम मिला लें, आप यह अच्छी तरह जानते हैं कि आपका यश और स्वार्थ बचाने की चेष्टा में मैंने कभी कोई कमी नहीं रहने दी। मेरा संरक्षण न मिलने पर आपका मंत्रिपद तो क्या, आपका राजनीतिक जीवन भी बहुत पहले ही नष्ट हो जाता।'

माधव देशपाण्डे कुछ कह नहीं सके।

'पर शायद अब मैं आपको नहीं बचा सकूँगा।

'आपकी बात मेरी समझ में नहीं आ रही है, कौशलजी।' माधव देशपाण्डे की आवाज में इस बार प्रच्छन्न आशंका थी।

"बाद में दल का नेता बन पाऊँ या नहीं, पर मुझे यह सोचकर बड़ी खुशी थी कि आखिरी दम तक साथियों के साथ नेता की जिम्मेदारी निभाऊँगा। पर विधाता उस खुशी से भी मुझे वंचित कर रहे हैं।"

माधव देशपाण्डे बेचैन हो उठे।

कृष्ण द्वैपायन कह रहे थे, 'आज ही थोड़ी देर बाद कैबिनेट मीटिंग में गोवर्धन बाँध के दोनों पुलों पर बहस होगी।

'मैं जानता हूँ।'

'हरिशंकर त्रिपाठी ने 'हनुमान बिल्डिंग कम्पनी' को पुल का ठेका देने पर आपत्ति की है।'

'मुझे इस पर आश्चर्य नहीं है।

'दुर्गाभाई भी इसके विरोध में हैं।

'स्वाभाविक ही है।"

"मन्त्रिमण्डल की वर्तमान स्थिति में मैं 'हनुमान नेशनबिल्डिंग कम्पनी' को ठेका देने के प्रस्ताव का समर्थन नहीं करना चाहता।"

"ठीक है। उसे स्थगित रखना ही उचित होगा।"

"पर इधर एक और महत्त्वपूर्ण बात हो गयी है।"

माधव देशपाण्डे को तीव्र उत्कण्ठा में टँगा छोड़कर दो क्षण कृष्ण द्वैपायन किसी गहरी चिन्ता में डूबे रहे।

थोड़ी देर बाद फिर बोले, "जरा विस्तार से बताना पड़ेगा। मैं उदयाचल का मुख्यमन्त्री हूँ। प्रान्त के कोने कोने में क्या हो रहा है, सब मुझे पता रहना चाहिए। करीब करीब सभी जानते हैं मेरा निजी सूचना विभाग है। कौन कहाँ क्या कर रहा है, यह सब मुझे पता चलता रहता है। जैसे मान लीजिए, मैं यह बात जानता हूँ कि कल एक गुप्त खबर पाने के लिए रतनगढ़ जिला कांग्रेस के अध्यक्ष जीवनलाल गुप्त जिला मजिस्ट्रेट के घर पर मौजूद थे, और मजिस्ट्रेट ने उन्हें वह खबर दी भी। आप जानते ही हैं जीवनलाल सुदर्शन दुबे के आदमी हैं। मैं यह भी जानता हूँ कि राधानगर के एस० पी० ने परसों एक शराब के व्यापारी से दो हजार रुपया 'कर्ज' लिया है। उस व्यापारी का नाम भी मुझे मालूम है।'

माधव देशपाण्डे की पलकें स्थिर रह गया।

'मैं ये खबरें हर समय काम में नहीं लाता। खास जरूरत पड़ने पर ही ऐसा करता हूँ। अपने मन्त्रिमण्डल के साथियों के बारे में भी मैं बहुत कुछ जानता हूँ। सच कहा जाये तो उनमें से हरएक पर मेरे पास एक-एक गुप्त फाइल है।'

"क्या कह रहे हैं?

"जी हाँ, पर मेरी वही फाइल कल चोरी चली गयी।'

माधव देशपाण्डे भय से काले पड़ गये— जी? सत्यानाश हो गया।'

"सत्यानाश तो हुआ ही, माधव भाई! उसमें बहुत-कुछ था। सिर्फ 'नलकूप काण्ड' के ही कागजात नहीं, उसी में गोवर्धन बाँध के भी बहुत से कागजात थे। आपके अपने हाथों से लिखी चार चिट्ठियाँ भी थीं। जो चिट्ठी आपने बम्बई के व्यापारी एस० आर० सोमानी को लिखी थी, वह भी उसी में थी।"

"कौशलजी '

'सिर्फ चोरी ही नहीं हुई कल रात को वह फाइल सुदर्शन दुबे के पास पहुँची है, मुझे यह भी पता चला है। किसने चुराया, मैं उसे भी जानता हूँ।"

'कौशलजी "

माधव देशपाण्डे के आतंकण्ठ पर मानो विद्रूप करती हुई टेलीफोन की

घण्टी बज उठी।

"कौशल। सब ब‍न्दोबस्त ठीक है न? कौन? अच्छा, आ गये? मैं नीचे आ रहा हूँ।'

माधव देशपाण्डे की पीठ पर हाथ रखकर कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "कैबिनेट मीटिंग का समय हो गया। आप कैबिनेट रूम में जाकर बैठिए। दुर्गाभाई आये हैं मैं नीचे जा रहा हूँ।

दस

चारों भाई इकट्ठे होकर बातें कर रहे थे। स्थान—मातकाप्रसाद की बैठक। कुछ खास माल असबाब नहीं है। सागौन की बड़ी सी मेज। अधमैला मेजपोश। मेज पर कानून की कई किताबें दावात, कलम दो गद्दीदार कुर्सियां, चार कुर्सियां, दो पुरानी अलमारियां जो कानून की किताबों से भरी थीं। एक किनारे एक पलंग है, जिस पर हथकरघे का नीला पलंगपोश पड़ा है।

मातकाप्रसाद पलंग पर बैठा था। दुबला पतला मुलायम चेहरा। लम्बे बाल। रंग बहुत गोरा नहीं पर साफ। मातकाप्रसाद के सीधे सादे चेहरे को भारी भरकम मूछों ने कुछ भोंदू सा बना दिया है। वह यों भी बात कम करता है। हमेशा मानो विडम्बना झेल रहा हो।

मेज के साथ जो कुर्सी है उस पर सूर्यप्रसाद बैठा है। लम्बा चेहरा चौड़ा माथा रंग अच्छा गोरा शरीर पर चर्बी कुछ ज्यादा है। सूर्यप्रसाद एम० एल० ए० है। वह अपने सम्मान को लेकर काफी सचेत रहता है। यों कहिए कि वही मुख्यमन्त्री पिता का वास्तविक कुलधर है। बी० ए० तक पढ़ा है। छात्रावस्था में ही राजनीति का चस्का लग गया था। छात्र कांग्रेस का नेता बनकर स्वतन्त्रता के पहले साल भर जेल काटकर, स्नातकोत्तर श्रेणी में आ गया था।

खिड़की के पास कुर्सी पर शीतलाप्रसाद बैठा था। कद छोटा मोटा तगड़ा, सांवला चेहरा। मैट्रिक पास करने के बाद कालेज नहीं गया। उसे सब दिन से व्यापार में रुचि रही है। पहले कुछ महीनों तक ठेकेदारी करने के बाद बंगाल पेपर मिल्स की उदयाचल में सोल एजेन्सी मिली। सालभर बाद वह खत्म हो गयी। तब से कपड़े का व्यापार कर रहा है। इस व्यापार में वह सफल भी हुआ। रतनपुर में उसका फुटकर व्यापार है कृपाणपुर में भी। राजनीति के साथ प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है, पर मुख्यमन्त्री का बेटा है, इसलिए राजनीति से

कुछ रिश्ता बना ही है। व्यापारी वर्ग में इसी वजह से उसका अच्छा सम्मान है।
दरवाजे के पास कुर्सी पर पाँव रखे दरवाजे से टेक लगाकर चन्द्रप्रसाद खड़ा है।

सूर्यप्रसाद तीनों भाइयों के आगे राजनीतिक परिस्थिति की अन्तिम स्थिति की व्याख्या कर रहा था—'पिताजी बहुत ज्यादा आशावादी बन रहे हैं। हालत बहुत ही खतरनाक है। शायद वह जानते नहीं या जानकर भी मानने को तैयार नहीं हो रहे हैं।

चन्द्रप्रसाद ने प्रश्न किया, "तुमने उनसे इस विषय पर कितनी देर बात की है?

मैं तुम्हारे जैसा मूर्ख नहीं हूँ। मुझे बातचीत करने की आवश्यकता नहीं है मैं जानता हूँ।'

चन्द्रप्रसाद ने कहा, "तुमने यह कैसे समझा कि पिताजी बिना किसी कारण के ही आशावादी बन रहे हैं?"

सूर्यप्रसाद ने नाराज होकर कहा, "मैं जानता हूँ।'

मातकाप्रसाद ने कहा 'राजनीतिक नेतृत्व के लिए कांग्रेस के अन्दर इस तरह की लड़ाई बहुत नुकसानदेह है। जो भी जीते, कांग्रेस कमजोर हो जायेगी।"

चन्द्रप्रसाद ने कहा, 'लड़ाई के अलावा और रास्ता ही क्या रह गया है?"

'क्यों? सब आपस में मिलकर समझौता कर लें। इतने दिन तक काम चलता रहा, अब नहीं चलेगा?'

सूर्यप्रकाश ने कहा, के० डी० कौशल कभी अन्याय और विश्वासघात के साथ समझौता नहीं करते।'

चन्द्रप्रसाद ने कहा 'तुमने ठीक ही कहा। एक एम० एल० ए० का जैसा कहना चाहिए वैसा ही कहा है।'

सूर्यप्रसाद ने झिड़क दिया— 'तुम चुप रहो।"

'मेरे चुप रहने से क्या बनेगा? जरा अपनी हालत सोचो।"

'मेरी हालत क्या बुरी है?"

'पिताजी के हार जाने से तुम्हारा क्या हाल होगा?'

'क्यों? क्या मैं पिताजी पर भरोसा करके बैठा हूँ? मैं तो अपने बल पर विधान सभा में आया हूँ।"

'सुनने में अच्छा लगता है। पर अगले आम चुनाव में अब साल भर भी नहीं रह गया है, जानते हो न?'

'तुमसे ज्यादा जानता हूँ।"

"सो तो जरूर जानते होंगे। बस, इतना ही नहीं जानते कि तुम्हारे जीतने

की कोई सम्भावना नहीं है। अगर पिताजी हार जायें तो साथ साथ ही तुम्हारा भी भट्ठा बैठ जायेगा।"

शीतलाप्रसाद ने कहा "फजूल बातें छोडो। पिताजी अगर हार जायेंगे तो हम सबको बहुत नुकसान होगा। तो सूयप्रसाद, तुम्हारी राय मे स्थिति खराब ही है न ?'

"हाँ।'

"क्यो ? बता सकते हो ?"

'सबकुछ दुर्गाभाई पर है। वह अगर दुवेजी के साथ मिल गये तो पिताजी जरूर हारेंगे।

क्या ऐसा लगता है कि मिल ही जायेंगे ?

'दुर्गाभाई पर बहुत तरह के दबाव पड रहे है। सबसे ज्यादा तो उनके अपने घर से ही है।

मातकाप्रसाद ने पूछा 'मतलब ?'

सूयप्रसाद ने जवाब दिया, 'जसे दिन रात तुम पर दबाव पड रहा है, वैस ही।"

शीतलाप्रसाद ने कहा "लेकिन यापारी वग पिताजी को ही चाहता है।

चद्रप्रसाद ने कहा, 'यह बात जोरदार आवाज म कहन लायक नही है।

शीतलाप्रसाद ने पूछा 'क्यो ? काग्रेस को चुनाव के लिए रुपया और कहाँ से मिलेगा ?

चद्रप्रसाद ने कहा यह सब पर्दे के पीछे की बातें हैं।

शीतलाप्रसाद ने कहा, रहने दो। हाई कमान इतना बवकूफ नही है कि दुधारू गाय की बलि दे दगा। उदयाचल की स्थायी प्रगति के बारे मे हाई कमान को सोचना ही पडेगा। पिताजी के नेतृत्व के कारण आज तक प्रात म एक भी बडी गडबडी नही हुई। उद्योग यापार आदि अच्छे ही चल रहे हैं। आर्थिक उन्नति भी हुई है। यह सरकार मजबूत और स्थायी है इस विश्वास न यापारी वग मे अनुकूल वातावरण बनाया है इस पर हाई कमान जरूर गौर करेगा।'

चद्रप्रसाद ने कहा, "अगले आम चुनाव म तुम चेम्बर आफ कामस की ओर से क्यो नही खडे होते ?'

सूयप्रसाद ने कहा 'निरजनसिंहजी दिल्ली से क्या खबर लाय हैं, मालूम है ?

मातकाप्रसाद ने पूछा, 'क्या ?

"हाई कमान दुविधा म पडा है। नलकूप और गोवधन बाँध को लेकर पिताजी कुछ हद तक बदनाम हो चुके हैं फिर भी हाई कमान पिताजी को ही

चाहता है। पर दुर्गाभाई अगर नेता बनने को राजी हो जायें, तो हाई कमान बड़ी खुशी से उनके ही हाथों में नेतृत्व सौंप देगा। हाई कमान यह नहीं चाहता कि दुबजी या त्रिपाठी नेता बनें।'

चन्द्रप्रसाद ने पूछा, "इतना महत्त्वपूर्ण गुप्त समाचार तुम्हें कहाँ से मिला ?"

"कहीं से भी मिला हो, तुम्हें इससे क्या ?"

"तुम क्या पिताजी पर जासूसी करते हो ?"

"चन्द्रप्रसाद, तुम बहुत बढ़ रहे हो।'

"नाराज क्यों हो रहे हो ? तुम भी जानते हो और मैं भी जानता हूँ कि निरजनसिंहजी की रिपोर्ट सिर्फ एक महाशय जानते हैं, जिनका नाम के० डी० कौशल है। तुमने टेलीफोन की बातचीत 'टप' की होगी या टेलीग्राम चुराकर पढ़ा होगा।'

"हर्गिज नहीं।'

"अब तुम सच बोल रहे हो। मैं भी जानता हूँ कि तुमने न तो टेलीफोन 'टप' किया और न टेलीग्राम चुराया।'

मातकाप्रसाद ने पूछा, "फिर उसे मालूम कैसे हुआ ?'

'बड़े भैया यह सब सूर्यप्रसाद का अनुमान मात्र है और बहुत ही मामूली अनुमान, जो मैं भी कर सकता हूँ।"

सूर्यप्रसाद ने गुस्से से कहा, "तुम्हारे साथ बातें करना ही बेकार है। दिन-भर घूमते रहते हो और बाप के पैसों पर नवाबी छाँटते और गुलछर्रे उड़ाते हो। तुम किसी काम के नहीं हो।'

"यह तो मैं सौ बार मानता हूँ। पर तुमने अपना काम किया है ?'

'कौन सा काम ?"

पिताजी का वह 'मिसिंग थर्ड मैन'! उसका पता लगाया ?

सूर्यप्रसाद चुप रह गया।

"यानी पिताजी ने इस संकट में तुमसे एक ही काम कहा था और तुम वह भी नहीं कर सके।

और तुम ?"

'अपना काम मैं ठीक ठीक कर रहा हूँ।

'जैसे ?"

दिन भर घूमना और बाप के पैसों पर नवाबी छाँटते रहना।"

मातकाप्रसाद ने कहा, "इस सम्बन्ध में सरोजिनी सहाय का क्या महत्त्व है यह मेरी समझ में नहीं आता।'

सूर्यप्रसाद ने कहा, 'आपने उन्हें देखा है ?"

'नहीं।'

"वह खूबसूरत हैं।"

"उनका आगमन कहाँ से हुआ ?"

"उदयाचल के रंगमंच पर आज तो नाटक खेला जा रहा है, उसकी एकमात्र नायिका सरोजिनी सहाय हैं।'

शीतलाप्रसाद ने कहा "पिताजी इस जहरीले पेड को पहले ही उखाड़कर फेंक सकते थे, पर समझ में नहीं आता कि क्यों ऐसा नहीं किया।"

सूर्यप्रसाद ने कहा, "सरोजिनी सहाय को उखाड़ फेंकना आसान नहीं है। देख लेना, ज्यादा से ज्यादा साल भर में ही वह कम से कम उपमन्त्री जरूर बन जायेगी।'

"नामुमकिन। कम से कम पिताजी के मुख्यमन्त्री रहते नहीं।"

"आप देख लीजिएगा।'

मातृकाप्रसाद ने पूछा 'तुम कहते हो कि पिताजी सरोजिनी सहाय को मन्त्रिमण्डल में शामिल करेंगे !"

'मैं तो ऐसा ही समझता हूँ।

शीतलाप्रसाद ने कहा ऐसा हो ही नहीं सकता।'

सूर्यप्रसाद ने जानकार की तरह टिप्पणी की—'राजनीति में सब चलता है।'

दफ्तर में कैबिनेट मीटिंग खत्म हो गयी। एक के बाद एक मन्त्री जा रहे हैं। साथियों को विदा करने के लिए कृष्ण द्वैपायन नीचे आ गये हैं।

अधिकतर मन्त्रियों के चेहरों पर हवाइयाँ उड रही हैं। कोई कोई हँसते हुए आपस में बातें कर रहे हैं पर उस हँसी में जान नहीं है। हँसी मजाक बस एक ही व्यक्ति कर रहे हैं, कृष्ण द्वैपायन। दुर्गाभाई से पूछ रहे हैं—'दुर्गाभाईजी, रात को अच्छी नींद आ रही है ? मृत मन्त्रिमण्डल का भूत देखकर डर तो नहीं रहे हैं ?"

हरिशंकर त्रिपाठी से कह रहे हैं— त्रिपाठीजी अगले इतवार को आइए, ताश खेले जायें। मेरी तो नौकरी छूट जायेगी बेकार इतना समय कैसे काटूंगा यही नहीं सोच पा रहा हूँ।'

महेन्द्र वाजपेयी से बोले महेन्द्रभाई के चेहरे पर एक नयी चमक दिखायी दे रही है। इस उम्र में फिर किसी इश्क के चक्कर में पड़ गये क्या ?'

माधव देशपाण्डे से बोले, 'रात को एक गिलास भाँग पी लीजिए अच्छी नींद आयेगी।

नीचे की मंजिल में रिपोर्टर इकट्ठे हैं। इनके वहाँ पहुँचते ही उन्होंने कृष्ण

द्वैपायन को घेर लिया। कृष्ण द्वैपायन हँसकर बोले, 'तदा नाशंसे विजयाय, संजय।"

प्रश्न हुआ—"आप लोग आज किस निर्णय पर पहुँचे, बतायेंगे क्या ?'

कृष्ण द्वैपायन बोले, 'महोदय, आगामी कल विधान सभा में कांग्रेसी दल में नेता का चुनाव होगा। वर्तमान केयरटेकर मन्त्रिमण्डल की आयु खत्म हो गयी। आज हमारी आखिरी बैठक थी।"

'क्या-क्या बातें हुई, हम कुछ जान सकते हैं ?"

'जरूर। वित्तमन्त्री दुर्गाभाई देसाई ने वेदपाठ किया। हरिशंकर त्रिपाठी ने गीता के एकादश अध्याय से ग्यारह श्लोकों की आवृत्ति की।

माधव देशपाण्डे ने कहा, "आप अब भी हँसी मजाक कर रहे हैं, कौशल जी!'

कृष्ण द्वैपायन बोले, "करीब छः साल तक साथ साथ काम किया है। आज आखिरी दिन है। कल नये नेता का चुनाव होगा, दो दिन बाद नया मन्त्रिमण्डल बनेगा। हममे से कौन रहेगा, कौन नही रहेगा, इसका कोई ठिकाना नही। मेरे तो न रहने की ही सम्भावना है। इसलिए आज मैं इन रिपोटरों के साथ थोडा मजाक न कर लूं, तो शायद यह मौका मुझे फिर कभी न मिलेगा। मुख्यमन्त्री की गद्दी से एक बार फिसल जाऊंगा तो क्या ये फिर कभी दर्शन देंगे ?"

रिपोटरो में से एक बोल उठा, "आपकी रिपोर्टिंग हम जरूर करते रहेंगे।'

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "हाँ, सो तो शायद काट-कूटकर थोडा-बहुत छाप दें। राजनीतिक नेताओ पर आप लोग बडे कृपालु हैं यह कौन नही जानता ? जब मैं अभी मुख्यमन्त्री हूँ और आप लोग सौभाग्य से मेरे दरवाजे पर पधारे हैं, तो आपके प्रश्नो का अन्तिम बार उत्तर देने की इस खुशी से अपने को वचित नही करना चाहता। तो अब आप प्रश्न बाण छोडें।'

पहला प्रश्न हुआ—'दल का नेता बनने के लिए कितने और कौन-कौन उम्मीदवार हैं ?'

'इस प्रश्न का उत्तर मैं अकेला नहीं दे सकता।"

'आप जरूर उम्मीदवार बनेंगे ?"

"इसका जवाब चुप रहना है।

"प्रतिद्वन्द्विता की उम्मीद है ?"

एक से अधिक उम्मीदवार होने पर ऐसा होना सम्भव है।'

'एक से अधिक उम्मीदवार सम्भव हैं क्या ?"

'इसका उत्तर देना अभी सम्भव नहीं है।'

सारे रिपोटरो को लक्ष्य करके कृष्ण द्वैपायन ने कहा, 'नेता चाहे जो कोई बने, कांग्रेस की एकता, शक्ति और मर्यादा अटूट रहेगी। कांग्रेस हमेशा की तरह

पूरी एकता और आत्मविश्वास के साथ देश म सगठन की जिम्मेदारी निभाती रहेगी, देश की सेवा करती रहेगी। हममे से एक आदमी भी एक पल के लिए भी यह नही भूला है कि व्यक्ति से काग्रेस बडी है और काग्रेस से बडा है देश।'

चारो भाई नीचे आकर मन्त्रियो की विदाई देख रहे थे। मन्त्रियो के चल जाने के बाद वे भी अपने अपने काम से बाहर चले गय। मातकाप्रसाद खादी का कुर्ता चढाकर पान चबाता हुआ रास्ते पर आया। फाटक के पास नानकसिंह ने पूछा "गाडी चाहिए हुजूर ?'

नही।'

थोडी दूर जाकर वह साइकलरिक्शा रोककर चढ गया।

शीतलाप्रसाद की अपनी गाडी है। गाडी मे बठने से पहले उसने अवस्थी का पता लगाया, सुना कि अवस्थी किसी जरूरी काम से बाहर गया है। कब लौटेगा, इसका कोई पता नही। उसने अवस्थी के नाम एक पर्ची लिखकर कृष्ण द्वपायन के खास बेयरे के हाथ म दे दी—'बहुत जरूरी है। अवस्थीजी के आते ही उनके हाथ मे दना।'

'बहुत अच्छा, हुजूर!

"पिताजी अब खाना खायेंगे ?'

"आज खाना खान वह अन्दर कोठी में जायेंगे हुजूर!"

'यहाँ नही खायेंगे ? घर जाकर खायेंगे ?

"जी हाँ।

शीतलाप्रसाद को आश्चय हुआ।

गाडी स्टाट करत समय उसकी नजर चन्द्रप्रसाद पर पडी। वह सीढियों पर से होता हुआ कृष्ण द्वपायन के खास दफ्तर की ओर जा रहा था। मुस्कराकर शीतलाप्रसाद ने कहा, लाडला!

सूयप्रसाद ऐसी जगह चुनकर खडा था कि फाटक के पास मन्त्रियो को विदा करके लौटत समय कृष्ण द्वैपायन उसे देख लें।

इस सकट के समय उसका मन पिता का विश्वासपात्र और मित्र बनने के लिए ललचा रहा था। वह पिता के लिए कुछ करना चाहता था—लडाई मे कम से कम एक छोटे सेनापति की ही भूमिका।

कृष्ण द्वपायन ने उसे देखा। उनके चिन्तित चेहरे पर से एक लकीर भी नही बदली। वह मन्दगति से दफ्तर की ओर बढने लग।

सूयप्रसाद ने उन्ह बुलाना चाहा, पर आवाज नही निकली।

उनकी ग्रार बढना चाहा, पर पर नही उठे ।

कृष्ण द्वैपायन दफ्तर के अन्दर चले गये तो सूयप्रसाद ने ग्रावाज दी—"नानकसिंह !'

नानकसिंह पास ग्रा गया, तो वोला, "मुझे जरा पहुचा सकोगे ?"

जी हुजूर ।'

' पिताजी को गाडी की जरूरत पडेगी ग्रभी ? '

' ग्रभी नही, हुजूर !"

"ठीक है, चलो ।

कृष्ण द्वपायन ने ग्रपने कमरे मे जाते समय दरवाजे पर चन्द्रप्रसाद को खडे देखा, चहरे पर मुस्कान ग्रा गयी—"क्यो राजकुमार, क्या बात है ?"

"ग्रापको देखने ग्राया था, पिताजी !'

' देखने ग्राये थे ? ग्राग्रो, बठो । '

' विजय कितनी बाकी रह गयी, पिताजी ?"

कृष्ण द्वपायन हँसकर बोले, "बहुत ।"

"मुझ विश्वास नही होता ।'

"तुम्हारा विचार क्या है कि मैं जीत गया हूँ ?"

"मैं ग्रापको थोडा पहचानता हूँ, पिताजी !"

चन्द्रप्रसाद, बाजार मे तुम पर कितना कज है ?"

"एक कौडी भी नही ।"

"दुकानदार तुमसे कितनी रकम पायेंगे ?"

मुझसे एक पैसा भी नहीं, पिताजी ! मेरे सब बिल ग्रापके नाम से हैं ।

कृष्ण द्वैपायन फिर हँस पडे— एक काम करो ।"

' कहिए ।

दुकानदारों का सब रुपया ग्राज ही ग्रदा कर दो । '

"जो हुक्म ।

' कितना रुपया चाहिए ?'

"सौ रुपया काफी है, कुछ बच भी जायेगा ।"

"ग्रवस्थी से रुपये के लिए कह दो ।"

कहे देता हूँ ।'

"हाँ, तो फिर तुम कुछ करोगे कि ऐसे ही दिन काटोगे ?"

"एक योजना बना रहा हूँ, पिताजी !"

"कसी योजना ?"

'मन्त्री-पुत्रों की एक सोसाइटी बनाऊँगा । उसका नाम 'टाइगस क्लब'

रखूगा। मुख्यमन्त्री का बेटा होने के नाते उसका प्रेसीडण्ट बनूगा।'

" टाइगस क्लब क्यो ? मन्त्रीपुत्रो से देश का कोई काम हो सकेगा ? '

"पिताजी, देश के काम काज के अलावा क्या दुनिया म और कोई काम ही नही है ? मैं जिन्दगी भर कभी देश का काम नही करूगा। अगर कभी कुछ करूगा, तो अपने लिए करूँगा। पहनूगा, खाऊँगा, मौज मारूँगा।"

"मन्त्री पुत्रो के गठबन्धन का कारण तो तुमने बताया नही मुझे।

'देखिए, पिताजी, हम लोगो की तरह अत्याचार से उत्पीडित और कोई वग नही है। जरा हमारी हालत पर गौर कीजिए। मन्त्री पुत्र बनने का कसूर हमारा नही मन्त्रियो का ही है। मन्त्री बनने स पहले किसी भी पिता ने अपने पुत्रो स राय माँगी हो, ऐसा तो नही सुना। हम मन्त्री-पुत्र हैं इसीलिए कोई इस बात को मानता ही नही कि हमारी मान मर्यादा है योग्यता है। हमारा सबकुछ पिता के गौरव की मलिन छाया मात्र है। सब योग्यता रहते हुए भी दुर्गाभाईजी के पुत्र उदयाचल मे नौकरी करते डरते है, क्योकि उनके बाप सोचते है कि वह मन्त्री-पुत्र हैं इसलिए सब पक्षपात करेंगे। स्वतन्त्र रूप से हम कुछ नही कर सकते, पिताजी ! हमे न चाहने पर भी सबसे फेवर मिलता है और इसमे हमारे व्यक्तित्व का अपमान किया जाता है। फेवर न भी किया जाय तो भी लोग समझते हैं कि फेवर किया गया है क्योकि यही नियम बन गया है। अब आप ही सोचकर देखें कि मन्त्री पुत्रो के लिए एक ट्रेड यूनियन बनाये बिना कोई चारा नहीं है।"

कृष्ण द्वपायन कौतुक के साथ चन्द्रप्रसाद की बातें सुन रहे थे। लगातार कडवी राजनीति के बदरग नशे से मानो उनके अन्दर घुटन-सी होने लगी थी।

कृष्ण द्वैपायन बोले 'अपनी योग्यता से रोटी कमाने के दिन जल्दी ही तुम्हारे सामने आयेंगे चन्द्रप्रसाद !'

'ऐसा नही लगता पिताजी ! पहली बात तो यह है कि आप हारेंगे नही। मुख्यमन्त्री पद का जजीर से आपका छुटकारा नही है।'

इससे तुम्हे दुख है ?

'दुख ? चन्द्रप्रसाद तो वह इसान ही नही है पिताजी, कि उसे किसी बात का दुख हो। दुख न तो उसे है न उसके पिता कृष्ण द्वपायन कौशल को।

एक टुकडा काला बादल कृष्ण द्वपायन के गोरे चहरे पर आ गया।

थोडा रुककर चन्द्रप्रसाद ने कहा अगर आप हार भी गये पिताजी, तो भी आपकी जजीर कटनेवाली नहीं है।'

'यानी।'

आप मुख्यमन्त्री न रहे तो राज्यपाल बनेंगे या केन्द्र से मन्त्री बनने का बुलावा आयेगा या और कुछ बनेंगे।

"यानी वनवास हमारी किस्मत मे नही है ?"

"नही पिताजी, मैं समझता हूँ आपके भाग्य मे यह नही होगा।"

'वसा होने पर तुम खुश होगे ?'

"मेरी बात छोडिए पिताजी, पर एक सज्जन जरूर खुश होगे।'

दोनों ही थोडी देर चुप रहे। चन्द्रप्रसाद ने फिर कहा, एक बात मेरी समझ मे नही आती पिताजी, हमारे यहाँ के मन्त्री अवकाश क्यो नहीं प्राप्त करते ?"

'नयी-नयी मिली स्वतन्त्रता की जितनी जिम्मेदारी है, जितना काम है, योग्य आदमी उतनी तादाद मे नही हैं।'

"बात जरूर ठीक है, पर मेरा मन नही मानता।'

"क्यों ?"

"आप अवकाश प्राप्त कर लें, तो उदयाचल का नुक्सान होगा, यह तो मैं मानता हूँ, पर नये नेता के अभाव मे वसा होगा, यह मैं किसी तरह नही मानता। उसका कारण नये नेता का अभाव नही होगा, बल्कि उसका कारण यह होगा कि आपका स्थान दुबेजी या त्रिपाठीजी ले लेंगे।'

'वे भी तो नये नेता ही होंगे ?'

"वे नये यहाँ होंगे, पिताजी, वे तो पुरानो मे भी निकृष्ट हैं। नये इन्सान, नये नेता, आप तयार नही कर सकते, या जानबूझकर तैयार नही होने देते।'

"नये नेता का मतलब तो तुम्हारा भाई सूयप्रसाद है।'

'सूयप्रसाद कोई घटिया माल तो नहीं है, पिताजी !"

"आदशवादी, कर्मठ साथ ही शिक्षित युवक कांग्रेस मे आ कहाँ रहे हैं ?'

"यह सब भी तो आप ही लोगो की असफलता है। उपदेश से उदाहरण ज्यादा अच्छा होता है।

'ये बातें तुम सोचते हो चन्द्रप्रसाद ?'

'गुनाह आप हो पिताजी ! हम पाँच भाइयो में से आप सिर्फ एक को ही आदमी समझते थे और उसे आपने त्याग दिया है।'

कृष्ण द्वपायन की दोनो आँखो मे दद छलक उठा।

"बाकी किसी को आपने मनुष्य की मर्यादा नही दी। पिताजी, आपने बाकी सबको उनके परों पर खड़ा तो कर दिया, पर वह पिता के कतव्य के कारण। बेटे पर अनिवाय स्नेह के कारण, मनुष्य के प्रति सम्मान के कारण नहीं।

कृष्ण द्वैपायन के माथे पर विस्मय की सिकुड़नें दिखायी देने लगी।

'पिताजी, आप सोच रहे हैं, मरे जसे निकम्मे को इतना सब कैसे सूझा ! आप अपने बेटों को जितना जानते हैं, उससे कहीं ज्यादा मैं आपको पहचानता हूँ।'

कृष्ण द्वैपायन के होठों पर एक छोटी-सी टेढ़ी मुस्कान कौंध गयी—वाह !

'बड़े भैया को आपने ला कालेज का लेक्चरर बनवा दिया, योग्यता न रहते हुए भी। आप एक बार भी नही सोच सके कि वह कितने भयानक असम्मान के बीच इतने सालों से रह रहे हैं। क्लास में विद्यार्थी उनका लेक्चर नहीं सुनते, उन्हें सुना सुनाकर कहते हैं कि मुख्यमन्त्री का बेटा होने से ही अध्यापक नहीं बन जाता। कालेज के दूसरे अध्यापक उन्हें ओछी नजर से देखते हैं। सामने जो ज्यादा खातिरदारी होती है, उसमे भी वही अपमान छिपा होता है। वह हाई कोर्ट में वकालत नहीं करना चाहते थे, आपने जबर्दस्ती उन्हें एडवोकेट बनाया। उन्हें जो भी केस मिलते हैं वे आपके कारण, उनकी अपनी योग्यता से नहीं। जिन्हें आपको डालो देने की हिम्मत नही है, मातकाप्रसाद कौशल को फीस देते हैं शीतलाप्रसाद कौशल को ज्यादा मुनाफा देते हैं। आपके मन में अपने बड़े बेटे के प्रति कुछ भी स्नेह होता पिताजी तो आप उन्हें जिन्दगी के हर कदम पर इस तरह का अपमान न झेलने देते।

कृष्ण द्वैपायन आश्चर्य से स्तब्ध रह गये, फिर बोले यह तुम महसूस करते हो या तुम्हारे बड़े भाईसाहब ?

'जी, मैं। पर पिताजी, मैं यह जानता हूँ कि बड़े भैया सुखी नहीं हैं, उनके मन में शान्ति नही है।

और शीतलाप्रसाद ?

वह हम सबसे अधिक अक्लमन्द हैं। आप उनके व्यापार में सहायता नहीं करते हैं, पर उन्होंने आपके नाम का पूरा फायदा उठाया है। अब भी उठा रहे हैं और जब तक हो सकेगा, उठायेंगे। वह व्यापारी वर्ग के साथ मेल मिलाप रखते हैं और इससे आपको भी कुछ फायदा होता है। पर पिताजी कौशल खानदान के होकर भी शीतलाप्रसाद व्यापार करते हैं। उनकी एक ही उच्चाकांक्षा है, किसी तरह से भी दौलत कमाने की। इसीलिए आप उनका आदर नहीं करते मन ही मन उन्हें ओछा समझते हैं।'

'तुमने यह कैसे समझ लिया ?

मैं कृष्ण द्वैपायन का बेटा हूँ, पिताजी !'

"वही देख रहा हूँ।

सूर्यप्रसाद के बारे में आपने कुछ नही पूछा पिताजी !"

'नहीं पूछा ?"

'सूर्यप्रसाद आपके राजनीतिक सपूत हैं।'

कृष्ण द्वैपायन की नाक पर सिकुड़न दिखायी पड़ी।

'मैं ठीक कह रहा हूँ पिताजी ! दुर्गाप्रसाद आपके राजनीतिक दुश्मन हैं। बड़े भैया और शीतलाप्रसाद राजनीति से बाहर हैं और मैं तो कुछ भी नहीं हूँ।

केवल सूयप्रसाद ही कांग्रेस के अन्यतम तरुण नेता हैं। उन्हें आपने विधान सभा का सदस्य बनाया। वह मुख्यमन्त्री के बेटे हैं और कांग्रेसी एम० एल० ए० के नाते भी उदयाचल के एक विशिष्ट व्यक्ति हैं।"

कृष्ण द्वैपायन दीर्घ निश्वास दबाकर बोले, 'हां।'

'उनकी ओर से मेरी एक प्रार्थना है पिताजी!'

"प्रार्थना?'

"उन्हें जरा अपने पास बुलाइएगा। इस संकट-काल में वह आपके पास आना चाहते हैं, आपके लिए कुछ करना चाहते हैं। वह आपकी कृपा चाहते हैं आपका विश्वास पात्र बनना चाहते हैं।"

वह किसी भी योग्य नहीं है।'

"फिर भी '

'तुम जानते हो, उसने क्या किया है?"

"जानता हूं।'

"तो फिर?"

"उन पर इतने कठोर न बनिए। सूयप्रसाद कृष्ण द्वैपायन के बेटे जरूर हैं पर वहां उनका एकमात्र परिचय नहीं है। आप अगर हारें भी तो उन्हें तो बचाना ही पड़ेगा। साल भर बाद ही आम चुनाव है। अगर उन्हें टिकट न मिला तो उनका भविष्य क्या होगा?"

'क्या सिर्फ इसीलिए वह छिप छिपकर मेरे खिलाफ दुर्गाभाई के साथ मिलेगा?'

"और चारा ही क्या था पिताजी? आपने इस संकटकाल में उन्हें अपने पास नहीं बुलाया। बेटा होने के नाते आपकी दया तो उन्हें मिली है, पर सन्कर्मी की मर्यादा नहीं मिली। आपके सामने खड़े होकर वह कभी अपने को आदमी महसूस करने की हिम्मत नहीं कर सके। उन्हें यह मालूम है कि अगर आप हार जायें तो सुदर्शन दुबे उनसे भी पूरा बदला लेंगे। अगर आप जीत ही जायें, तब भी उनका भविष्य निश्चित नहीं है। सम्भव होने पर आप उन्हें टिकट दिलवा देंगे, और जरूरत पड़ने पर इन्कार भी कर देंगे। ऐसी हालत में अगर वह कोई और रास्ता ढूंढ़ें, तो यह उनका कोई अक्षम्य अपराध तो नहीं है, पिताजी! इसके अलावा सूयप्रसाद तो दुबेजी या त्रिपाठीजी के पास गये नहीं, दुर्गाभाई के ही पास तो गये हैं।'

'हूं, ये बातें उसने तुम्हें कब बतायीं?"

"सूयप्रसाद मुझसे कुछ नहीं बनाते, पिताजी! उनका विचार है कि मेरे भेजे में और कुछ हो या न हो प्रबल नामक पदार्थ का नितान्त अभाव है।

'वह दुर्गाभाई के पास जाता है, यह तुम्हें कैसे पता चला?"

थोडी दुविधा से चन्द्रप्रसाद ने कहा, "बसन्त ने बताया।"
कौतुक भरी मुस्कान से कृष्ण द्वैपायन के चेहरे का भाव मुलायम पड गया।
"बसन्त ? वसन्त कैसी है ? बहुत दिनो से उसे नही देखा।"
"ठीक ही है, पिताजी!"
"बी० ए० कर चुकी ?"
"इस साल करेगी।"
"आजकल तुम्हारी कसी पट रही है ?"
"बुरी नही, पिताजी!"
"हूँ। तुम्हारा तो चावल भी नहीं, चूल्हा भी नही। बी० ए० तक भी नही पास किया।'
"बसन्त भी यही कहती है, पिताजी!"
"तब फिर ?'
'सा तो हो नही पाया, पिताजी!"
दोनो ही हँस पडे।
फिर चन्द्रप्रसाद ने कहा, 'एक खबर है, पिताजी!"
"वह डालो!"
"बसन्त की माँ यानी दुर्गाभाईजी की पत्नी "
'तुम्हारे साथ अपनी बेटी का ब्याह नही करना चाहती, यही न ?"
"वह बात पुरानी हो चुकी है। एक नयी बात है।"
'कहो।"
'वह चाहती हैं कि दुर्गाभाई मुख्यमन्त्री बनें।
"यह आकाक्षा भी आज की नही, बहुत पुरानी है।'
"पर वतमान म यह आकाक्षा बहुत प्रबल हा उठी है।"
"यह बात है ?"
'यही लेकर करीब-करीब हर रोज गह कलह चल रहा है।"
"ओह!"
"सिफ इतना ही नही अब ता बसन्त जननी प्रत्यक्ष सग्राम में उत्तर पडी हैं।
'क्या मतलब ?"
"दुर्गाभाइ से दो-तीन बार कह चुकी हैं और "
"और ?"
"आपको इस थड मिसिग मन का पता चला ?'
"चल गया। पर तुम जानते हो उसे ? कौन है ?'
'जानता हूँ। दुगाभाईजी। पत्नी के दबाव स उस दिन रात की सभा मे

मौजूद थे, पर भाग नहीं लिया।"

"तुम बिल्कुल ठीक ठीक जानते हो?"

'हाँ, पिताजी!"

"कहाँ से खबर मिली?"

"यह बहुत गोपनीय है, पिताजी!"

कृष्ण द्वैपायन चिन्तित हो उठे। कोटर में फँसी उनकी आंखों में आग की चिनगारी उठ रही थी। चौड़े माथे पर चिन्ता की गहरी सिकुड़नें थीं। प्रच्छन्न हिंसता। धनुष जैसे होठों पर पत्थर की तरह कठोर दृढ़ता।

पर धीरे धीरे कृष्ण द्वैपायन की आंखें कोमल होती गयीं। माथे की सिकुड़नें मिट गयीं। नाक ने शान्त, गम्भीर रूप ले लिया। होठों पर मुस्कान भी आ गयी—"वसन्त लड़की अच्छी ही है, है न?'

चन्द्रप्रसाद चुप रह गया।

"तुमने अपने तीनों भाइयों की बातें तो कहीं, अपने बारे में कुछ नहीं कहा।'

"अपने बारे में? आपके रहते हुए मेरी कुछ बात ही नहीं हो सकती, पिताजी! सब जानते हैं, कि मैं आपके प्यार से बिगड़ा हुआ लड़का हूँ।'

कृष्ण द्वैपायन कुछ नहीं बोले।

चन्द्रप्रसाद ने कहा, "आपके अनुग्रह से परे रहकर उदयाचल में बसना सम्भव नहीं है, पिताजी! इसलिए मैंने कुछ सोचा है, हुक्म हो तो कहूँ?"

'कहो।'

"मैं एयरफोर्स में भर्ती होना चाहता हूँ। सुनता हूँ वहाँ मुख्यमन्त्री का रौब नहीं पहुंचता।"

"पहुंच भी सकता है।'

"उसकी जरूरत नहीं पड़ेगी, पिताजी! फ्लाइंग क्लब से मैंने जहाज चलाना सीख लिया है। एयरफोर्स में कमीशन के लिए दरख्वास्त भेजी थी, आपका परिचय नहीं दिया था। रतनपुर का पता भी नहीं दिया था। कानपुर के एक मित्र के पते से लिखा था। वहीं पर इण्टरव्यू और मेडिकल टेस्ट भी हुआ था।'

"ओह, इसीलिए पिछले महीने कानपुर गये थे?"

"हाँ, पिताजी! मेरा सिलेक्सन भी हो गया।'

"हो गया?"

"हाँ, पिताजी! परसों चिट्ठी मिली है दस दिन के बाद मुझे ज्वाइन करना है।

कृष्ण द्वैपायन कुछ गम्भीर हो गये। छाती के भीतर जैसे मरोड़ उठी।

पर बहुत थोड़े समय के लिए। फिर उनका चेहरा खुशी से जगमगा उठा—
"तुमने ठीक किया। तुम स्वयं जिन्दगी में खड़े हो सकते हो।
"सुना है, पिताजी, आप भी बिना किसी की मदद के ही इतने ऊपर चढ़े हैं।"
"मेरे पिता दीवान थे, कुछ मन्द तो उनसे मिली ही थी।"
"मेरे पिता मुख्यमन्त्री हैं मुझे उनसे बहुत कुछ मिला है।"
कृष्ण द्वैपायन हिल डुलकर सीधे बैठने लगे, तो उनके मुह से उफ निकल गया। चन्द्रप्रसाद ने कहा, 'आपकी पीठ का दर्द फिर बढ़ गया है पिताजी! जरा दबा दूं ?'
गाढ़े स्वर में कृष्ण द्वैपायन बोले, 'दबा दोगे? अच्छा, दबा दो!"
चन्द्रप्रसाद धीरे धीरे उनकी पीठ दबाने लगी। कृष्ण द्वैपायन का जी चाहा कि उसे अपनी छाती में दबा लें। छाती मानो बिल्कुल खाली खाली-सी हो गयी थी।
चन्द्रप्रसाद की आँखों में मानो ज्वाला थी। पीठ धीरे धीरे दबाता जा रहा था और सोच रहा था—इतने बड़े आदमी, जिनका सारे मुल्क में यश है जिनका ऐसा महान व्यक्तित्व है प्रचण्ड शक्ति है जिनकी हिम्मत का कोई पारावार नहीं, असीमित आत्मविश्वास है प्रताप मान, मर्यादा यश बुद्धि—सब है वही कितने साधारण, कितने मुलायम और कितने अकेले हैं!
चुप्पी तोड़कर कृष्ण द्वैपायन बोले तुम्हारे एयरफोर्स में जाने की बात और किसी को मालूम है ?
"और एक व्यक्ति पहले से ही सबकुछ जानते हैं, पिताजी!"
थोड़ा चुप रहकर कृष्ण द्वैपायन ने पूछा 'उन्होंने आज्ञा दे दी?'
'उन्हें भी आप ही की तरह प्रसन्नता हुई है।"
कृष्ण द्वैपायन चन्द्रप्रसाद के सिर पर हाथ रखकर बोले 'चलो। आज खाने के लिए घर चलना है तुम्हारी माँ की आज्ञा है।'

ग्यारह

आमने-सामने खड़े होने पर हरिशंकर त्रिपाठी और सुदर्शन दुबे एकसाथ ही एक दूसरे से बिल्कुल उलटे और एक जैसे भी दिखते हैं।
हरिशंकर का विशाल शरीर जितना लम्बा है, उतना ही फैला हुआ भी है। लम्बाई में छ फुट से ज्यादा और वजन ढाई मन। चर्बी से लदे हुए

विराटकाय शरीर पर विशाल सिर। लम्ब लम्ब खिचड़ी बाल। चौडे माथे पर रोज सवेरे लाल तिलक लगाते हैं। हरिशकर काली मया के साधक हैं। कभी यान्त्रिक प्रभाव मे आ गय थे। माथे की गहरी रखाओ से लाल तिलक कट जाता है। बडी बडी आँखें हमेशा लाल रहती हैं। उनकी मोटी नाक प्रसिद्ध है, जिसके छिद्र मे आसानी स चूहा घुस सकता है। हरिशकर मजाक करते हैं कि वह सोये हुए बब्बर शेर हैं, चूहा भी उनस नही डरता। काली जुडी हुई भौंहों ने डरावनी मूछो के साथ सामजस्य बना रखा है। हमेशा पान और तम्बाकू खाने की वजह स दात काले पड गय हैं। बडे बडे फूले हुए गालो के दोनो ओर बड बडे कान। हरिशकर त्रिपाठी के शरीर का कोई भी हिस्सा नगण्य नहीं है। हाथ की उगली, ठुडडी और कान के बाल स लकर तोद, बाजू और जाघें, मानो सबकुछ विधाता ने वस्तुत उदारता के साथ अधिक ही दिया है।

आकार म सुदशन छोट हैं। पूरा सिर गजा सिर्फ माथे पर अचानक ललौंछ बालो का एक गुच्छा। फिर भी उनका माथा कुछ अधिक चौडा है। नाक कुछ अधिक मोटी, गाल कुछ ज्यादा भरे हुए। सुदर्शन को दखते ही दर्शक पर सबसे पहले जिस बात का असर पडता है वह है उनकी असाधारण कार्य तत्परता। जैसे वह आख मुह कान अनुभूति द्वारा हर चीज जान रहे हैं समझ रहे है। और हरिशकर त्रिपाठी हमेशा ही जैस अधसोये मे रहते हैं साक्षात् महादेव के आधुनिक सस्करण। सुदर्शन दुब बात चीत म जितने चौकन्ने हैं हरिशकर उतने ही बुद्धू। या तो बात करते ही नही जब करते हैं तो बहुत कम और काफी सुस्ती से। शरीर के वजन स वह तो जल्दी हिल डुल ही नहीं सकते पर उनका मन भी जैसे वैसा ही मन्थर गतिवाला है। लकिन हरिशकर त्रिपाठी को जाननेवाले लोगो म उनका परिचय कुछ और है। चर्बी स लदे हुए उनके महास्थूल शरीर के अन्दर एक बहुत ही चालाक, धूर्त क्षिप्र और तेज आदमी छिपा है। सुदर्शन दुबे की क्षिप्रता बातचीत-भर म ही है, उनकी बुद्धि विचार और कार्यक्रम म गम्भीरता नही है। हरिशकर बाहर से ढीले ढाले हैं पर भीतर से बहुत ही चुस्त हैं। बाहर से मौन अचल, पर उनका मन हमेशा उधेड बुन मे फँसा रहता है।

हरिशकर त्रिपाठी के राजनीतिक जीवन का इतिहास विचित्र है। उदयाचल की जो सीमा राजस्थान के साथ जुडी हुई है वहीं के एक छोटे स जिले आजमगढ में उनका जन्म हुआ था। राजस्थान के एक देशी राज म उनके पिता मामूली-से नौकर थे। वह कौन सा काम करते थे यह तो ठीक ठीक नही मालूम, पर कभी कभी राजा के तीसरे लडके के साथ गावों मे जाया करते थे। इसीलिए लोग उन्हें तीसरे राजकुमार का निजी नौकर कहते थे। हरिशकर जब बालक ही थे, तब इसी बात को लेकर उन्होंने पहला विद्रोह किया था। स्कूल के साथियो ने

उन्हें नौकर का बेटा कहा था, तो अपमानित होकर उन्होंने राजदरबार के एक बहुत ही प्रभावशाली आदमी के बेटे के सिर पर जोर से आघात किया था। फलस्वरूप पिता हरिशंकर को आजमगढ उनके चाचा के पास भेजने पर मजबूर हो गये थे। आजमगढ जाकर हरिशंकर स्कूल मे तो नही पर स्कूल के बाहर काफी मशहूर हो गये। आजमगढ मे अबरक की कई खानें थी। स्कूल के पास ही खान के कर्मचारी तथा मजदूरो की बस्ती थी। हरिशंकर बस्ती मे आने जाने लगे। उन दिनो शरीर मे आकर्षण था। जितने लम्बे थे, उतने ही स्वस्थ। स्कूल की पढाई खत्म करके जब हरिशंकर ने आजमगढ छोड़ा तो उनके साथ साथ उस बस्ती की एक खूबसूरत लडकी भी लापता हो गयी।

लडकी खूबसूरत थी, पर ब्राह्मण नही। हरिशंकर उसे लेकर अहमदाबाद चले गये। एक कपडे की मिल मे मजदूरो के मेट का काम मिल गया और हरिशंकर का कर्म-जीवन शुरू हुआ। मिलो का काम काज समझने लगे। तीन एक साल के बाद उनकी पत्नी या सहचरी जो कुछ भी वह रही हो, उसने आत्महत्या कर ली।

हरिशंकर की जिन्दगी में पहली बार राजनीतिक सुयोग तब आया जब गाधीजी की पुकार पर अहमदाबाद के मजदूर उठने लगे। सन् १६३० के सत्याग्रह आदोलन के समय कपडे की मिल मे आदोलन हुआ। मजदूरो के सरदार हरिशंकर त्रिपाठी मजदूरो के नेता बन गये। जिस मिल मे वह नौकरी करते थे वहा हडताल हो गयी। गाधीटोपी और खादी चढाकर मजदूरो का नेतृत्व किया और उस नेतृत्व मे कामयाबी के कारण वह बडी आसानी से सरदार वल्लभभाई पटेल की निगाहो मे चढ गये।

हरिशंकर त्रिपाठी काग्रेस के प्रियतम मजदूर नेता मान लिये गये।

और तब से आज तक हरिशंकर त्रिपाठी मजदूर नेता हैं। वह मालिको के विरोध मे बार बार खडे हुए हैं पर उनके दुश्मन बनकर नही, बल्कि असली मित्र बनकर। मजदूर और मालिक के स्वार्थ परस्पर विरोधी हैं इस सिद्धान्त पर हरिशंकर त्रिपाठी को कभी भी विश्वास नही हुआ। उद्योग को बनानेवाले मालिक हैं और चलानेवाले हैं मजदूर। वह यही मानते थे कि मालिक और मजदूर के आपसी सहयोग से जो आदर्श परिस्थिति बनती है उसी मे उद्योग धधा सम्भव है। मालिक आदर्श मालिक बनेगा और मजदूर आदर्श मजदूर। मुनाफे का हिस्सा मालिक यथासम्भव मजदूरो के कल्याण में खर्च करेगा और मजदूर गाढा पसीना बहाकर मालिक को आतरिक सेवा और अपना दिमाग देगा। यही है हरिशंकर त्रिपाठी का मजदूर-दर्शन।

मजदूर नेता के नाते उन्होने हमेशा झगडो को सुलझाने की कोशिश की। हडताल हो भी जाये, तो उन्होने यथासम्भव मालिक वर्ग का स्वार्थ बचाते हुए

मजदूरों की मांग पूरी कराकर समझौता कराने की कोशिश की है। कई बार उनकी कोशिशें कामयाब रही हैं। जब कभी ऐसा नहीं हो पाया, हरिशंकर त्रिपाठी ने वामपन्थी नेताओं को ही इसके लिए कसूरवार ठहराया, जिनका उद्देश्य समाज को तोडना फोडना भर है, बनाना नहीं, जो शान्ति की सस्ती हलचल मचाकर मजदूरों के विनाश का रास्ता तैयार करते हैं।

उदयाचल मे उद्योग धन्धे कम हैं, फिर भी हरिशंकर त्रिपाठी यहा के सबसे बडे मजदूर नेता हैं। सन् १९३५ मे उन्होंने रतनपुर मे अपना मकान बनवाया, जिसके पीछे एक इतिहास है।

जिस अब्राह्मण कन्या को लेकर हरिशंकर आजमगढ से अहमदाबाद भागे थे, उससे उन्होंने शास्त्रीय विधि से विवाह नहीं किया था। उसकी मृत्यु के बाद हरिशंकर भोगविलास मे फँस गये थे। जब तक मजदूरों के सरदार थे तब तक औरतों की कमी नहीं हुई।

बाद मे जब मजदूर सरदार से मजदूर नेता बन गये और देश के स्वतन्त्रता संग्राम मे हिस्सा लेने से उनका नाम, यश, प्रभाव बढ गया, तब समाज की जिस श्रेणी मे उनका जन्मसिद्ध अधिकार था, उन्होंने फिर वहीं आकर जमने की जरूरत महसूस की। पर अहमदाबाद मे जिस रूप मे वह जाने जाते थे, उससे वहां यह काम करने की सम्भावना नहीं थी।

मौका रतनपुर मे मिला। उदयाचल के एक मँझोले जमीदार अयोध्याप्रसाद मिश्र के साथ हरिशंकर त्रिपाठी का परिचय हुआ। अयोध्याप्रसाद सिर्फ जमींदार ही नहीं बल्कि अबरक की दो खानों के मालिक भी थे। बहुत दिनों से देख भाल की कमी की वजह से खानों की हालत खराब हो रही थी। अयोध्याप्रसाद ने उन्हें सुधारना चाहा। हरिशंकर त्रिपाठी को इन सबका प्रत्यक्ष ज्ञान था। एक दिन अहमदाबाद मे इस विषय पर दोनों मे बातें हुईं। हरिशंकर ने अबरक की खानों को विकसित करने का सुझाव दिया तो अयोध्याप्रसाद राजी हो गये।

उनकी अबरक की खानों के मनेजर बनकर हरिशंकर रतनपुर आये। उनकी देखभाल में खान का काम तेजी से आगे बढ निकला। अयोध्याप्रसाद के साथ हरिशंकर का रिश्ता भी बढता जा रहा था। रतनपुर आने पर हरिशंकर त्रिपाठी कपडा मिल मजदूरों की यूनियन के अध्यक्ष बने। अबरक खानों की मनजरी के साथ इस नयी जिम्मेदारी का कोई टकराव नहीं था। अबरक की खान मे मजदूरों की सुख सुविधा के प्रति उनका पूरा ध्यान था, इसलिए जल्दी ही मजदूरों मे उनका नाम हो गया। कपडा मिल के मालिक भी उन्हें मिल मजदूर यूनियन के अध्यक्ष के रूप में पाकर खुश थे। एक बार विश्व मजदूर-संघ के भारतीय सदस्यों के साथ जब उन्होंने पहली बार यूरोप की यात्रा की, तब उनकी विदेश यात्रा की सफलता के लिए मिल मालिकों ने उन्हें कुछ रकम

दा अपने स्वार्थ के लिए हानिकर नहीं समझा।

अयोध्याप्रसाद की तीसरी बेटी विमला देवी के साथ हरिशंकर त्रिपाठी की शादी हो गयी थी। विमला के व्यक्तित्व में उल्लेख योग्य कुछ भी नहीं था। रंग काला, देह मोटी। एक आँख मंगी। सामने के तीन दाँत नीचे के होंठों को दबाते हुए बाहर निकल आये थे। स्कूल की निचली श्रेणी से ऊपर नहीं बढ़ सकीं। उसकी जरूरत भी नहीं थी। उससे शादी करने में हरिशंकर त्रिपाठी को कोई दुविधा नहीं थी क्योंकि शादी के जरिये वह सामाजिक प्रतिष्ठा भर चाहते थे। फिर विमला की माँग भी बहुत कम ही थी—अपने कम-व्यस्त जीवन में हरिशंकर त्रिपाठी को घर रहने का मौका बहुत कम ही मिल पाता था और उन्हें उसकी इच्छा भी नहीं थी। उनकी औरत की लालसा और उसे प्राप्त करने की तत्परता कोई छिपी बात नहीं रह गयी थी।

उम्र के साथ साथ हरिशंकर त्रिपाठी के चेहरे पर भयंकर परिवर्तन आ गया था। चर्बी का बढ़ना ही इसकी वजह थी। सब दिन से अल्पभाषी रहे राजनीति में आने के बाद भी बहुत जरूरी न हो तो भाषण नहीं करते। उनके कई विश्वस्त साथी सुवक्ता थे वे ही हरिशंकर के प्रवक्ता भी थे।

हरिशंकर की खूबी पर्दे की ओट में मोल भाव करने में थी जिसे अंग्रेजी में नगोशिएशन कहा जाता है। दूसरे पक्ष की कूटनीति को समझ लेने की उनमें अद्भुत क्षमता थी जिसके कारण वह कई बार कामयाब हो चुके हैं। किस समय और किस बात पर मजदूर आन्दोलन शुरू होना चाहिए किस समय हड़ताल शुरू हो, हड़ताल शुरू होने पर कैसे बिना जीते भी हार की विपत्ति को टाला जा सकता है हड़ताल में कैसे कैसे संकट आयेंगे और उनसे बचने के क्या उपाय हैं किस ढंग से हड़ताल की भयंकर उत्तेजना के बीच भी मालिकों से गुप्तवार्ता चलायी जा सकती है, मजदूर हड़ताल में किसी दूसरे राजनीतिक दल को दखल देने से कैसे रोका जा सकता है हड़ताल अगर काबू से बाहर हो जाये तो उसे कैसे सँभाला जाय—इन सूक्ष्म कठिन कटीले रास्तों पर चलने में हरिशंकर का दिमाग बिजली की गति से काम करता था। पर चर्बी से लदे हुए उनके भौंडे चेहरे को देखकर कोई यह सोच भी नहीं सकता कि उनमें ऐसी तेज बुद्धि भी हो सकती है।

सिर्फ उदयाचल में ही नहीं, सारे हिन्दुस्तान में मजदूर नेता के तौर पर हरिशंकर त्रिपाठी में कुछ खासियत थी कम से कम वह ऐसा ही सोचते हैं। जो शिक्षित और भद्र लोग कांग्रेस के नेता बने हुए थे हरिशंकर उन्हें कुछ ईर्ष्या, कुछ उन्हें न समझ पाने के डर और काफी अहपूर्ण अवहेलना के साथ देखते थे। विश्वविद्यालय में अर्जित किया गया ज्ञान उनमें नहीं था इसीलिए वह उच्च शिक्षित नेताओं से मन-ही मन ईर्ष्या करते थे पर अपनी जगह पर अपनी मेहनत

से कमाये हुए नेतृत्व से उनमें अटूट आत्म विश्वास पदा हुआ था। वह जानते थे कि जो बातें उन भद्र नेताओं में नहीं हैं वे उनमें है—यानी मजदूर के साथ अटूट सम्पर्क और उनका समर्थन। 'असली नेता तो मैं हूँ, मैं —हरिशंकर सोचते थ, विश्वास भी करते थे और कभी कभी तो कहते थे भद्र श्रेणी के नेता भद्र राजनीति को बडे अभद्र ढंग से चलाते हैं, अभद्र राजनीति को भद्रता की इज्जत देने की जिम्मेदारी हम लोगो पर है। कांग्रेस देश के हर स्त्री पुरुष बालक की प्रतिनिधि है, फिर भी वह मध्यम वर्गीय समाज की ही संस्था है। कांग्रेस की जो थोडी सी जड मजदूरो और किसानो तक पहुची है उसका श्रेय तो हम ही लोगो को है। जब कांग्रेस राज्य करेगी तो हमारे बिना उसका एक दिन भी नही चलने का।"

यही आत्मविश्वास था इसीलिए हरिशंकर त्रिपाठी ने कभी दलगत राजनीति म बहुत अधिक नही फँसना चाहा। वकीलो, अध्यापको, पत्रकारो की गोल मटोल राजनीति उन्हें फीकी लगती थी। वह उदयाचल कांग्रेस की कार्यकारिणी के सदस्य थे। इससे बडी कोई भूमिका निभाने की जरूरत उ होने नहीं समझी। आन्दोलन के समय उन्होंने मजदूरो का साथ लेकर अलग ढंग से काम किया है जैसे गांधीजी के व्यक्तिगत सत्याग्रह के समय उन्होंने तीन सौ मजदूरों को बारी बारी से जेल भिजवाया था, जबकि उदयाचल कांग्रेस का कार्यालय पचास से अधिक एक भी सत्याग्रही नही जुटा पाया था। हरिशंकर तीन बार जेल गये हैं पर कांग्रेसी नेता होने के नाते नही, मजदूर नेता होने की वजह से।

स्वतन्त्रता के बाद जब उदयाचल में कांग्रेसी राज आया तो शुरू मे हरिशंकर त्रिपाठी की बहुत बडी भूमिका नहीं थी। अगस्त आन्दोलन के दौरान उदयाचल में जो कुछ हुआ था, उसका अधिकांश श्रेय हरिशंकर त्रिपाठी को है। रतनपुर की दोनो मिलो म हडताल हुई थी मालिको ने खुद ही मिल बन्द कर रखी थी। हरिशंकर खास कांग्रेसी ढंग से जेल गये थ पर उनके चार अनुचर 'अण्डरग्राउण्ड हो गये थे जिनके नेतृत्व म तीन सौ लेटरबक्स चौहत्तर टेलीग्राफ के खम्बे और तीन मील लम्बा तार नष्ट किया गया था। सिर्फ इतना ही नहीं, अंग्रेजो ने जब शासन छोडने की घोषणा की तब हरिशंकर त्रिपाठी ने अगस्त आन्दोलन के समय महीने भर के लाकआउट की पूरी मजदूरी देने के लिए भी मिल मालिकों को राजी किया। उस लेकर रतनपुर म एक बडा ममस्पर्शी आयोजन हुआ था, जिसका सभापति बनने के लिए देश के एक बहुत बडे नेता आये थे, पर असली श्रेय हरिशंकर त्रिपाठी को मिला।

भारतवर्ष का इतिहास तब नये रास्ते पर कदम बढाने के लिए तयार हो रहा था। अंग्रेज जानेवाले ही थे। उस आयोजन मे हरिशंकर ने एक अनोखा भाषण दिया था। इन्होंने कहा था, 'देश मुक्त हो गया, पर इस मुक्ति का रूप

देखकर हममे से बहुतेरे डर गये हैं। शायद देश का बँटवारा हो जायेगा। बहुत कुछ ऐसा होगा जो हम कभी नही चाहते थे और न अब चाहते हैं। फिर भी विदेशियो को जाना पडेगा और भारत आजाद होगा ही। अब नया भारत बनाने का अभिनव उद्योग शुरु होगा। इस उद्योग का नेतृत्व कांग्रेस पर होगा। यह उसका बहुत वर्षों का ऐतिहासिक उत्तराधिकार है। नेताओ को हमारी ओर से पूरा सहयोग मिलेगा। हमारे मजदूरो का देश प्रेम निखरा हुआ है, उसमे कोई मिलावट नही है।

नेताओ से हम कुछ निवेदन करना चाहेंगे। मजदूरो को छोडकर स्वतन्त्र भारत सम्पूर्ण नही हो सकेगा। कांग्रेस का जो समाजवादी आदर्श है उसे एक मात्र मजदूर ही पूरा कर सकते हैं। मेरा विनम्र निवेदन यही है कि हम मजदूर स्वतन्त्र भारत को बनाने के प्रयास मे पूरा हाथ बँटाना चाहते हैं। इसके लिए हमारे पास शक्ति है। उत्पादनकर्ता तो हम हैं। गांधीजी ने भारत म वर्ग सघर्ष के रास्ते को हमने अपनी इच्छा से त्याग दिया है। ऐसा हमने जान बूझकर किया है। हम वर्ग सहयोग के रास्ते पर आगे बढना चाहते हैं। पर यह सहयोग कांग्रेस को तभी मिलेगा जब कि हमें पूरी सुविधा मिलेगी।

मन्त्रिमण्डल बनने के पहले ही हरिशकर त्रिपाठी ने अपना भाषण फिर से छपाकर देश भर म बँटवा दिया था।

और उनका उद्देश्य सफल भी हुआ। कृष्ण द्वपायन कौशल के मन्त्रिमण्डल म हरिशकर त्रिपाठी को स्थान मिला। इसके लिए किसी तरह की हिक्मत या तिकडम नही करनी पडी यहाँ तक कि कृष्ण द्वपायन से जगह माँगने की भी जरूरत नही पडी। मानो वह पद उनके लिए पहले ही से सुरक्षित था। उन्हे मालूम था कि उनको मन्त्रिमण्डल म लेने पर दुर्गाभाई चाहे जितनी आपत्ति करें, पर कृष्ण द्वपायन उन्हे लेकर ही रहेंगे।

हरिशकर त्रिपाठी के लिए उस समय मन्त्रिमण्डल मे आ जाना बहुत ही जरूरी था।

उन दिनो हरिशकर त्रिपाठी एक गडबड मामले में फस गये थे। उस मामले मे एक खूबसूरत मुसलमान युवती थी। बात अदालत तक पहुची। अग्रेज शासन के अन्तिम पत्र मे भी रतनपुर म एक ऐसा मुसलमान उच्च राजकर्मचारी मौजूद था, जिसके हाथो हरिशकर त्रिपाठी को छुटकारा नही मिल सका। वह जानते थे कि अदालत मे उनका कोई कसूर साबित नही होगा फिर भी ऐसे मामलो को लेकर अदालत जाने म बेइज्जती तो होती ही है। इसम राजनीतिक प्रभाव पर असर पडने का डर होता है। 'यूनियन जैक' उतरकर तिरगा फहराने के उत्सव के करीब एक हफ्ता पहले हरिशकर त्रिपाठी ने मन्त्रिमण्डल म शामिल होने का निश्चय किया। ऐसा होने से भारत की पराधीनता के साथ-साथ

उनका अपना कलक भी अतीत के अँधेरे मे छिप जायगा और स्वतन्त्रता के नतन प्रकाश से उद्‌भासित भारत म मजदूर भाइया के कल्याण को महान आदर्श बनाकर नया उत्साह और पूरी शक्ति लेकर हरिशकर त्रिपाठी एक अपराजेय उत्सग के लिए अपने को योछावर कर सकेंगे।

हरिशकर त्रिपाठी को मालूम था कि हाइ कमान न मन्त्रिमण्डलो मे जहा तक बन पडे मजदूर, किसान, पिछडे वग तथा कांग्रेस के प्रतिष्ठित नेताओं को शामिल करन का निदेश किया है। उदयाचल कांग्रेस के मजदूर नेताओं मे हरिशकर त्रिपाठी ही प्रथम हैं। कृष्ण द्वपायन उन्ह मन्त्रिमण्डल मे लेन का आग्रह करेंगे, इसम कोई सन्देह नहीं था।

सचमुच सन्देह नहीं था, केवल दुर्गाभाई न एक बार दबी-दबी आपत्ति की थी। कृष्ण द्वैपायन स उन्होन कहा था, "हरिशकर त्रिपाठी वास्तव मे मजदूर-नेता नहा है। उसके हाथ गन्दे हैं।'

कृष्ण द्वपायन न हँसकर कहा था, 'त्रिपाठीजी को मैं खूब जानता हूँ। आप जो कह रहे हैं वह बिल्कुल सच है, फिर भी उन्ह मन्त्रिमण्डल म लेना ही पडगा।"

"क्यो ?'

"उदयाचल कांग्रेस मे सिफ हरिशकर त्रिपाठी हा मजदूर नता के रूप मे प्रसिद्ध हैं। वह ट्रेड यूनियन कांग्रेस के एक जान माने नेता हैं। विश्व मजदूर सघ में एक बार भारत के प्रतिनिधि भी चुन गय थे।'

'क्या वह मन्त्री बनना चाहते हैं ?"

"हरिशकर बहुत मक्तमन्द आदमी हैं। प्रकट में वह मन्त्रीपद के उम्मीदवार नहीं हैं। हाल ही में मेरी उनसे तीन बार भेंट हुई, पर उन्होन मन्त्रिमण्डल के बारे म एक भी बात नहीं की।

'तब शायद वह नहीं चाहते हो ?'

'नहीं, यह उनकी चालबाजी है। वह निमन्त्रित किये जाने का इन्तजार कर रहे हैं। उन्हें मालूम है कि वह बुलाये जायेंगे।"

"यह कोइ जरूरी है ?"

अब कृष्ण द्वपायन न दुर्गाभाई को एक पत्र दिखाया, वह चार दिन पहले दिल्ली से आया था।

इस बातचीत के दूसरे दिन कृष्ण द्वपायन के आदर आमन्त्रण पर हरिशकर त्रिपाठी उनके घर पहुँच। आधे घण्टे तक दोनो म बातें हुइ। कृष्ण द्वपायन के मन्त्रिमण्डल म शामिल होना हरिशकर ने स्वीकार कर लिया।

पोटफोलियो को लेकर ही पहले मत विरोध दिखायी दिया था। कृष्ण द्वैपायन ने कहा, आप उदयाचल के प्रधान मजदूर नेता हैं आपके लिए श्रम

सेना का हाथ है। थोड़े ही दिनों में हरिशंकर ने उदयाचल के संकटग्रस्त हिन्दुओं के सबसे सक्रिय संरक्षक का गौरव प्राप्त कर लिया।

दुर्गाभाई बहुत ही नाराज हुए।

उन्होंने मुख्यमन्त्री से कहा, 'हरिशंकर त्रिपाठी गुण्डों के सहारे मुसलमानों का घर-बार जलवाय दे रहे हैं। वह एकाएक हिन्दू नेता बन बैठे हैं।'

कृष्ण द्वैपायन जरा तैश में आकर बोले, "यह सब दुष्टों की फैलायी अफवाह है। असलियत तो यह है कि मुसलमान नेताओं ने दंगा शुरू कराया। उन्होंने ही पहले हिन्दुओं पर आक्रमण किया है। हिन्दुओं ने आत्मरक्षा की, इसीलिए क्या उन्हें कसूरवार ठहरायेंगे?'

'इन साम्प्रदायिक दंगों में हरिशंकर त्रिपाठी की क्या भूमिका है, इसे आप अच्छी तरह जानते हैं?'

'जरूर जानता हूँ। यह जानना मेरा काम है।'

"तब मुझे कुछ नहीं कहना है। कानून और शान्ति बनाये रखने की जिम्मेदारी आपकी है।'

हरिशंकर त्रिपाठी की भूमिका कृष्ण द्वैपायन को अच्छी तरह मालूम थी। उन्होंने सलाह करने के लिए श्रममन्त्री को बुलाया।

'त्रिपाठीजी, आपकी कारवाइयों की मैं तारीफ नहीं कर सकता, शिकायत भी नहीं करना चाहता। पर अब हमारा पहला काम इस साम्प्रदायिक आग को बुझाना है। जो हो गया, उसे लेकर लड़ना-झगड़ना व्यर्थ है।'

'मजदूर बौखला गये हैं। वे खून के बदले खून चाहते हैं, जान के बदले जान।'

'आप उन्हें शान्त कीजिए।'

'मेरी यह अन्यायपूर्ण माँग वे भला कब मानेंगे?'

"त्रिपाठीजी, अब पेचीदा बातों का वक्त निकल गया। हालत गम्भीर है। अगर यह दंगा दो दिनों के अन्दर नहीं बन्द हुआ, तो मुझे सेना की सहायता लेनी पड़ेगी। इसमें बहुत खतरा है। सेना गोली चलायेगी, लोग मरेंगे। पुलिस की गोली से दस मर चुके हैं और एक सौ बारह घायल हुए हैं।'

'तो इसमें मैं क्या कर सकता हूँ?'

'आप यह हंगामा बन्द करा सकते हैं।'

"कैसे?'

'अपने अनुचरों के सहारे।'

'वे भयंकर रूप से उत्तेजित हैं। हाँ-हाँ, हम साम्प्रदायिक मामले में मुसलमानों को बहुत ज्यादा प्रश्रय देते हैं। इतना प्रश्रय दिया, इसीलिए आज हिन्दुस्तान के दो टुकड़े हुए हैं। पाकिस्तान, जब मर्जी हो, हमारे देश की शान्ति

भग कर सकता है। यह दगा फसाद जिन लोगो ने शुरू किया है यह आप जानते हैं। करीब हफ्ते भर तक आपने उनके खिलाफ कडी नीति नही अपनायी। शाति रक्षा की जिम्मेदारी सशस्त्र पुलिस के हाथो मे देने मे आपने इतनी देर क्या की, यह मेरी समझ म नही आता। आप दुर्गाभाई की सलाह से हिंसा का मुकाबला अहिंसा से करना चाहते थ। कानून और शाति बनाये रखने की जिम्मेदारी आपकी है। उदयाचल के लोग आपको लौहपुरुष कहते हैं, पर इस सकटकाल मे आपने जो कमजोरी दिखायी, उससे हम सिर्फ दुखी ही नही, कुछ चकित भी हुए।

"आप, और कौन कौन ?"

"दूसरे अपनी बात खुद कहेंगे, मैं तो सिर्फ अपनी कह रहा हूँ।"

कृष्ण द्वयायन ने कहा, 'त्रिपाठीजी यह बात सही है कि लोग मुझे कडा आदमी कहते हैं, पर वे मुझे जानते कितना हैं? मैं ब्राह्मण का लडका हूँ, आप भी वही हैं। हमारी चौदह पीढिया अहिंसक। कम से कम मनुष्य का तो रक्तपात हमने नही किया है। मैं मानता हूँ कि पुलिस को गोली चलाने का हुक्म देने का मेरा मन नही होता। एक दिन देश के लोगो ने छाती खोलकर पुलिस की गोली सही थी वह घाव अभी तक ताजा है। मुख्यमन्त्री बनने के बाद शक्ति को मैं बडा रहस्यमय समझने लगा था। मैं सोचा करता था कि हमने स्वतन्त्रता के लिए सग्राम तो किया है, पर देश के स्वतन्त्र होने के बाद जो इतनी बडी जिम्मेदारी हमारे सिर पर आ गयी उसके लिए हमने अपने को तैयार नही किया। आज मेरे जसे एक मामूली आदमी के हाथो म विधाता ने इतनी ज्यादा शक्ति दे दी है। हमम इस बोझ को उठाने की कितनी क्षमता और योग्यता है? बनाने और बिगाडने की क्षमता देकर विधाता ने मुझे भी एक छोटा मोटा विधाता ही बना दिया है। मुझे वह बात याद आ रही है जब पहली बार आई० जी० ने आकर गोली चलाने का हुक्म मांगा था। भगिया म कुछ गडबडी हो रही थी। लाला मुशीराम की भगी बस्ती आपको याद होगी। बस्ती को साफ करके मुशीराम ने किराये के लिए पक्के मकान तयार कराने चाहे। भगियो ने बस्ती छोडी नही। गडबडी बढ़ते-बढ़ते आखिर दगा तक हो गया। हमारे मन्त्रिमण्डल मे पिछडी जाति के जो प्रतिनिधि हैं भगियो ने उनकी बात भी नही मानी। एकाएक कई गुण्डो ने कुछ दूकानें लूट ली—कइयो ने मुझे बताया कि वे आपके ही आदमी थे, पर मैंने उनकी बातों पर कान नही दिया था। रतनपुर मे उस दिन एक नये स्कूल का उद्घाटन था। मुझे कुछ बोलना था। मैंने कहा था—हम हिंसा रक्तपात खून, मारपीट नही चाहते। हमारे हाथ गाधीजी के मन्त्र से दीक्षित हैं। पर हुकूमत की बागडोर जब जनता ने हमारे इन हाथो म दी है, तो शान्ति और व्यवस्था हम बनाये

रखनी है। अगर जरूरत पडी तो हम इन्ही हाथो मे बन्दूक भी लेंगे जिन हाथो से हमने चर्खा काता है। जो लोग अशाति, हिंसा, द्वेष फलाकर देश की प्रगति मे रोडा अटकायेंगे, मैं उन्हे चेतावनी दे रहा हूँ कि देश की भलाई के लिए अगर रक्तपात की जरूरत पडी तो भी हम पीछे नही हटेंगे।'

कृष्ण द्वैपायन मुस्कराते हुए कहते रहे, 'ऊपरी दृष्टि से देखने पर य बातें जरूर हास्यास्पद थी, क्योकि जिन्दगी मे मैंने कभी बन्दूक नही पकडी, पर एक विशाल सशस्त्र पुलिस मेरे आधीन है। कौन रायफल किस जाति का है, मुझे इतना भी नही मालूम, पर मैं हूँ सेनापति। उस दिन शाम को आई० जी० ने आकर कहा था—'सर, गोली के अलावा अब और किसी तरह हालत पर काबू नही पाया जा सकता। आज आपने जो भाषण मे कहा है, वह एकदम ठीक है। जरूरत पडने पर हमे गोली चलाने का हुक्म दें।' और कोई उपाय नहा था। दगाइयो के हाथ दजन भर पुलिस घायल हुई। एक एस० आई० का सिर फूट गया, उसे अस्पताल भेजा गया। मुझे मजबूर होकर गोली चलाने का हुक्म देना पडा। पर मन इतना बेचैन रहा कि रात भर नींद नही आयी। सवेरे उठते ही आई० जी० को हुक्म भेजा, अगर गोली न चलाने से काम बन जाये तो गोली न चलवायें। अगर चलवायें भी तो पहले हवा मे फायर भर कीजिएगा। और गोली चलायें ही, तो देखें कि कोई जान से न मरने पाये। पर वास्तव मे ऐसा नही हो पाया। भगियो ने पुलिस पर आक्रमण किया। पुलिस ने भी गोली चलायी। चार भगी मारे गये। नेपथ्य मे कृष्ण द्वपायन कौशल की क्या हालत थी, इसे कोइ नही जान पाया।'

हरिशकर त्रिपाठी ने कहा स्वतन्त्र भारत मे पुलिस की गोली कुछ कम नही चल रही है कौशलजी!

'चल रही है, चलाने की जरूरत पड रही है पर मैं उदयाचल मे पुलिस-सेना का एक दिन का भी राज्य कायम करना नही चाहता। अगर ऐसा हुआ तो हिन्दुस्तान म उदयाचल की साख गिर जायेगी। हमारे पास गव करने के लिए कुछ नही है। उद्योग धन्धा, शिल्प, साहित्य, विज्ञान—कुछ भी नही। बस, शाति और सहानुभूति इसी को लेकर हम गव करते हैं। इस साल दिल्ली मे राज्यपालो की वार्षिक सभा मे उदयाचल को देश का सबसे शान्त राज्य कहा गया है। पाकिस्तान और हिन्दुस्तान म तो कई बार साम्प्रदायिक दगे हुए पर इससे पहले उदयाचल म यह आग कभी नही भडकी। त्रिपाठीजी अगर इस आग के पीछे आपके अनुचरो का हाथ है तो आपन मेरे दिल पर भारी चोट की है और मेरा ऊँचा माथा नीचे झुका दिया है।'

"इस झूठी अफवाह पर आप विश्वास करते हैं?

नही, पर मैं यह जानता हूँ कि यह दगा आप बन्द करा सकते हैं और

आपसे यही अनुरोध भी कर रहा हूँ।"

और हरिशंकर त्रिपाठी ने दगा बन्द करा दिया था।

तीन महीने बाद मन्त्रिमण्डल के बुजुर्ग सदस्य श्रीराम चौहान की मृत्यु हो गयी। नये मन्त्री की नियुक्ति और विभागों के नये सिरे से बँटवारे का मौका मिलते ही कृष्ण द्वैपायन ने हरिशंकर त्रिपाठी को उद्योगमन्त्री बना दिया।

उन्होंने दुर्गाभाई को समझाया—"मजदूरों पर से हरिशंकर त्रिपाठी का प्रभाव घटाना जरूरी है। उनकी 'निजी सेना' को खत्म करना पड़ेगा।'

हरिशंकर ने जो चाहा था वह उन्हें मिला, पर जिस तरह चाहा था, उस तरह नहीं।

बारह

हरिशंकर त्रिपाठी के उद्योगमन्त्री बनने के थोड़े दिनों बाद ही कृष्ण द्वैपायन ने उनके पर काट दिये।

राजनीति की बाहरी लड़ाई सबकी नजर में आ जाती है—एक दल के साथ दूसरे दल की, एक व्यक्ति के साथ दूसरे व्यक्ति की और एक नीति के साथ दूसरी नीति की। वह लड़ाई जब संवैधानिक रूप से खुलेआम होती है, तब उसे गणतन्त्र कहा जाता है। तन्त्र चाहे जो हो, बाहरी लड़ाई को छोड़कर राजनीति नहीं हो सकती।

लोगों की नजर बचाकर जो-कुछ होता है उसे राजनीतिक गुप्त संघर्ष कहा जाता है—यानी शीत-युद्ध। क्षमता के उत्ताप से राजनीति का गर्भ हमेशा उफनता रहता है। वहाँ पर साथियों में खिंचाव-तनाव, ऊपर से एक समान भावना दिखानेवालों के बीच भी व्यक्तिगत उच्चाकांक्षा की उठापटक होती रहती है।

कृष्ण द्वैपायन राजनीति के इस पहलू को खूब समझते हैं। शीत-युद्ध में वह पक्के हैं। हरिशंकर त्रिपाठी के साथ उनके न तो मन का मेल था और न मत का। अपने आपको वह कभी भारी विद्वान या उच्चशिक्षित मानकर गौरवान्वित नहीं हुए, जैसे भारी भरकम किताबें पढ़कर राजनीति, अर्थनीति और समाजनीति के विद्वान होते हैं। कृष्ण द्वैपायन अपने को उनमें नहीं गिनते, पर हरिशंकर त्रिपाठी ने स्कूल के बाद कालेज का दरवाजा नहीं देखा इसके लिए उनके प्रति कृष्ण द्वैपायन के मन में कुछ उपेक्षा जरूर थी।

मजदूरो की नेतागिरी करना कृष्ण द्वपायन को कभी हास्यास्पद लगता है और ढोंग भी। वह इतना समझ पाते हैं कि उन्हे समाजवादी या साम्यवादी मजदूरो को इकट्ठा करके राजनीतिक हथियार के रूप में काम मे लाना है। वे कुछ हद तक वर्ग सघर्ष मे विश्वास करते हैं और चारो वर्गों का जो सगठन है, उसम से एक का सर्वाधिपत्य उनका आदर्श है।

पर काग्रेस इस वर्ग सघर्ष म विश्वास नही करती। काग्रेस इन चारो वर्गों का साथ साथ सर्वोदय चाहती है। उसके दृष्टिकोण म पूजीपति और मजदूर, जमीदार और किसान एक दूसरे का गला दबोचनेवाले दुश्मन नही हैं।

गाधीजी ही पहले पहल भारतवर्ष मे जन सग्राम लाये थ, पर वह किसान-सभा बनाकर उसके नेता नही बने। वल्लभभाई पटेल को 'सरदार' की ख्याति इसीलिए मिली थी कि उनके नेतृत्व म मजदूर सगठन के आदोलन की विजय हुई थी। वही भारत के पहले असली नेता हैं पर उन्होने भी तो राजनीतिक जीवन म आगे बढकर मजदूर नेता की आशिक भूमिका तक नही निभायी, इसीलिए कृष्ण द्वपायन यह विश्वास करते हैं कि काग्रेस मे रहकर मजदूर नेता, किसान नेता, जमीदार नेता या पूजीपति नेता बनना कुछ ठीक नही है और यह बहुत हद तक गरवाजिब भी है।

इसके अलावा हरिशकर त्रिपाठी की मजदूरो की नेतागिरी के गूढ़ तथ्य उन्हें मालूम थे। कृष्ण द्वैपायन का ठोस चरित्र किसी चीज मे मिलावट नही पसन्द करता था। दुर्गाभाई के गाधीवादी आदर्श का वह आदर करते थे। मन्त्रिमण्डल मे ऐसे चार पाँच और भी साथी थे जिनकी कर्मठता योग्यता और व्यक्तित्व बहुत प्रभावशाली न होने पर भी कृष्ण द्वैपायन उन्हे आदर और श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे, क्योकि उनके चरित्र मे मिलावट नही थी। माधव देशपाण्डे जसे कायर, और हरिशकर त्रिपाठी जसे झूठे (उनकी अपनी राय म) मजदूर नेताओ के प्रति उनके मन मे कोई आदर नही था।

कृष्ण द्वपायन को हर रोज अजीबोगरीब मानव चरित्र के बीच काम करना पडता था। अपने भीतर भी वह रहस्यमयता खोजते रहते थ। कृष्ण द्वपायन मे जो आत्मचेतना थी, वह किसी राजनीतिक नेता की नही, बल्कि एक शिल्पी की थी। दीये के नीचे के अँधेरे को वह स्वीकार करत हैं। देवताओ के पर मे भी कीचड लगा होता है यह बात वह कभी नही भूले। राजनीति करने स यथासम्भव अपने रसिक मन को वह हमेशा बचाये रखते थे। उनकी अन्तदृष्टि मे मानो हमेशा कौतुक की एक छिपी मुस्कान चमकती रहती। उन्हें मालूम था कि राजनीति का खेल खेलने म उन्ह झूठ का काफी सहारा लेना पडता है। ऐसा करते समय कई बार उनके मन मे एक गुदगुदी सी होती थी। उन्हे यह

भी मालूम था कि क्षमता का गरम गरम जायका उन्हें पसन्द है, शक्ति की मादकता किसी रूपवती रमणी के सुनहरे यौवन की तरह उनमें नशा ला देती है। औरत का नशा तो उतर जाता है, पर क्षमता की मादकता जल्दी नहीं खत्म होती। उन्हें मालूम था कि क्षमता की वह मादकता पचा सके, ऐसा एक ही व्यक्ति है, और वह है वह खुद। उनका व्यक्तिगत जीवन एकदम साफ नहीं था। राजनीति करते समय उन्होंने वोटों के भविष्य की उपेक्षा नहीं की। उनकी नीति 'सदा सच बोलो, बिना पूछे दूसरे की चीज मत छुओ' की निस्तेज सीमा के अन्दर नहीं बँधी थी। कृष्ण द्वैपायन विश्वास करते थे कि जीवन में नीतियाँ दो हैं—एक कमजोर की और दूसरी बलवान की। जो कमजोर है उसकी नीति शान्त शिष्ट और सदाचार की होती है और जो बलवान है, वह खुद स्रष्टा है, और अपनी नीति खुद तैयार करता है। सिसिल रोडस दुर्नीति-परायण थे पर उन्होंने ही पूर्वी अफ्रीका में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना की थी। कार्लाइल की एक बात कृष्ण द्वैपायन को बहुत भाती थी और वह कहते थे—जिन्दगी की राह चलते चलते आखिर तक एक सवाल बड़ा होकर सामने आता है—"व्हेदर यू वांट टु बी ए हीरो आर ए कावर्ड, तुम वीर बनना चाहते हो या कायर ?

हरिशंकर त्रिपाठी के राजनीतिक पर काटने के लिए कृष्ण द्वैपायन ने मिश्री का चाकू इस्तेमाल किया।

एक दिन उन्होंने त्रिपाठीजी को जरूरी सलाह के लिए बुलवाया।

दो चार मामूली बातचीत के बाद कृष्ण द्वैपायन ने असली बात उठायी।

मन्त्रियों में कुछ तब्दीली करने की जरूरत पड़ रही है क्योंकि कई मन्त्रालयों के काम से वह प्रसन्न या सन्तुष्ट नहीं हैं। किसी किसी मन्त्री की योग्यता का प्रमाण मिला है सो उन्हें वह और महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी देने की सोच रहे हैं। उनके अपने मन्त्रालय का बोझ भी कुछ घटाना जरूरी हो गया है।

हरिशंकर त्रिपाठी ने कहा 'आपका यह निश्चय सराहनीय है इसमें कोई सन्देह नहीं। आशा है श्रम मन्त्रालय के काम काज से आप निराश नहीं हुए होंगे।

कृष्ण द्वैपायन विनम्रता से बोले 'बात बिल्कुल और ही है, त्रिपाठीजी ! आपका दक्ष नेतृत्व देखकर मैं चमत्कृत हो गया हूँ। मन्त्रिमण्डल बनाते समय आपने अधिक जिम्मेदारीवाला विभाग माँगा था मैं निश्चय रूप से स्वीकार करता हूँ कि उन दिनों आप पर मेरा पूरा विश्वास नहीं था—नहीं नहीं, एक इंसान के नाते कांग्रेस का कर्मठ सेवक होने के नाते मैं सब दिन आपको बड़े आदर की दृष्टि से देखता रहा पर मन्त्री बनने के लिए आपमें कितनी योग्यता

है इसमे मुझे थोडा सन्देह था। इसके अलावा जो आपको मुझसे ज्यादा जानते थे, यानी आपके कुछ निकटतम साथी, उनमे स किसी किसी ने—मुझे नाम बनाने के लिए मजबूर न कीजिए—मुझे सतर्क किया था, पर आज तो मेरे मन मे तनिक भी सन्देह नही रह गया है। पिछले कई सालो से आप जिस तरह श्रम मन्त्रालय चला रहे हैं, उससे मुझे आपकी योग्यता पर पूरा विश्वास हो गया है। मैं आपको किसी और मन्त्रालय की जिम्मेदारी देना चाहता हूँ।

गद्गद होकर हरिशकर ने दोनो हाथ जोड कृष्ण द्वैपायन को नमस्कार किया, बोले, 'कौशलजी, मेरे खिलाफ किसने आपके पास शिकायत पहुचायी, वह तो मुझे नही मालूम, पर मैंने मन, वचन, कर्म स एक होकर अपनी जिम्मेदारी निभाने की कोशिश की है। आज आपने मेरी योग्यता पर विश्वास किया है यह मेरे लिए गौरव की बात है। मैं सिर्फ इतना ही कहूँगा कि आप मुझे जो भी जिम्मेदारी देंगे, मैं उसे यथासाध्य निभाऊँगा और अगर आप मुझ पर विश्वास करेंगे तो कभी नही ठगे जायेंगे।'

कृष्ण द्वैपायन हसकर बोले "यह मुझे मालूम है हरिशकरजी।"

थोडी सी दुविधा के बाद हरिशकर न पूछा, 'मुझे कौन सा विभाग दे रहे है क्या यह मैं जान सकता हूँ ?'

'अभी ठीक ठीक नही बता सकूगा त्रिपाठीजी, कई विभागो के बारे म सोच रहा हूँ पर हेर फेर के साथ ही कई और बातो पर भी सोच विचार करना पड रहा है। जो भी विभाग आपको दूँ यही समझें कि इस समय से आपकी जिम्मेदारी बढ जायेगी।'

इस बात के हफ्ते भर बाद ही मन्त्रिमण्डल म हेर फर हुआ। हरिशकर उद्योगमन्त्री बने और श्रम मन्त्रालय कृष्ण द्वैपायन ने अपने एक अत्यन्त विश्वास पात्र निरजनसिंह को दे दिया।

हरिशकर त्रिपाठी पहले तो बहुत खुश हुए। उन्होने सोचा था कि अब अपन निजी मजदूर दल की सहायता से उद्योगपतियो के साथ एक नया रिश्ता बनगा, और यह भी सोचा था कि प्रदेश सघ का अध्यक्ष होन के नाते मालिकों के सामने उनकी इज्जत भी ज्यादा बढ जायेगी और मजदूर और मालिको के सहयोग से वह एक नयी दिशा के निर्देशक बन जायेंगे। पर साल भर म ही उनका यह स्वप्न टूट गया।

पहली चोट मुख्यमन्त्री से लगी। शासन-यन्त्र को उन्नत बनान के लिए कृष्ण द्वपायन ने प्रस्ताव रखा कि मन्त्रियो मे से कोई भी काग्रेस के सगठन क्षेत्र म नतागिरी नही कर सकेगा। हाई कमान न भी इस प्रस्ताव का अनुमोदन

किया था। इसलिए हरिशंकर त्रिपाठी को प्रदेश मजदूर संघ के अध्यक्ष पद से इस्तीफा देना पड़ा। सिर्फ इतना ही नहीं, निरंजनसिंह ने बड़ी धूर्तता से इस पद पर जिसे नियुक्त किया, वह हरिशंकर का पुराना व्यक्तिगत दुश्मन था।

थोड़े दिनों बाद रतनपुर में कपड़े की मिलों में हड़ताल हुई। देखने में आया कि निरंजनसिंह की मजदूर-नीति कुछ और ढंग की है। उन्होंने मजदूरों की अधिकांश माँगों का समर्थन किया। मिलमालिक पुराने मन्त्री की नीति पर चले, इससे मजदूरों के सामने हरिशंकर त्रिपाठी का सम्मान बहुत घट गया। निरंजनसिंह ने मुख्यमन्त्री के पूरे समर्थन से मजदूर और मालिकों का झगड़ा निपटाने के लिए 'एडजुडिकेटर' नियुक्त किया। मजदूरों को बहुत-कुछ मिल गया। उनके बीच कृष्ण द्वैपायन का प्रभाव बढ़ गया। ऐडजुडिकेटर की अदालत में निरंजनसिंह से उत्साह पाकर मजदूरों के मुखियों ने कुछ ऐसा भण्डाफोड़ किया, जिससे साधारण मजदूरों को साफ मालूम हो गया कि हरिशंकर त्रिपाठी असल में मजदूरों से ज्यादा अधिक मालिकों के स्वार्थों की ही रक्षा करते रहे हैं।

हरिशंकर त्रिपाठी के राजनीतिक जीवन में मजदूर नेता की भूमिका का पटाक्षेप हो गया।

इस नाटकीय घटना के बाद एक साल से कुछ ज्यादा ही बीत गया होगा। अब उदयाचल के राजनीतिक रंगमंच पर एक नारी का आविर्भाव हुआ। नाम है सरोजिनी सहाय। हरिशंकर त्रिपाठी के जिस मजदूर नेतृत्व को सँभालने की योग्यता निरंजनसिंह में नहीं थी, जिसकी जरूरत कृष्ण द्वैपायन कौशल ने तब तक महसूस नहीं की थी, उसी नेतृत्व पर सरोजिनी सहाय ने एकाएक अपना सिक्का बैठा दिया। बाद में देखा गया कि सरोजिनी सहाय उदयाचल की राजनीति में एक दिग्भ्रष्ट उर्वशी है।

हरिशंकर त्रिपाठी और सुदर्शन दुबे ने एकसाथ कृष्ण द्वैपायन के फिर से नेता पद की उम्मीदवारी का विरोध किया था।

सुदर्शन दुबे की उच्चाकांक्षा खुद मुख्यमन्त्री बनने की थी। पर हरिशंकर के साथ हाथ मिलाने के लिए यह जरूरी था कि थोड़े दिनों के लिए अपनी उच्चाकांक्षा दबाये रहें। उन्होंने हरिशंकर त्रिपाठी से कहा था कि मुख्यमन्त्री बनने की सबसे ज्यादा योग्यता आपमें है।

जब कृष्ण द्वैपायन अपने खास दफ्तर के कमरे में चन्द्रप्रसाद के साथ बातें कर रहे थे, तब दोपहर के खाने के समय हरिशंकर त्रिपाठी के घर में एक राजनीतिक चौकड़ी की बैठक हो रही थी। बैठक में हरिशंकर, सुदर्शन दुबे, महेन्द्र वाजपेयी, प्रजापति गेवड़े और चार दूसरे कांग्रेसी नेता—जिनके सहयोग पर कृष्ण द्वैपायन को काफी भरोसा था—मौजूद थे।

सुन्शान दुवे बोले, 'हाई कमान से आज साफ-साफ निर्देश मिलने की बात है। हम चाहते हैं कि हाई कमान स्पष्ट निर्देश दे कि कौशलजी फिर मुख्यमन्त्री पद के लिए नहीं खड़े हो सकते। उनके प्रति आरोपों का जो स्मरण पत्र भेजा गया है उस पर मैंने हाई कमान से राय माँगी है।"

प्रजापति नेवडे ने पूछा निरजनसिंह के दिल्ली मिशन के बारे में कुछ पक्का पता चला ?

सुन्शान दुबे ने कहा, "जितना मालूम हुआ है, उससे हाई कमान का ठीक ठीक इरादा समझ में नहीं आता।

प्रजापति नेवडे ने जेब से एक चिट्ठी निकाली बोले, 'यह पत्र कल दिल्ली से आया है। रमेश पाटिल की चिट्ठी है। लिखा है, हमारे अभियोगों को हाई कमान कुछ अधिक महत्त्व नहीं दे रहा है। इसके अलावा कौशलजी के बिना उदयाचल में स्थायी और मजबूत मन्त्रिमण्डल बन भी सकेगा या नहीं, इस पर हाई कमान को शक है।

सुन्शान दुबे ने कहा 'यह शक मिटाना पडेगा। कृष्ण द्वैपायन कौशल के बाद भी उदयाचल में कांग्रेसी शासन चलेगा बल्कि और अच्छी तरह चलेगा, यह बात हाई कमान के गले उतारनी पडेगी।'

महेन्द्र वाजपयी ने टिप्पणी की— 'इस समझाने की आपने भरसक कोशिश की पर मालिक लोग समझें तब न!

उत्तेजित होकर सुन्शान दुबे ने कहा, "मालिक अगर न समझें, तो इसकी जिम्मेदारी आप ही लोगों पर है। आप लोग हमारे साथ एक होकर नहीं खड़े हो रहे हैं।

इस कड़े आरोप का हरिशंकर त्रिपाठी के अलावा सबने प्रतिवाद किया।

सुदर्शन दुबे कहने लगे आप लोगों में से ऐसा एक भी नहीं है जो सच मुच मन्त्रि पद त्यागने के लिए तयार हो। कौशलजी के विरोध में खड़े होकर भी आप सब भीतर ही भीतर उनके साथ गठबन्धन किए हुए हैं ताकि अगर मैं हार जाऊँ तो भी कम से कम आप लोगों का मन्त्रि पद बचा रहे।

इसी समय नौकर ने माधव देशपाण्डे के आने की खबर दी।

माधव देशपाण्डे ने कमरे में आकर देखा कि खाना अधखाया पड़ा है और कमरे का वातावरण बहुत गम्भीर है। अप्रस्तुत से होकर देशपाण्डे ने कहा 'हाल चाल अच्छे नहीं हैं क्या ?'

सुदर्शन दुबे ने कहा 'बठिए।

माधव देशपाडे के बठने पर हरिशंकर त्रिपाठी पहले पहल बोले, कृष्ण द्वपायन साधारण प्रतिपक्षी नहीं हैं। एक बार हार गये पर दुबारा वह नहीं हारना चाहेंगे। सुदर्शन भाई, आप बिना पूरी तयारी किये ही लडाई में उतर पडे हैं।

सुदर्शन दुबे ने कहा, "बिल्कुल नहीं। प्रदेश कांग्रेस करीब करीब पूरी की-पूरी मेरे साथ है। कृष्ण द्वैपायन को इस्तीफा देने के लिए हम लोगों ने मजबूर किया है। आपने तो देखा है कि विधान सभा के अधिकांश सदस्यों ने हमारे पक्ष में मत दिया है।'

हरिशंकर त्रिपाठी सुदर्शन दुबे की गलती सुधारते हुए बोले 'दिया है नहीं दिया था। पहले चरण में तो हम लोग जीते हैं पर उस जीत के पीछे गहरी हार है। केवल पांच मतों से जीतकर हम हार गये। इसके अलावा अगर उसी दिन उसी सभा में आप नया नेता चुनवा ले सकते, तो विजयश्री आपकी मुट्ठी में आ जाती। आप हम ऐसा नहीं कर पाये। थोड़े दिनों का समय मिलते ही कौशलजी ने आनेवाली असली लड़ाई आधी तो जीत ही ली।'

सुदर्शन दुबे के मुंह से कोई बात नहीं निकली। कई क्षण चुप रहने के बाद उन्होंने ठण्डी आवाज में पूछा, 'तो क्या अब हम लड़ाई से हाथ खींच लें?

त्रिपाठीजी ने कहा "नहीं। हममें से किसी को दिल्ली जाना पड़ेगा।'

"समय कहां है?"

"समय लेना पड़ेगा। नये नेता का निर्वाचन एक हफ्ते बाद होगा। हमें समय की बहुत सख्त जरूरत है।

'कौन जायेगा?'

"आप।

'मैं जाने के लिए तैयार हूँ, पर यहां आप सँभाल लेंगे न?'

संगठन के चार नेता एकसाथ बोले, "वर्तमान संकट के दिनों में सुदर्शनजी का रतनपुर छोड़ना ठीक नहीं होगा।"

महेंद्र बाजपेयी बोले 'हवाई जहाज से जायेंगे आयेंगे। दो दिनों में ऐसी कौन-सी खराब हालत हो जायेगी?"

चारों नेताओं ने फिर कहा "उनका जाना उचित नहीं होगा।'

सुदर्शन दुबे ने कहा, मैं जाने के लिए तैयार हूं पर मेरी अनुपस्थिति में के० डी० कौशल गुट को फोड़ लेंगे। इसके अलावा दिल्ली में एक ऐसी धारणा बन गयी है कि मैं किसी व्यक्तिगत कारण से कौशलजी का विरोध कर रहा हूँ।'

हरिशंकर त्रिपाठी मुस्कराकर बोले 'सुदर्शनजी, जिन समर्थकों को आप दो दिनों के लिए भी छोड़ते डर रहे हैं उन्हें लेकर राज करना तो आपके लिए मुश्किल हो जायेगा।'

सुदर्शन दुबे ने कठोर आवाज में कहा, त्रिपाठीजी समर्थन एक ऐसी चीज है, जो केवल क्षमता के साथ ही अच्छी तरह सटी रह सकती है। जब तक हमारे गुट के सदस्य यह सोचते रहेंगे कि कृष्ण द्वैपायन ही फिर मुख्यमंत्री बनेंगे, तब तक उनका समर्थन कमल के पत्ते पर पानी की बूंद की तरह ही होगा। पर

जिस क्षण हम उन्हें गद्दी से हटा देंगे, उसी क्षण सब एक एक करके हमारे गुट से लेई की तरह चिपक जायेंगे।'

माधव देशपाण्डे अपनी आदत के अनुसार बोल उठे, "नारायण ! नारायण !"

महेन्द्र वाजपेयी बोले, दुबेजी, अगर आप दिल्ली न जा सकें तो यह महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी सिर्फ देशपाण्डेजी ही उठा सकते हैं।'

माधव देशपाण्डे बोल पड़े, 'असम्भव, मैं इसे हर्गिज नहीं कर सकूंगा।'

सुदर्शन दुबे ने प्रश्न किया, 'क्यों ?'

मेरी तबियत ठीक नहीं है। कल से गठिया का दर्द बढ़ गया है।"

'कूटनीति रोग !"

'रोग सचमुच है, पर चाहें तो कूटनीतिक भी कह सकते हैं। मेरे लिए इस बात को लेकर दिल्ली जाना कितना व्यर्थ है, यह दुबेजी अच्छी तरह जानते हैं। उदयाचल की राजनीति में मराठा समाज का स्थान नगण्य है। यहाँ के राजनीतिक नेता आप ही लोग बन सकते हैं, हाई कमान को कुछ समझाना हो तो आप ही लोग समझा सकते हैं।

सुदर्शन दुबे मुस्कराकर बोले, "पर हमने तो आप ही को मुख्यमन्त्री बनाने की सोची है।

माधव देशपाण्डे म्लान हँसी हँसकर बोले सुदर्शनजी, आपकी रसिकता तो प्रसिद्ध है पर बतगड़ की बीमारी से पीड़ित आदमी में अगर इतना ज्यादा रसबोध न हो तो क्षमा कीजिएगा।"

सुदर्शन दुबे बोले, "यानी आप मुख्यमन्त्री भी नहीं बनना चाहते ?'

माधव देशपाण्डे ने कहा 'सचमुच नहीं चाहता। मुझे मुख्यमन्त्री बनाकर आप उदयाचल में फिर से कांग्रेसी शासन स्थापित करेंगे, यह बात अगर हाई कमान तक पहुँच जाये तो आपको जो थोड़ी सी आशा है, वह भी मिट्टी में मिल जायेगी। अगर दिल्ली जाना है तो आप जाइए या फिर त्रिपाठीजी को भेजिए।'

महेन्द्र वाजपेयी बोले हरिशंकरजी जायें तो अच्छा होगा।'

हरिशंकर त्रिपाठी ने चुपचाप सिर हिलाते हुए इन्कार कर दिया।

प्रजापति शेवडे बोले 'कल चुनाव है इस अन्तिम घड़ी में हाई कमान हमारी माँगें सुनने के लिए तैयार नहीं होगा। हाई कमान का प्रतिनिधि कल ग्यारह बजे दिन में रतनपुर आ जायेगा। पाँच बजे हमारी बैठक शुरू हो जायेगी। बैठक स्थगित करने से कम से कम चौबीस घण्टे पहले उन्हें सूचना देनी आवश्यक है।"

सुदर्शन दुबे ने कहा, 'चौबीस घण्टे पहले हालत कुछ और थी।

प्रजापति शेवडे ने उत्तेजित होकर पूछा "चौबीस घण्टे के अन्दर हालत इतनी बदल कैसे गयी ?'

जवाब में सुदर्शन दुबे ने हरएक के चेहरे की ओर बारी बारी से देखा। हरिशंकर त्रिपाठी के विशाल माथे पर मुस्कान का खिंचाव आ गया। माधव देशपाण्डे दुखती कमर के कारण हिल डुलकर फिर से बैठ गये। महेन्द्र बाजपेयी के मन में खरास सी पैदा हुई, उन्होंने खाँसा।

सुदर्शन दुबे बोले, "आपमें से कोई भी कृष्ण द्वैपायन के खिलाफ हाई कमान के दरबार में जाने को तैयार नहीं है। फिर भी मैं आखिरी कोशिश करूँगा। मैं आप लोगों को बाध्य करना नहीं चाहता। कल तक ज्यादातर सदस्य मेरे साथ थे। कम से-कम दस मतों से हमारी विजय निश्चित थी। पर आज हालत कुछ और है। आज शायद बराबर बराबर है। अभी चौबीस घण्टे से भी कुछ अधिक समय बाकी है। इस बीच कौशलजी कुछ और सदस्यों को भी फोड़ लेंगे। वह ऐसे हथियार इस्तेमाल कर रहे हैं जो मेरे पास नहीं हैं। साथ ही वह इतना नीचे उतर आये हैं कि हम वैसा नहीं कर सकेंगे। अगर हम दुर्गाभाई को अपने गुट में ला सकते तो भी कुछ उम्मीद थी। पर दुर्गाभाई कौशलजी के खिलाफ जाने को तैयार नहीं होंगे। बहुत हुआ तो वह निरपेक्ष रह सकते हैं, बशर्ते हमारी जीत में कोई सन्देह न हो।"

प्रजापति शेवडे ने कहा, 'यानी दुर्गाभाई हमारे साथ नहीं आ रहे हैं?'

सुदर्शन दुबे ने कहा "वास्तव में बात ऐसी ही है। चुनाव में फिर से दल का नेता बनने के लिए के० डी० कौशल ने किस किस दुर्नीति से काम लिया है इस बारे में मैंने आज फिर तार से हाई कमान को अवगत करा दिया है। साथ ही यह माँग भी की है कि चुनाव थोड़े दिन के लिए रोक दिया जाये और इसकी जाँच की जाये। नतीजा क्या होगा, यह ईश्वर ही जानता है। इस सक्रान्ति-काल में आप सबसे मेरा एक अनुरोध है।

सब चुप बैठे उनके अनुरोध की प्रतीक्षा करते रहे।

सुदर्शन दुबे ने कहा, 'त्रिपाठीजी ने ठीक कहा है कृष्ण द्वैपायन मामूली प्रतिद्वन्द्वी नहीं हैं। इसके अलावा उनके हाथ में क्षमता है। वह कइयों को कितना-कुछ भी दे सकते हैं। लालच दिखा सकते हैं। आप लोग इस सकट में काग्रेस के उद्देश्य और नीति की रक्षा के लिए मेरे साथ खड़े हुए हैं। आप सब जानते हैं कि मुख्यमन्त्री बनने का मुझे कोई लोभ नहीं है। मैं तो आप ही में से किसी योग्य व्यक्ति को मुख्यमन्त्री का पद दिलाना चाहता हूँ। इस सकटकाल में अगर आप लोग कृष्ण द्वैपायन के कूटजाल में फँस गये तो हमें जो थोड़ी सी उम्मीद है, वह भी नहीं रह जायेगी। आपमें से हरएक को के० डी० कौशल धमकी देंगे, लालच देंगे, शायद उन्होंने ऐसा किया भी है। मेरा अनुरोध है कि आज और कल आप हमारी एकता बनाये रखें।'

हरिशंकर त्रिपाठी ने सम्मतिसूचक ढंग से सिर हिलाया।

महेन्द्र वाजपेयी बोले   जरूर।
प्रजापति देवडे ने कहा   जरूर। यह भी कहने की बात है ?"
माधव दणपाण्डे अपनी आदत के अनुसार बोले, 'नारायण ! नारायण !'
सभा खत्म होने के बाद भी हरिशंकर त्रिपाठी और सुदर्शन दुबे के बीच कुछ गुप्त बातें हुई। विदा होते समय सुदर्शन दुबे ने कहा 'एक काम कर सकते हैं त्रिपाठीजी ?"
हरिशंकर ने प्रश्नसूचक ढंग से देखा।
'सरोजिनी को एक बार दुर्गाभाई के पास भेज सकते हैं ?'
उससे फायदा ?
'फायदा कुछ हो भी सकता है नुकसान तो कोई नहीं।
'आपको याद है ?
हाँ। उस दिन दुर्गाभाई ने सरोजिनी से एक बार भी बात नहीं की थी।
कोशिश करके देखूंगा। पर आपका रण कौशल मैं नहीं समझ सका।'
कृष्ण द्वैपायन और दुर्गाभाई के बीच
अच्छा ! ठीक है कोशिश करूंगा। पर सुदर्शन भाई
'कहिए !'
'के० डी० कौशल को आप इतने अरसे से देख रहे हैं फिर भी आप उन्हें पहचान नहीं सके। इससे तो अच्छा होगा कि आप एक काम करें।
क्या ?'
हाथ मिलाइए। के० डी० कौशल के साथ हाथ मिलाकर दुर्गाभाई को नस्तनाबूद कीजिए। अगर ऐसा न कर सके तो आप कभी मुख्यमन्त्री नहीं बन सकते।
मुख्यमन्त्री तो मैं बनना भी नहीं चाहता।
यह बात आप दूसरों से कहिएगा। हरिशंकर त्रिपाठी मुस्कराकर बोले, 'मेरे सामने ऐसा कहने से कोई लाभ नहीं।

तेरह

सवेरे पूजा के कमरे में जब पद्मादेवी ने कहा था तुमसे कुछ कहना है और उन्होंने प्रश्न किया था कि कब समय मिलेगा उस समय कृष्ण द्वैपायन के मन में तनिक भी इच्छा नहीं थी कि उस दिन की लगातार व्यस्तता के बीच पत्नी

के साथ बात-चीत म समय नष्ट करें।

पर पद्मादेवी के प्रश्न के अन्दर ही कठोर माँग का जो पुट था उसने उनके कानो का चौकन्ना कर दिया था। और फिर तुरत ही, उनकी निस्तेज आपत्ति की परवाह किये बिना पद्मादेवी का यह अनुरोध जो आदेश स भी कठोर था, ध्वनित हो उठा था—'दोपहर मे घर आकर खाना खाना फिर बातें भी होगी।' तभी कृष्ण द्वैपायन समझ गय थ कि उन्हें एसा करना ही पडेगा।

बहुत दिन पहल से ही दिन मे पद्मादवी स उनका सम्पक बहुत थोडा रह गया है। ज्यादातर दोपहर का खाना उन्ह दफ्तर म ही खाना पडता है और अपराह्न तक लगातार काम में व्यस्त रहना पडता है। रात को भी अक्सर वह दफ्तर म ही सो जात हैं। हाँ, सवर पूजा के कमर में पद्मादेवी की नियमित उपस्थिति रहती है। पूजा के समय पद्मादेवी बात नही करती। दो घण्टे कुल देवता के चरणो मे आखें मूदकर चुपचाप पति की दूरी की उपेक्षा करते हुए उनके साथ बैठी रहती हैं।

पूजा के बाद कभी-कभी दो चार मामूली बातें हो जाती हैं, कभी कभी नही। जिस दिन कृष्ण द्वपायन दोपहर को खाने क लिए घर आते हैं पद्मादेवी अपने हाथ स खाना परोसती हैं। साधारणत इस समय और भी एकाध लोग आमन्त्रित होते हैं। कृष्ण द्वपायन उनके साथ राजनीति या दलनीति पर चर्चा करत हैं। पद्मादेवी उस समय अपनी उपस्थिति को यथासम्भव सक्षिप्त और सकुचित ही बनाये रखती हैं। कभी कभी रात को कृष्ण द्वपायन घर पर सोन आते हैं। पद्मादेवी पति के लेट जाने के बाद मसहरी लगाकर कभी कभार पास रखी हुई कुर्सी पर बठ जाती हैं। बहुत ही मामूली घर गृहस्थी की दो चार बातें करती हैं, कभी यह भी नही करती।

पति-पत्नी के बीच की यह विशाल खाई बहुत दिनो से धीरे धीरे बढती जा रही है और दोनो ही इसके आदी हो चुके हैं। ढलती तरुणाई मे सार्व जनिक कामो मे लग जाने से कृष्ण द्वपायन के जीवन मे दूसरी औरतो का प्रवेश हुआ है, पर पद्मादवी के साथ विच्छेद का एकमात्र कारण यह नहा है। प्रधान कारण है कृष्ण द्वैपायन की राजनीति। उस राजनीति के साथ पद्मादेवी अपने को एकदम नहा खपा पाती, कृष्ण द्वपायन ने भी पद्मादेवी की जरूरत नही महसूस की। शारीरिक सम्पर्क सालो पहले खत्म हो चुका है आत्मिक सम्पर्क बन ही नही पाया। पद्मादवी का नीति बोध कृष्ण द्वैपायन के सामने बस एक कमजोर प्रतिवाद-जैसा भर रहा है। निष्ठावान ब्राह्मण कुल की नीति और राजनीति एक चीज नही होती, यह बात उन्होने पद्मादेवी को कई बार समझाने की कोशिश की है, अब वह सब भी पुराना पड गया है।

र को साथ लिये लिये ही कृष्ण द्वपायन दफ्तर से बाहर निकले।
र नीचे आते ही अवस्थी को खडे देखा।
द भाई तीन बजे आ रहे हैं।

द भाई।
है न ? ठीक है। उसका आना बहुत जरूरी है।" कृष्ण द्वपायन
गहरी चिन्ता म डूब गये। अवस्थी को लगा कि वह बहुत दूर

ष्ण को चार बजे आने के लिए कहा है।
त दूर से ही कृष्ण द्वपायन ने कहा ठीक है।
लिए पर उठाया।
खबर है।'

र पहले हरिशंकरजी के घर मे उन लोगो की बठक हुई थी।"
न थे ?
जी, दुबेजी, प्रजापति शेवडेजी, महेन्द्र वाजपेयीजी देशपाण्डेजी।'
की नही थी ?

ता किया ?
ो करूँगा।
मत जाना।

क्या बातचीत हुई ?'
दुबेजी ने खूब गरम होकर कुछ कहा है।
काम करो।

अभी रहने दो। मैं खाने जा रहा हूँ। तुमने खाना खाया ?'
।
फिर बातें होगी।

के चले जाने के बाद कृष्ण द्वपायन ने चन्द्रप्रसाद से पूछा 'तुम्हारा
राजकुमार ?
ा पिताजी ! बेकार आदमी को बहुत भूख लगती है।
बनने जा रहे हैं शरीर को मजबूत रखना चाहिए न !

न्त्री

"शरीर खूब मजबूत है, पिताजी !"

"एक काम कर सकोगे ?

"जरूर।"

'बिना सुने ही वादा कर रहे हो ? '

'आप मुझे कभी ऐसा काम दे सकते हैं, जो मेरे लिए सम्भव न हो ?"

"यह काम आसान नहीं है।'

"आपके लिए दो एक कठिन काम भी तो किये हैं, पिताजी !"

"सो तो किये हैं।"

"तो फिर कहिए।'

'वसन्त से शादी कर सकोगे ?"

चन्द्रप्रसाद को चुप देखकर कृष्ण द्वपायन ने उसके कंधे पर हाथ रख लिया—"चुप क्यों हो ? शरमा रहे हो ? '

'नहीं, पिताजी।'

"अगर हो सके तो शादी कर लो। अगर तुम दोनों राजी हो जाओ तो मैं दुर्गाभाई से बात करूँ।'

'आप खुद ?"

'दुर्गाभाई यह प्रस्ताव लेकर कभी मेरे पास नहीं आयेंगे।'

'आप खुद कहेंगे तो आपका असम्मान होगा पिताजी !"

'असम्मान ? असम्मान क्यों होगा ? तुम्हीं तो थोड़ी देर पहले कह रहे थे कि तुम लोगों के लिए सम्मानजनक मैंने कुछ नहीं किया है ? मेरी किसी सहायता के बिना तुम एयरफोर्स में जा रहे हो, यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हो रही है, राजकुमार तुम्हारे लिए इतना करने में मेरा कोई असम्मान नहीं होगा।"

'पर पिताजी, कन्यापक्ष को आपके पास आना चाहिए।'

'दुर्गाभाई देसाई कोई साधारण आदमी नहीं हैं। उनका नीति बोध बहुत खरा है। जब तक मैं मुख्यमन्त्री रहूँगा, तब तक मेरे बेटे के साथ अपनी बेटी के विवाह का प्रस्ताव लेकर वह कभी इस घर में नहीं आयेंगे।"

अन्दर आकर उन्होंने देखा, पद्मादेवी बरामदे में बैठी उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। तरल स्वर में बोले, मैं कोई अतिथि हूँ, जो मेरी प्रतीक्षा कर रही हो ?'

पद्मादेवी दबे स्वर में बोली, "बहुत देर कर दी। इतनी देर से खाने से तबियत ठीक नहीं रहती।'

'तब भी आज गनीमत है कि कोई और निमन्त्रित नहीं है।'

कृष्ण द्वपायन ने गुसलखाने मे जाकर हाथ मुह धोया। फिर खाने के बड कमरे की ओर बढने लगे तो पद्मादेवी ने कहा, "उस कमरे म नही, तुम्हारा खाना भर कमरे मे लगाया गया है।

यह कमरा मकान के अन्दर है—मकान के पीछे बगीचे से बिल्कुल लगा हुआ। कृष्ण द्वपायन ने बहुत दिन बाद पत्नी के कमरे मे प्रवेश किया।

रेशमी आसन बिछाकर खाना लगाया गया। कांसे की थाली म गरम गरम पूरी, बगन की भाजी और दूसरी सब्जियाँ। आचमन करके कृष्ण द्वैपायन ने खाना शुरू किया। पद्मादेवी पास ही जमीन पर बैठ गयी। सब्जी मुह मे डालते हुए कृष्ण द्वैपायन ने कहा, 'देख रहा हूँ कि खुद ही बनाया है।

पद्मादेवी के चेहरे पर एक म्लान हँसी फैलकर मिट गयी।

कृष्ण द्वपायन ने कहा "कुछ बात करने को कह रही थी। कुछ गम्भीर बात मालूम पडती है। शुरू करो।'

पहले खा लो।

'तुम तो जानती हो कि मैं धीरे धीरे खाता हूँ। खाने के बाद ज्यादा दर तक नही बठ सकूगा। आज मुझे पल भर भी छुट्टी नही है।

अच्छा, मेरी बातें तुमने कभी नही सुनी। आज भी नही सुनोगे। तब भी कहूँगी।'

"कहो।

"तुम्हारे झगडे का क्या हाल है ?

"लगता है जीत जाऊगा।'

"तब तो मुझे कहना ही पडेगा।'

"कहो भी।

'तुम अब यह गद्दी छोड दो।'

कृष्ण द्वपायन ने चुपचाप एक पूरी खतम की फिर बोले, "क्यों ?'

तुम्हारी उम्र बढ रही है। इतनी मेहनत नही सह पाओगे। शरीर टूट जायेगा।

'यानी मर जाऊगा। इस उम्र म मृत्यु से तो नही डरना चाहिए।

मरना न मरना ईश्वर के हाथ है। तुम्हारी काफी उम्र हो गयी। बहुत दिनो तक यह काम करते रहे, अब दूसरे लोग करें।'

'जिनके करने की सम्भावना है उनकी उम्र भी मुझसे कुछ कम नहीं है।'

'फिर किसी नये आदमी को यह जिम्मदारी दे दो।'

"मुख्यमन्त्री का पद मेरी जमीदारी थोडे ही है कि वसीयत लिखकर किसी को दे दूँ ? यह तो राजनीति की लडाई है, मेरे बाद यह पद किसके पास जायेगा, यह मैं क्या जानू ?'

"शासन कार्य सिर्फ राजनीति ही बन गया है ? ग्रसे से तुम देश की सेवा करते आ रहे हो। अब तुम देश का कल्याण, उन्नति और संगठन करो, इससे महान और क्या हो सकता है ? इतना बड़ा उत्तराधिकार सिर पर उठाने के लिए आदमी क्यों नहीं तैयार करते ? देश का कल्याण अब सिर्फ राजनीति बनकर कैसे रह गया ?'

कृष्ण द्वपायन तुरन्त जवाब नहीं दे पाये। थोड़ी देर चुप रहकर बोले, "यह प्रश्न दिन रात मेरे मन में उठता रहता है। हम लोगों को स्वतन्त्रता मिली साथ ही करीब करीब सभी कांग्रेसी नेताओं को शासन में शामिल होने की पुकार आयी। दुर्गाभाई भी, जो इतने आदर्शवादी हैं राज-काज से दूर नहीं रह सके। शक्ति के भाके से हमारे मन में सोयी हुई सारी आकांक्षाएँ जाग उठीं। शासन को हमने राजनीति बना लिया। इधर हजारों देशसेवकों को, जो सालों तक देशसेवा के लिए अंग्रेजों के आगे अपना बलिदान करते रहे, हमने शासन और संगठन के बाहर ही छोड़ दिया। पुरानी सड़ी गली स्वार्थी नौकरशाही के सहारे हमारे जन कल्याण का काम शुरू हुआ। आज हम राजनीति में इस तरह फँस गये हैं कि छुटकारा पाने का अब कोई रास्ता नहीं रह गया है। हमारी तमाम कोशिशों के अन्दर एक बड़ी खाई रह गयी है। हम महसूस तो करते हैं पर उसे ढूँढ़ने और पाटने का न तो अवकाश है, न कोई उपाय ही दिखायी पड़ता है। जब दीया बुझने को होता है तब वह और भभककर जलना चाहता है। नये तेल के बिना वह नहीं जलेगा यह चेतना उसे नहीं होती।'

'तुमने बहुत कुछ किया, अब यह जिम्मेदारी छोड़ दो।'

'मैंने कुछ भी नहीं किया है, पद्मादेवी ! पाँच साल मुख्यमन्त्री रहने के बाद भी अब मैं साफ साफ देख रहा हूँ कि अभी करने को कितना-कुछ बाकी है। और जो कुछ किया भी है उसमें कितनी प्रवंचना और मिलावट है। यहाँ की मिट्टी में ही शायद ऐसा कुछ है जो पूरी सफलता को बीच में ही रोक देता है। हमारे विशेष विद्यालयों की ही बात ले लो। मैंने सोचा था कि सारे उदयाचल में ऐसे हजारों विद्यालय स्थापित करके दस साल के अन्दर ही निरक्षरता को बहुत हद तक खत्म कर दूँगा। हर गाँव में स्कूल खोला गया, शिक्षक रखे गये, काफी पैसे खर्च हुए, पर परिणाम यह है कि कहीं स्कूल है, तो शिक्षक नहीं, कहीं शिक्षक है तो विद्यार्थी नहीं। ऐसे भी बहुत से स्कूल हैं जिनका अस्तित्व सिर्फ सरकारी फाइलों और रिपोर्टों में ही है।"

'इन बुराइयों को दूर करने की क्षमता अब तुम्हारे अन्दर नहीं है। तुम बूढ़े हो रहे हो शक्ति कम हो गयी है यह सब अब छोड़ दो।'

'बार बार तुम ऐसा क्यों कह रही हो ?' कृष्ण द्वपायन की आवाज में अब थोड़ी गर्मी थी।

"क्योंकि मुझे डर लग रहा है।'

"किस बात का डर ?"

"इतने दिनों तक तुमने उदयाचल का नेतृत्व किया है। तुम्हारी कमजोरी और कोई भले न जाने, पर मैं जानती हूँ। तुमने अन्याय किये हैं। तुम्हारा बार बार पतन हुआ है। फिर भी अपने अन्दर असीमित शक्ति की वजह से तुम उठकर खड़े हो गये हो। अब लोग तुम्हें बदनाम करते हैं, शिकायत करते है, पर सब तुम्हारा आदर भी करते हैं। लोग जानते हैं कि तुम अगर दस अन्याय करते हो, तो नब्बे न्यायोचित काम भी करते हो। पिछले पाँच सालों में तुमने मुख्यमन्त्री के योग्य बहुत कुछ किया। उसके साथ, इन वर्षों में जितना तुम उदयाचल के लिए कर सके हो, उतना कोई नहीं कर सकता।'

"हो सकता है।'

'पर अब तुम्हारा पतन शुरू हो गया है।'

"पतन ?'

"हाँ, तुम सत्ता की लड़ाई में ऐसे जकड़ गये हो कि जीतने के लिए कोई भी कीमत दे सकते हो।'

'यह झूठी बात है।'

"यह झूठ नहीं है सो तुम्हें अच्छी तरह मालूम है। तुम शठता, छल चातुर्य, कूटनीति—इस लड़ाई के लिए सबका सहारा ले रहे हो। तुम ऐसे लोगों की मदद ले रहे हो, जो तुम्हारे सामने खड़े होने में भी डरते थे। तुम्हारे जीतने पर वे जो भी माँगेंगे वह तुम्हें देना ही पड़ेगा। सुदर्शन दुबे से लड़ने के लिए तुम भी उसी के स्तर पर उतर आये हो। पाँच साल पहले तुम अपने गौरव के कारण ही मुख्यमन्त्री पद के हकदार बने थे। दुर्गाभाईजी तक को भी तुम्हें नेता मान लेना पड़ा था, पर आज तुम वैसे नहीं रहे।"

कृष्ण द्वैपायन चुपचाप खाना खाते रहे। पद्मादेवी व्याकुल स्वर में बोलीं 'इसके अलावा तुमने अन्याय भी किया है। तुमने अपने बेटों के लिए जो जो किया है—खूब गुप्त ढंग से किया है—फिर भी मैं जान गयी हूँ।'

"माँ होने के नाते तुम्हें इस पर आपत्ति नहीं करनी चाहिए।

मैं सिर्फ माँ ही नहीं, तुम्हारी पत्नी भी हूँ। तुमने कई सालों से मेरे साथ सम्बन्ध तोड़ रखा है, फिर भी तुम्हारी पत्नी ही हूँ। अगर मेहनत से कमाकर तुम लड़कों के लिए कुछ छोड़ जाते, तो उसमें मुझे गौरव होता, पर इतने बड़े पद पर रहकर छिपे छिपे तुमने जो कुछ किया है, उसमें मेरा गौरव नहीं असम्मान है।

'अब रहने दो इतना लम्बा भाषण मत दो।

"मैं भाषण नहीं देना चाहती, तुमसे बस इतना ही कहना चाहती थी कि

अभी तुम्हारा मान, यश, मर्यादा काफी बची है। जिन्दगी-भर अथक मेहनत करके तुमने इन्हें कमाया है। अगर अब तुम अवकाश ले लो, तो सारा देश तुम्हारी जयजयकार करेगा। अगर ऐसा न करके फिर से मुख्यमन्त्री बनोगे, तो इतने सालों में तुमने जितना यश कमाया है, थोड़े ही सालों में वह खो दोगे। जिन लोगों के सहारे, जिन हथियारों से तुम जीतोगे, वे ही तुम्हें एकदम नीचे घसीट ले जायेंगे।

कृष्ण द्वैपायन का खाना खत्म हो गया। पानी पीकर वह सीधे बैठ गये। उनके चेहरे पर क्रोध का नामोनिशान नहीं था, बल्कि एक थकावट भरी उदासीनता ने उनके गोरे चेहरे की लाली को दबा दिया था।

उन्होंने कहा, "मैं भी यह सब न सोचता होऊँ, ऐसी बात नहीं है। पर अब कोई चारा नहीं रह गया है। हमने देश को चलाने की जिम्मेदारी ली है और यह जिम्मेदारी हमें मरते दम तक उठानी पड़ेगी। जो मेरे नेतृत्व को तोड़ना चाहते हैं, उन्हें तोड़े बिना मुझे संतोष नहीं होगा। मुझे सत्ता का नशा है, यह मैं मानता हूँ, पर यह जिद केवल नशे की वजह से नहीं है। मैं जानता हूँ कि उदयाचल में शासन की जिम्मेदारी उठा सकने लायक सिर्फ एक ही आदमी है—कृष्ण द्वैपायन कौशल। बाकी सब कमजोर, निकम्मे और कायर हैं। दुर्गाभाई देसाई तक। उनमें भी इतनी हिम्मत नहीं है कि वह दल के सामने आकर कह सकें कि मैं सारी पद्धति को तोड़कर कुछ करूँगा। छुआछूत से ग्रस्त विधवा की तरह वह अपने नाम का दामन बचाने में व्यस्त हैं। कृष्ण द्वैपायन कौशल की ओट में खड़े होकर वह शुद्ध और पवित्र बने हुए हैं। पद्मादेवी, जो वीर है, जिसमें योग्यता है, वही बड़े काम में कूदता है। ऐसे बहुत से अन्याय हैं, जो उसे स्पर्श भी नहीं कर पाते। महाभारत की कथा याद करो—भीम, अर्जुन, भीष्म—किसने नहीं अन्याय किया था? युधिष्ठिर तक को लड़ाई जीतने के लिए झूठ बोलना पड़ा था। जिस संग्राम में हम हैं, उसका एकमात्र उद्देश्य है विजय प्राप्त करना। जीत के बाद मुझे थकावट महसूस होगी, यह भी मैं जानता हूँ कि झूठ बोलकर और प्रपंच करके जीते गये युद्ध का मुझे मूल्य चुकाना पड़ेगा, पर अब पीछे हटने का रास्ता नहीं है।"

पद्मादेवी बड़ी देर तक चुप रही।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "अब मैं चलूँ, बहुत काम है।'

पद्मादेवी ने कहा, 'कल भोर में मैं काशी जा रही हूँ।"

'कहाँ?'

'काशी।'

'किसके साथ?'

'किसी को भी साथ ले लूँगी।'

"कब लौटोगी ?"

"कुछ दिन वहीं रहूँगी।'

"मकान खाली है ?"

"हाँ।'

'ठीक है, जाओ।"

"एक बात और है।'

'क्या ?'

'कमला को मैं कुछ जेवर और रुपये देना चाहती हूँ।"

'कौन कमला ?'

"तुम्हारा पुत्रवधू। दुर्गाप्रसाद की पत्नी।'

अबकी कृष्ण द्वपायन चुप ही रहे।

"शादी के बाद से उसे कुछ नही दिया गया। अपने मायके से मिले हुए जेवरो म से आधा मैं उसे देना चाहती हूँ। मेरे नाम जो रुपये हैं, उनमे से पाँच हजार रुपया भी।'

कृष्ण द्वपायन अब भी कुछ नही बोले।

"कमला ने कभी कुछ नही माँगा। वह लेगी भी कि नही, यह मुझे नही मालूम, पर मुझे देना ही होगा, और आज ही।'

"आज ही ?"

"हाँ आज रात को मैं उसके पास जा रही हूँ।'

एक दीघनि श्वास छोडकर कृष्ण द्वपायन न थकी आवाज मे कहा, "ठीक है।

उन्होने जान के लिए दरवाजे की ओर मुह फेर लिया, फिर वस ही बोले, 'एक काम करना।'

"क्या ?'

"दुर्गाप्रसाद की पत्नी को दने के लिए एक हार खरीदा था, वह रखा है ?'

हाँ।

"उनके एक लडकी है न ?'

"हाँ। बहुत सुन्दर है।

"उसके लिए वह हार लेती जाना।

चौदह

दुर्गाभाई देसाई का बँगला रतनपुर शहर के उत्तरी हिस्से में है। कभी विस्तृत सुरक्षित वनों के कारण वह हिस्सा बिल्कुल जनहीन रहा करता था। अंग्रेजों के जमाने में उस जंगल में गवर्नर शिकार खेलते थे। जंगल के चारों ओर अरावली पर्वत की एक श्रेणी है। शाल, सागवान आदि तरह-तरह के पेड़ों के बीच एक सँकरी पगडण्डी। अब जंगल का काफी हिस्सा साफ होकर बस्ती बन गया है। कृष्ण द्वैपायन कौशल के राज में नयी नयी कालोनियाँ तैयार हो गयी हैं। एक का नाम कौशलनगर है—यानी के० डी० नगर। कौशलनगर में मन्त्रियों और उच्च राजकर्मचारियों के लिए बँगले बने हैं। इन्हीं में से एक में दुर्गाभाई देसाई रहते हैं। उनका बँगला एक पहाड़ के ऊपर है। बीच की सड़क नीचे से ऊपर बँगले के फाटक तक चली गयी है। मोटर तो आसानी से चढ़ जाती है पर साइकलरिक्शा खींचकर वहाँ तक ले जाने में आदमी ठिठुरते जाड़े में भी पसीने-पसीने हो जाता है। बँगले के सामने फूलों का बगीचा है और दक्षिणी कोने में दुर्गाभाई का खास दफ्तर।

दोपहर को खाना खाने के बाद दुर्गाभाई कभी आराम नहीं करते। गांधीजी के शिष्यों के दैनिक जीवन की कर्मठता उनकी पुरानी आदत है। आज भी खाना खाकर वह बगीचे में चहलकदमी कर रहे थे। मन बेचैन था। दुर्गाभाई जिन्दगी में कई बार धर्मसंकट में पड़े हैं किन्तु आज का वह धर्मसंकट कुछ और किस्म का था। युवावस्था में सरकारी कालेज की अध्यापकी छोड़कर गांधीजी की पुकार पर जब स्वतन्त्रता संग्राम के अहिंसक सेनानी बने थे, तब भी संकट था, पर उस दिन भी निर्णय लेने में कोई कष्ट नहीं हुआ था, बल्कि उसमें और तृप्ति मिली थी गौरव मिला था।

स्वतन्त्रता के बाद फिर धर्मसंकट आ गया। वह मन से तो चाह रहे थे कि गांधीजी के शिष्य बनकर ही राज काज से बहुत दूर गाँवों में सेवा करेंगे, पर ऐसा नहीं हो पाया था। उदयाचल के कांग्रेसी कार्यकर्ताओं की माँग पत्नी मनोरमा की उच्चाकांक्षा, बड़े बेटियों का अनकहा क्षोभ—इन सबकी उपेक्षा करने का साहस उनमें था पर महात्माजी की आज्ञा तोड़ने का नहीं।

मन्त्री बने पाँच साल हो गये। इन पाँच सालों में ही देश के लोगों का जो परिचय दुर्गाभाई को मिला वर्षों की देश सेवा में उसका अंशमात्र भी नहीं मिला था। आज एकदम नया धर्मसंकट आ पड़ा है। दुर्गाभाई जानते हैं कि चाह तो वह उदयाचल के मुख्यमन्त्री बन सकते हैं। सोचा जाये तो मुख्यमन्त्री बनना उनकी जिम्मेदारी भी है उनका कर्तव्य है। कांग्रेस दल में जो टूटन शुरू हो गयी है जीत जाने पर भी कृष्ण द्वैपायन उसे फिर से नहीं जोड़ सकेंगे। पद्मादेवी

ने ठीक ही कहा था— जीत जाने पर भी कौशलजी की हार माननी पडेगी। पाँच साल पहले वह जसे मुख्यमन्त्री थे कल दलगत सघष मे जीन जाने पर भी वह फिर वसे मुख्यमन्त्री नही बन सकेंगे। जिन लोगो के सहारे उनकी जीत होगी, उन्हे इनाम देना पडेगा, जिसके फलस्वरूप वह अपनी मयादा और शक्ति का एक बहुत बडा हिस्सा खो देंगे। जो हारेंगे, वे छिपी हुई ईर्ष्या के कारण लगातार षडयन्त्र करते रहगे और तब तक ऐसा ही करते रहेगे, जब तक कि बदला लेकर वे पशाचिक उल्लास से झूम न उठें।'

कांग्रेसी राज को सिर्फ दुर्गाभाई ही इस सकट से बचा सकते हैं। कृष्ण द्वैपायन आज भी उनके लिए अपना ताज उतार देने को तयार हैं। कल भी उन्होंने कहा है—'दुर्गाभाईजी अगर आप मुख्यमन्त्री बनने को तयार हो जायें तो मैं खुशी खुशी अवकाश ले लूगा। कौशलजी का विरोधी दल भी दुर्गाभाई का नेतृत्व मानने को तयार है। आज सवेरे भी सुदशन दुवे ने टेलीफोन से उनसे मुख्यमन्त्री बनने का अनुरोध किया था। हाई कमान ने भी उनकी स्वीकृति माँगी है। बेटे-बेटियो को लेकर मनोरमा ने तो जेहाद ही बोल दिया है।

फिर भी दुर्गाभाई कुछ निणय नही कर पा रहे हैं।

आज सवेरे इसी बात को लेकर फिर मनोरमा के साथ झगडा हो गया। दुर्गाभाई नही जानते थे कि मनोरमा ने सुदशन दुवे के साथ राजनीतिक सम्बन्ध बना लिया है। उन्हे अप्रत्याशित रूप से पुत्री वसन्त से इस बात का पता चला।

रात को सोने से पहले बसन्त रोज उन्हें एक गिलास दूध पिला जाती है। कल भी लाई थी। दूध पीकर गिलास लौटा देने के बाद भी वह खडी ही रही, तो दुर्गाभाई ने पूछा, "कुछ कहना है ?

"आपकी आज्ञा हो तो।

'कहो।'

'कौशलजी क्या हार जायेंगे ?

'तू भी राजनीति कर रही है क्या ?

नही, सिफ जानना चाहती हूँ।'

'वह हारेंगे, ऐसा तो नही लगता।'

'तब तो '

'तब क्या ?

'तब तो आप ही हार जायेंगे, पिताजी !'

'मैं ? मैं तो हार माने हुए ही हूँ।'

'कौशलजी अगर जीत जायें तो आपकी हार हो जायेगी।

'क्यो मैं उनका प्रतिद्वन्द्वी तो हूँ नहीं ?

"नहीं है ?"

"नहीं तो।'

"माँ जो कह रही थी ?"

"क्या कह रही थी ?"

"माँ कह रही थी कि सुदर्शनजी आपको कौशलजी का प्रतिद्वन्द्वी बनाकर खड़ा करेंगे और आप राजी भी हो गये हैं।"

'तुम्हारी माँ को कैसे पता चला ?"

"कल सुदर्शनजी आये थे।'

"क्यों ? कब ?"

'दस बजे। माँ से बातें करने आये थे।'

"एकाएक तुम्हारी माँ से बात करने की क्या जरूरत पड़ गयी उन्हें ?

"एकाएक नहीं, पिताजी !"

"ओह, तो बातचीत पहले से चल रही है ?'

'माँ ने कहा, अब कौशलजी जरूर हारेंगे।'

'तुम्हारी माँ रानी बनना चाहती हैं। इसका उन्हें बहुत पुराना शौक है।'

"तो क्या आप उनके प्रतिद्वन्द्वी नहीं हैं पिताजी ?"

नहीं, मुझे राजा बनने का शौक नहीं है। मन्त्रि पद का ता मैं पचा ही नहीं पाया, अब ऊपर से राजा !'

मैं जा रही हूँ, पिताजी !'

"सुन, तू किसके पक्ष में है, जान सकता हूँ ?"

'आपके, पिताजी !

'तू चाहती है कि मैं मुख्यमन्त्री बनूं ?'

'नहीं पिताजी !

"क्यों ?

'मैं नहीं जानती।'

"अच्छा ! अब जा।"

दुर्गाभाई देसाई ने बसन्त के खूबसूरत चेहरे पर खुशी का प्रकाश देखा। इस खुशी का असली कारण वह नहीं समझ पाये थे। सोचा था, अन्ध पितृ भक्ति होगी। वह बसन्त का भय उसकी आशा आशंका कुछ भी नहीं ताड़ पाये। उन्हें यह नहीं मालूम था कि बसन्त ने कौशल परिवार के साथ अनुराग का एक पुल बाँध रखा है। मनोरमा को कौशल-परिवार कभी फूटी आँखों भी नहीं सुहाया। और अब तो उन लोगों का नाम भी नहीं सुनना चाहती थी। ऊपर से अगर कृष्ण द्वैपायन और दुर्गाभाई में प्रतिद्वन्द्विता हो गयी, तब तो बसन्त का यह पुल टूटकर ही रहेगा।

सवेरे नाश्ते के समय दुर्गाभाई ने कुछ कड़े स्वर में पत्नी से कहा 'तुम राजनीति करना चाहो तो करो, पर मुझे लेकर नहीं।'

क्या मतलब ?'

"सुदर्शन दुबे के साथ तुम्हारी क्या राजनीति चल रही है ?"

"तुम्हें किसने बताया ?"

किसी ने भी बताया हो।'

'जरूर के० डी० कौशल ने बताया होगा। साक्षात शैतान है। हर जगह उसके गुप्तचर घूम रहे हैं। मैं जानती थी कि मेरे पीछे भी लग होंगे।"

"कौशलजी ने नहीं कहा। पर वह बात छोड़ो, असली बात यह है कि तुम इन बातों में नाक न गड़ाओ।

"क्यों ? मैं भी उदयाचल की नागरिक हूँ। कांग्रेस का काम मैंने भी किया है। उदयाचल की हुकूमत के बारे में मुझे भी कुछ कहने का हक है। किसके मुख्यमन्त्री बनने से प्रान्त का भला होगा, इसके बारे में मैं भी बोल सकती हूँ, चाहूँ तो कुछ कर भी सकती हूँ।"

"सो तो है! पर मुख्यमन्त्री कोई भी बने, मैं नहीं बनने जा रहा हूँ।

'क्यों ? तुम क्यों नहीं बनोगे ? प्रान्त के लोग तुम्हें चाहते हैं, सब कांग्रेसी तुम्हें चाहते हैं हाई कमान तक तुम्हें चाहता है। इतने लोगों की माँग की उपेक्षा करने का तुम्हें क्या हक है ?'

"मुझे हक है। अपने विवेक पर चलने का हक है।'

'विवेक! असल में तुम कायर हो कायर! जिम्मेदारी लेने से तुम डरते हो। के० डी० कौशल के साये में बैठकर मन्त्री बनने से ज्यादा तुम कुछ सोच ही नहीं सकते।'

'हो सकता है।'

पर क्यों नहीं सोच सकते ? तुम्हारे जैसे नेता हिन्दुस्तान में कितने हैं ? तुम उदयाचल की बहुत भलाई कर सकते हो। कांग्रेस के अन्दर जो जहर फैल गया है तुम उसे बाहर निकाल सकते हो। के० डी० कौशल के राज में भयंकर भ्रष्टाचार फैल गया है। दुरात्माओं को बढ़ावा अत्याचार, भ्रष्टाचार भाई भतीजावाद—यह सब जो चल रहा है, तुम उसे खत्म कर सकते हो। तुम्हारे नेतृत्व में उदयाचल में रामराज्य स्थापित हो सकता है।'

कम-से-कम तुम तो रानी बन ही सकती हो।

'सब दिन से तुमने मुझे वंचित कर रखा है मेरी एक भी साध पूरी नहीं होने दी। अब बाकी दिनों में मैं तुम्हें सबसे ऊपर देखना चाहती हूँ। तुम जिस गौरव, सम्मान, मर्यादा के योग्य हो वह सब तुमने प्राप्त किया है मैं यही देखना चाहती हूँ। तुम मुझे अब भी वंचित ही रखोगे ? तुम्हारा यही विचार है ?'

दुर्गाभाई कडवा और भारी मन लेकर दफ्तर चले आये थे। जब औरतों के मन में उच्चाकांक्षा की आग भड़क उठती है, तब शायद सर्वनाश दूर नहीं रहता।

मनोरमा को देखकर उसकी बातें सुनकर उन्हें एक और नारी की याद आयी थी, जो अपने पति के सिर से ताज उतारने के लिए व्याकुल थी। जिस ताज के प्रति मनोरमा के मोह का वारापार नहीं है, उसी के प्रति उसके मन में अपार वैराग्य है। फिर भी एक मोह, दूसरे का वैराग्य दोनों एक ही समान कमजोर।

राजनीति में बहुत व्यस्त रहने के कारण कृष्ण द्वैपायन ने रोजमर्रे के राज काज का करीब करीब सारा भार दुर्गाभाई पर छोड दिया था। केयरटेकर सरकार हाथ में कोई बडा काम नहीं ले रही थी। नीति निर्णय स्थगित रखे जा रहे थे फिर भी एक प्रान्त की रोजमर्रे की साधारण समस्याएँ भी कम नहीं होतीं। साधारणतया मुख्यमन्त्री के जो काम होते हैं, वे सभी इन दिनों दुर्गाभाई कर रहे थे। कृष्ण द्वैपायन के इस अनुरोध की वह उपेक्षा नहीं कर पाये। इस अनुरोध को भी राजनीति का लेप लगाकर कृष्ण द्वैपायन ने दुर्गाभाई के लिए अनिवार्य बना दिया था। उन्होंने दुर्गाभाई को एक पत्र लिखा था— 'मन्त्रि मण्डल के इस्तीफे के बाद अनिवार्य रूप से अनिश्चितता आ गयी है। आपको मालूम होगा कि मैं मुख्यमन्त्री-पद के लिए दल का समर्थन चाहता हूँ। अगर अनिश्चितता के दिनों में शासन कार्य करूँ तो किसी किसी के मन में यह शक पैदा हो सकता है कि मैं शासन यन्त्र का अपने स्वार्थ के लिए उपयोग कर रहा हूँ। इसलिए मैं दो निर्णयों पर पहुँचा हूँ। पहला तो यह कि रोजमर्रा के शासन की अन्तरिम जिम्मेदारी आपसे लेने का अनुरोध करूँ और दूसरा यह कि किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर आप अगर स्वयं निर्णय न लेना चाहें तो उसे कैबिनेट मीटिंग में लायें अवश्य। आप अगर चाहें या जरूरत पड़े तो मुझसे मुख्यमन्त्री के नाते हमेशा सलाह ले सकते हैं। अगर ऐसा न भी करें तो मुझे कोई आपत्ति न होगी क्योंकि उदयाचल का कल्याण आप पर छोड दिया जाये तो मेरी चिन्ता का कोई कारण नहीं रहेगा। आशा करता हूँ कि आप मेरा यह अनुरोध स्वीकार कर लेंगे।'

बाद में यह पत्र हिन्दुस्तान के सारे अखबारों में प्रकाशित हुआ था।

दुर्गाभाई ने रोज के सरकारी कामों की जिम्मेदारी लेने में कोई आपत्ति नहीं की। मन्त्रिमण्डल के फिर से गठन के विषय में कृष्ण द्वैपायन शुरू से ही उनका आदर सम्मान करते रहे, इससे वह बहुत खुश थे। दुर्गाभाई के चरित्र में जो जरा-सी कमजोरी थी, उसे कृष्ण द्वैपायन जितना ज्यादा जानते थे, खुद

दुर्गाभाई उसे उतना ही कम जानते थे। कृष्ण द्वैपायन को मालूम था कि दुर्गाभाइ के कठोर आदर्शवाद और सहनशीलता के पीछे उनका तीखा आत्माभिमान भी है। कमजोर और दुष्ट की चापलूसी को दुर्गाभाई समझ लेते थे, पर योग्य व्यक्ति से प्रशसा पान का उनमे बहुत मोह था।

आज सवेरे पूरे समय तक दुगाभाई सरकारी कामा म व्यस्त रहे। इस बीच कई बार राजनीतिक सघप उन्हें छू गया। एक बार सुदशन दुवे ने टेलीफोन किया था। दुर्गाभाई से कृष्ण द्वैपायन के खिलाफ खडा होन क लिए फिर से अनुरोध किया गया। दुर्गाभाई ने इस अनुरोध को स्वीकार करन मे असमथता बताकर टेलीफोन ब द कर दिया था। दूसरा टेलीफोन एक अप्रत्याशित व्यक्ति का आया।

हरिशकर त्रिपाठी।

नमस्त, दुगाभाईजी ! मैं त्रिपाठी बोल रहा हूँ हरिशकर त्रिपाठी।'

नमस्ते कहिए ?

'बहुत व्यस्त हैं क्या ?'

'नही व्यस्त कहाँ हू ?'

'आपके पास मैंने एक फाइल भेजी है हि दुस्तान आटोमोबाइल कम्पनी के नये कारखान के बारे में।

फाइल मैंन देखी है।

'इस बारे मे कबिनेट म एक बार चर्चा हो चुकी है। रतनपुर के कई व्यापारियो ने मिलकर यह कम्पना बनायी है। सरकारी ऋण देने की बात सरकार न मान ली थी। अब बाकी काम अगर हो जाये तो ठीक रहेगा।'

'पर त्रिपाठीजी, इसके बारे म तो अखबारों म कई शिकायतें छपी हैं ?'

'झूठी शिकायतें हैं।

हो सकता है, मेरी राय म इस विषय को अभी स्थगित रखा जाये। नया कैबिनट इसके बार मे फिर स सोचकर अपना निणय लेगा।

'पर दुर्गाभाइजी, मैं तो उनस वादा कर चुका हूँ

उन वादो की क्या कीमत है, त्रिपाठीजी ? कल हम या आप मन्त्रिमण्डल मे रहग कि नही इसका भी तो निश्चय नही है। शायद आप ही मुख्यमन्त्री बनेंग। यह विषय थोडे दिनों तक स्थगित रखने म कोई हज नही है। कम से कम मेरी राय तो यही है। हाँ, आप चाहे तो कौशलजी से कह सकते हैं।'

'कौशलजी से कहने से कोई फायदा नही। जब आपने निणय ले ही लिया है तो फिर क्या किया जाय !

'माफ कीजिए।

"नहीं नहीं, आप यह क्या कह रह हैं ? ता फिर, हाल चाल कैसा दिख रहा है ?"

"किसका हाल-चाल ?'

'यही मन्त्रिमण्डल का।

"मैं क्या देख रहा हूँ ? देख ता आप लोग रहे हैं और दिखा भी रहे हैं।"

'आप क्या सचमुच उदयाचल का नतृत्व लेने को तैयार नहीं हैं ?

'तयार या न तैयार होने की बात नहीं है त्रिपाठीजी ! मैं उसके योग्य नहीं हू।"

'तब फिर कौशलजी को हराने का कोई उपाय नहीं है।'

"मैं तो ऐसा समझता हूँ, त्रिपाठीजी, कि कौशलजी हारने योग्य हैं भी नहीं।'

'अगर आप हमारा साथ देते तो हम उन्हें हरा देते।'

'उसमे आप लोगो की जीत होती, मेरी नहीं।'

"आप आखिर तक कौशलजी का ही समर्थन करेंगे ?"

'नहीं, मैं किसी का समर्थन नहीं करूंगा।"

"मेरा एक अनुरोध है दुर्गाभाईजी ! '

कहिए।

मैं आपके पास किसी को भेजना चाहता हूँ आप उनसे मुलाकात करेंगे ?'

'किससे ?'

एक महिला से।'

"महिला ? कौन है ? '

'वह एक प्रसिद्ध मजदूर नेत्री हैं। उदयाचल की आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस की जनरल सेक्रेटरी।

'ओह ! सरोजिनी सहाय ?

'जी।'

'मुझसे उनका क्या काम है ?

वह आपसे भेंट करना चाहती हैं।"

इन दिनों मेरे पास समय बहुत कम है। वह किस विषय में भेंट करना चाहती हैं, अगर बता सकें तो अच्छा रहेगा।

'दुर्गाभाईजी, सरोजिनी सहाय उदयाचल की राजनीति मे धीरे धीरे बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका लेती जायेंगी, यह मेरी भविष्यवाणी नहीं है, उनसे बातें कर लेने के बाद आप भी मेरे इस कथन की सच्चाई समझ लेंगे।'

दुर्गाभाई थोडी देर चुपचाप कुछ सोचते रहे। इस रमणी को परसों रात उन्होंने एक बार देखा था। बातें नहीं हुई थी। इसके बारे में इधर उधर की

डर भी अफवाह सुनने को मिली है। एक बार बात कर लें तो बुरा ही क्या है ?

'ठीक है उन्हें भेज दीजिएगा।

किस वक्त ?'

बस किसी समय।'

कल सरोजिनी कानपुर जायेंगी। अगर आज हो सके, तो ठीक रहेगा।"

"ठीक है शाम को चार बजे भेज दीजिएगा।'

खाने के बाद दुर्गाभाई बगीचे में चहलकदमी कर रहे थे। मन में शांति नहीं थी। सब कुछ होने के बावजूद उसके बीच में कहीं एक शून्यता थी। असल में हिन्दुस्तान के इतिहास में भी यही चीज है। दुर्गाभाई इतिहास के विद्यार्थी नहीं हैं पर वर्षों तक जेल के अन्दर रहते हुए भी और उसके बाहर भी उन्होंने काफी अध्ययन किया है। हिन्दुस्तान का कोई क्रमिक इतिहास है ही नहीं। सम्राटों की कहानी की जगमगाहट के अन्दर प्रजा को पहचानना ही नहीं जा सकता। बड़े बड़े चमकते हुए दीपों की माला के नीचे भारत का असली इतिहास अनन्तप्रवाहित गहरी अन्धकारमय स्थिति में टिमटिमाता है। हमारी चिन्ता धारा भी ऐसी ही है। कालातीत विशालता है पर वस्तुवादी चिंतन का नामोनिशान नहीं। हम वास्तविकता को नहीं देखना चाहते। उससे पलायन करने की प्रवृत्ति हमारी नस नस में भरी है। अभी हमारी जबान पर जितनी आसानी से नीति की मीठी बोली आती है उतनी आसानी से वास्तव में हम नीति को निबाह नहीं पाते। हम विराट का स्वप्न देखना पसन्द करते हैं। बड़ों की महानता हम सम्मोहित कर लेती है। पर छोटे छोटे कामों को अच्छी तरह पूरा करने का न तो हममें धैर्य है और न आग्रह। किसी भी बात के प्रति हमारे मन में गहरी आन्तरिक आस्था नहीं है। आधी सफलता से ही हम तृप्त हो जाते हैं और व्यर्थ हो जाने पर भी किसी-न-किसी निर्लज्ज व्याख्या से हम आसानी से संतुष्ट हो जाते हैं।

पाँच साल से मन्त्री रहते हुए दुर्गाभाई ने बार बार यही सब देखा है। इन पाँच सालों में वह कहीं भी कुछ पूरा नहीं कर पाये। नये नये मेडिकल कालेज बने अस्पताल बने, फिर भी सैकड़ों मरीज अभी बिना इलाज के मरते हैं। डाक्टर कामचोर हैं। मरीजों के लिए उनके मन में कोई हमदर्दी नहीं है। शिक्षकों का वेतन बढ़ाया गया पर शिक्षा में कोई उन्नति नहीं दिखायी दी। कृष्ण द्वैपायन के इतनी लगन से बनाये हुए विद्यालय उनकी निष्फल चेष्टा के करुण साक्षी बनकर खड़े हैं। बाँध तैयार हुए पर उनमें दरारें हैं। नयी सड़कें साल भर में ही गड्ढों से बदसूरत हो जाती हैं। ग्वाला दूध में लगातार पानी

मिलाता रहता है। व्यापारी खाद्यवस्तुओं में गन्दी मिलावट करते रहते हैं।

दुर्गाभाई की धारणा बन चुकी है कि हिन्दुस्तान में असली कमी चरित्र की है। चार हजार सालों से लगातार जिन्दा रहने के फलस्वरूप जाति के चरित्र में घुन लग गया है। फिर भी स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय घर घर में चरित्र का आश्चर्यजनक विकास उन्होंने खुद अपनी आँखों से देखा था। इतनी बड़ी रोशनी इतनी जल्दी कैसे बुझ गयी? इस व्यथ प्रश्न का उत्तर ढूढ़ने में दुर्गाभाई एक बार फिर निराश हुए। कहीं एक बहुत बड़ी प्रवचना छिपी है। स्वतन्त्रता मिलते ही हम सब इतनी आसानी से इतने लालची कैसे बन गये? आज जो मन्त्रिपद के लिए ऐसी कुत्सित लड़ाई चल रही है हमारे बीच एकाध भी ऐसा क्यों नहीं है, जो बिना किसी सकोच के अधिकार त्याग देने को तैयार हो? मैं भी सब छोड़कर बाकी जीवन गाँव में जाकर जनता की सेवा में क्यों नहीं बिताता? यह भयकर मोह किसलिए है? यह अटूट नशा किस सुरा का है?

दुर्गाभाई के सिर में जाने कैसा चक्कर आने लगा। तबियत कुछ खराब मालूम हुई। बगीचे में कुछ कुर्सियाँ थी, एक पर वह बैठ गये। काम के बोझ और चिन्ता में शरीर और मन खिन्न हो गये हैं।

मनोरमा का भी क्या कसूर है? वह हमेशा से सुख, इज्जत, मान, विलासिता, वैभव माँगती रही है। अमीर घर के अच्छे लड़के के साथ उसका ब्याह हुआ था। जीवन के हर प्रकार के भोग विलास का निश्चित अधिकार लेकर उसने दाम्पत्य जीवन शुरू किया था, पर सब उलटा हो गया। मैं स्वतन्त्रता सग्राम में उलझ गया और न चाहते हुए भी उसके आत्म त्याग का जीवन शुरू हो गया। गरीबी, सयम अभाव की जिन्दगी वह कभी नहीं चाहती थी और मैं वर्षों उस पर इसी का बोझ बढ़ाता रहा। दूसरा मुल्क होता तो मनोरमा पति को त्यागकर अपनी मनपसन्द जिन्दगी चुन लेती पर भारतवर्ष के सनातन हिन्दू समाज में ऐसा करना सम्भव नहीं था। उसे सिर्फ मेरे कड़वे जीवन की साथिन ही नहीं बनना पड़ा, बल्कि मेरी सन्तानों को भी जन्म देना पड़ा जिनमें से एक बसन्त को छोड़ शेष सबको उसने अपनी अतृप्त भूख की तप्त जलन का घूट पिलाकर ही पाला पोसा है।

पिछले पाँच सालों में मनोरमा ने काफी हद तक अपनी पुरानी भूख मिटाने की कोशिश की है पर ऐसा हो नहीं सका। मन्त्री के वेतन के अलावा कोई ऊपरी पैसा उसके हाथ में नहीं पहुचा। दूसरे मन्त्रियों ने सम्पत्ति इकट्ठी कर ली है रुपये जमा किये मकान बनवाये, उनके लड़के बड़ी-बड़ी नौकरियों पर गये व्यापार से काफी पैसा कमा रहे हैं पर दुर्गाभाई देसाई ज्यों के त्यों रह गये हैं। उनका अपना घर द्वार भी नहीं है। लड़कों के लिए भी वह कुछ नहीं कर पाये। इन पाँच सालों में शायद एक हफ्ता भी उनका मनोरमा के साथ

बिना झगडे के नही बीता होगा। अब उस पर उदयाचल की रानी बनने की धुन सवार हुई है। मुझे मुख्यमन्त्री के सिंहासन पर बठाकर वह अपनी जिन्दगी-भर की लालसा पूरी करेगी। पर उसे मालूम नही है समझने की क्षमता भी नही है कि हाथ म आते हुए भी इस ताज को अपने सिर पहनने के लिए मैं क्यों तयार नही हूँ। इस पके हुए जीवन के अन्तिम दिनो म इतने वर्षों से बचाये हुए एकमात्र सम्बल को मैं किसी भी लालच म पडकर खोने के लिए तयार नही हूँ।

ढालू रास्ता बगीचे से नीचे काफी दूर तक दिखायी पडता है। दुर्गाभाई ने देखा कि एक आदमी धीरे धीरे ऊपर चला आ रहा है। यहाँ आनेवाले अधिकांश आगन्तुक मोटर या साइकलरिक्शा पर आते हैं। यूँ तो कुली मजदूर, नौकर चाकर पदल आते ही रहते हैं। चपरासी साइकल पर आते हैं, जहाँ तक हो सके चलाकर ही आते हैं नही तो फिर साइकल को खींचकर लाते हैं। बगीचे में बठे बैठे दुर्गाभाई ने कई बार देखा है कि रिक्शा खींचनेवाला पसीन-पसीने हो रहा है, पर सवारी रिक्शे से उतरकर उसका बोझ हल्का करना जरूरी नहीं समझती। आज जो आदमी पैदल चलते हुए पहाडी रास्ते पर ऊपर आ रहा है वह किसी अच्छे घर का ही है। कमीज-पायजामा और जवाहर जकट या सदरी पहने हुए है। सिर झुकाये हुए एक एक कदम बढा आ रहा है। अपराह्न वेला है। धूप सारी सडक पर बिखरी हुई है। दूर पर रास्ते का किनारा आसमान से छू गया है। नीले आकाश के पर्दे के सामने फैले टेढ़े मेढ़े चढ़ाईवाले रास्ते पर उस आदमी को देखकर दुर्गाभाई के मन मे खुशी हुई। मन म आया कि शायद इन्सान ऐसे ही जिन्दगी के रास्ते पर ऊपर चढ़ता है, ऐसी ही खुशी भरी महनत से वह आगे चलता है और उसके पीछे नीले आकाश की असीम पृष्ठभूमि ऐसी ही दिखती होगी।

चढाई पूरी करने के बाद वह आदमी थककर थोडा रुक गया। बगले के गेट तब भी आधा फर्लांग दूरी पर था। दो चार मिनट सुस्ताकर फिर आगे बढ़ने लगा। एकाएक रुककर, सिर उठाकर किसी पेड की टहनी पर देखा, शायद कोई चिडिया गा रही थी। वह थोडी देर रुका रहा फिर चला और फिर रुक गया। एक छोटा-सा, करीब करीब नगा लडका जा रहा था। उसने उस लडके को रोककर कुछ कहा और जेब से कुछ निकालकर उसके हाथ पर रख दिया। पैसा ही होगा। इसके बाद वह बड बडे कदमो से आगे बढ़ने लगा। एकदम फाटक के पास तक आ गया। फाटक खोलकर वह भीतर आ ही रहा था कि बगीचे में कुर्सी पर ढीले-ढाले से बठे दुर्गाभाई पर नजर पड गयी। थोडा अप्रस्तुत सा होकर वह ठिठक गया।

"दुर्गाभाई ने कहा, 'चन्द्रप्रमाद, आओ आओ।"

फाटक बन्द करके चन्द्रप्रमाद आगे बढा, आकर दुर्गाभाई के घुटने छूकर उसने प्रणाम किया।

"आज कैसे आ गये? पैदल आये हो?"

"मैं तो पैदल ही आता हूँ, चाचाजी।"

'ऐसी बात है?" दुर्गाभाई हँस पडे—"मुख्यमन्त्री के बेटे पैदल चलते हैं, यह तो बहुत बडी खबर है।"

"चाचाजी, मैं पैदल भी चलता हूँ और पर लगाकर उडता भी हूँ।"

"सही बात है। तुम तो पाइलट हो।'

"आपकी तबियत ठीक है न, चाचाजी? बहुत दिनो के बाद ऐसे अकेले मे मिले हैं।"

"तबियत की बात अब इस उम्र मे कहना-सुनना बेकार है। थोडी देर पहले सिर मे चक्कर आ गया था, इसलिए बैठ गया।

"आप जैसों के सिर हैं चाचाजी, इसीलिए उसमें बस थोडा बहुत चक्कर आता है। अगर मैं मन्त्री होता तो मेरा सिर दिन रात भनभनाता घूमता।"

'तुम जिनके बेटे हो, उनका सिर कभी नहीं चकराता।'

"पिताजी के बारे मे कह रहे हैं, चाचाजी?'

'मैं उदयाचल के मुख्यमन्त्री के बारे मे कह रहा हूँ।"

"उन्ह तो मैं नही पहचानता चाचाजी! आप आप लोग ही उन्हें जानते पहचानते हैं।"

'तुम उन्हे नहीं जानते?"

"नहीं। हाँ, मैं थोडा-बहुत अपने पिताजी को जरूर पहचानता हूँ। और उनके सिर को लेकर सिर खपाने लायक सिर ईश्वर ने मुझे नही दिया है।"

'ऐसी बात है! बैठो बैठो तुम्हारे साथ बातें करना अच्छा लगता है। हँसी-मजाकवाली हल्की बातें तो अब सुनने को ही नहीं मिलती।"

"क्या मन्त्री हँसते नहीं चाचाजी?"

"जरूर हँसते हैं। यह देखो, मैं तुम्हारी बात सुनकर हँस रहा हूँ।"

"यही बात मैं भी अपने मित्रो से कहता हूँ। मन्त्री सिर्फ हँसते ही नही, हँसाते भी हैं।'

"किसे हँसाते हैं?"

"कसूर माफ हो, चाचाजी!"

"ठीक है!" दुर्गाभाई फिर हँस पडे, बोले, "तुम सब हम पर हँसते हो न?"

"नही, चाचाजी, कभी नही। आप हम लोगों के पूज्य हैं।

"सवनाश ! तुम लोगो का भी ।"

"चाचाजी, देवताओं की दुदशा देखिए ! चोर भी अगर पूज, तो उसकी पूजा नही ठुकरा सकत । अब आप मुझे जितना भी अयोग्य समझें, पूज्य न बनने का हक आपको नही है ।"

'अच्छा अच्छा, मान लिया । अब बताओ, कसा चल रहा है ? '

' मेरा ? मेरा जसे सब दिन से चल रहा है—पदल !"

' और हम लोगो का ?'

"आंधी की रफ्तार से ।"

' ऐसी बात है ? मुझे तो कोई आंधी नही दिखायी दे रही है ।'

"आंधी तो है ही, चाचाजी ! हां, वनस्पतियां नही उखड जायेंगी ।'

"ठीक कह रहे हो !"

कृष्ण द्वैपायन कौशल को उनके विरोधी नही पहचानते । वह टूट जायेंगे, पर झुकेंगे नही ।

' अबकी बार टूटेंगे नही, लगता ऐसा ही है ।"

"आपका और मेरा एक ही अन्दाज है, चाचाजी !

"फिर भी मैं समझता हूँ कि कौशलजी ठीक रास्ते पर नही जा रहे हैं ।

' क्यो ?'

' अगर मैं उनकी जगह पर होता तो मन्त्रिमण्डल के इस्तीफे के बाद हाई कमान से कह देता कि बिल्कुल अपना मनपसन्द मन्त्रिमण्डल बनाने की अनुमति दो, नही तो ऐसा मुख्यमन्त्री बनना मैं नही पसन्द करता ।'

यह सलाह आपने पिताजी को दी है चाचाजी ?'

' दी थी । जब काग्रेस अध्यक्ष रतनपुर आये थे तभी दी थी ।

'उन्होंने क्या कहा ?"

' जो सब दिन से मुझसे कहते आ रह हैं । मेरे आदशवाद का वह आदर करते हैं, पर मुझे राजनीति आती नही ।

'आपके साथ इस बारे म मेरा मेल है, चाचाजी ! राजनीति मैं भी बिल्कुल नहीं समझता ।

"तुम्हारे भाई खूब समझते हैं ।"

"वे बुद्धिमान हैं, मेरे भेजे मे उस चीज की कुछ कमी है ।

' तुम्हारी माताजी कैसी हैं चन्द्रप्रसाद ?"

' ठीक हैं चाचाजी ! कल सवेरे काशी जा रही हैं ।

"काशी ? अचानक ?'

"आज दोपहर को उन्होंने पिताजी से इस्तीफा दने का अनुरोध किया था ।'

"किस चीज स इस्तीफा ?"

'फिर से मुख्यमन्त्री न बनने के लिए। चुनाव में जीतकर भी मुख्यमन्त्री-पद किसी और को देने के लिए।'

"अच्छा!"

"पिताजी राजी नहीं हुए।"

"इसलिए भाभीजी काशी जा रही हैं?'

"हाँ, चाचाजी!"

'तुम्हारी माताजी महान हैं, चन्द्रप्रसाद!"

'मैं भी ऐसा ही सोचता हूँ, चाचाजी!"

'साथ में कौन जा रहा है?"

'घर में तो बस मैं ही बेकार हूँ, इसलिए मैं ही जा रहा हूँ।"

"तुमने ठीक किया। बेटे जैसा काम किया है।'

माँ ने आपके लिए एक पत्र दिया है।'

"पत्र? मुझे? दो।'

'मैं अन्दर जा सकता हूँ, चाचाजी!"

"बेशक, जाओ, अन्दर जाओ। तुम्हारी चाची शायद सो रही हैं, पर बसन्त है, जाओ।

चन्द्रप्रसाद ने अन्दर की ओर पैर बढ़ाया, फिर एकाएक रुककर बोला, "चाचाजी, एक आप ही ऐसे मन्त्री हैं जिनके दरवाजे पर पुलिस का पहरा नहीं है। यानी आप जेल के बंदी नहीं हैं। आप मुक्त पुरुष हैं। हमारे-जैसा बेकार निकम्मा भी बिना किसी रोक-टोक के आपके घर में घुस सकता है और जब चाहे घर से बाहर भी जा सकता है।"

दुर्गाभाई देसाई ने मुस्कराकर एक बार उसकी ओर देखा, फिर पद्मादेवी की चिट्ठी पढ़ने लगे।

मनोरमा घर के एक नौकर को साथ ले गाड़ी पर बैठी है, उन्हें यह नहीं दिखायी पड़ा था। पर जब गाड़ी स्टार्ट हुई तो वह चौंक पड़े। गाड़ी फाटक से बाहर चली गयी। दुर्गाभाई यह नहीं जान पाये कि मनोरमा कहाँ गयी है, जानने की इच्छा भी नहीं हुई।

पत्र संक्षिप्त ही था। पढ़ने में सिर्फ दो मिनट लगे। पद्मादेवी ने लिखा था— माननीय दुर्गाभाईजी, चन्द्रप्रसाद को लेकर मैं कल काशी जा रही हूँ। कुछ दिन वहीं रहने की इच्छा है। ऐसा भी हो सकता है कि मैं फिर न लौटूँ। पवित्र काशी धाम में मृत्यु हो गयी तो विश्वनाथ के चरणों में स्थान मिलेगा। जाने से पहले मैंने उनसे अन्तिम अनुरोध किया था, पर वह रुक नहीं सके। मैं उन्हें ईश्वर के सहारे छोड़ रही हूँ और कुछ आपके भी। देखिएगा, इतने महान पुरुष कहीं बहुत नीचे न उतर जायें।

"आपसे एक और अनुरोध है। मेरे बेटों में से दुर्गाप्रसाद और चन्द्रप्रसाद में ही मनुष्यत्व है। दुर्गाप्रसाद ने दूसरी राह चुनी है। चन्द्रप्रसाद को विमान विभाग में काम मिल गया है। पिता की सहायता के बिना वह सिर्फ अपनी योग्यता के बल पर अपने पैरों पर खड़े होने की कोशिश कर रहा है। वह अगर कोई प्रार्थना लेकर आपकी सेवा में उपस्थित हो और आप उसे बहुत अयोग्य न समझें तो कृपया उसे निराश मत कीजिएगा।"

पन्द्रह

रतनपुर शहर में कलकत्ता के चौरंगी, बम्बई के चचगेट, नयी दिल्ली के कनाट प्लेस जैसा कोई सहज परिचय-केन्द्र नहीं है। शहर के जिस हिस्से में ऐतिहासिक मराठा किला है, उससे मील भर दूर पुराना बाजार है। अब एक और बाजार बना है। यही शहर का फैशनपरस्त बाजार है। मानो यहाँ की दुकानों में चका-चौंध है। यहाँ की मुख्य सड़क का नाम कभी सदर रोड था। स्वतन्त्रता के बाद उसका नाम लिबर्टी रोड हो गया। इस सड़क पर लिबर्टी सिनेमा भी है। सिनेमा की दाहिनी ओर से कुछ आगे बढ़ने पर दुकानों की कतार है। इन्हीं दुकानों के सामने से एक और गली अन्दर की ओर गयी है। इसी गली के किनारे पर मार्निंग टाइम्स का दफ्तर और प्रेस है।

मकान बहुत मामूली है। एकमंजिला मकान। खपरैल है। जगह जगह पर फर्श टूटकर बदसूरत मिट्टी दिखायी पड़ने लगी है। कभी वह मकान माध्यमिक विद्यालय था। बैरक की तरह कमरों की कतार। पहले कमरे में विज्ञापनों के मैनेजर, एकाउंटेंट और सर्कुलेशन मैनेजर साथ साथ बैठते हैं। दूसरा कमरा सम्पादक सुभाष चट्टोपाध्याय का है। तीसरे कमरे में दो सहकारी सम्पादक और सम्पादक के निजी सचिव। चौथा कमरा रिपोर्टरों का। पाँचवाँ कमरा सबसे बड़ा है। यह सब एडिटरों का दफ्तर है। लगातार टेलीप्रिंटर की आवाज होती रहती है। उसके बाद एक छोटे से अंधेरे कमरे से होकर पीछे प्रेस की ओर जाया जाता है। प्रेस में एक लाइनो मशीन और हाथ कम्पोजिंग दोनों के केस हैं। 'मार्निंग टाइम्स' लाइनो और हाथ की कम्पोजिंग दोनों के सहारे छापा जाता है। रोटरी नहीं है। दो बड़ी इलेक्ट्रिक फ्लैट मशीनों पर अखबार की छपाई की व्यवस्था है। मुख्यमन्त्री का अखबार होने पर भी मार्निंग टाइम्स की खपत कुल सात हजार है। रोटरी की जरूरत नहीं है।

अखबार चलाने का कृष्ण द्वपायन ने जो प्रबन्ध किया था, उसमें त्रुटि थी। कानूनन 'मानिंग टाइम्स' का मालिक मातकाप्रसाद कौशल है। मनेजिंग डाइरेक्टर के नाते अखबार मे रोज उसका नाम निकलता है। मनेजरो के कमरे मे उसके लिए भी कुर्सी मेज है। पर असल मे मातकाप्रसाद अखबार के लिए कुछ नहा करता। सम्पादकीय विभाग मे हस्तक्षेप करने की योग्यता उसमे नहीं है और न लिखने के व्यापार से उसका कोई ताल्लुक ही है। महीने मे एक दो दिन आता है चटर्जी के कमरे म बैठकर गप्पें लडाता है, चाय पीता है, फिर मैनेजरो के साथ दो चार बातें करके चला जाता है। रुपय की सख्त जरूरत होने पर कभी कभी वह यहा दिखायी देता है। मैनेजिंग एडीटर होने के नाते उसे दो सौ रुपया तन महीना तनख्वाह दने की इजाजत कृष्ण द्वपायन ने द रखी है। पर किसी भी महीने वह पूरा रुपया नही लेता।

सम्पादकीय जिम्मेदारी पूरी की पूरी सुभाष चट्टोपाध्याय पर है। कृष्ण द्वपायन न उसे अखबार चलाने की पूरी छूट दे रखी है। हफ्ते म एक दिन सुभाष उनसे भेंट करता है। अखबार के विषय मे विचार विमर्श होना है। कृष्ण द्वपायन, उनके सामने प्रान्तीय राजनीति की व्याख्या कर देते हैं। किन किन विषयो पर किस तरह म सम्पादकीय लिखना होगा, इसका निर्देश भी दे देते हैं। कोई महत्त्वपूर्ण खबर हो तो वह सुभाष को बुलवा लेते हैं। एक रिपोर्टर, रामच द्र पण्डित, हमेशा मुख्यमन्त्री से सम्बन्ध बनाये रखता है। कृष्ण द्वपायन की निर्दिष्ट नीति के दायरे के अन्दर अखबार को चलाने की जिम्मेदारी सम्पादक की है। सम्पादकीय विभाग म नियुक्ति, वेतन मे वृद्धि आदि विषयो म भी सुभाष चट्टोपाध्याय की ही बात मानी जाती है।

सम्पादन के अतिरिक्त अखबार चलान की असली जिम्मेदारी जगमोहन अवस्थी की है। न्यूजप्रिंट खरीदना, व्यापारियो के साथ सम्पक बनाये रखना, विज्ञापन आदि की व्यवस्था करना और छापखाने की तमाम समस्याओ को सुलझाना यह सब अवस्थी को ही करना पडता है। यह अजीब तरह का कमठ आदमी है। रोज एक बार 'मानिंग टाइम्स' के दफ्तर म आता है। उसके बठने का कोई निर्दिष्ट स्थान नही है। कमरे के अन्दर आते ही दोनो मनेजर उसके लिए कुर्सी खाली कर देते हैं। कभी वह विज्ञापन मनेजर और कभी सरकुलेशन मनेजर की कुर्सी पर बठ जाता है। वहाँ का काम खत्म करके वह सीधे प्रेस मे चला जाता है। छापेखाने से निकलकर जाते समय सुभाष चट्टोपाध्याय के कमरे के दरवाजे पर खडे होकर पूछता है, "एडीटर साहब कोई सेवा?" सुभाष को कुछ कहना होता है तो वह अन्दर आकर कुर्सी पर बठ जाता है। समस्याओं को सुलझाने में अवस्थी जादूगर है। लाइनो मशीन की मरम्मत जरूरी है, बस बात की बात में मिस्त्री हाजिर। तीन दिन के लायक और न्यूजप्रिंट है तो तीसरे

ही दिन नयी सप्लाई पहुच जाती है। किसी सब एडीटर को कुछ एडवास चाहिए और कैशियर के पास रुपया नहीं है, तो अवस्थी मनीबग से रुपया निकालकर दे देता है। और यदि कभी कोई ऐसी समस्या आ जाती है, जो उसके सुलझाने के बाहर है, तो कहता है—"कौशलजी से बात करके आपको कल बताऊँगा। और वह 'कल' शायद ही कभी परसो पर टलता हो।

अवस्थी जैसे कमठ, विश्वस्त और अनुगत सेवक बहुत नही मिलते। कृष्ण द्वपायन कौशल के अलावा मानो उसकी जिन्दगी मे और कुछ है ही नही। उसकी जबान मे किसी ने कृष्ण द्वैपायन के लिए कभी कोई शिकायत नही सुनी। उनकी तारीफ करने की जरूरत भी जगमोहन अवस्थी को नही है। यानी कृष्ण द्वपायन से सम्ब ध म उसके मन मे ही कभी कोई प्रश्न ही नही आता। प्रश्न-हीन, निरुत्तर, अनुगत सेवा करो म ही वह सन्तुष्ट है।

जगमोहन अवस्थी के जो स्त्री, पुत्र परिवार घर-बार, दुख सुख, आशा-निराशा आदि हैं, यह बात मात्र एक कृष्ण द्वपायन कौशल के अला ा शायद और किसीके मन मे कभी आती ही नहीं। सुभाष चट्टोपाध्याय कभी भी उससे व्यक्तिगत प्रश्न कर बैठता है, पर उसे निरुत्तर देखकर चुप रह जाता है। अपने बारे में कुछ कहने के लिए या अनुभव करने लायक शायद अवस्थी के पास कुछ है ही नहीं। तडके ही वह कृष्ण द्वैपायन के दरवाजे पर हाजिर हो जाता है। वह सवेरे जब बिस्तर छोडकर बाहर आते हैं तो अवस्थी वहाँ उपस्थित रहता है। आधी से ज्यादा रात मुख्यमन्त्री के काम में बीत जाती है सेवा म या आदेश की प्रतीक्षा में। सवेरे मानो कृष्ण द्वैपायन जगमोहन अवस्थी नाम के मानव यन्त्र में चाबी भर दते हैं जो लगातार काफी रात तक उसी चाबी से चालू रहता है।

उस दिन शाम को सुभाष चट्टोपाध्याय अपने कमरे में टाइपराइटर स सम्पादकीय लिख रहा था। यह काम उसे रोज करना पडता है और इस करते समय वह रोज कोई और आदमी बन जाता है। देश विदेश की विचित्र समस्याओं के बारे मे अपने विचारो को बहुतो के मन मे भर दते समय बुद्धि, ज्ञान, विवेचन की कमी के साथ साथ अपने कतव्य पालन की मजबूरी मिलकर उसके मन मे एक दुर्बोध अनुभूति जगा देती है। उसके मन मे सिर्फ यही आता है कि 'मुझमें ऐसी कौन सी योग्यता है, जो मैं अपने विचार इतने लोगो के दिमाग मे सचालित करने जा रहा हूँ। आज मैं जो लिख रहा हूँ छपकर सम्पादकीय स्तम्भ में जो कुछ निकलेगा, वह तो मेरा वक्तव्य नही है वह सिफ अखबार की टिप्पणी मात्र है। चन्द हजार लोग उसे पढ़ेंगे और उसके सहारे उनकी चिन्तनधारा प्रवाहित होगी, इस प्रभाव को डालने की योग्यता मेरे अन्दर है भी ?'

आज भी सम्पादकीय लिखत समय वही सशय सुभाष के मन को भारी कर रहा था। रोज रोज का यह बोझ उठाने का वह अभ्यस्त हो गया है। उसे यह

भी मालूम है कि वह मन म यह बोझ महसूस करता रहता है, इसीलिए उसका लेख पाठक के मन को छू पाता है। अजीब बात है कि उसके मन की स्थिति का आभास सबसे पहले कृष्ण द्वपायन को मिला था। सुभाष उन दिनो 'मार्निंग टाइम्स' का सम्पादक बना-बना ही था। पहला सम्पादकीय लिखते समय उसने बड़ी जिम्मेदारी को पहली बार महसूस किया था। जिन पाठको को वह जानता-पहचानता नही, जिन्ह जानने पहचानने का कोई चारा भी नही है, फिर भी जिनके साथ हर रोज सवेरे निर्वैयक्तिक परिचय अनिवाय है, उनके सामने उसने अपना पहला सम्पादकीय लिखकर अपना वक्तव्य दिया था। निबन्ध का शीषक था—'द पेपर एण्ड द पीपुल'—अखबार और जनता। उसमे उसने लिखा था, "अखबार का यही काम है कि पाठकों के पास हर रोज देश विदेश की खबरें पहुँचाये और सम्पादक का कतव्य है कि खास-खास घटनाओ की व्याख्या और देश विदेश की समस्याओ पर चचा करे। यह चर्चा सम्पादक और पाठकों के बीच हर रोज के विचारो के लेन देन का पुल है। अखबार की टिप्पणी किसी खास व्यक्ति की नही होती, उसका मूल्यांकन उसकी प्रतिष्ठा के आधार पर होता है। सम्पादक की ऐसी कोई अनिवाय क्षमता नही होनी जिससे वह किसी भी बुद्धिमान और चिन्तनशील पाठक पर हावी हो जाय। दुनियादारी के साथ उसका बुद्धिगत और पेशागत परिचय अधिक है शायद इसीलिए वह कुछ चीजों का मतलब अच्छी तरह समझ लेता है पर पाठक के मन को प्रभावित करत समय वह हमेशा हर शब्द म नम्रता के साथ माफी माँगता रहता है। भारत जैसे देश में, जहाँ रोज नयी समस्याओ के साथ नयी स्वतन्त्र सरकार का अविराम सघष बना रहता है, जहाँ अनभ्यस्त आलसी मनुष्यो को रोज नयी नयी देशी विदशी घटनाओं का अथ समझना पडता है, वहाँ अखबार का सम्पादक पाठक के साथ घनिष्ठ बातचीत करने का मौका चाहता है न कि सम्पादकीय स्तम्भ को जन सभा का मच बनाकर भाषण देना जिससे शायद उसकी अपनी आत्मतुष्टि भर होती हो।'

दूसर दिन कृष्ण द्वपायन के पास भेंट करने आया, तो कुशलमगल के बाद उन्होंने पूछा, "साहित्य भी रचते हो क्या ?"

"जी नही।"

'बगाली तो साहित्यकार या कवि होता ही है, तुम भी शायद बचपन में कविता लिखत रहे होगे अब भी लिखत होगे।'

"अब नहीं लिखता।"

'तुम्हारा सम्पादकीय मैंने पढा, अच्छा लगा। लिख रहे थे तो कुछ दद महसूस हो रहा था क्या ?'

आपको पता चल गया ?'

हाँ, थोडा-बहुत चल ही गया। यह मैंने खुद भी महसूस किया है।'
हा, मैं भी जानता हूँ। आपकी कवि ख्याति से मैं भी परिचित हूँ।"
"ख्याति के बारे म बहुत से लोग जानत है, पर दर्द का पता किसी को नही है।"
"सष्टि म वदना तो रहेगी ही।'
'तुम्हारी नम्रता देखकर मुझे खुशी हुई। सम्पादकीय लिखो या साहित्य रचो साहित्यिक सष्टि मे हमेशा नम्रता रहनी चाहिए। हमारे उपनिषद के ऋषियो ने कहा है अपने को धीमान् समझनेवाले लोग जो सोचत हैं कि व सब जानत हैं, दूसरो से कहते हैं कि तुम हमारा कहना आदर से सुनो और उसे मानो वे असल मे अज्ञान और अविद्या के कारण बिलकुल वैस ही होत हैं, जैसे एक अधा दूसरे अधे को सहारा देकर चलाय।'"
"रवीन्द्रनाथ की कविता मे भी इसकी अभिव्यक्ति होती है आप सुनेंगे?
जरूर सुनूगा। कहो। पूरा तो मैं नही समझ सकूगा पर उनकी कविता सुनने मे भी अच्छी लगती है।
सुभाष ने आवृत्ति की—

"जतबार आलो ज्वालाते चाइ
निभे जाय बारे बारे
आमार जीवने तोमार आसन
गभीर अधकारे।

[जितनी ही बार दीया जलाता हूँ वह बुझ बुझ जाता है। मर जीवन में तुम्हारा आसन गहरे अधकार म है।]
'नही, अग्रेजी मे इसकी व्याख्या मत करो एक बार और धीरे धीरे कहो मैं समझ लूगा।"
दुबारा सुनकर बोले, बहुत बडी बात है। तुम्हारा आसन गहरे अधेरे में है। वाह ऐसा और किसी ने नही कहा। हाँ तुम कभी कभी रवीन्द्र का काव्य पढकर सुनाना।
'आपको समय मिलेगा?'
'समय निकाल लूगा। हम राजनीति करते समय बहुत ही दुर्विनीत, आत्म तृप्त, दम्भी और शक्तिलोलुप हो उठत हैं। तुमने जसा लिखा है, अगर मैं सम्पादकीय लिखने बैठू तो एक बडा सा भाषण दे डालूगा, पर ईश्वर की कृपा से राजनीति मेरा सारा अस्तित्व नही निगल पायी है।
"यह तो आपका सौभाग्य है।"
"सौभाग्य है या दुर्भाग्य, यह तो मैं नही जानता, पर कभी कभी ऐसा लगता है कि यह मेरा दुर्भाग्य ही है। उम्र बढने पर समझ जाओगे कि खण्डित अस्तित्व

लेकर पदा होना बहुत दुखदायी है। हममें से जो मनुष्य राजनीति करता है, कलाकार उस पर हमेशा व्यग्य करता रहता है, उसका तिरस्कार करता है और उसकी कमजोरियो को आखों मे उँगली डालकर दिखाया करता है। और जब कभी कलाकार अवसर मिलने पर सृजन के मोह मे खो जाना चाहता है तब राजनीतिज्ञ आकर उसकी पीठ पर चाबुक मारता है।"

"देश के लोग आपके इन दोनो परिचयो के चलते ही आपका आदर करते हैं।"

"इस आदर म बडी प्रवचना है, सुभाषबाबू! सालो से मैं राजनीति कर रहा हूँ, अब तो यह आदत बन चुकी है। जो कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा करता था, आज वही बन बठा हूँ। एक पूरे प्रात के भले बुरे की सारी जिम्मेदारी मेरे सिर पर पडी है। जो आत्मसन्देह सम्पादकीय निगत समय तुम्हारा मन बोझिल कर देता है, वही बोझ कभी कभी मुझ पर भी हावी हो जाता है। हम लोगो ने अपने को देश का शासन करने के लिए तैयार नही किया था। हम लोगो ने देश को विदेशी शासन से छुटकारा दिलवाने के लिए आदोलन तो किया था, पर कभी उसी देश की प्रगति का कणधार भी बनना पडेगा, यह नहीं सोचा था। आज हर कदम पर मैं अपनी कमियाँ महसूस करता हूँ। अफसोस होता है कि पढाई लिखाई म इतनी कमी रह गयी है कि कई समस्याओं की असलियत ही नही समझ पाता। मन मे सशय होता है कि जो कुछ कर रहा हूँ, वह ठीक कर रहा हूँ कि नही? रोज लोगो की आँखो से अपनी कमजोरिया छिपाते हुए अपने हर काम को सबसे अच्छा साबित करने मे ही दिन बीतता है। आत्मचिन्तन का समय नही मिलता। दूसरी ओर, सक्षिप्त निराले क्षण म वह सन्देह गहरे अँधेरे की तरह मन पर छा जाता है। जानते हो सुभाषबाबू, राजनीति का खेल शकुन्तला की अँगूठी के बल पर खेला जाता है। यह चीज क्या है इसे कोई नही जान सकेगा। जब तक साथ है सब तुम्हे पहचानेंगे मानेंगे तुमसे डरेंगे और तुम्हारा आदर भी करेंगे। एक बार उसके खो जाते ही फिर तुम कही के न रह जाओगे। तब अगर तुम्हें अँगूठी मिल भी जाये तो उसे पहनना नही चाहिए। तुमने 'अभिज्ञान शाकुन्तलम' पढा है? अतिम दृश्य म दुष्यन्त और शकुन्तला के पुनर्मिलन की कहानी है। दुष्यन्त कहते हैं यह अगूठी पाकर तुम्हे पहचान गया। अब इसे अपनी उँगली म शोभा पाने दो। तेन हि ऋतुसमवायचिह्न प्रतिपद्यता लताकुसुमम'—यानी लता के फूल ऋतुराज वसन्त के साथ मिलन का चिह्न धारण करें। पर शकुन्तला अँगूठी छूने को भी तैयार नही है। कहती है—इस अँगूठी पर विश्वास नही करूँगी। कालिदास जो बात स्पष्ट नही कह पाये वह यह थी— मैं अब तुम्हारा भी विश्वास नहीं करती। अँगूठी खो जाने के कारण तुमने मुझे नहीं पहचाना। यानी, मैं तुम्हारे

मन मे अपने गौरव से प्रतिष्ठित नही हूँ। अब मैं तुम्हे उन दिनो के कुमारी जीवन का अखण्ड विश्वास नही दे सकूँगी।' राजनीति म भी यही बात है। एक बार अँगूठी खो गयी तो वह विश्वास फिर नही जम सकता।"

आज सम्पादकीय लिखते समय सुभाष चट्टोपाध्याय को वही शकुन्तला की अँगूठी याद आ रही थी। लेख का विषय था—'उदयाचल की राजनीति'। संघर्ष के समय सुभाष ने समाचारपत्र के माध्यम से यथासाध्य कृष्ण द्वैपायन का झण्डा फहरा रखा था। वह कृष्ण द्वैपायन का आदर करता है उनके विरोधी दल के प्रति आदर करने का उसे कोई कारण नही दिखता, इसलिए कृष्ण द्वैपायन की तरफदारी करने से उसके मन मे कोई क्षोभ नही था। सिर्फ नौकरी की वजह से ही नही इसमे उसका हार्दिक समर्थन भी था। फिर भी आज कृष्ण द्वैपायन से ही सुना हुआ शकुन्तला की अगूठी का आख्यान उसे बार-बार याद आ रहा था। क्या उनकी भी अगूठी खो गयी है? लोगो की आस्था श्रद्धा भय—क्या यह सब उनकी मुट्ठी म नही रहा? विरोधी दल उनके खिलाफ अफवाहे फैला रहा है। उनके शासन मे कितने ही अपराध, स्खलन अन्याय हुए—यह सब जनता को बताया जा रहा है। दुर्नीति, भ्रष्टाचार अत्याचार की एक लम्बी लिस्ट दिल्ली दरबार मे भेजी गयी है। इतना सब होने हुए भी क्या कृष्ण द्वैपायन के पास शकुन्तला की अगूठी बची ही है? सघर्ष मे यदि वह जीत भी जायें, तो जो आस्था और श्रद्धा इतने दिनो तक उन्हे उदयाचल म मिली, क्या वही वह फिर पा सकेंगे? फिर भी वह शकुन्तला की तरह उस अँगूठी का विसर्जन करने को तयार नही हैं। लोगो के विश्वास म कमी आ गयी है, यह जानकर भी सत्ता के आसन पर जमे रहना चाहते हैं। सत्ता छोडने का विचार उनके मन को छू भी नहीं गया है।

सुभाष का मन और सोच रहा था तथा दिमाग और हाथ कुछ और ही लिख रहे थे। तभी दरवाजे पर आवाज गूजी—'एडीटर साहब, कोई सेवा?"

सुभाष ने जगमोहन अवस्थी को देखा, बोला आइए अवस्थीजी बठिए आपसे कुछ कहना है।"

अवस्थी कमरे मे आकर कुर्सी खीचकर बैठ गया।

"आप बहुत थके-थके दिखायी दे रहे हैं?"

अवस्थी काम की बात की प्रतीक्षा में चुप बैठा रहा।

'आपने खाना खाया?"

वही मौन प्रतीक्षा।

'एक समाचार चाहता हूँ।"

क्या?"

'लडाई का।"

"कौन-सी लडाई ?"

"यही, उदयाचल की। रतनपुर की।"

"यह भी कोई लड़ाई है ?"

'कौशलजी की विजय निश्चित है ?"

"नारायण जाने, मैं क्या कहूँ ?"

"विरोधी दल की खबरें बताइए। अखबार में छापने लायक खबरें।"

"मैं आपका रिपोर्टर तो नहीं हूँ।"

"पर आपको जितना मालूम है, उतना इस शहर म और किसी को नहीं मालूम है।"

अवस्थी ने सिर्फ जरा सा मुस्करा दिया।

'हेडलाइन के लिए कुछ नये टाइप चाहिए।"

'प्रेस म सुना था। बतलाइए, क्या क्या चाहिए ?"

सुभाष ने दराज से एक कागज निकालकर दे दिया।

'कब तक चाहिए ?"

'कल ही।"

विजय के दिन ? मिल जायेगा।"

अवस्थी के जाने के बाद सुभाष ने सम्पादकीय लेख खत्म किया और सक्रेटरी को बुलाकर उसे प्रेस मे भिजवा दिया। कुर्सी छोडकर सब एडीटरो के कमरे मे जा ही रहा था कि सामने ही मातकाप्रसाद मिल गया।

"आइए, मातकाप्रसादजी आइए।"

"आपके पास किसी काम से आया हूँ सुभाषबाबू!"

"हुक्म कीजिए।"

मातकाप्रसाद म्लान हँसी हँसा, कुर्सी पर बठते हुए बोला, "हुक्म देनेवाला मैं कोई नहीं हूँ, यह तो आप अच्छी तरह जानते हैं।"

'चाय पियेंगे ? मँगवाऊँ ?"

'मँगवाइए। एक समस्या आ गयी, आपकी सलाह चाहता हूँ।"

"अगर मेरी सलाह से कुछ काम बने तो मैं जरूर दूँगा। यह एक ऐसी चीज है, जिसे देने म कोई पैसा नहीं खच होता।

'आप क्या सोचते हैं ?"

'मुख्यमन्त्री के विषय में ?"

'जी हाँ।'

'मुझे तो ऐसा लगता है कि चिन्ता का कोई कारण नहीं है।'

'यानी पिताजी जीत जायेंगे ?"

"मुझे तो यही विश्वास है।'

"वजह ?"

'बहुत सी। पहली वजह तो यही कि सुदर्शन दुबे का नतत्व मानने को कोई भी तैयार नही होगा। उनका गुट स्वार्थियों से भरा है। उन्होंने तो अभी से आपस म झगडना शुरू कर दिया है। राजनीतिक लोभ दिखाकर सुदर्शन दुबे अपने गुट को बनाये नही रख पायेंगे। सुनता हूँ आपके पिताजी ने भी यह लालच दिखाया है। पता चला है कि सुदर्शन दुबे के खास समथकों मे से कई इसी बीच में कौशलजी के गुट मे लौट आये हैं। उनम से कोई भी मन्त्रिपद छोडने को तैयार नही है। इसके अलावा, हाई कमान भी कौशलजी जैसा एक नेता खो देगा, मैं ऐसा नही समझता। उदयाचल मे काग्रेस सरकार को चलाने लिए उनकी जैसी योग्यता और किसी म भी नही है।'

"क्या? दुर्गाभाई देसाई ?"

'वह तो नता ही नही बनना चाहते।'

"सचमुच नही चाहते या भीतर ही भीतर अपनी तयारी कर ली है ?"

मुझे ऐसा लगता है कि वह सचमुच नही चाहते, ऐसी बात नही है। चाहते तो हैं पर दुर्गाभाई जानते हैं कि सुदर्शन दुबे के गुट को लेकर शासन काय ठीक से नही चल सकेगा। दुर्गाभाई राजनीतिक एकनिष्ठता पर बडी आस्था रखते हैं। अपनी बदनामी वह कभी नही होने देंगे।"

तो फिर आप समझते हैं कि चिन्ता का कोई कारण नही है ?"

'कौशलजी की विजय के सम्बन्ध म मैं सन्देह से परे हूँ, पर चिन्ता के और कारण हो सकते है।

"कैसे ?"

'यही बात ले लीजिए—अबकी बार उदयाचल काग्रेस-मन्त्रिमण्डल में जो टूटन आ गयी है, इसका क्या परिणाम हो सकता है ? सुदर्शन दुबे हारने पर जो हरकतें करेंगे उससे काग्रेस की शक्ति घट जायेगी। नया मन्त्रिमण्डल बनाने मे कौशलजी को कुछ और नीति अपनानी पडेगी। फलस्वरूप उनके नतत्व की क्या स्थिति होगी ? ऐसे ही चिन्ता के कई कारण पैदा हो सकते हैं।

"अब म असली बात खोलकर बताऊँ। मेरी नौकरी का इतिहास आप जानते हैं ?'

"नही।

'पर इतना तो समझ ही सकते हैं कि पिताजी के कारण ही मुझे नौकरी मिली है ?"

'अगर ऐसी ही बात है तो भी इसम आश्चय क्या है ?"

"अपनी योग्यता के बल पर मुझे ला कालेज मे पढ़ाने का काम नही मिल सकता था।

"अपनी योग्यता के सहारे यहाँ बहुतेरों को काम नहीं मिलता। कम से कम जो ऊंचे ओहदों पर काम करते हैं, उन पर तो यह और भी लागू होता है।'

"जो कुछ भी हो, अपनी नौकरी को लेकर मेरे मन में बहुत बेचैनी भरी है।"

"कम जीवन में शान्ति, आनन्द, सार्थकता हमारे यहाँ अधिकांश के भाग्य में नहीं होती।

'दूसरों की मैं नहीं जानता। अपनी जानता हूँ। हम पाँच भाई पाँच किस्म के हैं। मेरी माँ को आप नहीं जानते। उन जैसी न्यायनिष्ठ और सत्यनिष्ठ महिलाएँ अधिक नहीं हैं। पिताजी को तो आप जानते ही हैं। दोनों के चरित्रों की मिश्रित छाया हम पाँचों भाइयों पर पड़ी है। मुझे माँ से जाग्रत विवेक तो मिला है, पर पिताजी का पौरुष व आत्मबल मेरे अन्दर नहीं है। मेरे बादवाले भाई दुर्गाभाई ही माँ-बाप के प्रकृत पुत्र हैं। उन्होंने छोटी जाति की विधवा से विवाह किया है। और वामपन्थी राजनीति अपनाने की वजह से परिवार छोड़ दिया है। सूर्यप्रसाद में पिताजी और माताजी—दोनों के चरित्र की कमजोरियाँ हैं। शीतलाप्रसाद पर माताजी का प्रभाव नहीं है, पर पिताजी का कुछ प्रभाव है। और सबसे छोटा चन्द्रप्रसाद माँ बाप का लाडला बेटा है। उसके मन में भी विद्रोह की चिनगारी है। पर वह कभी भी राजनीति नहीं करेगा। इसके अलावा वह पिताजी को बहुत मानता है। अब देखिए, हम भाइयों में तनिक भी मेल नहीं है।'

"ऐसा तो बहुत से परिवारों में होता है, मातकाप्रसादजी!"

'पिताजी ने लॉ कालेज में मेरी नौकरी तो लगवा दी, पर वह मुझे बड़ी ओछी नजरों से देखते हैं। मैं अपनी योग्यता के सहारे नहीं खड़ा हो पाया, इसीलिए वह मेरी उपेक्षा करते हैं। इतने बड़े संकट के समय भी उन्होंने मुझे किसी काम से याद नहीं किया, और न मुझ पर कोई जिम्मेदारी डाली।"

'राजनीति सबको नहीं आती, और आनी भी नहीं चाहिए।'

चन्द्रप्रसाद को वह तमाम कामों की जिम्मेदारी देते हैं, पर मेरे साथ किसी विषय पर कभी बात भी नहीं करते।"

"मातकाप्रसादजी, यह सब मुझसे कहने में आपको क्लेश हो रहा है, फिर आप क्यों कहे जा रहे हैं, समझ में नहीं आता।"

'आप अभी समझ जायेंगे। आप पिताजी के विश्वासपात्र हैं। वह आपसे स्नेह करते हैं। आपको मेरा एक काम करना होगा।

कहिए, जरूर करूँगा।"

'मेरी बातें पिताजी तक पहुंचानी पड़ेंगी। अगर वह मुझे ज्येष्ठ पुत्र की मर्यादा न दे सकें तो मेरे लिए लॉ कालेज की अध्यापकी और उनके परिवार

में रहना सम्भव नहीं हो सकेगा। मैं अपना भाग्य स्वयं देख लूगा।'

'ये बातें मुझे कहनी पड़ेंगी ?'

'अगर आप कह दें तो मैं आपका आभारी होऊँगा।'

'आप खुद नहीं कह सकते ?'

'कभी किसी महत्त्वपूर्ण विषय पर मेरी उनसे बातें नहीं हुई हैं आज एका एक यह सब कहना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा।'

'ये बातें कहने के लिए मौका देखना पड़ेगा।'

"पर यह जल्दी ही कहना होगा।

'क्या, इतनी जल्दी है ?"

"जल्दी है।'

'अच्छा मैं कोशिश करूँगा।'

'आप परदेशी हैं। आपसे बहुत कुछ कहा जा सकता है। उम्मीद है कि आप बुरा नहीं मानेंगे।

नहीं-नहीं बुरा क्या मानूँगा ? किसी समस्या के कारण आपने मुझे दोस्त बनाया, इससे मुझे खुशी हुई है। हम मामली लोग हैं, पर मातकाप्रसादजी, सबकी समस्याएँ एक-सी हैं और सभी समस्याओं से कठिन है विवेक की समस्या।'

मातकाप्रसाद ने थोड़ी देर चुप रहकर प्रश्न किया—'अच्छा सुभाषबाबू अवस्थी के बारे में आप क्या सोचते हैं ?

'कौशलजी के परम अनुगत सेवक।

"और कुछ ?"

'इसके अलावा उनका कोई और परिचय है क्या ?'

"आपसे एक बात बताऊं, अवस्थी मेरी माताजी की छाया तक से भागता है।'

'क्या ?

नहीं, यह बताना ठीक नहीं होगा।'

'तब जरूर मत बताइए।

'उससे जरा सँभलकर रहिएगा सुभाषबाबू।"

"क्यों ? क्या बात हो गयी ?'

'पिताजी के फिर से मुख्यमन्त्री बनने पर आपके अखबार का मालिक जगमोहन अवस्थी बन जायेगा। यह मैं अभी से कहे देता हूँ। मनेजिंग एडीटर की जगह उसी का नाम जाया करेगा।"

सोलह

गाडी लेकर बाहर जाते समय सूयप्रसाद ने सोचा था कि बचपन के दास्त ललितचरण सिंह के घर जायेगा पर गाडी मे बैठने पर विचार बदल गया। वह कानून और स्वायत्तशासन-मन्त्री सरितसागर कोठारी के यहाँ चला गया।

सरितसागर रतनपुर हाईकोट के नामी वकील थे। चाहत तो बहुत पहले ही जज बन सकते थे, पर ऐसा नही हो सका। वह स्वतन्त्रता सग्राम के चक्कर मे पड गये। वह गाधीजी के शिष्य के रूप मे आन्दोलन म नही आये थ, बल्कि अपने गहरे देश प्रेम के कारण ऐसा किया था।

सरितसागर कोठारी के अन्दर युवावस्था से ही विद्रोह का बीज बो दिया गया था। बाप लक्ष्मणसागर कोठारी धनी जमादार होते हुए भी उदार थ। उनकी इच्छा थी कि सरितसागर आई० सी० एस० बने, इसीलिए उन्होने सरितसागर को पढने आक्सफोड भेजा था। इतिहास के विद्यार्थी सरितसागर पढाई के साथ साथ आमोद प्रमोद मे भी भारतीय विद्यार्थियो मे अग्रणी थे। परन्तु उन्ह हिन्दू समाज के रूढिवादी सस्कारो के प्रति विद्रोह करने का आकषण दूसरे उत्तेजक आमोद प्रमोदा के आकषण की अपेक्षा कही अधिक था। वह मास मछली, अण्डा खुल्लमखुल्ला खाते थे। पाश्चात्य नत्य बडी खुशी से नाचते थे। श्वेतागी बान्धवियो की कमी नही थी। वह फेबियन सोसायटी के सदस्य थ। इण्डिया लीग मे पण्डागीरी करते थे। आक्सफोड यूनियन मे गरम गरम भाषण देते थे, पर साथ साथ आई० सी० एस० की परीक्षा की तयारी भी हो रही थी। उन्ही दिनो सुभाषचन्द्र बोस ने आई० सी० एस० पास होने के बाद भी उसे त्याग दिया। इगलड के भारतीय विद्यार्थियो मे उत्तेजना फल गयी। सरितसागर कोठारी उसमे भी अगुवा रहे। आई० सी० एस० की परीक्षा न देकर बैरिस्टर बने। दास्तो से कहा "सुभाष बोस और उनके साथियो के लिए अदालत मे लडना तो पडेगा ही, इसीलिए बरिस्टर बनकर लौट रहा हूँ। जो लोग स्वतन्त्रता के लिए लडते हुए अग्रेजो के कानून के फन्द मे फँसेंगे, उन्ह छुडाने की जिम्मेदारी मेरी होगी।"

सरितसागर कोठारी ने देश के लिए एक और भी त्याग किया था, जिसके बारे में उनके बहुत निकट के दो चार मित्रो के अलावा कोई नही जानता था। मागरेट वाकर उनके लिए बान्धवी से बढकर घनिष्ठ हो गयी थी। सरितसागर ने उससे शादी करने का निश्चय किया था। जीवन का आदश एकाएक बदल गया तो यह सकल्प भी बदलना पडा। आई० सी० एस० के साथ-साथ मार्गरेट को भी पीछे छोडकर सरितसागर एक दिन अपने देश लौट आये और रतनपुर

हाईकोर्ट में प्रैक्टिस शुरू की। कुछ ही सालो मे वह प्रतिष्ठित हो गये। श्राम दनी बढ गयी। यश मिला। राजनीतिक स्वयसेवको का मुकदमा वह पहले ही स बिना फीस लिये लडा करते थे, इससे सारे देश मे उनकी इज्जत और बढ गयी। बडे बडे नेताओ के मुकदमे लडने वह रतनपुर से बाहर भी जाया करते थे। इससे उनके अपने काम का नुकसान होता था फिर भी वह कभी पीछे नहीं हटे। उसस भी ज्यादा उल्लेखनीय बात यह थी कि मामूली देशसेवको के मुक दमे भी वह उसी उत्साह और उदारता से लडा करते थे। इतना ही नहीं, वह छोटी अदालता म भी इन मुकदमों को अपने जूनियर वकीलो के जरिये मुफ्त ही देख लिया करत थे।

सरितसागर कोठारी ने फिर और किसी से ब्याह नहीं किया।

स्वाधीनता सग्राम मे सरितसागर ने कभी प्रत्यक्ष भूमिका नही ली थी। काग्रेस के किसी पद को भी ग्रहण नहीं किया था। फिर भी राजनीतिक मुकदमों और काग्रेस की कई समितियो और कमीशनो का चेयरमन और सदस्य होने के कारण स्वाधीनता सग्राम के साथ सरितसागर का बहुत दिनो से एक आत्मिक सम्बध बन गया था। जिन कमीशनो और समितियों का उद्देश्य होता था भारत का भावी शासन-तन्त्र, अग्रेजो के बनाये कानूनो म सशोधन और उन्हें हटाने की माँग सिर्फ उन्ही कमेटियो और कमीशनो के साथ वह सम्बन्ध रखत थे। फिर ऐसा दिन आया जब वह ससदीय कानूनो के देश भर म अन्यतम विशेषज्ञ माने जाने लगे। फलस्वरूप स्वतन्त्र भारत का सविधान बनाने मे उनका भी हाथ था। वह छ साल तक सविधान सभा का सदस्य रहने के बाद कृष्ण द्वपायन के अनुरोध पर उदयाचल के मन्त्रिमण्डल मे शामिल हो गये थे।

मन्त्रिपद का लोभ नही था फिर भी वह कृष्ण द्वपायन के अनुरोध की उपेक्षा नही कर पाये। कृष्ण द्वपायन उदयाचल मे एक बिल्कुल नये किस्म की स्वायत्त शासन व्यवस्था कायम करने के इच्छुक थे। वह व्यवस्था गाँवो से शुरू होकर विभिन्न सतहो से होते हुए शहर की सबसे ऊँची सतह पर पहुचती, जिससे वह वतमान नगरपालिका व्यवस्था की खामियो और दुर्नीतियो से बच जाती, और उसके माध्यम से, एक सुपरिकल्पित ढग से, प्रान्त के जन-साधारण को गाँव स शहर तक नागरिक जीवन की व्यापक परिधि म हर किस्म के कल्याण कार्यों म सम्मिलित करना सम्भव हो जाता। रतनपुर के राटरी क्लब म एक दिन प्रधान अतिथि के रूप मे भाषण देते समय कृष्ण द्वपायन ने स्वायत्त शासन को नये ढग से व्यवस्थित करने की आवश्यकता का उल्लेख किया था और इस काम के लिए योग्य व्यक्तिया की सहायता मागी थी। भाषण के बाद कइयो से कुछ बातें भी हुई थी, जिनम सरितसागर कोठारी भी थे।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा था "कोठारी साहब तो आजकल हम लोगों के

बिल्कुल मिलते ही नही।'

सरितसागर ने उत्तर दिया था, 'अब तो आप लोग जेल जाते नही इसी लिए अदालत और बरिस्टर की भी जरूरत नही पडती।'

"हमारे साथ आपका बस इतना ही रिश्ता है क्या ?"

"कौशलजी राजनीति मे मुझे उत्साह तो है, पर रुचि नही है। गुट बना कर राजनीतिक झगडों म फसना मुझे कभी पसन्द नही रहा और गुटबाजीवाली राजनीति मेरे वश की नही है।

"फिर भी जिन्दगी भर आपने देश के लिए कुछ कम तो नहीं किया।'

'माफ कीजिएगा कौशलजी, देश के लिए कुछ किया है, इसका कोई मतलब नहा है, फिर भी लोगो के मुह स हमशा यही सुनने को मिलता है। आन्दोलन के समय या उससे पहल देश की भलाई करने का उद्देश्य लेकर आप लोग इसमे थोडे ही कूद पडे थ। अगर किसी ने ऐसा सोचकर यह किया हो तो वह निश्चय ही स्वार्थी है। हम कोई भी अच्छा काम भीतरी तकाजे की वजह से करते हैं, क्योकि उस किये बिना हम रह नही सकते। यही बात गाधीजी न कई बार कही है। वह कहते थे कि हिन्दुस्तान के लिए कुछ करन की स्पर्धा मेरे अन्दर नही है, मैं तो सिर्फ सेवा भर कर सकता था। अगर मैं देश की मुक्ति भी चाहता हूँ तो इसलिए कि मरे लिए यह पराधीनता असह्य है।'

बिल्कुल सच है।'

"मैं एक देशभक्त हूँ, ऐसा दावा कभी नहा करूँगा। देशभक्ति आसान नही, दश को प्यार करना कही आसान है क्योकि हम जिसे प्यार करते हैं, उसका कसूर देखा नही जाता। पर मेरा देश प्रेम इतना उग्र कभी नही था कि सबकुछ छोडकर आन्दोलन म शामिल हो जाता। इसके अलावा, यह कहत हुए मुझे कोई सकोच नहा हो रहा है कि आप लोगों की यह देशभक्ति कई बार मुझे हास्यास्पद लगती थी। मैं जिन्दगी भर मे केवल दो ही आदमियो के देशप्रेम सम्बन्धी चिन्तन की तारीफ कर सका हूँ—एक तो महात्मा गाधी और दूसरे सुभाष बोस।'

'क्यो ? जवाहरलाल नेहरू ? '

'प्रधान मन्त्री हम सबके मान्य है। उनकी राजनीति का मैं प्रशसक हूँ पर उनके दश प्रेम क प्रति मुझे बहुत आस्था नही है।"

कृष्ण द्वपायन ने कहा, 'यह सब चचा छोडिए मैं चाहता हूँ कि आप हमारी सहायता करें।'

कसे ?"

"एक दिन आइए न मरे घर वही बातें होगी।"

सरितसागर कोठारी को कृष्ण द्वैपायन ने मन्त्री का पद स्वीकार करने पर

राजी कर लिया था। वादा किया था कि उन्हें कांग्रेस का चार आनेवाला सदस्य बनने के अलावा और कुछ नहीं करना पड़ेगा। वह किसी गुट या उपगुट में नहीं रहेंगे। उनकी पहली जिम्मेदारी उदयाचल में नया स्वायत्तशासन कानून तैयार करने की होगी और, साथ ही, वह कानून विभाग की जिम्मेदारी भी अगर ले लें तो कृष्ण द्वैपायन निश्चिन्त हो जायेंगे। अगर ऐसा हो जाय तो प्रदेश में ढंग के कानून बन सकेंगे हाईकोर्ट और सुप्रीमकोर्ट भी उन्हें काट नहीं सकेंगे।'

उन्होंने कहा था मैं यह नहीं भूल सकता कि स्वायत्त शासन की समस्या को लेकर ही कांग्रेसी आन्दोलन की शुरुआत हुई थी। अंग्रेजों के जमाने में हमने स्वायत्त शासन को विस्तृत और दृढ़ करने के लिए सालों तक माँग की थी। हमारे नेताओं में से बहुतेरों को जनकल्याण का वास्तविक अक्षरबोध नगरपालिकाओं में ही हुआ था। गांधीजी खुद इस विषय को लेकर बहुत लिख गये हैं बहुत कुछ कर गये हैं। देशबन्धु चितरंजनदास के कलकत्ता नगरपालिका का मेयर बनने के बाद एक अभूतपूर्व जनजागरण हुआ था। अहमदाबाद नगरपालिका में सरदार पटेल पटना में राजेन्द्रबाबू इलाहाबाद में नेहरूजी कलकत्ता में नेताजी ने स्वायत्त शासन क्षेत्र का नेतृत्व संभाला फिर भी देश के स्वतन्त्र होने के बाद हमारी एक भी कारपोरेशन म्युनिसिपैल्टी, डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड यूनियन बोर्ड ऐसा नहीं है जिस लेकर हम थोड़ा भी गर्व कर सकें। देश के शासन की जिम्मेदारी जिन लोगों के कन्धों पर आयेगी उनको पहले इन्हीं संस्थाओं से प्रशिक्षण मिल सकता है। पर खेद की बात है कि कई प्रान्तों में नगरपालिका का काम सरकार अपने हाथों में लेने को मजबूर हो गयी, स्वायत्त शासन खत्म हो रहा है। कारपोरेशनों में भ्रष्टाचार भाई भतीजावाद, चोरी निकम्मापन और व्यर्थता आदि तो मानो उदाहरण ही बन गये हैं। मेरी राय में यही कांग्रेस हुकूमत की सबसे बड़ी असफलता है। गांवों से शहर तक जनसाधारण के हाथों में हम क्रमिक रूप से स्थानीय शासन की क्षमता नहीं दे सके बल्कि शासन को लगातार केन्द्र के साथ समटते चल रहे हैं। मैं इस व्यवस्था में आमूल परिवर्तन चाहता हूँ और यह जिम्मेदारी आपकी होगी। जहां तक सम्भव होगा इस जिम्मेदारी को निभाने के आपको पूरे अधिकार होंगे।'

सरित्सागर ने जानना चाहा कि उनकी बनायी योजना का अनुमोदन करने के लिए कबिनेट राजी होगी कि नहीं। कृष्ण द्वैपायन ने कहा था, होगी, पर मेरे आपके साथ रहने से कबिनेट की चिन्ता नहीं करनी पड़ेगी।"

अगर हम दोनों सहमत न हो सकें तो?"

'सहमत होने की सम्भावनाएं ही अधिक हैं। मैं आपको कबिनेट में शामिल कर रहा हूँ।"

मन्त्रिमण्डल मे हर फर के समय सरितसागर मन्त्रिमण्डल मे शामिल हुए। म त्री बनत ही उ होने नयी योजना की रूप रखा तयार नही की। उन्होन पहले भारत म स्वायत्त शासन के इतिहास का अध्ययन किया था। पिछले सौ वर्षों मे जितनी भी उल्लेखनाय रिपोर्टे निकली है, उ ह पढा। इनमे स कई रिपोर्टें प्राप्त करन म बहुत कठिनाइयाँ पेश आयी। स्वायत्त शासन के क्षेत्र म जाकर बातें की। उदयाचल म स्वायत्त शासन का यवस्था के इतिहास का उन्होने अच्छी तरह अध्ययन किया। गावो को केन्द्र बनाकर शासन व्यवस्था के सम्बन्ध म गाधीजी द्वारा लिखे गय निबन्धों को उ होन 'हरिजन' पत्रिका की फाइल मँगवाकर पढा। उसके बाद विदेशी प्रतिष्ठानो का भी नहा छोडा। उन्होने सोवियत यूनियन, युगोस्लाविया, इगलण्ड और स्कण्डिनेवियन देशो की स्थानीय शासन व्यवस्था का अध्ययन किया। फिर तीन उदयाचल के बाहर से आमन्त्रित और दो स्थानीय विशेषज्ञो की कमेटी बनाकर विस्तृत रिपोर्ट तयार करायी। अन्त मे सरितसागर ने अपने विचार और कमेटी की सिफारिश दोना को मिला कर एक नयी योजना तैयार की थी।

दो वष इसी मे बीत गये।

योजना को मुख्यमन्त्री का पूरा समथन मिला था। कृष्ण द्वपायन को भी राजनीतिक जीवन का अच्छा बाध जिला परिषद म ही हुआ था। स्वायत्त-शासन और प्रशासनिक समस्याओ स वह प्रत्यक्ष रूप स परिचित थे। सरितसागर कोठारी न इस विषय को बहुत ज्यादा महत्त्व दिया था, इससे वह खुश थे। कही कही बहुत मामूली से मतभेद तो हुए थे, पर सरितसागर की योजना को उन्होने मान लिया था। मत विरोध का क्षेत्र इतना सक्षिप्त था कि दोनो को सहमत होने म कोइ ज्यादा कठिनाई नही हुई थी।

पर सरितसागर की योजना पर आज तक काम शुरु नही हुआ। नये स्वायत्त शासन के बिल पर आज तक विधान सभा की अनुमति नही मिली।

याजना का मूल दशन यही था कि स्वायत्त शासन को राजनीति स दूर रखना होगा। सरितसागर इसी दृढ निश्चय पर पहुच थे कि स्थानीय शासन को निर्दोष बनाये रखने क लिए उसे राजनीति स दूर रखना पडेगा। कृष्ण द्वैपायन न भी इस सिद्धान्त को मान लिया था। ग्राम पचायत स नगर निगम तक सारा स्वायत्त शासन जनता द्वारा चुन गये योग्य लाग करेंगे। यह चुनाव किसी राजनीतिक दल का नहा होगा। पचायत के सरपच अपनी जिम्मदारी स सन्यासी चुन लेंगे और दो सालो तक उनका शासन कायम रहेगा। उन्हे जिलाधीश स सहायता मिलेगी। ठीक इसी तरह से नगरपालिका के अध्यक्ष भी जनमत स चुने जायेंगे। वे अपनी कबिनेट बनायेंगे और तीन सालो तक नगर के शासन की जिम्मेदारी सँभालेंगे। नगर निगम के महापौर के लिए भी यथायोग्य व्यवस्था

होगी। उम्मीदवारों में राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि नहीं होंगे। उन्हें अपने चरित्र, क्षमता और जन सेवा के बल पर खड़ा होना होगा। नगरपौर और ग्रामप्रधान को पदच्युत करने का सदस्यों को अधिकार होगा। यानी सरितसागर कोठारी की योजना थी कि आनेवाले दिनों के लिए गांव तथा शहर के प्रशासन-नेता इसी तरह तैयार होते रहेंगे। उनके इस अभिनव प्रस्ताव को कृष्ण द्वैपायन का समर्थन मिलेगा, सरितसागर को इसकी आशा नहीं थी, इसीलिए समर्थन मिलने पर वह विस्मित रह गये थे।

पहली बाधा कैबिनेट में हुई, दोनों तरफ से। दुर्गाभाई देसाई ने आपत्ति की बोले, यह नयी योजना प्रगति विरोधी है। कांग्रेस इतने दिनों से जिस स्वायत्त शासन का समर्थन करती आ रही है, यह उसके विपरीत है। दूसरी आपत्ति सुदर्शन दुबे के गुट की ओर से हुई, कहने लगे कि राजनीति को अलग करने से जनता भी इससे अलग हो जायेगी और गणतन्त्र भी कामयाब नहीं होगा। उस गुट के नेता ने कहा, राजनीति के बिना गणतन्त्र नहीं बनता और स्वायत्त-शासन का उद्देश्य गणतन्त्र को मजबूत बनाना है। राजनीतिक दलों को अगर स्वायत्त शासन में हिस्सा न मिला, तो गांवों में गणतन्त्र पहुंचने का रास्ता रुक जायगा।

सरितसागर जी जान से लड़े। उन्हें एक बार तो हक्काबक्का रह जाना पड़ा जब उन्होंने देखा कि कृष्ण द्वैपायन अपनी सारी शक्ति लगाकर उनका साथ दे रहे हैं। बात बढ़ गयी। अन्त में दुर्गाभाई योजना का समर्थन करने पर राजी हो गये पर प्रदेश कांग्रेस ने नहीं माना। सुदर्शन दुबे ने प्रकट रूप में योजना का विरोध किया। कहने लगे कि कृष्ण द्वैपायन कांग्रेस को कमजोर बनाना चाहते हैं। उन्याचल के अधिकांश नगर निगम और नगर-पालिकाएँ योजना के विरुद्ध हो गयीं, क्योंकि वे सब की सब कांग्रेस के हाथों में थीं। इस विषय को लेकर देश भर में चर्चा हुई। देखा गया कि जनमत योजना के खिलाफ है। सुदर्शन दुबे कार्यकारिणी तक पहुंचे। कृष्ण द्वैपायन और सरितसागर को दिल्ली जाना पड़ा। वामपन्थी भी विरोधी दलों के साथ मिल गये।

मन्त्रिमण्डल की टूटन का पहला प्रकट कारण यह स्वायत्त शासन ही था।

सरितसागर कोठारी एक दिन त्यागपत्र लेकर कृष्ण द्वैपायन के आगे उपस्थित हुए बोले, 'कौशलजी, आप बहुत लड़े। मैं आपका आदर करता हूँ। पर हम हार गये हैं। अब मुझे छुट्टी दीजिए।

रण छोड़कर भाग रहे हैं ?'

'नहीं, जरा परे खड़ा हो रहा हूँ। इसी डर से मैंने दलगत राजनीति में कभी नहीं आना चाहा।'

"आप अपनी खुशी से तो नहीं आये थे, मैं आपको बुला लाया था। आपकी

योजना यदि अनुमोदित न हुई, तो वह मेरी भी हार होगी। मैं यों आसानी से हार माननेवाला नहीं हूँ।'

"आप क्या सोचते हैं कि इस योजना को चालू कर सकेंगे?"

"जरूर सोचता हूँ। इस तूफान को निकल जाने दीजिए। इस्तीफा क्यों देंगे? क्या इस समय मुझे अकेला छोड़कर आपका खिसक जाना ठीक होगा?'

"पर "

"हाँ, इस आंधी को वह जान दीजिए, बात और भी आगे बढ़ेगी। मुझे ऐसा लगता है कि अब एक दिन मन्त्रिमण्डल का खात्मा भी होगा। शायद आप देखें कि अब मैं दल का विश्वास भी खो चुका हूँ।"

'मेरे लिए आप इतना क्यों करेंगे?"

"आपके लिए नहीं। मैं राजनीति करता हूँ, आपके कारण मैं राजनीतिक वर्तमान और भविष्य का विसर्जन करूँगा, इतना अबोध मैं नहीं हूँ। यह योजना मुझे चाहिए ही—उदयाचल के लिए हिंदुस्तान के लिए। अगर एक न एक दिन सुदर्शन दुबे जैसों के हाथ से छुटकारा न पाया, तो हिंदुस्तान का भविष्य अंधकारमय हो जायगा। मुझे एक प्रांत का राज-काज देखना पड़ता है मुझे मालूम है गुटबंदी वाली राजनीति किस तरह सारे देश का खून दूषित कर रही है। मुझे मालूम है कि एक डिप्टी कमिश्नर भी जिले का काम नहीं कर सकता, और करना चाहता ही नहीं। तो इसके पीछे क्या बात है? जिला कांग्रेस के नेता उन्हें काम नहीं करने देते। मन्त्रियों के पीछे पीछे घूमते घूमते ही वे परेशान हो जाते हैं। पंचायत से लेकर नगर निगम तक के राजनीतिक अत्याचार से देश गरीब और कमजोर होता जा रहा है। हमारे दिन तो अब खत्म होनेवाले हैं, कोठारी साहब! हम आज हैं तो कल नहीं पर मुल्क तो रहेगा, उसका भविष्य है, उसे आगे बढ़ना पड़ेगा। आपने इतनी मेहनत से जो कुछ किया है, वह देश के भविष्य के लिए ही किया है। इसीलिए उसे इतनी आसानी से व्यर्थ नहीं जाने देंगे।

इसके लिए अगर आपको भी इस्तीफा देना पड़े तो?'

"इस्तीफा शायद न देना पड़े। हाँ, कभी अचानक दल में हार सकता हूँ और इसका नतीजा अच्छा भी हो सकता है। नया मन्त्रिमण्डल बनाऊँगा।"

'आपका आत्मविश्वास अद्भुत है।'

'उसकी नींव में क्या है आप जानते हैं? मैं उदयाचल की एक-एक नस से परिचित हूँ। मैं सुदर्शन दुबे को जानता हूँ और उनके गुट के एक एक आदमी को जानता हूँ। विधान सभा के हर सदस्य को मैं जानता हूँ और प्रदेश से लेकर मण्डल तक के कांग्रेस के हरएक नेता को भी। उन्हें जानता हूँ इसीलिए यह आत्मविश्वास है। मैं जानता हूँ कि कृष्ण द्वैपायन को हटाकर उदयाचल

का कांग्रेस शासन नहीं चल सकेगा। और यह भी जानता हूँ कि ये आज चाहे मेरे खिलाफ मतदान करें, पर बाद में मेरे साथ ही मिलेंगे।

सरितसागर सरकारी बँगले में नहीं रहते थे। रतनपुर में उनके पिता की अपनी कोठी है, उसमें भी वह अपनी प्रैक्टिस के शुरू के कुछ सालों के अलावा और कभी नहीं रहे। शहर के पूर्वी छोर पर पुरानी झील है उसी के पास सरितसागर का अपना मकान है। दो एकड़ जमीन में फैला हुआ बहुत बड़ा लान, बड़ा-सा बगीचा टेनिसकोर्ट स्वीमिंगपूल और साथ में एक छोटा-सा मकान—एक मंजिल का संगमरमर की तरह सफेद छोटा सा बँगला—दो सोने के कमरे, लाइब्रेरी, बैठक, खाने का कमरा, गुसलखाना आदि। सबमें बड़ा कमरा लाइब्रेरी का है। बगल में दाहिने-बायें दो और छोटे छोटे मकान हैं। एक में सरितसागर का दफ्तर है और एक अतिथि भवन। दफ्तर में मुवक्किलों के बैठने का एक कमरा मुंशियों के लिए एक जूनियर वकीलों के लिए दो और सरितसागर के अपने लिए एक कमरा है। अतिथि भवन में तीन सोने के कमरे एक बैठक और गुसलखाना आदि। बहुत छोटी उम्र में ही सरितसागर ने अविवाहित जीवन बिताने के लिए अपने को तैयार कर लिया था। मकान बनाने के समय भी अकेली जिन्दगी के मुताबिक ही नक्शा बनवाया था।

वकालत के अलावा यह कई और भी चीजों में दिलचस्पी लेते थे—खुद खुरपी लेकर बागवानी करना, फूल फल सब्जी उगाने में उत्साह। पशु-पक्षी भी उन्हें बहुत पसन्द थे। भारत के इने गिने पक्षी प्रेमियों में उनका नाम मशहूर था। बगीचे में तरह तरह के विदेशी पेड़ पौधे लगाना और उनकी देखभाल करना भी सरितसागर का एक नशा था। सालों की मेहनत के बाद उन्होंने अपने बगीचे को एक छोटे मोटे बोटेनिकल गार्डन का रूप दे दिया है। बगीचे के बीचोबीच शीशे की दीवारोंवाला ठण्डा कमरा है जिसमें ठण्डे मुल्कों के पेड़ पौधे लगाये गये हैं।

एक किनारे सरितसागर के जलचर प्राणियों का आवास है। देश विदेश से विचित्र विचित्र ढंग की मछलियों का संग्रह किया गया है। पहाड़ों पर घूमना भी सरितसागर का एक नशा था और हिन्दुस्तान में ऐसा कोई भी पहाड़ नहीं था जिसके साथ सरितसागर का प्रत्यक्ष और गहरा परिचय न हो।

अकेला जीवन बिताते हुए भी वह एकान्तप्रिय नहीं हैं। दोस्तों का आना जाना बना रहता है। वह आते और दिन भर आमोद प्रमोद में बिताया करते। अतिथि सत्कार में कभी कोई कंजूसी नहीं होती।

सरितसागर के सारे मकान में सिर्फ एक तस्वीर है—लाइब्रेरी में मेज पर चाँदी के फ्रेम से मढ़ी हुई एक अंग्रेज किशोरी की तस्वीर—हँसमुख सुन्दरी

मारगरेट वाकर।

मारगगट वाकर से विवाह न कर सकने के परिणामस्वम्प ही यह अविवाहित जीवन था, पर उनके जीवन मे स्त्रियो का प्रवेश निषिद्ध नही है। ऊपरी सतह पर खुशी, आमोद प्रमोद, सम्भोग—सभी कुछ है। पसद लायक औरतो को सरितसागर की शया पर भी स्थान मिल जाता है पर हृदय म किसी के लिए कोई स्थान नही।

सूयप्रसाद जब मुख्यमन्त्री की गाडी लेकर हात म आया, तब सरितसागर लान पर बठ चार अतिथियों के साथ गप लडा रहे थे। उनम स दो देशी और दो विदेशी थे। देशी अनिथियो मे एक थे रतनपुर के उदीयमान बैरिस्टर मदनमोहन सहाय और दूसरे थे दिल्ली के व्यापारी कुन्नलाल सूद। विदेशिया मे से एक अग्रेज अभी अभी भारत भ्रमण के लिए इग्लैण्ड से आये हैं। व्यापार की सम्भावना देखना ही उनका उद्देश्य है नाम है आयर ह्यूम। दूसरी एक जमन स्त्री है, सरितसागर की बाधवी। वह दिल्ली मे रहती है पश्चिम जमनी के राजदूत के प्रवास में जमन भाषा सिखान के लिए जो स्कूल खोला गया है, उसकी अध्यक्षा है। नाम है हिल्डा स्ट्राउस। थोडे दिनो के लिए सरितसागर की अतिथि के रूप म बिलासपुर घूमने आयी हैं।

गाडी को फाटक के अन्दर आते देखकर सरितसागर कुछ चौंक पडे थ, पर सवारी पर नजर पडी तो वह मुस्करा पडे बोल, मुख्यमन्त्री की गाडी है पर आनेवाल मुख्यमन्त्री नही बल्कि उनके पुत्र हैं—सूयप्रसाद कौशल, एम० एल० ए०।

मदनमोहन सहाय ने पूछा, 'के० डी० कौशल का भविष्य क्या है?'

उत्तर मे सरितसागर न कहा, के० डी० कौशल का भविष्य लेकर मुझे सिरदद नही है। उस आदमी म बहुत गुण हैं और शक्ति भी असाधारण है। अपनी नाव खेने की खुद क्षमता रखते हैं। कृपाणपुर की जिलापरिषद से राजनीति शुरू की और अब उदयाचल के मुख्यमन्त्री हैं। अगर यह नौकरी भी गयी तो तरक्की पाकर केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल में चले जायेंग। और कुछ नही तो राज्यपाल के रूप म निश्चिन्त आराम ही सही। मुझे तो कभी कभी सिरदद एक देश के भविष्य को सोचकर होता है—जिसका नाम है भारतवष।'

आयर ह्यूम ने कहा' मुझे तो लगता है कि आप लोग कामकाज खूब अच्छी तरह से चला रहे हैं।'

'तुलनात्मक रूप म तो बात सही है पर हमारी समस्या बहुत कठिन है। सरितसागर ने कहा, दुनिया मे ऐसा एक भी मुल्क नही है जिसम हमारी जितनी समस्याएँ हो।'

हिल्डा स्ट्राउस ने कहा "सचमुच भारत अतुलनीय है।"

सरितासागर ने कहा 'ऐसा उदार और बहुरंगी आकाश उत्तर में गगनचुम्बी हिमालय दक्षिण पश्चिम मे सीमाहीन समुद्र चार हजार वर्ष पुरानी सभ्यता, वेद उपनिषद रामायण, महाभारत। बुद्ध गांधी रामकृष्ण विवेकानन्द, अरविन्द। चालीस करोड लोग साल में बीस लाख बढ्ती हुई आबादी। अस्सी प्रतिशत लोग निरक्षर हैं। हर सौ मे से सत्तर लोगो को दो जून भरपेट खाना नही मिलता। दुनिया का सबसे बडा गणतन्त्र—चालीस करोड जनता को समान अधिकार है। सचमुच भारत की कोई तुलना नही है।"

गाडी आकर लाउज के सामने खडी हो गयी।

दरवाजा खोलकर सूर्यप्रसाद गाडी से नीचे उतरा। एक बार ठिठककर खडा हो गया, फिर दोनों हाथ जोडकर नमस्ते किया।

सरितसागर आगे बढकर बोले 'आओ सूर्यप्रसाद आओ। गाडी देखकर तो मैं घबडा गया था। मुझे सोचना ही चाहिए था कि इस समय कौशलजी को हमारे यहाँ तो क्या, स्वर्ग जाने का भी मौका नहीं होगा।

सूर्यप्रसाद ने कहा 'पिताजी बहुत व्यस्त हैं।'

'बूढा हो गया हू सूर्यप्रसाद नहीं तो तुम्हारे कहने के पहले ही इसे समझ लेना चाहिए था।'

फिर दूसरे मेहमानो से परिचय कराने लगे—'यह मिस्टर ह्यूम हैं। विलायत से आये हैं। कह रहे हैं कि इतने दिनो से पराधीन भारत अब स्वतन्त्र होकर सबकुछ बहुत अच्छी तरह चला रहा है। यह हिल्डा स्ट्राउस हैं। जर्मन। कह रही थी कि भारत की कोई तुलना नहीं है। यह कुन्दनलाल सूद हैं। सारे भारत को निचोडकर जो दौलत दिल्ली मे जमा होती है उसके एक हिस्सेदार हैं। मदनमोहन सहाय को तो तुम जानते ही हो। तुम्हारे पिताजी ने मेरी जिस बैरिस्टरी को खत्म कर दिया मदनमोहन ने बिना किसी हिचक के उसे मार लिया है और यह सूर्यप्रसाद कौशल हैं मुख्यमन्त्री के पुत्र। हमारी विधान सभा के कांग्रेसी सदस्य।'

सूर्यप्रसाद नमस्ते, शेकहैंड आदि, समाप्त करके कुर्सी पर बैठ गया तो सरितसागर ने पूछा 'क्या पियोगे? बीयर या मार्टिनी। खूब मजेदार इटालियन मार्टिनी है।

सूर्यप्रसाद ने शरमाते हुए कहा "बीयर।

बैयरे को हुक्म देने के बाद सरितसागर ने पूछा 'और सूर्यप्रसाद क्या हाल है?'

'अच्छा नहीं लग रहा था। घर में कैसा तो घुटन भरा वातावरण बन

गया है। पिताजी के नजदीक जाना ही मुश्किल है। हाल चाल कुछ ठीक स समझ म नही आ रहे हैं इसीलिए आपके पास चला आया।"

'अच्छा नहा लग रहा था इसलिए मेरे पास चले आये सुनकर खुशी होती है। खाओ पियो, मौज करो, बगीचे मे घूम आओ देखो, मिजाज ठीक हो जायेगा। हिल्डा यानी मिस स्ट्राउस रतनपुर घूमने आयी हैं। मेरे जसे बूढे अवश्य ही उन्हे पसन्द नही आयेंगे। अगर तुम उनके घूमने के साथी बनो तो खुश हो जायेंगी। पर सूर्यप्रसाद, अगर राजनीतिक लडाई का हाल जानना चाहते हो तो तुम गलत जगह पर आये हो। मैंने एसा कोई सजय नही नियुक्त किया है जो मुझे लगातार लडाई की रिपोर्ट देता रहे।

इसीलिए तो आपके पास आया हूँ। आप इस विषय मे एकदम निलिप्त हैं इसलिए आपके विचार ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं। फिर आप जसा बुद्धिमान उदयाचल में और कौन है?

ऐसी बात है? आप सब लोग भी कान खोलकर सुन लीजिए, सूर्यप्रसाद मुझे उदयाचल का सबसे अक्लमन्द आदमी कह रहा है। शुक्रिया। बुढापे मे इस तरह की प्रशसा की जरूरत होती है। हाँ सूर्यप्रसाद मैं बहुत हद तक निलिप्त जरूर हूँ, पर एकदम से नही। मैं जानता हूँ कि वर्तमान राजनीतिक सकट की जिम्मेदारी मुझ पर भी काफी मात्रा मे है। कौशलजी मेरे साथ डटकर जमे रहे इसके लिए मैं उन पर श्रद्धा करता हूँ और इसी वजह से मैं उनकी विजय चाहता हूँ। इसमे मेरी और कोई दिलचस्पी नही है, क्योंकि यह बात सबको मालूम है कि नये मन्त्रिमण्डल में अगर मुझे स्थान मिल भी जाय तो मैं उसे नहा लूगा और स्थान मिलने की सम्भावना भी नही है।'

मदनमोहन सहाय ने कहा, 'आप मन्त्री बनें या न बनें, उदयाचल की राजनीति से बिल्कुल परे रहना आपके लिए सम्भव नही होगा।

'होगा सरितसागर ने जोरदार आवाज मे कहा, सालों मैंने राजनीति नही की थी इससे उदयाचल का कोई नुकसान हुआ हो सो तो मुझे नहा लगता। मेरे मन्त्री बनते ही गडबडी शुरू हुई। कौशलजी सुख चन स राज चला रहे थे। सुदर्शन दुबे खुशी खुशी कांग्रेस नाम की गाय को दुह रहे थे। पर न जाने कहाँ स मैं टपक पडा और सबकुछ गडबडा गया। अब राजनीति स बाज आया।'

सूर्य ने कहा, 'राजनीति आपका पेशा नही है?"

सरितसागर ने टिप्पणी की— पेशा भी नही और नशा भी नहीं। पेशा मेरा कानून है, और नशे तो कई हैं, पर उनमें राजनीति शामिल नहा है। हमारे मुल्क मे राजनीति इतने लोगों का पेशा बन गयी है कि बेकारी बढ गयी और रोज बढती ही जा रही है। भारतीय गणतन्त्र मे यह एक बहुत भारी कमजोरी

है। राजनीति जिनका पेशा है, वे जैसे भी हो राजनीति करेंगे ही। आप अपने मुल्क के चर्चिल को ही लीजिए—राजनीति करते हैं यह उनका पेशा है। पर प्रधानमन्त्री न होने पर भी वह बेकार नहीं हो जाते। किताबें लिखते हैं, *तस्वीरें बनाते हैं सारगर्भित भाषण देते हैं समय अच्छा ही बीत जाता है।* ब्रिटेन के शासन की जिम्मेदारी उनके हाथ में न हो, तब भी वह युग युग से जिस क्षेत्र से प्रतिनिधि चुन जाकर पार्लियामेंट में आ रहे हैं उनके प्रति अपने कर्तव्य के बारे में वह हमेशा चौकन्ने रहते हैं। आज आपके हेरल्ड मकमिलन इतनी बडी मकमिलन कम्पनी के डायरेक्टर बोर्ड के अध्यक्ष हैं, एक दिन शायद वह प्रधान मन्त्री बनेंगे। पर मन्त्रि पद से मुक्त होने के बाद वह फिर अपने व्यापार में लौट जायेंगे। यानी मन्त्रित्व के अलावा भी उनके पास करने लायक कुछ और काम है। व बेकार नहीं हैं। अमरीका में जो आज परराष्ट्र सचिव *हैं वह कल मन्त्रिपद से मुक्त होने के बाद किसी विश्वविद्यालय के उपकुलपति* या किसी अनुसन्धान संस्था के डायरेक्टर बन जायेंगे। बस एक हमारा मुल्क ही ऐसा है जहाँ बहुत बडी तादाद में यह नयी श्रेणी खडी हो गयी है जिसे राजनीति करने के अलावा और कोई काम ही नहीं है। बुरा न मानो सूर्यप्रसाद मैं कौशलजी के बारे में ही कह रहा हूँ। असल में वह वकील हैं। कभी कृपाणपुर की जिला अदालत में उनकी अच्छी प्रैक्टिस चलती थी। पर आज मुख्यमन्त्री का पद छोडकर फिर कृपाणपुर की जिला अदालत में वकालत करना उनके लिए असम्भव है। ऐसा करने से उनकी इज्जत में बट्टा लगेगा। आमदनी भी नहीं होगी। निराशा के मारे वह खत्म ही हो जायेंगे। इसीलिए उन्हें मुख्यमन्त्री बने रहना पडेगा। अगर किसी भी तरह वह इस पद पर न रह सके तो दिल्ली की कृपा से केन्द्रीय मन्त्री का पद पा जायेंगे। या फिर किसी प्रान्त के आलसी और उदार राज्यपाल बनेंगे। इनके बिना वह बेकार हो जायेंगे क्योंकि वह और कुछ नहीं कर सकते। हो सकता है कि कौशलजी एकदम बेकार न हों क्योंकि वह कवि हैं उनका कवि-यश है। हाँ इतने सालों तक मुख्यमन्त्री का काम करने के बाद भी अभी कविता देवी उनके कब्जे में है यह नहीं कहा जा सकता। पर हमारे यहाँ के राजनीतिक नेताओं या मन्त्रियों में से तो किसी के पास अपना कोई काम नहीं होता। इसीलिए हम देखते हैं कि मन्त्री या मुख्यमन्त्री बने रहना चाहते हैं। टिल डैथ डू अस पार्ट।'

कम से कम आप पर यह बात अवश्य ही नहीं लागू होती। मदनमोहन सहाय ने कहा।

जोर देकर सरितसागर ने कहा, "हर्गिज नहीं। मैंने मन्त्री का पद कभी नहीं चाहा था, अब भी नहीं चाहता और कभी चाहूँगा भी नहीं। मेरे लिए

के पद के लिए मुझे कोई मोह नहीं है और मैं नम्रता म यह भी निवेदन करता हू कि मेरे-जैसे लोग अपने हिंदुस्तान मे बहुत हैं अगर न होते तो हमारे गणतन्त्र की राजनीति मिलावट से न जाने कबकी खतम हो जाती।

सूर्यप्रसाद ने पूछा, 'राजनीति पेशा क्या नहीं बन सकती ?'

'बन तो सकती है, पर ऐसा होना उचित नहीं है। हमारी राजनीति में बारह आने गुटबाजी है। गुट का अग्रजी प्रतिशब्द है—पालिटिक्स। इसमे उपदल हैं और उपदल के भी अन्दर हैं अपदल। पालिटिक्स का मतलब है—आर्ट आफ गवनमेण्ट। हम जिसे पालिटिकल साइन्स कहा करते हैं मार्किन विश्वविद्यालय मे उसी को आर्ट आफ गवनमेण्ट कहते हैं। एक पराधीन देश की राजनीति देश को स्वतन्त्र बनाना है और स्वतन्त्र देश की राजनीति है देश का शासन करना और उसे प्रगति के रास्ते पर ले जाना। इसके लिए चाहिए अध्ययन विचार विश्लेषण और सबसे ज्यादा चाहिए काम म एक निष्ठा। हमारी राजनीति म असली काम बहुत थोडा है और फालतू काम बहुत अधिक। नतीजा यह है कि आज जब तुम मन्त्री हो तो तुम्हारे आदर स्वागत की सीमा नहीं है और शेर बकरी एक ही घाट पर पानी पीते हैं। कल जब तुम मन्त्री नहीं रहोगे तो कोइ तुम्हारी ओर देखेगा भी नहीं तुम खुद भी अपनी इज्जत नहीं करोगे। तुम्हारे लिए करने को कुछ नहीं है तो तुम फिर मे मन्त्री बनना चाहोगे और इसके चलते तुम क्या क्या करोगे ? पालिटिक्स यानी गुटबाजी करोगे। और गुट बनाने के लिए वतमान मन्त्रियों के पीछे पडोगे उन्हें परेशान करोगे। जाति भेद साम्प्रदायिकता, कुसस्कार—इन सबको गुट मजबूत करने के काम में लाओगे। और यही है भारतवष की पेशेवर राजनीतिक जिन्दगी। इसमे दल और उपदल के नेता अपनी भलाई तो खूब कर सकते हैं पर देश का सवनाश अनिवाय है।

सूर्यप्रसाद ने कहा इसीलिए तो आपके पास आया हूँ।

यानी इन्हीं सारगर्भित बातो को सुनने ? तो फिर बार-बार आते रहना।'

सो बात नहीं, मेरे मन म एक सशय है।"

अच्छा ?

'सोच रहा हूँ पिताजी के साथ राजनीति करता रहूँ या और कुछ करूँ।

बाप रे यह तो बडी भारी समस्या है। स्वय हैमलट को भी ऐसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ा था।

हिल्डा स्ट्राउस बोल उठी "सरित तुम उनकी बहुत लेगपुलिंग कर रहे हो।'

बिल्कुल नहीं। सुन लो सूर्यप्रसाद, वकालत करते करते मेरी जबान बहुत तेज हो गयी है। मैं जो कुछ भी कहूँगा साफ-साफ कहूँगा। इतना तो तुम जरूर

समझते हो कि अपने पिताजी के प्रभाव के बिना तुम एम० एल० ए० नहीं बन सकोगे।"

'समझता हूं।

'अब दो ही प्रश्न रह गए हैं। एक तो यह है कि अगर बाप का प्रभाव और क्षमता हो तो लड़के उससे क्यों न फायदा उठायें और दूसरी बात यह कि जिस योग्यता को मैंने स्वयं नहीं अर्जित किया है उसे बाप या किसी की दया से हम लें या नहीं? दो ही प्रश्न महत्त्वपूर्ण हैं। हिंदू तार्किक चाहें तो इस बात को लेकर पांच वर्षों तक लगातार बहस कर सकते हैं, पर तर्क द्वारा इसकी मीमांसा नहीं होगी। व्यक्तिगत सिद्धांत ही इसकी एकमात्र मीमांसा है।

आपकी क्या राय है?'

'मेरी? पहले तुम सुनाओ? क्यों तुम राजनीति करना चाहते हो?

हां।

तो फिर अपना क्षेत्र बना लो जैसा कभी तुम्हारे पिताजी ने बनाया था। उनके बाप ने उन्हें नेता थोड़े ही बनाया था। उन्होंने देशसेवा की है जेल काटी है, कांग्रेस के नेता चुन गए हैं उदयाचल कांग्रेस को अपने काबू में रखा है। तुम्हारे भाई दुर्गाप्रसाद ने भी अपना क्षेत्र बना लिया है। वह वामपंथी है, फिर भी वह राजनीति का दावा कर सकता है। तुम्हारे पास ऐसा कुछ है?

मैं बहुत दिनों तक छात्र नेता था।

छात्र नेता कैसा?

छात्र-कांग्रेस का नेता।

छात्र नेता मेधावी छात्र होता है और परीक्षा में प्रथम आता है। दूसरा छात्र नेता बनता है गुण्डा छात्र जिसके रोब में आकर दूसरे छात्र कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं और उससे मास्टर भी डरते हैं। छात्र कांग्रेस जैसी किसी संस्था के बने रहने का कोई अर्थ नहीं है। यह तो वामपंथी दल का निर्बोध अनुकरण मात्र है। इसके अलावा छात्र तो तुम्हें वोट देकर विधान सभा के लिए अपना प्रतिनिधि नहीं न चुन सकते?

नहीं।

फिर? अगर राजनीति करना चाहते हो तो चुनाव का क्षेत्र चुन लो, शहर या गांव, और फिर वहां जाकर काम करो। कांग्रेस दल के लिए करो या और किसी दल के लिए। जन साधारण के सामने अपनी योग्यता प्रमाणित करो। नेतृत्व करने के पहले जनता की सेवा करो। पहले लोगों की श्रद्धा और आस्था प्राप्त करो। जनता का और अपना स्वार्थ समझो। धूल से ऊपर आ जाओ सूर्यप्रसाद धूल से ऊपर आ जाओ। जो ऐसा नहीं करेगा वह भावी भारत का नेतृत्व नहीं कर सकेगा। देख नहीं रहे हो ऊपरी सतहवाले कितनी

जल्दी-जल्दी खत्म हो रहे हैं ? देश स्वतन्त्र हुआ शासनकार्य के लिए पुकार आयी तो बड मँभोले—सब नेता रातोरात म त्री उपमन्त्री राज्यपाल बन गये। और कुछ नहीं तो कम से कम एम० पी० या एम० एल० ए० ही सही। काग्रेस का काम और जनता की सेवा करने के लिए कोई बाकी ही नहीं रह गया। मन्त्री अमर तो नहीं हैं। उनके मरने के बाद देश का नेतृत्व कौन करेगा ?

सूर्यप्रसाद ने डरी डरी जबान से जवाब दिया 'क्यों ? हम करेंगे।"

'तुम लोग ?' सरितसागर बीयर पीते पीते व्यग्य से हँसकर बोले बहुत अच्छी बात है। पर जनता तुम्हें मानेगी क्या ? आज तुम अपने पिता के प्रभाव से एम० एल० ए० बने हो। तुम्हारा अपना अर्जित नेतृत्व कहा है ? दल की ताकत से अगर जनता तुम्हें मान ही ले तो भी तुम देश का शासन नहीं कर पाओगे। तुम लोगो का खत्म करनेवाले पनप रहे हैं—खेतो के मैदान मे कल कारखानो मे बन्दरगाहों मे जहा अनगिनत भारतीय खून पसीना एक करके मेहनत कर रहे हैं फिर भी दोनो वक्त भरपेट खाना नहीं मिलता। गणतन्त्र की आवाज उन तक पहुच गयी है। वे जानते हैं कि असली सत्ता-शक्ति उन्हा के हाथो मे है। हम उनके नाम पर जो कुछ कर रहे हैं उसका सौवा हिस्सा भी उन्हें नहीं मिलता है। असल मे न तो हम उन्हें जानते हैं और न पहचानते हैं। अगर उनकी भाषा हम समझ भी लें, तो उनकी बातें सुनने का वक्त हमारे पास नहीं है। उनके दिल की आवाज हम नहीं समझते। तुम्हारे साथ उनकी बात चीत का कोई रिश्ता नहीं है। अगर उनमे से कोई अपनी कर्मशक्ति और सेवा द्वारा नेतृत्व की सीढियां चढकर ऊपर आ सके तो राजनीति म वही सफल होगा। अगर ऐसा नहीं हुआ तो हम जो पहले से चलते आ रहे मुसाफिर है हमारे विदा लेने के बाद करीब करीब अध अराजक भारत तुम लोगो का अत्याचार बहुत थोडे ही दिन सहन कर पायेगा। उसके बाद क्या होगा उस भविष्य की मैं कल्पना भी नहीं कर सकता।'

दफ्तर मे टेलीफोन बजने की आवाज आयी। बेयर ने आकर कहा, 'वित्तमन्त्री का टेलीफोन आया है।"

सरितसागर सबसे माफी मागकर उठते हुए बोले मुझे फोन करने से कोई फायदा नहीं, फिर भी वे टेलीफोन करते रहते हैं। मैं अभी आया।'

टेलीफोन उठाकर बोले, "नमस्ते दुर्गाभाईजी !

दूसरे किनारे से आवाज आयी "दुर्गाभाई नहीं मैं कृष्ण द्वैपायन हूँ। नमस्ते।'

अप्रस्तुत होकर सरितसागर ने कहा, "माफ कीजिएगा कौशलजी बेयर ने मुझे गलत नाम बताया था।

'बहुत व्यस्त हैं क्या ?'

'बहुत। मन्त्रित्व तो केवल नाम भर को टिका हुआ है। प्रक्टिस भी नहीं कर सकता इसलिए बिल्कुल बेकार कामों में डूबा हुआ हूँ।

"कबिनेट मीटिंग में क्यों नहीं आये ?'

जरूरत नहीं थी इसीलिए। मन्त्रिमण्डल को भंग करने के लिए विधान सभा में कोई बिल पेश करने की जरूरत नहीं थी। अब तो कानून मन्त्री बिल्कुल अनावश्यक है।

स्वायत्त शासन ?

'अब तो हर मन्त्री स्वायत्त शासन का स्वप्न देख रहा है, मैं उसमें भी गैर हाजिर हूँ।'

सुनिए कोठारीजी, एक जरूरी बात है।'

'कहिए।

"नये मन्त्रिमण्डल में आपको शामिल होना पड़ेगा।

क्या मतलब ?

'मैं और किसी को बुलाऊँ या नहीं पर आपकी मुझे जरूरत है।

यानी नया मन्त्रिमण्डल आप ही बनायेंगे ?

'जरूर। और नहीं तो कौन बनायेगा ? आप '

"बाप रे ! मैं सात जिन्दगियों में भी ऐसा नहीं कर सकता। पर सुल्तान दुबे ?'

'आज सवेरे सवेरे सबसे पहले सुल्तान दुबे की ही शक्ल देखी है और एक बार रात को फिर देखूँगा ऐसा लगता है। सवेरे मोल भाव करने आये थे रात को मिन्नतें करने आयेंगे।

आप बिल्कुल निश्चिन्त हैं ?

पन्द्रह आना। फिर भी कुछ काम बाकी ही है हो जायेगा। आज दिन भर है, रात भर है। सोच रहा हूँ कल सवेरे शहर से बाहर जाऊँगा।

'कहाँ जायेंगे ?

"यहाँ से सत्तीस मील दूर जनकपुर गाँव में मेला है पंचायत का मेला। मुझे ही उद्घाटन करना है।

यानी आज रात के अन्दर ही विजय निश्चित करके जायेंगे आप ?'

उम्मीद तो ऐसी ही करता हूँ।'

'अजीब आदमी हैं आप। मैं पहले ही से आपका अभिनन्दन कर रहा हूँ।

'अभिनन्दन की जरूरत नहीं है आपको मन्त्रिमण्डल में आना पड़ेगा।

'अब मुझे रिहा करना पड़ेगा, कौशलजी ! मन्त्री का पद अब मुझसे बिल्कुल नहीं बर्दाश्त हो रहा है। अगर हाईकोर्ट में खड़े होकर 'मी लार्ड' की माला न जपने लगूँगा तो मेरा दम घुट जायगा।

"मन्त्री होकर मरें तो स्वर्गलाभ होगा।

'ऐसा तो दुर्योधन आदि के साथ भी हुआ था। उसका मुझे तनिक भी मोह नहीं है।'

'मजाक नहीं, मन्त्री आपको बनना ही पड़ेगा। मन्त्रिमण्डल बनाने की जिम्मेदारी मिलने के छब्बीस घण्टे पहले ही मैं आपको आमन्त्रित कर रहा हूँ। आपकी मुझे जरूरत है।'

'मुझे लेकर आप फिर मुसीबत में पड़ जायेंगे।

'वह सिरदर्द मेरा है। आप तैयार रहिए। नमस्ते।

सरितसागर ने बैठक में लौटकर देखा, सूर्यप्रसाद चला गया था। मदनमोहन सहाय ने कहा बेचारा आपके भाषण का तेज नहीं सह सका।

क्षुब्ध स्वर में सरितसागर ने कहा 'मैंने बहुत बड़ी बड़ी बातें कही थीं। सूर्यप्रसाद चला गया यह उसने ठीक ही किया। अगर वह अभी यहाँ होता तो उसके सामने खड़े होने में भी मुझे शर्म आती।

हिल्डा बोल उठी क्या बात हो गयी ? तुम इतने परेशान क्यों दिख रहे हो ?'

सरितसागर ने कहा आई हैव बीन सेंटेंस्ड टू एट लीस्ट टू इयर्स इम्प्रीजनमेंट। कम से कम दो सालों के लिए मैं कैद हो गया।'

हिल्डा ने कहा 'मतलब ?"

सरितसागर ने बीयर का ग्लास एकबारगी खाली कर दिया बोले 'मतलब नगर का समय खत्म हो गया। मैं कल भाग रहा हूँ।

"कहाँ ?'

बम्बई। और वहाँ से यूरोप। तुम मेरे साथ चलोगी, हिल्डा ? चलो तो एक अच्छा खासा स्कैण्डल हो जायगा।'

सत्रह

दफ्तर लौटकर कृष्ण द्वैपायन सीधे अपने खास कमरे में जाकर तकिया से टेक लगाकर बैठ गये। पद्मादेवी के साथ बातचीत से उनका मन एकसाथ ही क्रोध और दुःख दोनों से भारी हो उठा। क्रोध इसलिए आया था कि आज के इस भयंकर संकटकाल में, जब कि वह लगातार संग्राम से परेशान हैं तब पद्मादेवी

ने उन्हें सबकुछ छोड़ देने का उपदेश दिया। और इतना ही नहीं जो मानसिक शक्ति आज उनके भीतर प्रचण्ड हो उठी है जो संग्राम में उनके विजय प्रण का प्रधान स्रोत है जिस भयानक जहर को वह गुप्त रूप से खाये रहे उसका पद्मादेवी को केवल पता ही नहीं है बल्कि ऊपर से आँखों में उँगली डालकर उन्होंने दिया भी दिया है।

साथ ही एक व्यथा से उनका मन भारी हो गया। उन्होंने पद्मादेवी को अपने जीवन में कोई बहुत बड़ा स्थान नहीं दिया था पर आज वे मंत्रिमंडल में उनकी अवश्यम्भावी विजय को देखते हुए यह प्रतिवादस्वरूप कारावास वरेंगी यह बात कृष्ण द्वैपायन जैसे सहन नहीं कर पा रहे थे। उन्हें पत्नी से इतने बड़े सत्याग्रह की आशा न थी। पद्मादेवी को रोकने के लिए जो मूल्य देना पड़ता उसके लिए वह तैयार नहीं थे पर ऐसे समय में पद्मादेवी सबकुछ छोड़कर काशी चली जायेंगी यह वह आसानी से नहीं पचा पा रहे थे। कृष्ण द्वैपायन पत्नी के सामने हार माननेवाले आदमी नहीं थे इसीलिए भोजन के समय उत्तेजित मन से पत्नी को काशी वास की अनुमति तो दे दी थी पर इसके साथ ही मन के किसी अनजाने कोने में चोट सी लगी थी। पद्मादेवी ने जब दुर्गाप्रसाद की पत्नी कमला को जेवर और रुपये देने की अनुमति माँगी तो कृष्ण द्वैपायन ने एकाएक अपने को जाने कैसा कमजोर सा महसूस किया था। इसी कमजोरी की वजह से उन्होंने पत्नी के दान के साथ साथ अपनी ओर से भी कुछ जोड़ दिया था—पोती के लिए एक हार।

क्रोध के साथ ही उनके मन में वह दर्द मानो जमकर बैठ गया। कृष्ण द्वैपायन ने पद्मादेवी के तर्क को स्वीकार कर लिया था। वह जानते थे कि पद्मादेवी की शंका निर्मूल नहीं है। उन्हें मुख्यमन्त्रित्व पर जमे रहने की जिद सवार हो गयी है और यह सच है कि उन्हें जो कीमत आज देनी पड़ रही है आज से छ साल पहले वह उसका विचार भी नहीं कर सकते थे। आज जिनके सहारे वह विजय का रास्ता बना रहे हैं सचमुच ही कल उनकी माँगों को पूरा करने में वह दिवालिया हो जायेंगे। दल की बैठक के चौबीस घण्टे पहले अभी से वह जानते हैं कि उनकी विजय करीब करीब निश्चित है पर साथ ही यह भी जानते हैं कि मन्त्रिमण्डल बनाने के लिए वह बहुत स्वतन्त्र नहीं होंगे—इतना कि दुर्गाभाई देसाई के सामने उनका सिर झुक जायेगा।

टेलीफोन बजा। दूसरे सिरे पर दुर्गाभाई थे।

नमस्ते दुर्गाभाईजी! आपका शरीर ठीक है न? आप पर मैंने बहुत बोझ लाद दिया है इसलिए मेरे मन में चैन नहीं है।

शरीर तो कौशलजी अपना काम जितना हो सकता है उससे कहीं अधिक कर रहा है। उसका कोई कसूर नहीं कसूर तो हम लोगों का है।

"यानी इस उम्र मे शरीर के लिए जितना सम्भव है उससे कही ज्यादा काम हम ले रहे हैं, यही न ?"

दखिए, कौशलजी, पुरान लोगा न जब चार आश्रमो मे जीवन को बाटा था, तब उन्होंने यह कभी नही सोचा था कि मनुष्यो को कभी मन्त्री बनना पडेगा। राजाम्रो के सचिव हुआ करत थ, पर वह कुछ और था। जिस उम्र मे हम वानप्रस्थ लकर सब झमेला से दूर चले जाना चाहिए उस उम्र मे हम पूरे भोगी बनकर झमलों के केन्द्र बन गये हैं।'

"आप ठीक ही कह रह हैं, दुर्गाभाईजी !'

"अजीब बात है कौशलजी, बोलत तो हम ठीक ही हैं पर करत बिल्कुल उलटा हैं।'

"मान रहा हू, दुर्गाभाईजी ! आज आपका मिजाज ठीक नही लगता।

"अगर बुरा न माने तो एक बात कहना चाहता हूँ कौशलजी !"

'कहिए।'

'मेर और आपके, दोना के घर में अशान्ति है। मेर घर में उच्चाकाक्षा की आग है और आपके घर म वैराग्य की भस्मी।'

कृष्ण द्वपायन तुरन्त कुछ नही बोल सके। थोडी देर बाद उन्होंने कहा, जिन्दगी मे सबको सबकुछ नही मिलता, दुर्गाभाईजी ! जिन्दगी की नदी बहते-बहते एक घाट पर आकर भर जाती है, तो दूसरा घाट बिल्कुल खाली। विधाता बडा रसिक है। वह एक हाथ से देकर दूसरे हाथ से ले भी लेता है। आखिर तक जमा और खच का हिसाब करने पर खुश होने लायक शायद ही कुछ बचता हो।

दुर्गाभाई न कहा, "आप कवि हैं। जिन्दगी का सबकुछ रस रहस्य के रूप म ग्रहण करने की शक्ति है आपमें। अब एक काम की बात कहूँ। हरिशकरजी ने मुझे टेलीफोन किया था।

"खुश हैं न ?'

"हिन्दुस्तान आटोमोबाइल का नया कारखाना बनान के लिए सरकारी कर्जा फिलहाल मैं स्थगित कर रहा हूँ। सोचता हू कि नया मन्त्रिमण्डल बन जाने के बाद ही रुपया देना उचित होगा।'

"ठीक है।'

'त्रिपाठीजी चाह रहे थे कि रुपया अभी दे दिया जाये।'

उनका चाहना स्वाभाविक ही है, पर आपने उचित किया।'

'अच्छा, कौशलजी, सरोजिनी सहाय के बारे में आप कितना जानत हैं ?'

काम और नाम से कुछ जानता हूँ पर आँखो से नही देखा है।

"उदयाचल की राजनीति में उनका कितना प्रभाव है और कितन दिना

का है ?

'कुछ ही सालो से है। नेशनल ट्रेड यूनियन मे काम करता हैं। देवी हैं। आप शायद कुछ साल पहले की बात भूल गये हैं। इसी महिला को लेकर कुछ गड़बड़ी हुई थी और आपने स्वयं कांग्रेसाध्यक्ष के सामने यह बात उठायी थी। फलस्वरूप इन्हें बिलासपुर छोड़ना पड़ा था। सरोजिना सहाय न थोड़े दिनों तक उत्तरप्रदेश मे काम किया, अब फिर रतनपुर मे अवतरित हुई हैं। पर आप मुझसे क्यो पूछ रहे हैं ? आपने तो हाल ही मे उन्हें देखा है ?

मैंने उन्हें एक बार देखा है पर बातचीत नहीं हुई थी। अब याद आ गया।

' आपने सरोजिना सहाय को हाल ही मे देखा है यह मुझे कैसे मालूम हो गया, सो आपने नहीं पूछा।

कौशलजी मुझे आप कभी-कभी जितना बेवकूफ समझते हैं मैं उतना बेवकूफ नहीं हूँ। वर्तमान अवस्था मे किसी भी राजनीतिक घटना से आप अनजान नहीं रह सकते यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ।

आपसे कहने मे कोई संकोच नहीं है। परसो रात की बैठक मे आपकी उपस्थिति की खबर मुझे बहुत देर से मिली। मैं सोच भी नहीं सका था कि आप उस वाद विवाद मे शामिल होंगे।

' शामिल नहीं हुआ था सिर्फ सुना भर है।

आप पर मुझे पूरा विश्वास है और मैं फिर कह रहा हूँ आप अगर मुख्यमन्त्री बनने को तैयार हो तो मैं आपके अधीन काम करूंगा। दूसरे गुट के साथ हाथ मिलाकर मुझे हटाने की आपको जरूरत नहीं है। आप एक बार साफ साफ कह दें, तो मैं तुरन्त रास्ते से हट जाऊंगा।

मेरे मनोभाव को आप अच्छी तरह जानते हैं। मुझे मुख्यमन्त्री बनने का लोभ नहीं है उसकी योग्यता भी नहीं है। मेरे लिए मन्त्री का पद त्यागकर बाकी जीवन जन सेवा मे बिताना ही उचित होगा। पर यह सत्साहस भी मेरे अन्दर नहीं है। कल के चुनाव मे सरासर आपका समर्थन करना भी मेरे वश का नहीं है। चुनाव मे मुझे निरपेक्ष रहना पड़ेगा। अवश्य यह बात सबको मालूम है कि हरिशंकर त्रिपाठी से मैं आपकी कभी तुलना नहीं करता। जो लोग मतदान करेंगे उन्हें मैंने यह साफ बता दिया है। उन्हें यह भी बता दिया है कि यदि आप मुख्यमन्त्री बनें, तो मेरे लिए मन्त्रिमण्डल मे रहना सम्भव होगा। आशा करता हूँ कि आप यह महसूस करेंगे, कौशलजी कि इससे ज्यादा कुछ करना मेरे लिए सम्भव न होगा।

"जरूर-जरूर दुर्गाभाईजी ! आपने जो कुछ भी किया है उससे मैं निश्चिन्त हूँ।'

क्या सोच रहे हैं ? '

' बहुत खराब नही, दुर्गाभाईजी !

"मेरी धारणा है, कि आपको चिंता का तो कोई कारण नही है फिर भी '

' फिर भी क्या ?'

'फिर भी असल बात यह है कि अबकी बार मुख्यम त्री पद के लिए आपको क्या कीमत देनी पड रही है !'

अबकी बार कृष्ण द्वपायन तुर त कुछ नहीं बोल सके।

दुर्गाभाई ने कहा, "कुछ तो आपको देना ही पडगा, यह म जानता हूँ, समझता भी हू। दलगत राजनीति की गदगी को मैं गिनता नही हूँ पर गन्दगी कितनी भयकर है इसका मुझे अ दाजा है। पर मैं उम्मीद करता हूँ कि आपने बहुत बडी कीमत देने का वादा नही किया होगा और कभी करेंगे भी नही।

कृष्ण द्वपायन न कहा "कुछ कीमत तो दनी ही पडेगी यह म मान रहा हूँ। अगर आप सक्रिय रूप से मेरा साथ देते, तब मैं जरा भी कीमत न देता। पर मैं भी आपकी तरह यह उम्मीद करता हूँ और कोशिश भी करता हूँ कि अधिक न देनी पडे।

'ईश्वर आपकी सहायता करे, कौशलजी, इससे और ज्यादा मैं कह नहीं सकता।

टेलीफोन रखकर उन्होने देखा कि अवस्थी आकर एक कोन म बठा है। उसकी आँखो मे आँखें डालकर उन्होन पूछा, 'क्या हाल है ?

अवस्थी ने सील मोहरबन्द एक लिफाफा उन्हे दे दिया।

लिफाफा खोला तो कृष्ण द्वपायन को उसमे एक रिपोट मिली। पढते समय उनके माथे पर सिकुडनें पड गयी नाक फडकने उठी और एक निष्ठुर हँसी स गाल म गढे पड गये।

रिपोट को दुबारा पढा। कुछ सोचत रह फिर अवस्थी की ओर देखते हुए बोले, गुड वक।

अवस्थी मर झुकाकर बोला, 'मुझे कुछ कहना था।

' मैं जानता हूँ। तुम्हे बहुत-कुछ कहने को है। बिना तुम्हारे बोले हा मैं जानता हू।

' आज रात को कहूँ ?

कहने की जरूरत नही है। मिलेगा। जो जो चाह रहे हो उससे बहुत ज्यादा मिलेगा। पर आज मेरे पास समय नहीं है।

गद्दी पर सोयेंगे न ?

"हूँ।'

"आज आपको कुछ आराम चाहिए। ये दिन बहुत ही परेशानी म बीत रहे ह।'

कृष्ण द्वपायन न एक बार अवस्थी की आँखो की ओर देखा। फिर कहा, "दुर्गाप्रसाद आया है ?'

"नीचे वठे हैं।'

"उसे ले आओ।

तीन साल के बाद अपने प्रियतम पुत्र से भेंट करने के लिए कृष्ण द्वपायन तैयार हो गये। अवस्थी के जाते ही उन्होंने एक जरूरी फाइल खोल ली। पहला पृष्ठ देखकर उन्होने दुर्गाभाई को फोन किया, बोले, 'आपको तकलीफ दे रहा हूँ, दुर्गाभाईजी समय बिल्कुल नहीं है, नही तो मैं स्वय उपस्थित होता।'

ऐसा कौन सा जरूरी काम है ?

'मेरे बेट दुर्गाप्रसाद के खिलाफ दो केस हैं।

'हाँ।

"रतनपुर का केस कल से शुरू है ?"

"हो सकता है।'

'एकाएक मुझे मालूम हुआ है कि पुलिस इस मामले मे बहुत ढील दे रही है। जाच पडताल ठीक से नहीं हुई और सरकारी वकील केस को खुद न लेकर एक एसे सहकारी को दे रहे हैं जिससे जीतने की उम्मीद कम होती है।'

"मुझे तो यह सब नहीं मालूम था।

'न मालूम होना ही सम्भव है। खैर, अगर आप इस विषय म थाडी निगरानी रखें तो अनुगहीत हाऊँगा। किसी राजनीतिक अपराध मे ही दुर्गाप्रसाद को गिरफ्तार किया गया था। जमानत पर छूटा है। गिरफ्तारी का आदश मैंने ही दिया था। मुकदमा कडाई स चलना चाहिए। मुख्यमन्त्री का बेटा होने के नाते ढील दना ठीक नही रहेगा।

'ठीक है मैं गह सचिव से बात करता हूँ। पर यह बात लेकर तो मेरे पास तक आने की कोई वजह नही दिखायी पड रही है कौशलजी !

"आप ठीक ही समझे, मृदु हँसी हँसकर कृष्ण द्वपायन ने कहा "दूसरा कारण भी है। बता रहा हू। गहसचिव को फोन करने पर दुर्गाप्रसाद के बारे मे एक और खबर आपको मिलेगी। वह मेरा ही आदश है इसके अलावा और कोई चारा नहा रह गया था दुर्गाभाइजी ! अब असली बात आपको बताऊँ। अभी अभी मुझे एक अनोखी रिपोट मिली है।'

"रिपोट ?"

"बहुत विश्वस्त सूत्र से।"
'हूँ।"
'सुदर्शन दुबे मेरे साथ समझौता करने को तैयार हो गये हैं।"
"यह बात है?"
"एकमात्र शर्त है।
"वह क्या?"
"आप और मैं सहमत होकर नया मन्त्रिमण्डल बनायेंगे।'
जोर अवश्य ही 'सहमत' पर होगा।'
ऐसा ही लगता है।"
'अगर हम राजी हो जायें तो?'
"कल बैठक मे दल के नेता के लिए सुदर्शन दुबे स्वय ही मेरा नाम प्रस्तावित करेंगे। वह चाहते हैं कि आप इसका समर्थन करें।
"नहीं तो?
कान्टेस्ट होगा। सुदर्शन दुबे प्रस्ताव मे हरिशकर त्रिपाठी का नाम रखेंगे, जिसका समर्थन महेन्द्र वाजपेयी करेंगे।'
'अब आपकी क्या राय है?'
'अभी अभी तो रिपोर्ट मिली है। अभी कुछ सोचा नही है। आपको बता दिया, सलाह दीजिए।'
'मेल-जोल से काम करना तो सबसे अच्छी बात है, कौशलजी!'
जरूर, पर राजनीति मे ऐसा बहुत-कुछ होता है जो किसी तरह मिल तो जाता है पर मेल कभी भी नहीं खाता है।'
'इसके अलावा सुदर्शन दुबे की असली चाल को समझना पडेगा।"
'इसके पीछे एक चाल है दुर्गाभाईजी सिर्फ सुदर्शन दुबे की नही हरिशकर त्रिपाठी की भी।
कौन सी चाल?
'उसे अच्छी तरह समझना पडेगा। आप अच्छी तरह सोच लीजिए, अगर कुछ सलाह लेनी हो तो मेहरबानी करके टेलीफोन कीजिएगा।'
"जरूर।'

टेलीफोन रखने से पहले ही कृष्ण द्वैपायन को मालूम हो गया कि दुर्गाप्रसाद कमरे के भीतर आया है। अवस्थी अपने साथ ही लाया है। कमरे मे आकर दुर्गाप्रसाद स्तब्ध खडा रह गया। उसने पिता को देखा। चेहरे पर कोई खास परिवर्तन नही हुआ है। बस, हड्डियाँ कुछ उभर आयी हैं और आँखों के नीचे कुछ थकावट के चिह्न हैं। गौर से देखा तो पिताजी का रग कुछ मलिन पड

चमडी थोडी ढीली।
ायन न भी लडके को देखा। स्वस्थ सुदर्शन दुर्गाप्रसाद। प्रथमला
र घुटने तक लम्बा गेरुए रंग का खद्दर का कुर्ता पहन रखा है।
। छाती के दो चार खिचडी बाल दिखायी दे रहे हैं। दुर्गाप्रसाद
धूप की वजह से ताव की तरह हो गया है। कभी वह चौकिया
रखा करता था अब सफाचट रखता है।
द ने आगे बढकर घुटने छूकर प्रणाम किया। कृष्ण द्वैपायन कहने
प्रणाम की जरूरत नही है पर बोले बैठो। ठीक हो न ?
कृपा।
ायन ने अवस्थी से कहा तुम अब जा सकते हो। गोपालकृष्ण
एगा उसे बढाना रामचन्द्र को भी खबर दो।
वे चले जाने के बाद बेटे से बोले बहू बच्चे ठीक हैं ?
आप कुछ कमजोर दिख रहे हैं।
कृष्ण द्वैपायन ने कहा अपनी ओर देखो बालों में सफेदी आ रही
रा बाप हूं कितना बूढा हो गया जानते हो ?
ी हुए हैं आप।'
' ? तो फिर कह रहे हो जिन्दा हूं।
ाद हंस दिया— आप खूब जिन्दा हैं, पिताजी।
ायन ने कहा 'सिर्फ जिन्दा नही, अब भी कृष्ण द्वैपायन कौशल
ते हो दुर्गाप्रसाद ?
र सही है पिताजी।'
पायन आवृत्ति करने लगे— दिव स्पृशति भूमिञ्च शब्द पुण्यस्य
त् स शब्दो भवति तावत् पुरुष उच्यते।
दुर्गाप्रसाद ने कई बार महाभारत के श्लोक सुने हैं। इन्द्रद्युम्न
ाणी सुन रहे हैं— पुण्य कर्म की प्रशंसा जब तक रहती है तब तक
ष मे गिना जाता है।
की थोडी सी उचाट हुई।
पायन ने कहा "तुम्हे बुलवाया है। न बुलाने से तो तुम आओगे

बीच मे आता हूं पिताजी। मां के पास आता हूं।'
। मैं जानता हूं। मेरे सामने खडे होने का साहस नही होता ?
की कमी नही है, पिताजी।
क्यों नही आये ?
नही मिला, पिताजी। आप अपने काम मे व्यस्त रहते हैं। मैं भी

ामन्त्री

अपने काम म लगा रहता हूँ। हम दोना के रास्ते अलग हैं। हमारे लक्ष्य भी अलग हैं। इसके अलावा, आपने अपना दान करने के लिए मुझे मना किया था।"

"सो तो किया था।"

"मुझसे कोई काम है पिताजी ?"

"हाँ। जरा शान्ति से बैठो, तुमसे बातें भी करनी हैं और काम भी है।"

दुर्गाप्रसाद तकिया लेकर बैठ गया।

कृष्ण द्वपायन थोडी देर चिन्ता मे डूबे रहे, फिर बोले, "उदयाचल की राजनीति का हाल चाल जरूर मालूम होगा।"

"मोटी मोटी बातें तो मालूम ही हैं।"

"कल हमारी पार्टी के नये नेता का चुनाव होगा, जरूर जानत होगे।"

"जानता हूँ।'

"तुम क्या सोचत हो, मैं जीत जाऊँगा ?

"मैंने इस पर सोचा नही है पिताजी, बल्कि मान लिया है कि आप जीत जायेंगे।"

"वजह ?'

"साधारणत आप हारत नही।

'यह कोइ साधारण बात तो नही।'

"सुदर्शन दुबे और हरिशंकर त्रिपाठी आपके योग्य प्रतिद्वन्द्वी नही हैं।

'सच बोल रहे हो ?'

"मेरी तो यही धारणा है। काग्रस की राजनीति इतनी नीचे उतर गयी है पिताजी, कि आज शायद सबकुछ सम्भव हो, पर अगर आप दुबेजी और त्रिपाठीजी के सामने हार जायें तो मुझे आश्चर्य होगा।

पहली बार तुमसे ही बता रहा हूँ, सुनो मैं हारूँगा नहीं जीत जाऊँगा।"

दुर्गाप्रसाद चुप रह गया।

'सुनकर खुश नहीं हुए ?

"अवश्य, पिताजी!'

'मैं जीतूगा, और इसीलिए तुम्हे बुलवाया है।'

"आपकी इस विजय से मेरा तो कोई सम्बन्ध नही है पिताजी!'

'ऐसी जिदभरी बातें मत करो। इस बार विवाद मे पड़ने तुमसे दो और बातें करना चाहता हूँ।

"कहिए।'

"मैंने वसीयतनामा लिखा है।'

"सुना है।"

"अपनी माताजी से ?

जी हाँ।'

मेरी सम्पत्ति के हिस्से से तुम वंचित हो।

'मुझे सम्पत्ति का लोभ नहीं है पिताजी!'

'हाँ एक बात है। अगर तुम मेरे जीते जी कांग्रेस में आ जाओ तो तुम्हें तुम्हारा हिस्सा मिल जायेगा।

यदि सम्पत्ति की आवश्यकता हुई तो।

"दूसरी बात चन्द्रप्रसाद के बारे में है।'

'कहिए।'

'उसका कुछ हाल मालूम है?

वह तो मेरे यहाँ अक्सर आता है। कमला यानी आपकी बहू से खूब पटती है।

"अच्छा? चन्द्रप्रसाद को एयरफोर्स में कमीशन मिला है।

'जानता हूं।

'सुनकर मुझे खुशी हुई है। बिना किसी सहायता के उसने अपनी योग्यता के बल पर अपने लिए कुछ कर लिया।'

जी हाँ खुशी की बात है।

'अब उसकी शादी करनी है।

वह तो बसन्त से शादी करने की सोच रहा है।

तो तुम्हें यह भी मालूम है?

चार एक दिन पहले वह बसन्त को लेकर मेरे यहाँ आया था।

अच्छा! तब तो तुम सबकुछ जानते हो?

कम से कम इस विषय में थोड़ा जानता हूँ।

"शादी कर देने से ठीक ही होगा। तुम्हारी क्या राय है? बसन्त लड़की तो अच्छी है।

'जी हाँ।

पर दुर्गाभाई शादी का प्रस्ताव लेकर मेरे पास नहीं आयेंगे। वह बहुत ही अहंकारी हैं। प्रस्ताव लेकर खुद मुझे ही उनके पास जाना पड़ेगा।'

"शायद उसकी जरूरत न पड़े।'

क्यों? दुर्गाभाई राजी नहीं होंगे?

लगता है कि माताजी सारा इन्तजाम कर चुकी हैं। उन्होंने दुर्गाभाईजी को पत्र लिखकर यह अनुरोध किया है कि यदि चन्द्रप्रसाद कोई प्रार्थना करे तो ता वह उसे स्वीकार करें। माताजी ने चन्द्रप्रसाद से यह भी कहा है कि वह स्वयं जाकर दुर्गाभाईजी से अनुमति ले, जिससे बेटे के ब्याह का प्रस्ताव लेकर कहीं आपको बेटी के बाप के पास न जाना पड़े। चन्द्रप्रसाद शायद कल की

मीटिंग के लिए रुका है। आपके जीत जाने के बाद वह बसन्त के लिए दुर्गाभाई से अनुमति मांगेगा।

'हूँ। प्लान बुरा नही है, पर अगर मैं न जीत सका तो !'

'तो एक हफ्ता और रुककर जायगा।'

'सुन रहा हू मनोरमा देवी इस विवाह के लिए सम्मति नही देंगी ?"

'न देना ही सम्भव है।'

'उससे शादी रुक तो नहीं जायगी !"

'चन्द्रप्रसाद कहता है कि नही रुकेगी।'

"तुम्हें मालूम है न कि मनोरमा देवी चाहती हैं कि दुर्गाभाई मुख्यमन्त्री बनें ?"

'जैसे हमारी माताजी चाहती हैं कि आप गद्दी छोडकर वानप्रस्थ ले लें।'

'पर तुम्हारी माँ मनोरमा देवी से कही ज्यादा गुस्सैल हैं। दुर्गाभाई अगर प्रथमन्त्री ही रह जायें तो मनोरमा देवी उनकी घर गृहस्थी सुशोभित करती रहेंगी। इधर मैं वनवास नही ले रहा हू, मेरे इसी अपराध के कारण तुम्हारी माँ काशी यात्रा कर रही हैं।'

"हाँ माँ आज रात को ही काशी जा रही हैं।

'आज ही रात को ?

जी हाँ।

'साथ म कौन जा रहा है ?

'चन्द्रप्रसाद।

कृष्ण द्वैपायन चुप रह गये।

दुर्गाप्रसाद ने कहा 'आपको देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा है पिताजी, कल आपका इतना बडा कान्टेस्ट है और आज आप मेरे साथ बैठकर घर परिवार की बातें कर रहे हैं।

कृष्ण द्वैपायन मृदु मुस्कान के साथ बोले, रिलैक्स कर रहा हूँ। बहुत दिनों बाद तुम्हे देखकर खुशी हो रही है। घर गृहस्थी की बात करने लायक अब कोई घर म रह ही नहीं गया है। तुम्हारी माँ तो मुझे देखते ही नीतिशास्त्र सुनाने लगती हैं। उनकी राय मे मेरे जैसा दुर्जन और कोई नही मिलगा। तुम्हारे भाइयो में सब मूर्ख, दम्भी और परावलम्बी हैं। एक चन्द्रप्रसाद रह गया है। उससे साथ एक दो बातें कर लेता हूँ।

दुर्गाप्रसाद ने कुछ नही कहा।

कृष्ण द्वैपायन फिर हँसकर बोले, वनवास की बातें हो रही था न ? मैंने भी इस बारे म न सोचा हो सो बात नहीं। हम बूढ़े यहाँ गद्दी पर जमे क्यों बैठे हैं ? उसे हम क्या नही नये लोगो के लिए छोड़ देते ? इसके कई कारण

है। ऐतिहासिक कारण की ही बात लो। गाधीजी का आदोलन १९२१ से शुरू हुआ। भारत को स्वतत्रता मिली १९४७ म। छब्बीस साल के अन्दर हम सब बूढ़े हो गये। युवक नेहरू भी पचास से ऊपर है। हम बूढ़ों को ही केन्द्र और प्रातो मे शासन काय सभालने के लिए बुलावा आया। १९३० म नये युवकों ने काग्रेस मे शामिल होना करीब करीब छोड ही दिया था। वे क्रातिकारी दलो मे शामिल होने लगे। यहाँ तक कि १९४२ के आखिरी आदोलन की आग म भी जो जलकर मरे वह अधिकाश समाजवादी दल के थ। हम सबके सब तो तब जेल में थे। *इसीलिए देखो जिम्मेदारी किसी के लिए छोड द ऐसा* कोई भी सामने नही है।

सही बात है पिताजी!'

इसके अलावा छोडकर जाऊ भी कहाँ? हिन्दुस्तान म राजनीति एक नया पेशा बन गया है। यह मध्यम वगवालो और धनियो की ही राजनीति है। हम लोग जो इसके बीच आ गये हैं सो हमारी आर्थिक या सामाजिक कोई भी नीव बाकी नहा बची है। आनेवाले बहुत सालो तक यह देखेंगे कि हिन्दुस्तान के राजनीतिक नेता कभी भी अवकाश नही ग्रहण करेंगे। हर नेता गद्दी पर जमा हुआ ही मरना चाहेगा। अवकाश लेकर वे जायेंगे भी तो कहाँ? इग्लड या अमरीका की बात और है। आज जो सेक्रेटरी आफ स्टेट हैं कल वह फोर्ड कम्पनी का डायरेक्टर है। आज जो मन्त्री है कल वह ट्रेड यूनियन, विश्वविद्यालय या कारखाना मे लौट सकता है। हम तो अपना सबकुछ खोकर राजनीति म आये हैं। हमारे लिए तो कोई आधार नही रह गया है।

इसके अलावा ताकत का नशा भी तो है पिताजी!

'जरूर। शक्ति कोई भी नही छोडना चाहता। जो ऐसा चाहता है या कर सकता है वह ऋषि है। और भी कई कारण हैं। इन थोडे से सालो म ही हमारा मूल्य बोध बिल्कुल बदल गया है। दुर्गाभाई देसाई जैसे आदर्श व्यक्ति भी मन्त्री का पद छोडने की बात नही सोच सकते। इसकी वजह यही है कि जिस ढग से उन्होंने जिन्दगी भर देशसेवा की है आज उसकी कोई ताकत नहीं है उसमे आकर्षण भी नही रह गया है। आज गाँवो मे सगठन चर्खा, गाधीवाद आदि का प्रचार करके ग्रामीणो को जगाने म न तो लोगो की तृप्ति है और न उनके लिए इसकी कोई सार्थकता है।'

'सुना है दुर्गाभाईजी खुद भी यही कहते हैं।'

मेरी बात और है। इस उम्र मे मैं अवश्य ही कृपाणपुर जाकर वकालत नही करूगा। मैं कार्य लेकर भी रह सकता हूँ। मुख्यमन्त्री पद से अवकाश ग्रहण करने पर मुझे अवश्य ही कही राज्यपाल का स्थान मिल जायेगा। सुना है मास्को मे हमारे ही एक राजदूत ने दो साल लगाकर खाली भगवद्गीता और

उपनिषद् का अनुवाद किया था। मैं भी किसी राज्य की राजधानी के राजभवन मे रहकर कुछ साल—हो सकता है कि जब तक मर न जाऊँ तब तक—आराम से काव्य चर्चा कर सकूगा। पर अभी तक मेरे खून मे सघर्ष का तूफान बना हुआ है। उदयाचल की समस्याओ का मुकाबला करते समय मेरा खून आज भी उसी तरह नाच उठता है जैसा यौवन की उद्दामता मे नाचा करता था। एक नया कारखाना देखकर मैं खुशी से फूला नही समाता। कृषि प्रगति देखते ही प्रसन्नता से आखो मे आँसू आ जाते हैं। प्रतिपक्षियो से टकराने म भी अभी तक मेरे उत्साह का पारावार नही है। यह थोडे दिनो तक सुदर्शन दुबे के साथ पजा लडाना पडा, इससे मुझे मानो नशा आ गया है। सुदर्शन दुबे को मात देना कितना आसान है, इसे वह खुद नही जानते। बस, इतना ही अफ़सोस रह गया कि लडाई बडी आसानी से खत्म हो गयी।

दुर्गाप्रसाद ने कहा, माताजी कह रही थी कि इस बार जीतने के लिए आपने बहुत बडी कीमत दी।

"दी है शायद" कृष्ण द्वैपायन बोले 'पर दी कि नही, यह तो परिणाम से ही पता चलेगा। राजनीति के खेल म स्त्री की न्यायबुद्धि नही चलती। सुदर्शन दुबे को उनके ही शस्त्र से पराजित करना पडा इसम कोई अन्याय नही है। शत्रु को उसी के शस्त्र स मारना पुरानी नीति है। मैंने सोचा था कि नया मन्त्रिमण्डल बनाते समय मैं कुछ पुराने मन्त्रियो को नही शामिल करूँगा पर शायद ऐसा सम्भव न हो। शायद एक दो ऐसे मन्त्रियो को भी शामिल करना पड, जिन्हे दूसरी हालत म न शामिल करता। पर राजनीति की गति ही ऐसी है। जिसे इस खेल म दिलचस्पी न हो उसे इस रास्ते पर कदम ही नही रखना चाहिए।

दुर्गाप्रसाद न कहा ये बातें आप मुझसे क्यो कह रहे हैं मैं यह नही समझ पा रहा हूँ। मैं आपको माँ की न्याय नीति के मापदण्ड से नहीं नाप रहा हूँ।

तुम तो दिन रात मेरे खिलाफ जहर उगल रहे हो।

"आपकी राजनीति के खिलाफ। आपके दल आपकी सरकार, आपकी राय, आपके पक्ष या क्षेत्र के विरोध में प्रचार करता हूँ।'

'कभी यह भी सोचा है कि इससे तुम्हें क्या फायदा होगा? दो बार जेल काटी है एक बार और जल्दी ही काटोगे। शक्ल सूरत कैसी बन गयी है शायद कभी देखा ही नही।

'मैं आपका ही बेटा हूँ पिताजी! आसानी स नही टूटूगा और झुकूगा भी नही।

'तुम इस गलत रास्ते पर क्यो जा रहे हो?

'गलत रास्ता नही है पिताजी! आप और मैं दो विपरीत धाराएँ हैं।

आप व्यक्तिगत सफलता के तराजू पर राजनीति में दाँव थे, मैं अपने आदर्शवाद के तराजू पर आया हूँ। आप जिन्दगी भर एक ही प्रेम में डूबे हैं जिसका नाम आत्मप्रेम है। कृष्ण द्वैपायन कौशिक जी, आपने सचमुच आज तक किसी से प्यार नहीं किया, श्रद्धा भी नहीं की और स्वीकार भी नहीं किया। मुझे तो एक दो और चीजों से प्रेम है शिवाजी! मैं इस देश को सचमुच प्यार करता हूँ। यहाँ के मजदूर जिनके बीच में मैं काम करता हूँ उन्हें भी मैं प्यार करता हूँ।

'इन विदेशी नारों को दुहराकर तुम लोग खुद को और दस-बीस दूसरे लोगों को भी भ्रष्ट और गुमराह कर रहे हो। तुम लोग न तो भारत को पहचानते हो और न जानते हो। यहाँ की सांस्कृतिक मिट्टी में विदेश से लायी हुई राजनीति या समाजनीति यानी उसका बीज कभी फल-फूल नहीं सकेगा।

'आप लोग भी तो विदेशी राजनीति के बीज बोकर उसके अंकुर को नारायण का मान। ऊपर देश के शासन की पूजा कर रहे हैं। दक्षिणा बहुत मामूली है पर जो कुछ चढ़ाया जा रहा है उसका करीब करीब सभी यह है ब्राह्मणाय इदं ददामि मैं ब्राह्मण को दे रहा हूँ।

'बात कुछ बुरी नहीं कही है। कृष्ण द्वैपायन ने टेढ़ी हँसी हँसकर कहा सचमुच हमने भी विदेशी बीज ही बोया है। यह गणतन्त्र पार्लियामेंटरी डेमोक्रेसी टिकेगी कि नहीं यह सिर्फ ईश्वर ही जानता है। मेरे मन में भारी संशय है। जिस शासन पद्धति की जड़ जाति के इतिहास और संस्कृति में अच्छी तरह न फैल गयी हो उसका टिकना मुश्किल है। असली बात क्या है जानते हो? इस देश में एक अरसे से कोई राजनीतिक चिंतन नहीं रहा। सन् १८८५ में जिन लोगों ने कांग्रेस की स्थापना की थी वे बस इतना ही चाहते थे कि अंग्रेजी साम्राज्य के अन्दर ही थोड़ी और मर्यादा हासिल हो। इसके बाद एक ओर तो हमारी राष्ट्रीयता की भावना जागी और दूसरी ओर हम अंग्रेजों के शासन तन्त्र के मोह में फँस गये। हमारी वह राष्ट्रीयता की भावना भविष्य में स्वतन्त्र भारतवर्ष के लिए किसी योग्य शासन-पद्धति का सृजन नहीं कर पायी। हमारे स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेता देशभक्त तो थे पर असली शिक्षा-दीक्षा संस्कृति सबमें अंग्रेजों की ही श्रेणी के थे। अपवाद नहीं था सो नहीं। पहले अपवाद तिलक थे, पर गांधीजी उन्हें पसन्द नहीं करते थे। गांधी युग में ही तिलक का प्रभाव खत्म हो रहा था। सबसे बड़े अपवाद तो खुद गांधीजी थे। उन्होंने यही चाहा था कि भारतवर्ष अपनी संस्कृति के अनुसार ही शासन की व्यवस्था करे। पर गांधीजी ने शासन की जिम्मेदारी नहीं ली, और वह जिन्दा भी नहीं रहे। फिर हम अदम्य उत्साह से एक विदेशी प्रणाली को कामयाब बनाने के कठिन कार्य में जुट गये। यह व्यवस्था टिक सकेगी या नहीं यह

सन्देह कभी नहीं मिटेगा पर हम उसे स्वीकार नहा करना चाहते ।'

दुर्गाप्रसाद ने कहा, 'शासन-पद्धति टिके या न टिके, असली व्यवस्था को तो आप पक्की ही कर रह हैं। समाजवाद के नाम पर एक खूब मजबूत पूजीवादी इजारादारी बनाये जा रहे हैं।'

"यह भी विरोधी बात है। हम पार्लियामेंट्री डेमोक्रेसी का नारा लगाकर जिस तरह लोगो को धोखा देते हैं वसे ही तुम भी साम्यवाद या समाजवाद का झण्डा खडा करके धोखा देते हो। हमने यदि शिव बनाते बनाते बन्दर बना लिया है तो शायद तुम लोग एक भयकर अजगर बनाओगे। इतिहास बडे विचित्र ढग से बदला लेता है इस बात को याद रखना।

"सो तो लेता है फिर भी सघर्ष चलता रहता है। इन्सान अनादि काल से आदर्श के लिए लडता आ रहा है और सब दिन लडेगा।

'इस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है आपत्ति बस इस पर है कि झूठा आदर्श लडा जाता है। आदर्श अगर गलत हो, तब भी नुकसान नहीं। गलती करने का हक मनुष्य को होता है, गलतियों को सुधारने का मौका भी मिलता है पर ऐसे भी आदर्श हैं जो असल तक भूठ होते हैं। मरीचिका की तरह वे सिर्फ अपनी ओर आकृष्ट ही करेंगे, पर पकड म कभी नही आयेंगे।

"माफ कीजिए, पिताजी, ऐसे किसी आदर्श से मुझे लगाव नहीं है।'

'हिन्दुस्तान म राजनीतिक विचारधारा बनने का मौका तो था, पर उसका फायदा नहीं उठाया गया। कौटिल्य का अर्थशास्त्र' राजनीति पर एक ही ग्रन्थ है पर महाभारत के अन्तिम अध्यायो मे भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर को राज-काज चलाने का जो उपदेश दिया था, मेरा खयाल है कि वही भारत का सब श्रेष्ठ राजनीतिक चिन्तन है। चाहो तो महाभारत के उस हिस्से को एक बार पढ लेना।

'जहाँ भीष्म ने कहा है कि राज काज म कभी किसी पर पूरा विश्वास मत करना अपने बेटे पर भी नहीं वही?

सच बात है, बिल्कुल सच। और भी कहा है कि सब काम सरलता पूर्वक करना पर अपने भेद, दूसरे के छिद्रान्वेषण और मन्त्रणा की गोपनीयता मे कभी भी सरलता से काम न लेना।'

'मेकियावेली ने भी यही कहा है।'

'मजाक मत करो। युधिष्ठिर ने भीष्म से प्रश्न किया कहा 'कहा किले बनाने चाहिए?' भीष्म ने छ किस्म के किलो का उल्लेख किया है जिनमें सबसे दुर्भेद्य है मनुष्य दुर्ग। यानी मनुष्य के हृदय को जीतना सबसे कठिन काम है, और राजा को यही करना चाहिए। युधिष्ठिर ने पूछा, 'राजा कैसे कमे लोगो पर विश्वास करे?' भीष्म ने कहा, 'राजा के चार मित्र हैं—समार्थ यानी

'जिसका स्वार्थ राजा के स्वार्थ में ही समान है, भजवान यानी जो उसका अनुगत है, सहज यानी आत्मीय, और कृत्रिम यानी जो धन के द्वारा वशीभूत हैं। इनके अलावा राजा के पाँचवें मित्र धर्मात्मा हैं। धर्म के पक्ष में ऐसे मित्र सदा सहायक हैं और जहाँ संशय होता है, वहाँ निरपेक्ष रहते हैं।'

कृष्ण द्वैपायन के चेहरे पर कौतुकपूर्ण हास्य देखकर दुर्गाप्रसाद ने पूछा वर्तमान परिस्थिति में भीष्म की इन बातों पर कहाँ तक अमल किया जा सकता है, पिताजी?'

'काफी। मेरे सहज मित्र के अलावा तीन और किस्मों के मित्र भी मौजूद हैं। धर्मात्मा की संख्या फिलहाल कुछ कम गयी है पर निकट भविष्य में इनमें से ज्यादातर भजवान या समार्थ होंगे।'

एकाएक गम्भीर होकर कृष्ण द्वैपायन ने कहा 'तुम्हें बुलाने का कोई जरूरी कारण नहीं था। कुछ दिनों से तुम्हारी बहुत याद आ रही थी। एक बार नये ढंग से उदयाचल के सभी कांग्रेसी नेताओं को टटोलकर देखना पड़ा। जिला कांग्रेस से लेकर प्रदेश कांग्रेस तक जो भी नेता हैं वर्तमान संकट में मौका पाकर वे सबके सब उभर आये हैं। इन लोगों के साथ बातें करते वक्त तुम्हारी याद आती थी। मेरे बेटे हो इसलिए नहीं बल्कि उदयाचल की कांग्रेस में एक दिन तुम्हारा स्थान सबसे ऊपर हो सकता था इसलिए। तुम्हारे अन्दर योग्यता थी। तुम्हारे नेतृत्व में प्रान्त प्रगति करता। बहुत से लोगों का कल्याण होता इसी लिए सोचा था कि तुम्हें बुलाकर एक बार फिर बातें करूँगा, पिता के नाते नहीं बल्कि उदयाचल का नेता होने के कारण।

पिताजी, मैं आपका आदर करता हूँ पर मैंने अपना रास्ता चुन लिया है।'

'तुम हमारे खिलाफ लोगों को भड़का रहे हो। कल तुम्हारा जलूस निकल रहा है और तुम मेरे खिलाफ सभा में भाषण दोगे?'

कृष्ण द्वैपायन की आवाज कठोर हो गयी।

उदयाचल की सरकार उसकी नीति और कामों के खिलाफ।

इससे तुमको फायदा?'

कुछ है, पिताजी!

मुझे पता चला है कि तुमसे सुदर्शन दुबे मिला था।'

'जी हाँ।'

मेरे खिलाफ तुमसे मदद माँग रहा था?'

यही तो स्वाभाविक है।'

'तुम्हारे भाइयों के लिए मैंने क्या क्या किया है वह यही जानना चाहता था?'

जी हाँ, ग्रापने कितने मकान बनवाये ? कितनी जमीन खरीदी ? ऐसी ही ग्रौर भी दूसरी बातें जानना चाहते थे।"

'तुमने बताया था ?'

'इस प्रश्न का उत्तर नहीं दूगा, पिताजी !"

'ग्रगर न बताया हो तो जान लो कि ग्रगर तुम उस वक्त भी दन तब भी मेरी हार न होती।"

'मैं ग्रापकी हार नहीं चाहता पिताजी !"

घनी की ग्रोर देखकर कृष्ण द्वपायन व्यस्त हो उठे—'ग्रच्छा। लोग मेरा इन्तजार कर रहे हैं।"

दुर्गाप्रसाद ने घुटने छूकर प्रणाम किया ग्रौर उठ खड़ा हुग्रा।

कृष्ण द्वैपायन ने एक बार उसके चेहरे की ग्रोर देखा बोले मेरे पास ग्राग्रो।

बेटे के सिर पर हाथ रखते हुए बोले, ग्रपने रास्ते पर ग्रागे बढ़ने में मत डरना। मेरे किसी काम का मतलब न समझ पाग्रो तब भी मुझ पर विश्वास रखना।'

दुर्गाप्रसाद नीचे उतरकर सीधे फाटक की ग्रोर बढ़ गया। फाटक के सामने पुलिस की गाड़ी खड़ी थी। दुर्गाप्रसाद के फाटक से निकलते ही एक पुलिस ग्रफसर पास ग्राया। उसने ग्रवाक दुर्गाप्रसाद से कहा, 'ग्रापको हमारे साथ चलना पड़ेगा।

'गिरफ्तारी ?

'गलती माफ करें हम हुक्म के ताबेदार हैं।'

मेरा कसूर ?"

ग्रापके जामिन ने ग्रपनी जमानत वापस ले ली है। पुराने ग्रपराध के ग्रभियोग में ही ग्रापको गिरफ्तार करने का हुक्म है।"

किसका हुक्म है ?'

डिप्टी कमिश्नर का।'

दुर्गाप्रसाद की जबान से करीब करीब निकल ही ग्राया था— पिताजी जानते हैं ?' पर ग्रपने को सँभालकर उसने पूछा 'थोड़ी देर के लिए एक बार घर तो जाने देंगे ? घर में खबर दे दू ग्रौर कुछ कपड़े लत्ते भी साथ ले लू। क्या कहते हैं ?"

जरूर।'

चलिए।"

अठारह

पद्मादेवी का पत्र पढ़कर दुर्गाभाई का मन एकसाथ ही दुःखी, चमत्कृत और विस्मित भी हो गया था। पति को त्याग के रास्ते पर नहीं लाया सकी तो पत्नी स्वयं ही गृहस्थी छोड़कर काशी जा रही हैं। पुण्यमय प्राचीन भारत के अलावा ऐसा ज्वलन्त उदाहरण और कहाँ मिलेगा ?

पद्मादेवी के संक्षिप्त पत्र की दो चार बातों से ही कृष्ण द्वैपायन के प्रति उनकी श्रद्धा स्पष्ट हो गयी थी— देखिएगा इतने महान् पुरुष कहीं बहुत नीचे न उतर जायें।' इस बात को सोचकर दुर्गाभाई के हृदय में दर्द सा महसूस हुआ—कृष्ण द्वैपायन सचमुच ही 'इतने बड़े आदमी हैं। असीम साहस विशाल छाती, इस उम्र में भी अथक परिश्रम। जिस मानदण्ड से दस बीस औरों का विचार किया जा सकता है कृष्ण द्वैपायन उससे परे हैं फिर भी उनकी सह-धर्मिणी साधारण न्याय नीति के स्तर पर ही उनका भी विचार कर रही हैं। राजनीति में गिर जाना किसे कहते हैं ? फिर से मुख्यमन्त्री बनने के लिए कृष्ण द्वैपायन ने किन किन शस्त्रों का इस्तेमाल किया है यह दुर्गाभाई को नहीं मालूम है। उन्हें बस इतना ही मालूम है कि मन्त्रियों में से जो उनके खिलाफ थे, अब उनमें से सभी गुप्त रूप से फिर कृष्ण द्वैपायन के साथ हो गये हैं या होना चाहते हैं। और तो और, सुदर्शन दुबे भी उनके साथ हाथ मिलाने के लिए तैयार है। पर क्या कीमत देकर यह असाधारण सफलता कृष्ण द्वैपायन को खरीदनी पड़ी, यह उन्हें नहीं मालूम है और इसी बात को लेकर पद्मादेवी को चिन्ता है। उनका दृढ़ विश्वास है कि भंग किये हुए मन्त्रिमण्डल को फिर से गठित करके जो कृष्ण द्वैपायन उस पर नेतृत्व करेंगे, उनके साथ इतने दिनों के गौरवशाली कृष्ण द्वैपायन की कोई समता नहीं होगी। जिन एम० एल० ए० लोगों को सुदर्शन दुबे ने अपने काबू में कर लिया था, उन्हें कृष्ण द्वैपायन किस मूल्य पर अपने शिविर में लौटा लाये ? ये लोग क्या उन्हें छोड़कर सुदर्शन दुबे के साथ जा मिले थे और अब फिर क्यों सुदर्शन दुबे को छोड़कर इनके पास लौट आये ? दलगत नीति के इस रहस्यपूर्ण अँधेरे पहलू को दुर्गाभाई दसाई नहीं जानते। आज से पहले इस बात को लेकर उनके मन में इतना कौतूहल कभी नहीं हुआ, पर इस कौतूहल को शान्त करने की हिम्मत उनमें नहीं है। इन बातों से अनभिज्ञता की पवित्रता ही उनका सम्बल है। अगर जान जायें तो कृष्ण द्वैपायन के मन्त्रिमण्डल में बने रहना उनके लिए सम्भव भी नहीं होगा।

चन्द्रप्रसाद के बारे में पद्मादेवी का अनुरोध भी उन्हें बड़ा रहस्यमय लगा। उसे अपनी योग्यता के बल पर एयरफोर्स में कमीशन मिला, इससे दुर्गाभाई

खुश हैं। लड़का अच्छा है। पर उनसे चन्द्रप्रसाद क्या चाह सकता है? ऐसा कौन सा फेवर है जो उसे अपने पिता से मिलना सम्भव नहीं है? दुर्गाभाई के मन में खिन्नता भर उठी। पर नहीं, ऐसी कोई बात अवश्य ही नहीं होगी नहीं तो पद्मादेवी ऐसा अनुरोध न करती।

दुर्गाभाई उठकर दफ्तर में जाकर बैठ गये। कृष्ण द्वैपायन को टेलीफोन करना जरूरी था। हरिशंकर त्रिपाठी का अनुरोध नामंजूर करने की बात बतानी होगी। सरोजिनी सहाय जो मिलने आयी थी वह बात कृष्ण द्वैपायन को जरूर मालूम हो जायेगी। इसलिए उन्हें बता रखना ही ठीक है। परसों रात की बात भी तो उन्हें मालूम है।

थोड़ी देर में मुख्यमन्त्री का ही टेलीफोन आ गया। दुर्गाप्रसाद कौशल के खिलाफ राजनीतिक मुकदमे को कड़ाई से चलाने के लिए निर्देश मिला। मुख्यमन्त्री के साथ बातें करके दुर्गाभाई फिर काम में जुट गये।

दुर्गाभाई को मालूम है कि दुर्गाप्रसाद कृष्ण द्वैपायन का सबसे प्यारा और सबसे योग्य बेटा है और क्रान्तिकारी राजनीति में विश्वास करता है। गांधीवादी दुर्गाभाई श्रेणी संघर्ष में विश्वास नहीं करते। साम्यवाद और समाजवाद के आदर्श उन्हें प्रिय अवश्य हैं पर मार काट का, हिंसावादी क्रान्ति का रास्ता उन्हें मंजूर नहीं है। इसके अलावा उनकी एक धारणा यह भी है कि भारत की संस्कृति सम्मिलित है और उसका महत्त्व सबको एक सूत्र में बाँधने में ही है, न कि एक के कई टुकड़े करने में। भारत का आदर्श एकता है, विभाजन नहीं। गांधीवाद से बड़ी कोई क्रान्ति हो सकती है, इसे वह नहीं मानते। सबसे बड़ी और स्थायी क्रान्ति मनुष्य सम्बन्धी है। जो क्रान्ति मानव मन को न बदले, वैसी किसी भी क्रान्ति पर दुर्गाभाई की आस्था नहीं है। फिर भी मुख्यमन्त्री के बेटे दुर्गाप्रसाद को वह कुछ श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि उसमें अपने चुने हुए रास्ते पर चलने की हिम्मत है, अपने आदर्श के लिए कष्ट भोगने को भी वह तैयार रहता है। उसने दो बार जेल भी काटी है। दुर्गाभाई को मालूम है कि आज की जेल यात्रा में पुराने दिनों का गौरव नहीं है और स्वतन्त्र भारत का कैदी जीवन अंग्रेजों के जमाने के बन्दी जीवन से भी कहीं अधिक कष्टकर है। दुर्गाप्रसाद ने दोनों बार द्वितीय श्रेणी के कैदी के रूप में वास्तविक तकलीफें सहते हुए डेढ़ साल बिताये हैं। उसका वर्तमान अपराध भी इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है। मिल में हड़ताल के समय कानून और शान्ति भंग करने के अपराध में कई और मजदूरों के साथ उसे भी गिरफ्तार कर लिया गया था। मजदूरों में से दो के अतिरिक्त बाकी सबको छोड़ दिया गया है। दुर्गाप्रसाद के विरुद्ध कोई चश्मदीद गवाह नहीं है। वह कहता है कि घटनास्थल पर उसकी उपस्थिति सिर्फ पुलिस का दिमागी फितूर है। बात शायद सही भी

है मगर ऐसा न होता तो पुलिस उसके मुकदमे में इतनी मुस्ती न करती। सरकारी वकील की तो राय थी कि उस पर से मुकदमा ही उठा लिया जाय। पुलिस अधिकारी इस बात पर राजी नहीं हुए, क्योंकि ऐसा होने से मुख्यमन्त्री यही सोचते कि उनके लड़के को निरपराध ही गिरफ्तार किया गया था। कृष्ण द्वैपायन को अवश्य असली बात मालूम हो गयी थी, फिर भी मुकदमे का कड़ाई से चलान का और दुर्गाप्रसाद को सजा मिले ही, ऐसा आग्रह उन्होंने क्यों किया, यह दुर्गाभाई की समझ में नहीं आया। कहीं किसी नये कारण से कृष्ण द्वैपायन दुर्गाप्रसाद से और नाराज तो नहीं हो गये? मन्त्रिमण्डल के इस संकटकाल में दुर्गाप्रसाद ने क्या सुन्दर दुव की कोई सहायता की है?

दुर्गाभाई ने गृहसचिव को फोन किया। मुख्यमन्त्री का निर्देश बताने पर उन्हें जो कुछ सुनने को मिला उससे वह आश्चर्यचकित रह गये।

गृहसचिव ने कहा 'आप जरूर जानते होंगे सर! हमें कौशलजी का एक और आदेश मिला है।'

"कैसा आदेश?

"दुर्गाप्रसादजी को आज थोड़ी देर बाद गिरफ्तार करना होगा।

"उन्होंने कहा है? क्यों?'

"जी हाँ, दुर्गाप्रसादजी इस समय कौशलजी से उनके खास कमरे में बातें कर रहे हैं। मुख्यमन्त्री भवन से बाहर आते ही उन्हें गिरफ्तार कर लिया जायेगा।

मुख्यमन्त्री के भवन से बाहर आते ही?'

"जी हाँ। दुर्गाप्रसादजी तो जमानत पर छूटे थे, पर अब वह वापस ले ली गयी है इसलिए पुराने अपराध में ही उन्हें गिरफ्तार किया जा रहा है।'

दुर्गाभाई के विस्मय की सीमा न रही। उन्हें याद आया कृष्ण द्वैपायन ने उन्हें पहले ही सतर्क किया था, पर ऐसी नाटकीय व्यवस्था करने पर मुख्यमन्त्री क्यों मजबूर हुए, यह दुर्गाभाई के दिमाग में किसी तरह नहीं आया। बिना किसी खास कारण के कृष्ण द्वैपायन मुख्यमन्त्री भवन के सामने ही दुर्गाप्रसाद को पुलिस के हवाले नहीं करेंगे, दुर्गाभाई को इसका पूरा विश्वास है। एक ही कारण हो सकता है—दुर्गाप्रसाद जरूर पिता के विरोधियों के साथ मिलकर उदयाचल में कांग्रेसी शासन को कमजोर बनाने का षडयन्त्र कर रहा होगा। कृष्ण द्वैपायन के गुप्तचरों ने उसके कामों का ब्यौरा मुख्यमन्त्री को दिया होगा। यदि यह बात न होती, तो इतनी कठोरता से काम लेने की आवश्यकता न पड़ती।

दुर्गाभाई का मन थोड़ा शान्त हुआ। उनके मन में कृष्ण द्वैपायन के प्रति थोड़ी और श्रद्धा बढ़ गयी। उन्हें याद आया, एक दिन मुख्यमन्त्री ने कहा था

कि जो हिंसामय क्रांति चाहते हैं और अपने को वामपन्थी कहते हैं उनके पथ का मतलब सिर्फ लक्ष्य पर पहुंचना है। उन्होंने कहा था—"वर्तमान मन्त्रिमण्डल के संकट की बात ही ले लीजिए। इन लोगों को मालूम है कि सुदर्शन दुबे या हरिशंकर त्रिपाठी की अपेक्षा कृष्ण द्वैपायन अधिक अच्छे मुख्यमन्त्री हैं। यह जानते हुए भी ये उन्हें पदच्युत करना चाहते हैं। यदि हरिशंकर त्रिपाठी या सुदर्शन दुबे को मुख्यमन्त्री बनाया गया तो शासन कमजोर हो जायेगा, जन-कल्याण की रफ्तार धीमी पड़ जायेगी, जनता का असन्तोष बढ़ जायेगा, और इस प्रकार इन लोगों के आन्दोलन का क्षेत्र तैयार होगा।" कृष्ण द्वैपायन सचमुच राजनीति समझते हैं। यह जो आज उन्होंने अपने प्यारे बेटे के हाथों में अपने दरवाजे पर ही हथकड़ी डलवा दी, इसके पीछे उदयाचल के मंगल और कांग्रेस के प्रति हार्दिक प्रेम का ही आवेग है।

दूसरी ओर, दलगत राजनीति दुर्गाभाई के सामने और भी गन्दी और भयानक रूप में दिखायी देने लगी। जिस राजनीति में विरोधी दल बाप के खिलाफ बेटे का उपयोग करता है वैसी राजनीति से वह बाहर रह सके इसके लिए उन्होंने अपने को भाग्यशाली ही माना।

चिंतातुर दृष्टि से उन्होंने सामने देखा, तो दरवाजे पर चन्द्रप्रसाद खड़ा था। दर्शनार्थी। उसे अन्दर न बुलाकर वह स्वयं ही बाहर चले आये। बोले, 'वसन्त मिली ?"

चन्द्रप्रसाद चौंक पड़ा, फिर गम्भीर आवाज में बोला, "घर में ही थी।'

"तुम्हारी चाची कहाँ गयी हैं, बता सकते हो ? '

'आपकी ही सेवा के लिए।

हूँ ! आओ, चलकर लॉन पर बैठें। तबियत कुछ ठीक नहीं लगती।'

"कुछ तकलीफ है ? अन्दर जाकर लेट जाइए न, चाचाजी !'

नहीं ऐसी कोई खास तकलीफ नहीं है।'

'आप एक काम कीजिए न, चाचाजी ! आप अन्दर जाइए। मैं आपके दफ्तर में बैठ जाता हूँ। शायद आपको मालूम नहीं है कि दूसरे की आवाज की बहुत अच्छी नकल कर लेता हूँ मैं। सुनिए, मैं आपकी आवाज में बोलता हूं।'

अपनी आवाज की हू ब हू नकल सुनकर दुर्गाभाई बच्चों की तरह कौतुक में हँस पड़े। उनके आग्रह पर चन्द्रप्रसाद ने कृष्ण द्वैपायन कौशल और मन्त्रियों की आवाज की भी नकल की।

'इम्तहान में पास हो गया चाचाजी !'

फर्स्ट क्लास !'

कम से कम एक परीक्षा में तो फर्स्ट क्लास मिला।'

दुर्गाभाई फिर से हँस पड़े।

"तो फिर चाचाजी, ग्राप ग्रन्दर जाइए। मैं कुछ घण्टे तक काम काज ठीक स चला लूगा। टेलीफोन ग्राते ही कहूँगा कि थोडा रुक जाइए ग्रौर ग्रापके पास ग्राकर पूछ लूगा फिर कोई मुश्किल नही होगी।'

"ग्रगर ग्राकर देखो कि मैं सो गया हूँ ?'

"लौटकर ठीक ग्रापकी तरह सुर्राटे लूगा। उधरवाल ग्रपने ग्राप ही समझ जाएँगे कि ग्राप सो रहे हैं।"

हँसते हुए दुर्गाभाइ ने कहा, 'तुम कुर्सी खीचकर बठ जाग्रो। सोने की जरूरत नही है तुम्हारे साथ थोडी देर बातें करने स ही मेरी तबियत ठीक हो जायेगी।"

बसत को बुला लाऊँ चाचाजी ? '

"बुलाग्रोगे ? ग्रच्छा, थोडी देर बाद बुलाना। तुमस दा एक बातें पूछना चाहता हू।'

कहिए।

"भाई दुर्गाप्रसाद के साथ तुम लोग कोई सम्पक रखते हो क्या ।"

पिताजी नहा रखते। माताजी भी इतने दिनो तक वहाँ नहीं गयी थी, पिताजी की ग्रनुमति नही थी। दुर्गाप्रसाद भैया ही कभी कभी ग्राकर माताजी स भेंट कर जात हैं। ग्राज शाम को माँ उनके घर जायेंगी पिताजी की ग्राज्ञा मिल गयी है।

तुम्हारे ग्रौर भाई ! '

'बडे भया एक-दो बार गय हैं। सूयप्रसाद ग्रौर शीतलाप्रसाद कोई सम्पक नहा रखत। मैं हरदम जाता रहता हूँ।

तुम हरदम जाते रहते हो ? क्यो ?

'कई कारण हैं चाचाजी ! एक तो यही कि मुझे ग्रौर कोई काम है नही, बकार हूँ। दूसरे, कमला भाभी मुझे बहुत ग्रच्छी लगती हैं। तीसरा कारण यह है कि उनके एक लडकी है, जिसके साथ खेलने मे मुझे बडा मजा ग्राता है। चौथ, जात ही भाभी ग्रच्छी ग्रच्छी चीजें खिलाती हैं। ग्रौर पाँचवी बात यह है कि मैंझले भया का मैं ग्रादर करता हूँ।

"तुम्ह मालूम है दुर्गाप्रसाद ग्राज तुम्हारे पिताजी स भेंट करने ग्राया है ? इस समय वे दोनों शायद साथ ही हैं।'

नहा तो। तब जरूर पिताजा न मझल भया को बुलाया होगा। वह खुद कभी नही ग्रायेंगे।

'तुम्हें ग्राश्चय नहा हो रहा है ?'

'पिताजी के किसी काम पर मुझे ग्राश्चर्य नही होता। किसी खास वजह ग्रौर जरूरत के बिना पिताजी कोई काम नही करत।"

ग्रायेंगे ? बेटे के बाप ठहरे।"
कि दुर्गामाईजी बटी के ब्याह का प्रस्ताव लेकर
। ग्रायेंगे।'

कौशलजी मुझे पहचानते हैं।"
की हँसी में हँसी मिलाते हुए चन्द्रप्रसाद ने कहा,
हैं चाचाजी!'

उन्नीस

मने ही दुर्गाप्रसाद की अप्रत्याशित गिरफ्तारी
रे रतनपुर म फल गयी। कृष्ण द्वैपायन के
आकाशवाणी केन्द्र से शाम के प्रोग्राम के शुरू
ार दे दिया गया।

यह बात भी कृष्ण द्वैपायन न रामचन्द्र
रह समझा दी और दो घण्टे के अन्दर ही
ारिशिष्टार भी छप गया। रामचन्द्र पण्डित
र सुभाष चट्टोपाध्याय चमत्कृत हो गया।
बहुत खूब!'
ान दिखायी दी उसका मतलब था—
। तग मत कीजिए।
क्या है पण्डितजी ?"
र मानो यह भाव व्यक्त किया कि विधाता

कहा—कृष्ण द्वैपायन कौशल धुरन्धर
ाम की चीज नहीं चल सकती, यह भी
ट ही है ऐसा मानने के लिए मैं कतई
प्यारा बेटा है। उसे अपने ही घर के
, इससे कौशलजी के बड़ा आदमी होने
ालूम हो जायेगी। यद्यपि अखबार में

"पिताजी, आप अन्दर जाकर थोडा लेटेंग ?"

"नही बटा मैं ठीक हूँ। चन्द्रप्रसाद !"

"कहिए।

तुमसे कुछ और पूछना चाहता था, याद नही आ रहा है।"

"याद िला दू ?'

"यह भी कर सकते हो क्या ?

"जरूर। बसन्त के बारे मे '

"मेरे बारे मे पिताजी तुमसे क्या पूछेंगे ?"

"याद आ गया, चाचाजी ?"

"आ गया। बसन्त के नही, तुम्हारे बारे म।

मरे बारे मे ?"

'तुम्हारी माताजी ने लिखा है कि यदि तुम कुछ प्राथना करो तो "

"पिताजी, मैं अभी आती हूँ।

'बसन्त इस तरह भागी क्यो ?'

'पेट म दद हो रहा होगा।

"क्या प्रायना है ?'

'चाचाजी !"

एकाएक दुर्गाभाई की समझ म आ गया। इतने दिनो का रहस्य मानो किसी जादू से पल भर मे ही खुलकर सामने आ गया। उनका चेहरा गम्भीर हो गया और माथे पर चिन्ता की सिकुडनें आ गयी।

"बसन्त से शादी करना चाहते हो ?'

'अगर आप अनुमति दे दें।'

"तुम्हारी चाची जल्दी नहा राजी होगी।

"आप अनुमति दे दें तो हम उन्हें तैयार कर लेंगे।

थोडी देर चुप्पी रही, फिर दुर्गाभाई बोले "मुख्यमन्त्री के बटे के साथ बेटी का ब्याह ! लोग क्या कहेगे !'

"लोग अच्छा ही कहेंगे, चाचाजी !"

"क्यो ?"

"कहेंगे, दुर्गाभाई ने कृपा करके बेटी को मुख्यमन्त्री के घर मे सौंपा है।"

"अच्छा, मैं जरा सोच लू। तुम लोग धय रखाग न ?'

"जी हा।

"तुम्हारे पिताजी की सम्मति मिली ?'

"जी हा वह यह प्रस्ताव लेकर स्वय आपके पास आने की बात कर रहे थे।"

"नहा-नहीं। वह क्यों आयेंगे ? बेटे के बाप ठहरे।"

"पिताजी कह रहे थे कि दुर्गाभाईजी बेटी के ब्याह का प्रस्ताव लेकर मुख्यमन्त्री के पास कभी नहीं आयेंगे।"

"ऐसा कह रहे थे ?"

"जी हाँ।"

"ठीक ही कह रहे थे। कौशलजी मुझे पहचानते हैं।"

दुर्गाभाई की आत्मतुष्टि की हँसी में हँसी मिलाते हुए चन्द्रप्रसाद ने कहा, "हम लोग भी आपको जानते हैं, चाचाजी !"

उन्नीस

मुख्यमन्त्री भवन के फाटक के सामने ही दुर्गाप्रसाद की अप्रत्याशित गिरफ्तारी की खबर चन्द मिनटों में ही पूरे रतनपुर में फैल गयी। कृष्ण द्वैपायन के व्यक्तिगत अनुरोध पर रतनपुर के आकाशवाणी केन्द्र से शाम के प्रोग्राम के शुरू में ही श्रोताओं को भी यह समाचार दे दिया गया।

वह खबर कैसे छापी जायेगी यह बात भी कृष्ण द्वैपायन ने रामचन्द्र पण्डित को पास बुलाकर अच्छी तरह समझा दी और दो घण्टे में अन्दर ही 'मार्निंग टाइम्स' का एक विशेष परिशिष्टांक भी छप गया। रामचन्द्र पण्डित की लिखी हुई रिपोर्ट पढ़कर सम्पादक सुभाष चट्टोपाध्याय चमत्कृत हो गया। रामचन्द्र से कहने लगा 'पण्डितजी, बहुत खूब !'

रामचन्द्र के चेहरे पर जो मुस्कान दिखायी दी उसका मतलब था—छोड़िए इन बातों को, सम्पादक जी ! शर्म मत कीजिए।

'इस नाटकीय घटना का मतलब क्या है, पण्डितजी ?"

रामचन्द्र ने ऊपर की ओर देखकर मानो यह भाव व्यक्त किया कि विधाता ही जाने !

सुभाष चट्टोपाध्याय ने मन-ही-मन कहा—कृष्ण द्वैपायन कौशल पुरन्दर राजनीतिज्ञ हैं। राजनीति में विवेक नाम की चीज नहीं चल सकती यह भी हो सकता है। पर यह सिर्फ एक स्टण्ट ही है ऐसा मानने के लिए मैं कतई तैयार नहीं हूँ। दुर्गाप्रसाद उनका सबसे प्यारा बेटा है। उसे अपने ही घर के सामने पुलिस से गिरफ्तार करा लिया, इससे कौशलजी के बड़ा आदमी होने की बात जनता को एक बार फिर मालूम हो जायेगी। यद्यपि अखबार में

"यानी यह आधा घण्टा भी तुम बिल्कुल बेकार नहीं बैठे रहे ?

"सही बात है।

'अच्छा। तब तो फिर मुझे अफसोस करने की जरूरत नहीं है। समय बहुत थोडा है। तुमने अकेले मे इण्टरव्यू माँगा था, मैं तुम्हें आधा घण्टा दे सकता हूँ।

"धन्यवाद। किस किस प्रश्न का उत्तर मिलेगा ?'

"कोई भी प्रश्न पूछ सकते हो। बस आधा घण्टे से ज्यादा समय नहीं दे सकूगा।'

नोटबुक और पेंसिल सँभालकर गोपालकृष्णन् ने पूछा "आगामी विधान सभा मे कांग्रेस दल अपना नेता चुनेगा। आप भी एक उम्मीदवार हैं। चुनाव के नतीजे के बारे मे आपका क्या अंदाजा है ?

"विधान सभा के कांग्रेस दल की कल शाम को बैठक होगी। सबसे पहला काम होगा नेता का चुनाव। मैं उम्मीदवार हूँ और मेरा दृढ विश्वास है कि कांग्रेस के अधिकाश सदस्य मेरे लिए ही मतदान करेंगे। निर्विरोध चुनाव की भी सम्भावना है।'

'और कौन कौन उम्मीदवार हैं ?

"मुझे नहीं मालूम। शायद कांटेस्ट हो ही नहीं।'

"आपकी यह आशा तो बिल्कुल अनोखी और नयी जान पडती है। लोग सोचते है कि 'कांटेस्ट होगा। 'कांटेस्ट नहीं होगा अपनी इस धारणा का कारण बतायेंगे ?'

"कांग्रेस अभी एकतावद्ध एकमत और एकमार्गी राजनीतिक दल नहीं बन पाया है। कांग्रेस काफी लोगो और विचारो का सम्मिलित सगठन है जो भारतीय गणतन्त्र का प्रतीक है। एकसाथ मिलकर काम करना ही कांग्रेस का आदर्श है। कांग्रेस का इतिहास पढें तो देखेंगे कि मत और माग पर बार बार सघर्ष हुए हैं फिर भी एकता कभी नष्ट नहीं हुई। उदयाचल कांग्रेस म भी इन दिनो मत और माग को लेकर कुछ मतभेद पदा हो गये हैं पर हर कांग्रेस कार्यकर्ता का सबसे बडा कर्तव्य देश की सेवा और उन्नति है। मेरा दृढ विश्वास है कि कांग्रेस दल म विभेद से कही बढकर आन्तरिक एकता मौजूद है। कल की बैठक म यह प्रमाणित हो जायेगा।'

इस आशा के पीछे कोई ठोस आधार है क्या ?

'यह आशा ही पूरा ठोस आधार है। और कारण भी हैं।'

"उन्हें जान सकता हू ?'

'मुझे यह देखकर खुशी हो रही है कि उदयाचल कांग्रेस के नेता एकता और सगठन की बात गम्भीर ढग से सोचने लगे हैं।

'आपके विरोधी सुदशन दुबे के साथ कोइ बात हुई है ?"

"सुदशन दुबे उदयाचल काग्रेस के अध्यक्ष हैं। बहुत पुराने देशसेवक है, जनप्रिय नेता हैं। किसी किसी विषय पर उनके मेरे बीच मतभेद होत हुए भी मैं सब दिन एक साथी के नाते उन पर श्रद्धा करता आया हूँ। अब भी करता हूँ। आवश्यकता पडने पर शासन काय मे हमेशा उनकी सलाह लेता रहा हूँ और कई बार उनकी सलाह बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुई है। अब भी उनसे मेरी भेंट, मुलाकात और बातचीत होती रहती है। आज सवेरे इस घर के सबसे पहले अतिथि वही थे। रात को शायद उनके साथ फिर वार्ता हो।"

"क्या यह सच है कि सुदशन दुबे ने आपके सामने समझौते का प्रस्ताव रखा है ? आप अगर उन्हे उप मुख्यमन्त्री बनायें तो क्या वह आपके साथ सहयोग करेंगे ?"

नही। सुदशन दुबे न ऐसा कोई प्रस्ताव नही रखा है। और रखन लायक यह है भी नही। मैं जानता हूँ कि उन्हे मन्त्री के पद का कोई लोभ नही है।'

"आपके और उनके गुट के मिलकर नया मन्त्रिमण्डल बनाने की सम्भावना है ?"

'मन्त्रिमण्डल गुटो के आधार पर नही बनत। कोई भी काग्रेसी मुख्यमन्त्री इस तरह मन्त्रिमण्डल नही बनाता। दूसरी ओर हर मन्त्रिमण्डल में विभिन्न स्वार्थों को प्रतिनिधित्व दिया जाता है। मेरा दढ विश्वास है कि दुर्गाभाईजी, सुल्तान दुबे और मैं साथ साथ बठकर बडी आसानी से एक सवग्राह्य मन्त्रिमण्डल का गठन कर सकेंगे।

'इस सम्बन्ध मे हाई कमान का क्या निर्देश है ?'

"हाई कमान चाहता है कि अब तक उदयाचल मे जिस एकता और दढता के साथ राज काज होता आया है भविष्य मे भी वैसा ही चलता रहे। काग्रेस दल म गुटो का झगडा हाई कमान को बिल्कुल पसन्द नही है।

अगर आप फिर से नेता चुने गये तो मन्त्रिमण्डल म किसे किसे लेंगे, यह कुछ सोचा है ?'

"अभी यह प्रश्न ही नही उठता। यह सोचन का समय भी अभी नहीं है।

आपके अब तक के सब साथी शामिल रहेंग क्या ?'

'अपने साथियो के प्रति मैं बहुत कृतज्ञ हूँ। उन्होने उदयाचल की प्रगति के लिए यथासाध्य परिश्रम किया है। यदि कोई त्रुटि, स्खलन हुआ भी हो तो उसकी सारी जिम्मेदारी मुझ पर और पूरे मन्त्रिमण्डल पर है। यदि मुझे फिर मन्त्रिमण्डल बनाने का मौका मिले तो मैं अपने साथियों से पूरे सहयोग की प्राथना करूँगा। उनमें से किसी को भी मन्त्री के पद का लोभ नहीं है। वे हमेशा मन्त्रिमण्डल से बाहर रहकर भी सेवा करने को तैयार हैं।

'वर्तमान मंत्रिमण्डल की लोकप्रियता या उसके प्रति लोगों की अनास्था के बारे में आप कुछ कहेंगे क्या?'

गणतन्त्र भारत में हर नागरिक को सरकार की आलोचना करने का अधिकार है। हो सकता है कि हम कुछ अधिक आलोचना करते हों पर यह हमारा जातीय स्वभाव है। इसके अलावा हमारे दल की नीति है—अधिक-से अधिक गवर्नमेंट कम से कम नहीं। यानी सरकार जनता के कल्याण को आदर्श बनाकर बहुत कुछ साथ साथ करना चाहती है, कम से कम उम्मीद तो ऐसी ही करती है। यह भी जन साधारण की आलोचना का एक कारण है। जहाँ पर जिस भी चीज की कमी हो, सरकार उसे पूरा करे जनसाधारण इसी की माँग करता है और हम भी उनकी इस माँग को स्वीकार करते हुए उनसे सिर्फ समय, सहयोग और धैर्य की प्रार्थना करते हैं। फिर भी हम जानते हैं कि कल्याणकारी राष्ट्र का पूरा संगठन करने में सालों लग जायेंगे जनता की माँगें पूरी करने में हमारी पूरी जिन्दगी खत्म हो जायेगी। ऐसी हालत में जनता का असंतोष कुछ हद तक अनिवार्य है। कांग्रेसी शासन में हम किसी को भी पूरी तरह खुश नहीं करते क्योंकि कांग्रेस किसी श्रेणी विशेष का संगठन नहीं है। मालिक मजदूर जमींदार काश्तकार मध्यमवर्ग या उच्चवर्ग, देहाती शहराती छात्र या शिक्षक—कोई भी इस शासन से पूरी तरह संतुष्ट नहीं हो सकेगा। पर इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि हमने किसी एक श्रेणी को पूरी तरह असंतुष्ट नहीं किया है और ऐसा करेंगे भी नहीं। कांग्रेसी समाजवाद का यही मूल तत्त्व है। शिकायत तो सभी थोड़ी बहुत करेंगे पर मतदान के समय अधिकांश लोग कांग्रेसी तम्बू में ही रहेंगे। उन्हें मालूम है कि कांग्रेसी राज्य में थोड़ा-बहुत सबका भला हुआ है। कांग्रेसी दरबार से कोई भी खाली हाथ नहीं लौटा है।

अब आपसे कुछ व्यक्तिगत प्रश्न करना चाहता हूँ।

करो पर समय अब अधिक नहीं है।

थोड़ी देर पहले आपके दरवाजे के सामने दुर्गाप्रसाद कौशल को गिरफ्तार किया गया है। यह आदेश क्या आपने ही दिया था?

हाँ।

'गिरफ्तारी से पहले काफी देर तक आपकी और उनकी बातें हुई थीं। क्या आपने उन्हें अपनी आपत्तिजनक राजनीति छोड़ने के लिए सलाह दी थी?

'नहीं। दुर्गाप्रसाद मेरा बेटा है। उसके लिए मेरी कमजोरी किसी से छिपी नहीं है। बहुत दिनों से उसे देखा नहीं था, इसलिए बुलवाया था। उसके साथ पारिवारिक बातों के अतिरिक्त और किसी बात पर चर्चा नहीं हुई। यहाँ से जाने के पहले उसे गिरफ्तारी के बारे में कुछ भी नहीं मालूम था।'

"इस गिरफ्तारी की क्या सचमुच कोई जरूरत थी ?'

मलिन हसी हँसकर कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "अगर जरूरत न होती तो बाप बेटे को पुलिस के हवाले न करता ।'

'दुर्गाप्रसाद कौशल के खिलाफ क्या अभियोग है ? '

'उदयाचल की शांति और व्यवस्था की निरापदता के लिए ही उसे गिरफ्तार किया गया है ।'

पाच बजते ही कृष्ण द्वैपायन ने यह भेंट समाप्त कर दी, 'अब खत्म करना पडेगा । कई साथी भेंट करने आ रहे हैं, आज मुझे बिल्कुल वक्त नहीं है ।'

"धन्यवाद, कौशलजी," गोपालकृष्णन् ने विदा लेते हुए कहा, "उम्मीद है कि इण्टरव्यू अखबार म अच्छी तरह ही छापा जायेगा ।

मेरी ओर स एक अनुरोध है ।'

"जरूर कहिए ।'

"घण्टे भर मे ही यह इण्टरव्यू सुदर्शन दुबे को मालूम हो जाय तो ठीक रहेगा ।'

'पूरा इण्टरव्यू ?'

'कम स कम जो कुछ उनके बारे मे कहा है ।'

ठीक है ।

'किसी तरकीब से ही उन्हे बताना पडेगा ताकि यह न मालूम हो कि मेरे कहने पर तुमने ऐसा किया है ।'

'समझ गया ।

गोपालकृष्णन् के चले जाने पर कृष्ण द्वैपायन ने अवस्थी को बुलाया ।

"कल सवेरे का 'भारत टाइम्स' हर कांग्रेसी एम० एल० ए० के हाथो म आठ बजे के अन्दर पहुच जाये ।

जी ।

"नीचे कौन कौन बैठे हैं ? '

'बालकृष्ण शुक्लजी, हरिसाधन हिंग्लेजी और तुलसीदास गौतमजी ।

'हू । इन तीनो को साथ ही ले आओ ।

दरवाजे के बाहर जाते ही अवस्थी को फिर बुलाहट हुई—"ठहरो ।'

अन्दर आकर उसके खडे होते ही कृष्ण द्वैपायन ने कहा "तुम्हारे काम म काफी गफलत दिखायी दे रही है ।'

अवस्थी मौन प्रश्न की दृष्टि से देखता रह गया ।

"याद रखना, तुम पर भी नजर रखनेवाले लोग हैं ।

मुझसे कोई गलती हो गयी है ?'

"जो किया है या नहीं किया है सो तुम्हे अच्छी तरह मालूम है । तुमने

'वतमान मंत्रिमण्डल की लोकप्रियता या उसके प्रति लोगो की अनास्था के बारे मे आप कुछ कहेंगे क्या ?'

गणतन्त्र भारत मे हर नागरिक को सरकार की आलोचना करने का अधिकार है। हो सकता है कि हम कुछ अधिक आलोचना करते हो पर यह हमारा जातीय स्वभाव है। इसके अलावा हमारे देश की नीति है—अधिक से अधिक गवनमेंट कम से कम नही। यानी सरकार जनता के कल्याण को आदर्श बनाकर बहुत कुछ साथ साथ करना चाहती है, कम से कम उम्मीद तो ऐसी ही करती है। यह भी जन साधारण की आलोचना का एक कारण है। जहाँ पर जिस भी चीज की कमी हो सरकार उसे पूरा करे, जनसाधारण इसी की माँग करता है और हम भी उनकी इस माँग को स्वीकार करते हुए उनसे सिर्फ समय, सहयोग और धैर्य की प्रार्थना करते हैं। फिर भी हम जानते हैं कि कल्याणकारी राष्ट्र का पूरा संगठन करने मे सालो लग जायेंगे, जनता की माँगें पूरी करने मे हमारी पूरी जिन्दगी खत्म हो जायेगी। ऐसी हालत मे जनता का असंतोष कुछ हद तक अनिवार्य है। कांग्रेसी शासन से हम किसी को भी पूरी तरह खुश नही करते क्योंकि कांग्रेस किसी श्रेणी विशेष का संगठन नही है। मालिक मजदूर जमींदार काश्तकार, मध्यमवर्ग या उच्चवर्ग देहाती शहराती छात्र या शिक्षक—कोई भी इस शासन से पूरी तरह संतुष्ट नहीं हो सकेगा। पर इससे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हमने किसी एक श्रेणी को पूरी तरह असंतुष्ट नही रखा है और ऐसा करेंगे भी नही। कांग्रेसी समाजवाद का यही मूल तत्त्व है। शिकायत तो सभी थोडी बहुत करेंगे, पर मतदान के समय अधिकांश लोग कांग्रेसी तम्बू मे ही रहेंगे। उन्हे मालूम है कि कांग्रेसी राज मे थोडा-बहुत मंगल सबका हुआ है। कांग्रेसी दरबार से कोई भी खाली हाथ नही लौटा है।

'अब आपसे कुछ व्यक्तिगत प्रश्न करना चाहता हू।'

'करो पर समय अब अधिक नहीं है।

'थोडी देर पहले आपके दरवाजे के सामने दुर्गाप्रसाद कौशल को गिरफ्तार किया गया है। यह आदेश क्या आपने ही दिया था ?

हाँ।

गिरफ्तारी से पहले काफी देर तक आपकी और उनकी बातें हुई थी। क्या आपने उन्हे अपनी आपत्तिजनक राजनीति छोडने के लिए सलाह दी थी ?

'नही। दुर्गाप्रसाद मेरा बेटा है। उसके लिए मेरी कमजोरी किसी से छिपी नही है। बहुत दिनों से उसे देखा नही था, इसलिए बुलवाया था। उसके साथ पारिवारिक बातो के अतिरिक्त और किसी बात पर चर्चा नही हुई। यहाँ से जाने के पहले उस गिरफ्तारी के बारे मे कुछ भी नही मालूम था।

'इस गिरफ्तारी की क्या सचमुच कोई जरूरत थी ?"

मलिन हंसी हंसकर कृष्ण द्वपायन न कहा, "अगर जरूरत न होती तो बाप बेटे को पुलिस के हवाले न करता।'

दुर्गाप्रसाद कौशल के खिलाफ क्या अभियोग है ? '

'उदयाचल की शांति और व्यवस्था की निरापदता के लिए ही उसे गिरफ्तार किया गया है।'

पांच बजते ही कृष्ण द्वैपायन ने यह भेंट समाप्त कर दी, "अब खत्म करना पड़ेगा। कई साथी भेंट करने आ रहे हैं, आज मुझे बिल्कुल वक्त नहीं है।

"धन्यवाद, कौशलजी,' गोपालकृष्णन् न विदा लेते हुए कहा, "उम्मीद है कि इण्टरव्यू अखबार म अच्छी तरह ही छापा जायेगा।

मेरी ओर से एक अनुरोध है।'

"जरूर कहिए।"

"घण्टे भर मे ही यह इण्टरव्यू सुदशन दुग को मालूम हो जाय तो ठीक रहेगा।'

'पूरा इण्टरव्यू ?'

'कम से कम जो कुछ उनके बारे मे कहा है।'

ठीक है।

'किसी तरकीब से ही उन्हें बताना पडेगा ताकि यह न मालूम हो कि मेरे कहने पर तुमने ऐसा किया है।'

समझ गया।'

गोपालकृष्णन् के चले जाने पर कृष्ण द्वैपायन न अवस्थी को बुलाया।

"कल सवेरे का 'भारत टाइम्स' हर कांग्रेसी एम० एल० ए० के हाथो म आठ बजे के अन्दर पहुच जाये।'

जी।

'नीचे कौन कौन बैठे हैं ?

'बालकृष्ण शुक्लजी, हरिसाधन हिंग्लेजी और तुलसीदास गौतमजी।

'हूं। इन तीनों को साथ ही ले आओ।

दरवाजे के बाहर जाते ही अवस्थी को फिर बुलाहट हुई— ठहरो।"

अन्दर आकर उसके खडे होते ही कृष्ण द्वपायन ने कहा, 'तुम्हारे काम म काफी गफलत दिखायी दे रही है।

अवस्थी मौन प्रश्न की दृष्टि से देखता रह गया।

याद रखना, तुम पर भी नजर रखनेवाले लोग हैं।

'मुझसे कोई गलती हो गयी है ?"

'जो किया है या नहीं किया है सो तुम्हे अच्छी तरह मालूम है। तुमने

मेरी कम सेवा नही की है। मैंने भी तुम्हे बहुत दिया है और भी दूगा, पर लालच को बहुत ज्यादा मत बढने देना, सवनाश हो जायेगा।'

अवस्थी कुछ बोलने के लिए मुह खाल ही रहा था कि कृष्ण द्वैपायन न कहा, "अभी नहा। तुम्हारी बात भा ग्राज ही सुनूगा। रात नौ बजे क बाद। अभी जाओ, काम करो।'

उठकर खडे होते हुए बाले, 'उस महिला से भेंट की ?

"जी हा।'

"क्या चाहती है वह ?

"मुलाकात करना चाहती है।'

"कब ?

'आज ही।'

'अच्छा, ठहरो। एक कागज पर आज का पूरा कायक्रम लिखा था उसी पर आँखें गडाकर बोले 'आठ बजकर दस मिनट पर आ सकती है उसे खबर भेज दो।

डेढ घण्टे तक कृष्ण द्वपायन गुट नेताओ के साथ बातें करते रहे। कभी अकेले अकेले कभी कइयो स साथ साथ। विस्तृत बातें नही, जो राजनीतिक बातचीत पहले से चल रही थी, उसी की सुसमाप्ति। किसी किसी के साथ कठोर रहे और किसी किसी के साथ नवनीत स कोमल। सभी ने देखा और देखकर आश्चय किया कि मुख्यमन्त्री ने पहले स ही सोच विचारकर सिद्धा त तय कर रखे हैं। कइयो ने आश्चयचकित होकर देखा कि उनके कायक्रम का एक भी एसा पहलू नहा है, जो कृष्ण द्वपायन न जानते हो। कई तो डर गये कि मुख्य मन्त्री इन गोपनीय तथ्यो का अपने स्वाथ के लिए इस्तेमाल करने को तयार हैं। और कइयो को यह देखकर चैन मिला कि कृष्ण द्वपायन को मनुष्य की कमजोरियो से जिन्दा रहन के लिए या उच्चाकाक्षा के तकाजे पर लोग जो कुछ कर बठते हैं उससे पूरी सहानुभूति है। उनके सवेदनापूण व्यवहार से उन लोगो की आँखें नम हो गयी। कइयो के साथ कृष्ण द्वपायन ने पाच दस मिनट के राजनीतिक तक करके अपने विरुद्ध सारे आरोपो को मिथ्या प्रमाणित कर दिया वे सब विस्मित हो गये कि ये तक इतने अकाटय और युक्तिसगत हैं, जिनके आगे उनके अभियोग टिक ही नही सकते। और, किसी किसी के सामने उन्होने इस ढग स अपना अपराध स्वीकार करके क्षमा माँग ली कि उन्हे भी कृष्ण द्वपायन के चरित्र की विशिष्टता और उनके नेतत्व की दढता स्वीकार करनी पडी। जिन्हे शिकायत थी कि उनके जिलो की अपेक्षा दूसरे जिलो की उन्नति म कृष्ण द्वपायन ने ज्यादा पसा खच किया है, उन्हें अपनी शिकायतें झूठी मानकर अवाक रह जाना पडा। फिर दूसरे दो लागों के आगे अपनी त्रुटि

स्वीकार करके कृष्ण द्वैपायन ने भविष्य मे उन्हें पूरा करने का आश्वासन देकर समर्थन प्राप्त किया। जिसकी जो भी कामना, प्रार्थना, अभियोग, आरोप था—सब कृष्ण द्वैपायन ने धीरज और नम्रता के साथ सुना। प्रान्त के हर हिस्से मे होनेवाली घटनाओं और जिन्दगी के बारे म कृष्ण द्वैपायन का व्यापक ज्ञान देखकर गुट नेताओं को चकित रह जाना पडा। किस जिले में कौन सा अनाज पैदा होता है कहाँ पर कौन सा नया या पुराना उद्योग है, किस शहर म किस बात को लेकर इन दिनो झगड की शुरुआत हुई है, कहाँ पर कौन सी नदी, पहाड या जगल हैं किस शहर के किस काग्रेसी उम्मीदवार ने कब कौन सा उल्लेखनीय काम किया है, या खास इसी शहर की या गाँव की कौन कौन सी समस्या है इन सबकी वह पूरी जानकारी रखते हैं। वह कभी किसी का नाम नहीं भूलते, कभी किसी का चेहरा नहीं भूलते। बेटा बटिया तक के नाम लेकर हाल चाल पूछने के ढग से जिस तरह वयोवृद्ध आगन्तुकों को विगलित कर दिया, वैसे ही उन्होंने बाप दादो का कुशल मगल पूछकर कम उम्र के लोगों को भी विस्मित कर दिया। लछमनपुर किसान सभा के अध्यक्ष रसूल मुहम्मद को तो एकदम अभिभूत ही कर लिया।

जनाब, आपके पास एक गाय थी, उसका क्या हाल है?'

वह गाय रसूल मुहम्मद पजाब से खरीदकर लाये थे। सोलह से बाईस सेर तक दूध देती है। उस पर रसूल मुहम्मद को अपार गर्व था। बोले, "गाय ठीक है, कौशलजी! पर उसके बारे मे आपको कैसे मालूम हुआ?'

'यही तो रसूल साहब आप लोग सोचते हैं कि मैं मुख्यमन्त्री बन बैठा हूँ, और अब आप लोगो की खबर ही नहीं रखता। आपकी वह गाय फिरोजपुर से खरीदी गयी थी। रोज आधा मन दूध देती थी। प्रान्तीय मेले म पहला इनाम मिला था। उज्ज्वल चितकबरा रग है। है न?

'जी हाँ पर

यही तो मियाँ साहब मुझे कैसे मालूम यही न? मैं भी तो किसान हूँ। मैं भी कभी कृपाणपुर किसान सभा का अध्यक्ष था। आप और मैं एक ही जमाने के आदमी हैं और आज आप सुन्दरन दुबे के साथी बन रहे हैं?"

नहीं, कौशलजी मैंने पक्का जबान नहीं दी है पर '

मैं मानता हूँ कि आपके जिले म कुछ खास अच्छी सडक नहीं बनी है। सिंचाई के लिए जो नहर बनी है उसे आपकी जमीन के सामने से काटना था पर ऐसा नहीं हो पाया। आपके बेटे ने मुंसिफ बनने के लिए दरखास्त भेजी है सो भी मुझे मालूम है। लछमनपुर जिले म दो एक मदरसे और बना देना कोई मुश्किल काम नहीं है पर ये छोटी छोटी बातें तो आप मुझे पहले ही बता सकते थे।'

मेरी कम सेवा नहीं की है। मैंने भी तुम्हें बहुत दिया है, और भी दूगा, पर लालच को बहुत ज्यादा मत बढने देना, सवनाश हो जायेगा।'

अवस्थी कुछ बालने के लिए मुह खोल ही रहा था कि कृष्ण द्वपायन न कहा, "अभी नहीं। तुम्हारी बात भी आज ही सुनूगा। रात नौ बजे के बाद। अभी जाओ, काम करो।'

उठकर खड़े होते हुए बोले, 'उस महिला से भेंट की ?

"जी हाँ।'

"क्या चाहती है वह ?

"मुलाकात करना चाहती है।'

'कब ?

'आज ही।"

'अच्छा, ठहरो। एक कागज पर आज का पूरा कायक्रम लिखा था उसी पर आखें गडाकर बोले 'आठ बजकर दस मिनट पर आ सकती है उसे खबर भेज दो।

डेढ घण्टे तक कृष्ण द्वपायन गुट नेताओं के साथ बातें करते रहे। कभी अकेले अकेले कभी कइयों से साथ साथ। विस्तत बातें नहीं जो राजनीतिक बातचीत पहले से चल रही थी, उसी की सुसमाप्ति। किसी किसी के साथ कठोर रहे और किसी किसी के साथ नवनीत से कोमल। सभी ने देखा और देखकर आश्चय किया कि मुख्यम त्री ने पहले से ही सोच विचारकर सिद्धा त तय कर रखे हैं। कइयों ने आश्चयचकित होकर देखा कि उनके कायक्रम का एक भी ऐसा पहलू नहीं है, जो कृष्ण द्वपायन न जानते हो। कई तो डर गये कि मुख्य म त्री इन गोपनीय तथ्यों का अपने स्वाथ के लिए इस्तेमाल करने को तयार हैं। और कइयों को यह देखकर चन मिला कि कृष्ण द्वपायन को मनुष्य की कमजोरियों से, जि दा रहने के लिए या उच्चाकाक्षा के तकाजे पर लोग जो कुछ कर बठते हैं उसमे पूरी सहानुभूति है। उनके सवेदनापूण व्यवहार से उन लोगों की आखें नम हो गयी। कइयों के साथ कृष्ण द्वपायन ने पाँच दस मिनट के राजनीतिक तक करके अपने विरुद्ध सारे आरोपों को मिथ्या प्रमाणित कर दिया व सब विस्मित हो गये कि ये तक इतने अकाटय और युक्तिसगत हैं जिनके आगे उनके अभियोग टिक ही नहीं सकते। और, किसी किसी के सामने उन्होंने इस ढग से अपना अपराध स्वीकार करके क्षमा माग ली कि उन्हें भी *कृष्ण द्वपायन के चरित्र की विशिष्टता और उनके नेतत्व की दृढता स्वीकार* करनी पडी। जिन्हें शिकायत थी कि उनके जिले की अपेक्षा दूसरे जिलों की उन्नति में कृष्ण द्वपायन ने ज्यादा पसा खच किया है, उन्हें अपनी शिकायतें झूठी मानकर अवाक रह जाना पडा। फिर दूसरे दो लोगों के आगे अपनी त्रुटि

स्वीकार करके कृष्ण द्वपायन न भविष्य मे उन्हें पूरा करने का आश्वासन देकर समथन प्राप्त किया। जिसकी जो भी कामना, प्रायना, अभियोग, आरोप था—सब कृष्ण द्वपायन ने धीरज और नम्रता के साथ सुना। प्रा त के हर हिस्स मे होनवाली घटनाओ और जिन्दगी के बारे म कृष्ण द्वैपायन का व्यापक नान दखकर गुट नेताओ को चकित रह जाना पडा। किम जिले में कौन सा अनाज पदा होता है कहाँ पर कौन सा नया या पुराना उद्योग है, किस शहर मे किस बात को लेकर इन दिनो झगडे की शुरुआत हुई है, कहा पर कौन सी नदी पहाड या जगल हैं किस शहर के किस काग्रेसी उम्मीदवार न कब कौन सा उल्लेखनीय काय किया है, या खास इसी शहर की या गाँव की कौन कौन सी समस्या है इन सबकी वह पूरी जानकारी रखते हैं। वह कभी किसी का नाम नहा भूलते, कभी किसी का चेहरा नही भूलते। बेटा बेटियां तक के नाम लेकर हाल चाल पूछने के ढग से जिस तरह वयोवृद्ध आगन्तुको को विगलित कर दिया वसे ही उन्होने बाप दादो का कुशल मगल पूछकर कम उम्र के लोगो को भी विस्मित कर दिया। लछमनपुर किमान सभा के अध्यक्ष रसून मुहम्मद को तो एकदम अभिभूत ही कर लिया।

'जनाब आपके पास एक गाय थी, उसका क्या हाल है ?

वह गाय रसूल मुहम्मद पजाब से खरीदकर लाये थे। सोलह स बाईस सेर तक दूध दती है। उस पर रसूल मुहम्मद को अपार गव था। बोले, 'गाय ठीक है कौलजी! पर उसके बारे मे आपको कस मालूम हुआ ?"

यही तो रसूल साहब आप लोग साचते हैं कि मैं मुख्यमन्त्री बन बैठा हूँ और अब आप लोगो की खबर ही नही रखता। आपकी वह गाय फिरोजपुर से खरीदी गयी थी। रोज आधा मन दूध देती थी। प्रान्तीय मेले म पहला इनाम मिला था। उज्जवल चितकबरा रग है। है न ?

'जी हाँ, पर

यही ता मिया साहब मुझे कस मालूम यही न ? मैं भी तो किमान हूँ। मैं भी कभी कृपाणपुर किसान सभा का अध्यक्ष था। आप और मैं एक ही जमाने के आदमी हैं और आज आप मुरली दुबे के साथी बन रह हैं ?

नही कौलजी मैंने पक्की जबान नही दी है पर '

मैं मानता हूँ कि आपके जिल म कुछ खास अच्छी सडक नही बनी है। सिंचाई के लिए जो नहर बनी है उसे आपकी जमीन के सामने स काटना था पर ऐसा नही हो पाया। आपके बेटे ने मुंसिफ बनने के लिए दरखास्त भेजी है सो भी मुझे मालूम है। लछमनपुर जिले मे दो एक मदरसे और बना देना कोई मुश्किल काम नहीं है पर ये छोटी छोटी बातें तो आप मुझे पहले ही बता सकते थे।'

आपसे मैंने दो तीन बार कहा था। एक स्मरण पत्र भी भेजा था।

'अच्छा ! गलती हो गयी। हजारों कामों के बीच शायद उस तरफ ध्यान नहीं दे पाया। पर याद मुझे सब है। आपसे और भी बताता हूँ—आपके छोटे लड़के अकबर अली पर गाड़ी का जाली परमिट बेचने के जुर्म में पुलिस केस चल रहा है न ?'

जी वह कसूरवार नहीं है।

कसूरवार नहीं है इसीलिए सोच रहा हूँ कि केस उठा लिया जाय।

कौशलजी हम—हम तीन लोग—आपके साथ ही हैं। दूसरे दो लोगों की बात भी जरा सुन लीजिए।

जरूर जरूर। जनाब मंसूर अली और जनाब रुस्तम खाँ। यह देखिए वे क्या चाहते हैं यह भी मैंने फाइल में नोट कर रखा है।

रसूल मियाँ के जाते जाते उन्होंने फिर कहा मियाँ साहब निजी सुविधा असुविधा सबको होती है। देश की सेवा करते हैं, पर हम भी तो आदमी हैं। फिर भी मैं जानता हूँ कि आप हमारा साथ देंगे व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि भारत और उदयाचल के बड़े स्वार्थ के लिए। यह विश्वास है इसीलिए इस बुढ़ापे में भी मैं इस भारी बोझ को उठाने की हिम्मत कर रहा हूँ। मेरी ताकत और मेरा भरोसा सब आप ही लोग हैं।

बीस

चन्द्रप्रसाद और बसन्त के चले जाने के बाद दुर्गाभाई का मन एक अजीब सी खुशी से भर उठा। दो तरुण-तरुणी के शर्मीले, भीरु चकित प्रणय के प्रकाश से दुर्गाभाई की सुप्त चेतना जाग उठी। बसन्त उनकी सबसे प्यारी बच्ची है। उनके गृहस्थ जीवन का माधुर्य करीब करीब उनके लिए सिर्फ बसन्त को ही केन्द्रित करके है। बसन्त की शादी-ब्याह के बारे में उन्होंने आज तक कुछ नहीं सोचा था। मनोरमा ने कभी ब्याह की बात उठायी थी पर जोर नहीं दिया था शायद इसीलिए कि वह दुर्गाभाई की बेटी है उसका ब्याह होने में कोई मुश्किल न होगी। पर दुर्गाभाई के मन में इसी बात की शंका थी कि वह एक मन्त्री हैं। अगर किसी अच्छे लड़के के पिता के आगे बेटी के ब्याह का प्रस्ताव रखें तो इसमें उनका मन्त्रीपद कितना प्रभाव डालेगा। यानी मन्त्रित्व और राजनीतिक नेतृत्व के सहारे बसन्त के लिए अच्छा लड़का पा लेने की उन्हें तनिक भी इच्छा

नहीं है। पर मन्त्री और नेता ही इस समय उनका एकमात्र परिचय है।

मन के इस संशय से आज के इस म्लान अपराह्न में दुर्गाभाई बड़े सुन्दर ढंग से मुक्ति पा गये। दुर्गाभाई को लगा जैसे एक चन्द्रप्रसाद ही वसन्त के योग्य वर है। उसके आमोद प्रमोद तथा कौतुक से दीप्त स्वभाव के साथ वसन्त का नम्र माधुर्य बहुत ही अच्छा मेल खायेगा। अवश्य चन्द्रप्रसाद बहुत ज्यादा नहीं पढ़ा है पर उसकी तीक्ष्ण बुद्धि और बातचीत में सुसंस्कृति स्पष्ट झाँकती है। अपनी योग्यता के बल पर ही उसे वायुसेना में कमीशन मिला है। उसका भविष्य निश्चित है। अधिकांश मन्त्री-पुत्रों की तरह उसने पिता की उदारता और प्रभाव का सहारा नहीं लिया। इस शादी में पद्मादेवी और कृष्ण द्वैपायन की भी सम्मति है यह जानकर दुर्गाभाई और भी प्रसन्न हुए। फिर भी सन्देह का एक काँटा उनके मन में चुभा—शायद आज कृष्ण द्वैपायन एक चामत्कारिक खेल में उन्हें पूरी तरह अपने साथ बाँधना चाहते हैं पर पद्मादेवी के समर्थन की बात याद आते ही सन्देह तुरन्त दूर हो गया। इसके अलावा कृष्ण द्वैपायन ने चन्द्रप्रसाद से यह भी स्वीकार किया है कि दुर्गाभाई बेटी के ब्याह का प्रस्ताव लेकर मुख्यमन्त्री के पास नहीं आयेंगे—यह सुनकर भी दुर्गाभाई को तृप्ति हुई थी—कृष्ण द्वैपायन मुझे अच्छी तरह जानते हैं। दूसरों के साथ गुटबन्दी और निम्न स्वार्थों के लिए वह चाहे जो कुछ करें पर मेरे प्रति उनमें हमेशा श्रद्धा प्रेम और सम्मान ही बना रहा। उनके विरुद्ध मेरा कोई अभियोग नहीं है। शिकायत करनेवाले चाहे जो कहें, पर मैं जानता हूँ कि उदयाचल का मुख्यमन्त्री बनने की योग्यता अभी तक केवल कृष्ण द्वैपायन में ही है।

मनोरमा इस विवाह से खुश होगी आसानी से सहमति दे देगी, ऐसा नहीं लगता। फिलहाल अभी उसे न बताना ही ठीक रहेगा। कृष्ण द्वैपायन के फिर से मुख्यमन्त्री बन जाने के बाद शायद वह नरम पड़ जाये और तब मुख्यमन्त्री के परिवार से वैवाहिक सम्बन्ध बनाने के लिए सम्भवतः तैयार हो जाय। मनोरमा के विरोध को दुर्गाभाई ने कुछ अधिक महत्त्व नहीं दिया बल्कि उन्हें यह सोचकर प्रसन्नता ही हुई कि माँ को आपत्ति होते हुए भी वसन्त पिता का आशीष लेकर चन्द्रप्रसाद का वरण करेगी।

धूप ढल गयी थी। पेड़ों की छाया हरे लॉन पर पसर गयी। एकाएक दुर्गाभाई ने कई चिड़ियों की मिली जुली चहचहाहट सुनी आँखें उठाकर देखा तो श्वेत और लाल कनेर के पेड़ फूलों से लद गये हैं। घने नीले आसमान पर बादलों का नामोनिशान नहीं है। एकाएक उनको लगा जैसे धरती बहुत सुन्दर है।

एक गाड़ी पार्क के अन्दर आकर बँगले के दाहिनी ओर दफ्तर के सामने रुकी। दुर्गाभाई ने देखा गाड़ी से एक सुवेशी महिला उतरी। कुछ जानी-पहचानी सी लगी। उम्र तीस-बत्तीस की होगी। दूर से सुन्दरी लग रही थी।

जल्दी ही पहचान गये। परसों रात को ही इसे देखा है—सरोजिनी सहाय।

बयरे ने महिला को प्रतीक्षागह मे बठा दिया। दुर्गाभाई धीरे धीरे दफ्तर की ओर बढे।

सरोजिनी सहाय को कुछ क्षण प्रतीक्षा करनी पडी। जब बेयरे ने दुर्गा भाई के पास पहुचाया तो कुछ अनमने से होकर दुर्गाभाई ने नमस्ते किया। उसी समय एक दूसरी गाडी से दुर्गाभाई की अपनी गाडी से, पत्नी मनोरमा भी वापस आयी। क्षण भर दुर्गाभाई के दफ्तर के सामने रुककर वह अ दर चली गयीं।

दुर्गाभाई ने कहा 'वठिए। आपको तो मैं जानता हू। परसो रात को मुलाकात हुई थी। आपके पहले के कायक्रम के बारे मे भी मुझ थोडी जानकारी थी।'

सरोजिनी सहाय कुर्सी पर वठ गयी। पुराने कायक्रम के जिक्र स वह अप्रतिभ नही हुई। दुर्गाभाई ने देखा कि उसके वठने का ढग सरल और सीधा है। चेहरे पर बुद्धि का प्रकाश है। थोडा मुस्कराते हुए बातें करती है, तो उसके सुदर सफेद दाँत चमक उठते हैं।

'आपको परसा रात को हरिशकर त्रिपाठी के घर पर देखा था, पर आपने मुझसे एक भी बात नही की।'

थोडा मुस्कराकर दुर्गाभाई न कहा, 'परसो रात की वठक म मुझे कुछ कहना नही था मैं तो सिफ सुनने के लिए गया था।

आपको देख देखकर मुझे आश्चय हो रहा था। हम लोगो न दा घण्टे तक बातें की, लेकिन आपने एक शब्द भी नही कहा। सिफ सुनते रहे। आपकी यह विचित्र दृढ़ता देखकर मैं चकित रह गयी थी।'

'चुप रहना अगर चारित्रिक दृढ़ता का परिचय हो, तो मर अन्दर यह खूब है। गाधीजी हफ्ते में एक दिन बात नही करते थे। उनके कइ चेलो ने भी मौन रहने का अभ्यास किया था।'

"हम बहुत बोलनेवाली जाति के हैं। चिल्लाना, हल्ला गुल्ला करना—यह सब हमारे जीवन का अभिन्न अग है।'

'सुना है आप भारत की उदीयमान ट्रेड यूनियन नेत्री हैं। उदयाचल की दलगत राजनीति म मरा न तो कोई दखल है और न मुझे इसकी कोई जानकारी ही है। मन्त्री के काम काज के बाद मुझे बिल्कुल समय नही मिलता और यदि मिलता भी है तो उसमे मैं राजनीति नही करता। अतएव इस प्रात की आप जसी नयी कायकर्त्रियो का हाल मुझे मालूम नही है। आप लोगो के बारे में सबसे ज्यादा पता जिन्ह होता है वह हैं कृष्ण द्वैपायन कौशल। परसो सुदशन दुबे के अनुरोध के कारण ही मैं उनके गुट की शीष बैठक म आया था।

वहा पर आपको देखकर मुझे आश्चर्य हुआ था। कारण भी बता रहा हूं—सुदर्शनजी ने मुझसे कहा था कि मैं उनकी बैठक में आकर सिर्फ इतना तो सुन लूं कि वे लोग क्यों कृष्ण द्वैपायन को फिर से मुख्यमन्त्री बनाने के पक्ष में नहीं हैं और अगर मैं न चाहूं तो अपनी कोई भी राय न दूं। सुदर्शनजी, प्रजापति गोवडे और हरिशंकरजी को वहां एक साथ देखूंगा, यह तो मैं जानता था, क्योंकि विरोधी गुट के यही तो मुखिया हैं। पर उनके साथ आप जैसी एक अपरिचिता महिला को भी देखूंगा, इसके लिए मैं तैयार नहीं था। इसीलिए कह रहा हूं कि उदयाचल की वर्तमान राजनीतिक परिस्थिति में आपकी क्या भूमिका है, यह मैं एकदम ही समझ नहीं रहा हूं।

'आपके लिए ऐसा कहना स्वाभाविक है," सरोजिनी नम्रता से हंसती हुई बोली, 'सचमुच ही परसों रात की बैठक में मेरी उपस्थिति बेमानी थी। मैंने भी मना किया था, पर गलती भी ज्यादातर मेरी ही थी। बात यह है कि आपके बारे में बहुत-कुछ सुना था, पर पास से आपको कभी नहीं देखा था। परिचय प्राप्त करने का मौका नहीं मिला था। आप उस बैठक में आ रहे हैं यह सुनकर मैं लोभ संवरण नहीं कर पायी। पर यही एकमात्र कारण नहीं था।"

'और क्या कारण था ?"

'बहुत साल पहले हरिशंकर त्रिपाठीजी के साथ ही ट्रेड यूनियन में काम करने का मुझे पहला मौका था। यदि कहा जाये तो वही मेरे राजनीतिक गुरु हैं। उदयाचल की राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस में बहुत दिनों से काम करती आ रही हूं। त्रिपाठीजी की सहकर्मी होने के नाते ही सुदर्शनजी और अन्य कांग्रेस नेताओं के साथ मेरा सम्बन्ध बना। शायद आपको मालूम नहीं है कि आजकल मैं उदयाचल में राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन की जनरल सेक्रेटरी हूं। इसके अलावा प्रदेश कांग्रेस के मजदूर विभाग की जिम्मेदारी भी मुझ पर है।

आपके बारे में यह जानकारी अब मुझे हो गयी है।

'कुछ दिनों से हम देख रहे हैं कि कांग्रेस सरकार की नीति लगातार पूंजीपतियों के अनुकूल ही होती जा रही है। देश की गरीब जनता को उसका उचित हिस्सा नहीं मिल रहा है।

आप लोगों में से कौन कौन ऐसा सोचते हैं ?"

'हम, जो ट्रेड यूनियन या किसान सभा में काम करते हैं फिर भी हम कांग्रेस से बाहर नहीं हैं।'

"हूं। फिर '

"भारत की प्रगति में सरकार की भूमिका गम्भीर और व्यापक है। सरकार सिर्फ शासन ही नहीं करती उसका असली काम संगठन है। उद्योग धंधे में सरकार की भूमिका ही प्रधान होती है और कृषि में भी। यानी गांव और

शहर—दोनों स्थानों पर सरकारी तौर पर ही अधिकांश काम चलते हैं। हमारे सामने पंचवर्षीय योजना है, समाजवादी आदर्श है, पर हो यह रहा है कि पूंजीपतियों का धन बढ़ रहा है और गरीबों की गरीबी। गांव और कृषि की उन्नति में जो खर्च हो रहा है उसका एक बड़ा हिस्सा अमीरों या जमींदारों के पास जाता है। उनके घरों में बिजली आयी है, उनके खेतों में रासायनिक खाद पहुंचती है सिंचाई के लिए पानी की सुविधाएं हैं। यहां तक कि सड़क स्कूल डिस्पेंसरी बनाते समय भी हम उन्हीं का फायदा सबसे पहले देखते हैं। दूसरी ओर जोतदार किसानों की हालत बुरी से बुरी हो रही है। वे लगातार गांव छोड़ शहर आकर गंदी और रोगों से भरी हुई बस्तियों में नये सिरे से जिन्दगी शुरू कर रहे हैं। हम अक्सर सुनने को मिलता है कि कारखानों में मजदूरों की हालत बेहतर हो रही है। थोड़ी हद तक बात सही भी है, पर मजदूरों के मुकाबले में मालिकों की स्थिति हजार गुनी बहतर होती है। वे मनमाने ढंग से सामानों के दाम लगाते हैं और आम लोग खरीदने के लिए मजबूर होते हैं। असल में हम समाजवाद के नाम पर एक विराट पूंजीवादी सामन्तवादी समाज तैयार कर रहे हैं।'

दुर्गाभाई कुछ प्रभावित होकर सरोजिनी सहाय की बातें सुन रहे थे। उसके बोलने के ढंग में आत्मविश्वास था। आवाज साफ और उच्चारण अभिजात था। आवाज में एक अनूठी आन्तरिकता का सम्मिश्रण है, जो मन को छू लेता है।

'आपके साथ मैं सहमत नहीं हूं, फिर भी आप कहिए, मैं सुन रहा हूं।'

"यही सब देख सुनकर दो साल पहले कांग्रेस के मजदूर और किसान सभा के प्रतिनिधियों ने दिल्ली में बैठक की थी और उसमें निर्णय लिया गया था कि कांग्रेस के समाजवाद के आदर्श को वास्तविक रूप देने के लिए और भी तत्परता की आवश्यकता है। पालियामेंट और प्रान्तीय विधान सभाओं के कांग्रेसी सदस्य और अधिक समाजवादी कार्यक्रम की मांग करेंगे। उदयाचल में भी पिछले साल ऐसा ही एक दल बनाया गया है।

"सुना है। उसका नाम जिंजर ग्रुप है। अशोक आप्टे नाम का कोई तरुण उसका नेता है।

जी हां हमारा दल बहुत छोटा नहीं है। हमारे ग्रुप में दस सदस्य हैं और सहानुभूति रखनेवाले भी बहुत हैं।'

'वर्तमान संकट में आप कौशल विरोधी दल में हैं न ?

जी हां। कृष्ण द्वैपायन कौशल से हमें कई शिकायतें हैं। व्यक्तिगत रूप से वह बहुत ही दम्भी हैं और अपनी शक्ति को बहुत ज्यादा समझते हैं। वह तो हम लोगों की मनुष्यों में गणना ही नहीं करते। विधान सभा और दल की बैठक में उन्होंने अशोक आप्टे को कई बार अपमानित किया है सिर्फ अपना

गुस्सा उतारने के लिए। इस सकट में हम उनके साथ समझौता करने को तैयार नहीं हैं। वह जमींदार और पूंजीपतियों के मित्र हैं। उनके नेतृत्व में उदयाचल मे समाजवाद की नीव कभी मजबूत नही हो सकती। इसके अलावा उन्होंने काग्रेस की सारी पुरानी बीमारियों को पाल-पोसकर जिन्दा रखा है—यानी जाति, धर्म, भाषा, आचलिकता, इन्ही सबके बल पर उन्होंने अपने को मजबूत बना रखा है।"

"तो आपकी राय से सुदर्शन दुबे या हरिशकर त्रिपाठी वर्तमान मुख्यमन्त्री स अधिक योग्य हैं?"

"माफ कीजिएगा। राजनीति म नेता का निर्वाचन हर जगह एक ही जसा नही होता। जब ऐसे नेता मौजूद रहते हैं, जिनकी भूमिका ऐतिहासिक होती है, जो सष्टि करते है, जिनके जादुई नतृत्व मे देश जाग उठता है, मनुष्य का हृदय आलोडित हो उठता है, लाखो लोगो की सजन प्रतिभा विकसित हो उठती है—ऐसी स्थिति म नेता चुनना आसान होता है। पर किसी देश मे ऐसे नेता बहुत दिनों तक नही मिल सकते। ऐसे नेता तो जब-तब ही पैदा होते हैं। अधिकाश समय यही देखने को मिलता है कि राजनीतिक नेता हम जैसे दूसरे दस-बीस लोगो की तरह मामूली आदमी हैं। राजनीति के रहस्यमय खेल म इन्ही मे मे कोई एकाएक ऊपर उठ जाता है। शेक्सपियर ने कहा है कि कोई तो जन्म से बडा होता है, कोई उद्यम से बडा होता है और कोई जबरदस्ती बडा किया जाता है। उदयाचल मे सिर्फ एक के अलावा सभी नेता प्रयास से या जबरदस्ती बनाये हुए नेता हैं।

मौन दुर्गाभाई की आखो मे आँखें डालकर सरोजिनी सहाय ने बहुत धीरे से कहा, 'और वह एक ही नेता आप हैं।"

दुर्गाभाई ने प्रतिवाद करना चाहा। पर आवाज नही निकली।

सरोजिनी सहाय ने कहा 'नेता होने की कोई भी विशेषता कृष्ण द्वपायन मे नहा है। यानी उनमे ऐसा कोई भी गुण नही है जो और लोगो मे न हो। आप उनका इतिहास जानते हैं। अग्रेजो की ताबेदारी से उनकी राजनीतिक जिन्दगी शुरू हुइ थी। फिर काग्रेस म आये और आज तक उनकी तकदीर चमकती ही रही। काग्रेस का नेतापद आपके लिए था और आज भी आप ही के लिए है। आपकी सहायता न मिलती तो कृष्ण द्वपायन कबके ही खत्म हो गय होते। आपको मालूम नही है कि वह किस विपली नीति से अब तक अपनी नेतागीरी बनाये हुए हैं। उदयाचल की काग्रेस छोटे छोटे गुटो म बँटकर बरबाद हो रही है। एक गाव के साथ दूसरे गाव का झगडा एक जिले के साथ दूसरे जिले का झगडा। अगर कृष्ण द्वपायन को हटाया न गया, तो यही जहर एक दिन काग्रेस को ले बीतेगा।

दुर्गाभाई ने कहा, "इस बीमारी को फलाने की जिम्मेदारी अकेले कौशलजी पर नहीं है।"

मैं मानती हूँ। दूसरों का कसूर भी मैं हल्का नही कर रही हूँ। आप पूछ रहे थे कि क्या हरिशंकर त्रिपाठी या सुदर्शन दुबे कौशलजी से अधिक योग्य हैं? हो सकता है कि न हो, पर हम इनमे से किसी को भी उदयाचल का नेता नही बनाना चाहते। हम तो आपको चाहते हैं।'

'मुझे?'

'जी हाँ। हम मालूम है कि आप नेतत्व नहीं चाहते। आप गुट राजनीति की गन्दगी मे नहीं उलझना चाहते। पर आपके चाहने या न चाहने पसन्द करने या न करने से भी बडा कुछ है, जिसे जनता का स्वार्थ कहा जाता है। उदयाचल और भारतवर्ष का स्वार्थ। हम जानते है कि हमारे राजनीतिक दृष्टिकोण को आप नही मानते, फिर भी हम यह विश्वास है कि आपके आदर्श और मार्ग के साथ देश के अधिकांश प्रान्तों और भागों का मेल है। मुख्यमन्त्री के रूप मे आपको पाकर हम उदयाचल कांग्रेस संगठन को पूरे उत्साह से मजबूत बनायेंगे। आपके पीछे किसान मजदूर मध्यवर्ग विद्यार्थी—सब रहेंगे। उदयाचल में एक नयी चेतना जागेगी नया जनजागरण होगा, और एक दिन वही सारे हिन्दुस्तान पर छा जायेगा।"

दुर्गाभाई को सुनने मे अच्छा लग रहा था।

सोच देखिए दुर्गाभाइजी, स्वतन्त्रताप्राप्ति के साथ ही हम संघर्ष को भूल बैठे हैं। देश की विशाल जनशक्ति को हम अपनी सम्पत्ति नही समझते बल्कि उससे डरते हैं। उन्हें हमने बहुत दूर कर रखा है और परे रखकर ही हम उनकी भलाई करना चाहते हैं। पास लाकर हमने उनको बराबर का स्थान नही दिया। शासक और शासित वर्ग में जो फासला आज है उतना शायद अंग्रेजों के जमाने में भी नहीं था। आप अगर हमारा नेतृत्व करें तो कांग्रेस के झण्डे के नीचे हम सबको बराबर स्थान मिल सकेगा। देश को स्वतन्त्र कराने के लिए जो जनजागरण फैला था, संगठन में भी वही जनजागरण देखने को मिलेगा।

दुर्गाभाई कुछ कहने ही वाले थे कि टेलीफोन बज उठा।

दूसरे सिरे पर कृष्ण द्वैपायन कौशल थे। उनकी आवाज में व्यग्रता थी—'दुर्गाभाईजी सुना कि आपकी तबियत ठीक नहीं है?

'कुछ खास नहीं, जरा थकावट-सी मालूम हो रही है।

'वह तो होगी ही। सारी जिम्मेदारी जो आप पर आ पड़ी है। डाक्टर आये थे?

"नहीं, डाक्टर की जरूरत नहीं है।"

"अवश्य जरूरत है। चन्द्रप्रसाद सिविल सर्जन को लेकर जल्दी ही आपके पास पहुंचेगा।"

"आश्चर्यजनक आदमी हैं आप ! आज के दिन भी इतनी सारी बातों पर आप कैसे निगरानी रख पा रहे हैं ?"

"आपकी तन्दुरस्ती 'इतनी सारी बातों' में शामिल नहीं है, दुर्गाभाईजी ! मैं इन दिनों दलगत राजनीति के गहरे कीचड में डूबा हुआ हूँ। यह एक अजीब बाजार है। यहाँ की खरीद फरोख्त का तरीका भी अजीब है। एक के बाद एक नेता आ रहे हैं। कभी साथ साथ, कभी अकेले। उनकी शिकायतें और माँगें भी हैं। पर उनमें ज्यादा फर्क नहीं है। उनकी माँगें कुल एक या दो ही तरह की हैं।"

"ऐसा न कहें, मैं नहीं सुनना चाहता।"

"नहीं, आपसे नहीं कहूंगा। उन लोगों से बातें कर रहा था कि इतने में दरवाजे पर चन्द्र उदय हुआ। चेहरे पर प्रसन्नता थी, देखकर मुझे जयदेव का वह श्लोक याद आ गया—स्फुरति मुक्तलता परिरम्भण पुलकित मुकुलित च्यूते। बसन्त के आविर्भाव से सहकारतरु पुलक से मुकुलित हो रहा है। ऐसा लगता है मानो राजकुमार दिग्विजय करके आ रहे हों। पर उसने जो कुछ बताया, वह बिल्कुल अलग चीज है। बताया कि आपके सिर में चक्कर आ रहे हैं, आप बाहर लॉन में चुपचाप बैठे थे।

'अब ठीक हो गया हूँ। फिर भी डाक्टर को बुलवाकर आपने अच्छा ही किया। धन्यवाद।"

"अब काम छोड़िए, जाकर लेट जाइए।'

"काम नहीं कर रहा हूँ, जरा बातचीत कर रहा हूँ।

"इति चतुल चाटु पटु चारु "

"कुछ समझा नहीं कौशलजी ! मैं आपकी तरह संस्कृत का विद्वान् नहीं हूँ।'

"कुछ नहीं दुर्गाभाईजी, रसिकजन और रसिक मन के बिना राजनीति सम्भव नहीं है। आप किससे बातचीत कर रहे हैं, यह मुझे मालूम है।

"मैंने तो आपको टेलीफोन पर बता दिया था।"

"तभी तो मालूम हुआ।

'डाक्टर कब तक आयेंगे ?

"उम्मीद करता हूँ कि जल्दी ही आयेंगे।'

"ठीक है, धन्यवाद।

सरोजिनी सहाय झेंपकर बोली 'मुझे मालूम नहीं था कि आपकी तबियत ठीक नहीं है।"

"कुछ खास बात नहीं, बस जरा थकावट मालूम हो रही है।"

'तब फिर मैं आपका ज्यादा समय नही लूँगी। अभी डाक्टर भी तो आ जायेंगे।'

'आपकी बातें सुनने म मुझे अच्छी लग रही थी दुर्गाभाई ने कमजोर आवाज मे कहा, "पर मैं मुख्यमन्त्री-पद नही ले सकूँगा।

"क्यो ?"

"बडी साफ बात है। अगर आज मैं कृष्ण द्वैपायन कौशल को हराकर मुख्यमन्त्री बन जाऊ, तो मैं भी काग्रस का एक और गुटबाज पुर्जा बन जाऊँगा। यानी कल एक या एकाधिक गुट या कुछ खास खास लोगो स गुटबाजी करक मुझे मुख्यमन्त्री की कुर्सी बचानी होगी। मैं इसके लिए तयार नही हू।'

सरोजिनी सहाय कुछ कहने जा रही थी, पर दुर्गाभाई ने उस रोककर उत्तजित स्वर मे कहा, 'प्रान्त के सभी लोगो को झण्डे के नीचे लाकर दल का सगठन किया जा सकता तो अच्छा ही होता। पर भारतवष गणतन्त्र राष्ट्र है। यहाँ बहुदलीय राजनीति चलती है। काग्रेस तो कभी सुसगठित दल नही बन सका। आज भी वह विभिन्न स्वार्थों का मिला जुला मच है। राजनीति की धारा जिस ओर बह रही है उस आज एकाएक नही बदला जा सकता। मेरे कहने पर कृष्ण द्वैपायन स्वय ही मेरे लिए गद्दी खाली कर देंगे। आप हस रही हैं ? पर उन्हे मैं आपसे कही ज्यादा पहचानता हूँ। मैं मुख्यमन्त्री पद के लिए सचमुच अधिकारी नही हूँ। आज पाँच साल से यह महत्त्वपूण जिम्मदारी उन्होने उठा रखी है। एक साथी के नाते उनके खिलाफ मुझे कोई शिकायत नही है। जो कुछ भी उन्होने किया उस सबका समथन भी नही कर रहा हूँ। हर आदमी की तरह उनमें भी कमजोरियाँ हैं पर एक इन्सान और नेता के नाते जो उनके प्रतिद्वन्द्वी बने हैं कृष्ण द्वपायन उनसे कही अच्छे हैं। आज अगर उन्हे हटाकर मैं मुख्यमन्त्री बन जाऊँ तो लोग यही कहेंगे कि सत्ता और मर्यादा के लोभ मे ही मैंने यह तय किया है। मैं कृष्ण द्वपायन की अपेक्षा शायद ही अधिक सफल मुख्यमन्त्री बनू क्योकि मुझे राजनीतिक गन्दगी गीजना नही आता। बार बार हार होगी। पतन और स्खलन होगा।

एक और बात आपने सोची है ?

क्या ?

यदि आज हरिशकर त्रिपाठी मुख्यमन्त्री बने तो उन्ह हमेशा आपके इच्छानुसार चलना पडेगा। यानी आप बडी आसानी स उन्ह रास्ता दिखा सकेंगे।

"कसे ?

वह समझते हैं कि आपके समथन के बिना वह एक दिन भी मुख्यमन्त्री नही बने रह सकते, तो आप उन्ह जिस रास्ते से चलायेंगे उन्ह उसी रास्ते पर

चलना पड़ेगा।"

दुर्गाभाई हिल डुलकर ठीक से बैठ गये।

सरोजिनी सहाय ने कहा, "मुझे मालूम है कि वह आपके निर्देशानुसार चलने के लिए और मंत्रिमण्डल बनाने के लिए तैयार हैं क्योंकि उन्हें मालूम है कि आपका मार्ग ही कल्याण का मार्ग है।'

दुर्गाभाई मानो बड़ी दूर से बोल रहे हों, "आप मुझे नहीं जानतीं। मैं न तो राजा बनना चाहता हूँ और न बनाना चाहता हूँ। अब आप जा सकती हैं। नमस्ते।"

इक्कीस

सूर्यप्रसाद ने कहा था कि वर्तमान राजनीतिक नाटक की सिर्फ एक नायिका है, और वह है सरोजिनी सहाय।

सूर्यप्रसाद की अन्य उक्तियों की तरह इसमें भी आंशिक सचाई थी। सरोजिनी सहाय की भूमिका रंगमंच पर है आंखों को चकाचौंध कर देनेवाली रोशनी में दर्शकों के सामने। पद्मादेवी और मनोरमा की भूमिका नेपथ्य में है।

उदयाचल की विधानसभा में कुल छः महिला सदस्याएँ हैं, उनमें दो विरोधी दल की हैं और चार कांग्रेसी। उनमें से किसी का भी राजनीतिक रूप से कोई अधिक महत्त्व नहीं है। वास्तविकता यह है कि हाई कमान की इच्छा थी कि विधानसभा में यथासम्भव अधिक महिलाओं को शामिल किया जाये इसी का पालन करने के लिए इन चार महिलाओं को भी अवसर दिया गया था। इनमें से किसी को भी मन्त्रिमण्डल में लेने का प्रश्न नहीं उठता था।

कृष्ण द्वैपायन कभी-कभी मजाक करते—"उदयाचल के मन्त्रियों का चरित्र शुद्ध रहना अनिवार्य है क्योंकि ऐसी पुरुष प्रधान विधान सभा या सिर्फ पुरुषों का ही मंत्रिमण्डल हिन्दुस्तान में दूसरा नहीं है।

इसीलिए कुछ साल पहले ट्रेड यूनियन के माध्यम से उदयाचल की कांग्रेसी राजनीति में जब सरोजिनी सहाय उदित हुईं, तो एक हलचल सी मच गयी थी।

सरोजिनी सहाय ने किस तरह रतनपुर आकर अपना स्थान बना लिया, यह किसी को भी ठीक ठीक नहीं मालूम है पर इतना सब जानते हैं कि उसे रतनपुर लाने का श्रेय तत्कालीन श्रममन्त्री हरिशंकर त्रिपाठी को ही है।

हरिशंकर उदयाचल के राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन के अध्यक्ष थे। मजदूरों की

सामाजिक शिक्षा के लिए उन्होंने एक स्कूल बनवाया था, उसी स्कूल की जिम्मेदारी सभालने के लिए वह सरोजिनी सहाय को अहमदाबाद से ले आये थे। सरोजिनी सहाय उसी समय एम० ए० पास करने के बाद दो वर्षों तक विदेश मे ट्रेड यूनियन के सगठन और सचालन की योग्यता प्राप्त करके देश लौटी थी।

मजदूरो के स्कूल ने सरोजिनी सहाय की देख भाल मे काफी तरक्की की। बीस-पच्चीस मजदूरो को लेकर स्कूल शुरू किया गया था, पर सालभर मे ही छात्र छात्राओ की सख्या सौ से ऊपर हो गयी। इसके बाद एक और मकान किराये पर लिया गया और दो नये मास्टर भी रखे गये। विदेशियो ने स्कूल देखकर प्रशसा की। दिल्ली के दो एक नेताओ ने भी सराहना की।

कृष्ण द्वैपायन ने एक दिन श्रममन्त्री से पूछा था 'त्रिपाठीजी सुना है कि आप लोगो न मजदूरो के लिए एक खास किस्म का स्कूल बनाया है ?

"श्रम विभाग का नही काग्रेस ट्रेड यूनियन का स्कूल है।

ओह तो कोई सरकारी सहायता नही मिल रही है ?

'बहुत थोडी-सी। श्रमविभाग के श्रमिक कल्याण फण्ड से सिर्फ दस हजार रुपया वार्षिक।'

शिक्षा विभाग कुछ नही दे रहा है ?

शिक्षामन्त्री ने समाज शिक्षा के लिए जमा रुपये म से दस हजार रुपये वार्षिक की स्वीकृति दी है।

अच्छा है। स्कूल की बडी तारीफ सुनने को मिल रही है।'

'हाँ अच्छा ही चल रहा है।

'मजदूरो को क्या-क्या सिखाया जाता है ?'

'ट्रेड यूनियन को कैसे सगठित किया जाना चाहिए, सफल सचालन कैसे किया जाय, श्रमिक कैसे सगठित होकर अपनी समस्याएँ सुलझा सकते हैं, घर बार साफ रखना स्वास्थ्य नियमो का पालन करना—यही सब सिखाया जाता है।

बहुत अच्छा है। स्कूल का सचालक कौन है ?

मनेजिंग कमेटी है, जिसके अधिकाश सदस्य मजदूर हैं। दो प्रतिनिधि मालिक वर्ग के हैं, दो कांग्रेस ट्रेड यूनियन के हैं और एक प्रतिनिधि श्रम मन्त्रालय का है।

'बहुत अच्छा इतजाम है।"

"मालिक वर्ग ने स्कूल के लिए एक मकान दिया है, सालाना ढाई हजार रुपये भी दे रहे हैं।'

वाह! पढाई की जिम्मेदारी भी क्या मनेजिंग कमेटी की ही है ?"

"नहीं। शिक्षकों की।"

"कितने शिक्षक हैं?"

"ठीक से नहीं मालूम है। तीन चार होंगे।"

कृष्ण द्वैपायन को आश्चर्य हुआ कि हरिशंकर ने बड़े ढंग से सरोजिनी सहाय का नाम तक नहीं आने दिया। सरोजिनी के बारे में उन्होंने काफी कुछ सुन रखा था, अब उनका कौतूहल और बढ़ गया।

थोड़े ही दिनों में उन्हें सरोजिनी के बारे में और बातें भी मालूम हो गयी। उत्तरप्रदेश निवासी स्थानेश्वर सहाय अहमदाबाद की मिल का मामूली कर्मचारी है, सरोजिनी उसी की पाँचवी सन्तान यानी तीसरी लड़की है। स्थानेश्वर के साथ हरिशंकर त्रिपाठी की बहुत पुरानी जान पहचान है। कालेज में पढ़ते समय ही सरोजिनी ने एक ईसाई लड़के से शादी कर ली थी, इसीलिए उसे पिता के साथ सम्पर्क तोड़ना पड़ा। फिर दो साल के अन्दर ही सरोजिनी सहाय का पति के साथ सम्बन्ध विच्छेद हो गया। इस सम्बन्ध विच्छेद का कारण कृष्ण द्वैपायन को नहीं मालूम हो सका। इसके बाद सरोजिनी ने एक विदेशी मिशनरी की सहायता से एम० ए० पास किया फिर उसी मिशनरी ने उसे छात्रवृत्ति दिलवाकर विदेश में पढ़ाई का इन्तजाम भी किया। सरोजिनी ने वहाँ ट्रेड यूनियन के सम्बन्ध में योग्यता तो प्राप्त की ही, साथ ही सक्रिय रूप में मजदूरों के साथ रहकर प्रत्यक्ष अनुभव भी प्राप्त किया। देश लौटकर वह नौकरी ढूंढ ही रही थी कि बम्बई में हरिशंकर त्रिपाठी के साथ भेंट हो गयी और वह रतनपुर के श्रमिक कल्याण स्कूल की संचालिका बनकर यहाँ आ गयी। रिपोर्ट के साथ साथ कृष्ण द्वैपायन को एक फोटो भी मिली थी। उन्होंने देखा कि सरोजिनी सहाय सुन्दरी और तरुणी थी।

सरोजिनी के वर्तमान या अतीत में उन्हें ऐसा कुछ भी नहीं दिखा, जिसमें उन्हें सिर खपाने की जरूरत हो। पर हरिशंकर त्रिपाठी के व्यवहार के कारण उनका कौतूहल बना रह गया—त्रिपाठीजी उस युवती को छिपाने की कोशिश क्यों कर रहे हैं? उनके मन ने तर्क किया—हो सकता है, इस उम्र में हरिशंकर त्रिपाठी के मन पर रंग चढ़ा हो। कृष्ण द्वैपायन कौशल इन बातों को लेकर माथापच्ची करनेवाले आदमी नहीं हैं।

एक दिन पता चला कि सरोजिनी सहाय प्रदेश कांग्रेस कमेटी की कार्यकारिणी की सदस्या मनोनीत हुई है।

यह भी कृष्ण द्वैपायन के लिए बहुत दिलचस्प बात नहीं थी। उन दिनों सुदर्शन दुबे प्रदेश कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष थे। मजदूरों की प्रतिनिधि होने के नाते सरोजिनी सहाय को कार्यकारिणी का सदस्य मनोनीत कर लेने का उन्हें अधिकार था। प्रदेश कांग्रेस कमेटी के साथ कृष्ण द्वैपायन का सम्बन्ध काफी ठण्डा-सा

दुर्गाभाई के पास सारे कागजात भेज दिये।

थोडे दिनो बाद दोनो म बातें हुइ। दुर्गाभाई न पूछा, 'उस महिला को आप जानत हैं ?'

"नहीं, कभी देखा नही है, पर सुना है कि देखने म अच्छी है।'

"आर्थिक सहायता की बात भी बहुत महत्त्वपूर्ण नही है पर वित्त मन्त्रालय की भी सम्मति ले लेने से यह काम बिल्कुल ही निर्दोष होता।

"बात सही है, पर अखबारो मे क्या-क्या छप रहा है सो तो आपने देखा है न ?'

'मन्त्रियो पर एसा चरित्र सम्बन्धी लाछन लगाना अन्याय है।'

दुर्गाभाईजी सब आप जस पवित्र नही होते और हो भी नही सकते। मैं मनुष्य की कमजोरियो को माफ करन के लिए तयार रहता हूँ, पर इस बात म बडी सावधानी बरतन की जरूरत है।'

हूँ। शायद इसमें कोइ बात ही नहा है, पर मेरी राय म मन्त्रियो का 'सीजर की पत्नी होना जरूरी है—सारे सन्देहो के परे। काग्रेसी शासन म औरत को लेकर बदनामी हो, यह मेरी बर्दाश्त के बाहर है।

'मेरी भी यही राय है,' कृष्ण द्वैपायन न अपनी सम्मति दी—"सरोजिनी सहाय को रतनपुर और उदयाचल से बाहर कही और भेज दिया जाये, तो सारी गडबडी ठीक हो जायेगी। मैं सुदशन दुबे के बारे मे कह रहा था। हरिशकर त्रिपाठी के बारे म मुझे विश्वास नही है। ट्रेड यूनियन का काम तो वह दूसरे प्रान्त मे जाकर भी कर सकती है।'

इस घटना के थोडे दिनो बाद ही जब काग्रेसाध्यक्ष रतनपुर आये, तो दुर्गाभाई ने उनके सामन यह विषय छेडा।

तीन महीने बाद एक और भी बडे श्रमिक कल्याण विद्यालय की जिम्मेदारी देकर सरोजिनी सहाय की बदली कानपुर कर दी गयी।

फिर वह किस प्रकार रतनपुर लौट आयी यह कृष्ण द्वैपायन को नहीं मालूम हो पाया। मन्त्रिमण्डल म गडबडी चल रही थी, इसलिए इन छोटी छोटी बातों पर कृष्ण द्वपायन निगरानी नहीं कर पा रहे थे। एक दिन यह खबर पाकर उन्हे आश्चय हुआ कि 'जिजर ग्रुप' के उद्योग से आयोजित सभा की अध्यक्ष होगी—ट्रेड यूनियन नेत्री सरोजिनी सहाय।

छ महीने बाद उन्होंने अखबारों मे देखा कि सरोजिनी सहाय उदयाचल के राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन की प्रधान सचिव चुनी गयी है।

बाईस

जब गुट के नेताओं का आखिरी झुण्ड विदा हुआ तो शाम के साढे छः बज चुके थे। सूर्यास्त हो रहा था। पश्चिम का आकाश सूर्य की अंतिम किरणों से मटमैला लाल हो उठा था। क्षितिज पर सायंकाल उभर आया। गहरा नीला आकाश जल्दी जल्दी पर्दा बदलता हुआ अब काला पड गया। डरे हुए पखेरू अकबकाये तेजी से अपने नीड मे आश्रय लेने भागे जा रहे थे। उत्तर मे ध्रुवतारा चमक उठा। हर पल नक्षत्र अन्धकार के बीच एकाएक प्रकट हो रहे थे।

दीनदयाल पत्थर के गिलास मे दही की लस्सी ले आया।

कृष्ण द्वपायन गिलास उठाते हुए बोले, अवस्थी को बुला ला।

'आप टहलने नही जायेंगे ?

जाऊगा।

शाम हो गयी।

'उठ रहा हू।'

'माजी ने एक बार आपको अन्दर बुलाया है।

''क्यो ?

'यह तो उन्होने नही बताया।'

'अच्छा तू जा। अवस्थी को भेज दे।

थोडी देर मे अवस्थी आ गया तो बोले मैं जरा टहलकर आता हूँ। बहुत थकावट लग रही है प्यास भी बहुत लग रही है।'

जी अच्छा। अवस्थी ने दबी आवाज मे कहा।

'चटर्जी आये तो बठाना मुझे शायद कुछ देर लग जाये।

कृष्ण द्वपायन जीने से नीचे उतर गये। दफ्तर मे कर्मचारी अभी तक काम कर रहे थे। उन्हे देखकर सब खडे हो गये। कृष्ण द्वपायन लम्बी डगें भरते हुए दफ्तर से अपनी अन्दरकोठी की ओर बढने लगे। दीनदयाल ने घर से खादी की चद्दर और बेंत की छडी लाकर बीच रास्ते मे ही थमा दी। अन्दर कोठी को दाहिनी ओर छोडकर कृष्ण द्वपायन मुख्यमन्त्री भवन के बडे से लान मे टहलने लगे। और दिन इस समय उनके साथ दो चार साथी होते है—कोई मन्त्री या कोई राजनीतिक नेता या फिर कोई दर्शनार्थी। कभी कभार अकेले भी टहलते हैं विशेषकर उस समय जब किसी बात से उनका मन अशान्त होता है, या फिर कभी अकेले घूमने के निराले आनन्द का लाभ होना है।

आज भी जब वह बगीचे की ओर जा रहे थे, तो बरामदे मे चार-पाच दर्शनार्थी बठे हुए थे। अवस्थी ने इन लोगो से कह दिया था कि कौशलजी को आज समय नही है, फिर भी वे बठे हुए थे। साधारण लोग हैं बहुत दूर से आये

हैं कौशलजी उनकी विनती जरूर सुनेंगे, यही उम्मीद लेकर बैठे हैं। रोज शाम को एक छोटी सी भीड इकटठी हो जाती है। दरवान दस आदमियो स ज्यादा को भीतर नही आने देता। जो पहले आ जाते हैं उन्ह ही प्रवेश करने की अनुमति मिल पाती है। दसवें व्यक्ति के भी अन्दर आ जाने के बाद फाटक बन्द कर दिया जाता है। बाद मे आनेवाले रास्त मे भीड नही लगा सकते, इसीलिए वे लौट जाते हैं।

हर सन्ध्या टहलने जाते समय कृष्ण द्वैपायन उनके पास आकर खडे होते हैं। नोटबुक और पेन्सिल लिय हुए एक सेक्रेटरी उनके साथ होता है। दशनार्थी उनके घुटने छूकर प्रणाम करते हैं और कृष्ण द्वैपायन हर एक के दोना हाथ अपने हाथ मे लेकर सहृदयता प्रकट करते हैं फिर बारी बारी स हरएक से बातें करते हुए अपन आदेश सेक्रेटरी को लिखाते जाते हैं—

'सीतापुर के जिला मजिस्ट्रेट। लोचनसिंह, गाव सोनाचर, पशा खेती, मालगुजारी नही दे सका, सो पुलिस ने घर द्वार कुर्क करन की धमकी दी है। साल भर की मालगुजारी माफ की जाये। बाकी वसूली के लिए तीन महीने की मुहलत दी जाये।'

कृष्ण द्वपायन बहुत निकट के मित्रो से कहा करते हैं—'यही मेरा एक मात्र सामन्तशाही विलास है। दूर दूर के गावो कस्वो से जो लोग दशन के लिए हमारे दरवाजे पर आते हैं उनकी प्रायना, जहा तक सम्भव हो, जरूर मजूर करता हूँ। किसी को एकदम खाली हाथ लौटा देने मे मुझे दुख होता है। मैं जानता हूँ कि जो यहाँ तक नही आते, उनकी भी बहुत सी शिकायतें हैं फिर भी जो मरे दरवाजे पर खडे होते हैं उनके लिए मरे मन मे जाने कसी कमजोरी आ जाती है।"

किसी किसी दिन कृष्ण द्वपायन को आगन्तुको से भेंट करने का समय नही मिलता। उस दिन कोई कमचारी आकर दशनार्थियो से माफी मागता है— माफ करें, आज कौशलजी के पास बिल्कुल समय नही है। अगर आप चाहे तो कल आइएगा।

लोग उठकर चले जाते हैं दूसरे दिन फिर आते हैं, जिसे ज्यादा गज होती है, वह दोपहर के बाद ही आकर दरवाजे के पासवाले पड के नीचे जम जाता है—दस म से एक नही हुए तो फिर अन्दर जाने की इजाजत नही मिलेगी।

आज कृष्ण द्वैपायन के पास सचमुच समय नही है। उन्होने अवस्थी से पहले ही कह रखा था कि शाम को आज वह इन बिन बुलाये मेहमानो से बातें नहा कर सकेंगे। बगीचे की ओर बढते हुए कृष्ण द्वपायन ने एक बार इन लोगो की ओर देखा, ज्यादा नही चार ही पाँच थे। उनका दिल पिघल गया, लौटकर उनके पास आ खडे हुए।

"आज मेरे पास बिल्कुल समय नहीं है। सवेरे से ही व्यस्त हूँ। आप लोग जल्दी-जल्दी बता डालिए, आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ!"

इतनी देर में एक सेक्रेटरी नोटबुक और पेन्सिल लेकर आ खड़ा हुआ था।

मन में बड़ी तृप्ति के साथ कृष्ण द्वैपायन टहलने लगे। अब आसमान लाल नहीं है। शाम हो गयी है। अन्धकार के कोमल स्पर्श से धरती स्निग्ध हो उठी है। मुख्यमन्त्री-भवन का लॉन बहुत बड़ा है। घनी हरी घास का गलीचा बिछा हुआ है। चारों ओर कई किस्म के फूल-फल और खूबसूरत पत्तोंवाले पेड़-पौधे। मालती, कामिनी, कनेर, टगर और अपराजिता की मिली-जुली गन्ध, रातरानी की तीव्र मधुर सुगन्धि। पेड़ों से अनगिनत झींगुरों की आवाज के साथ-साथ एकाध चिड़ियों की चहचहाहट भी सुनायी पड़ रही थी। निर्मल आकाश में कोटि-कोटि तारों की मौन, सजग और कौतूहलपूर्ण दृष्टि, धरती के मनुष्य की रात्रि बिताने की विधि देखने का अदम्य आग्रह।

दिन का अन्त और रात्रि की शुरुआत—यह संक्रान्ति काल आजीवन कृष्ण द्वैपायन को विचलित करता रहा है। सारा दिन जीवन जाने कैसा व्यापक हो उठता है, शाम को वह फिर सिमट जाता है, किसी अनजाने रहस्य के मोह में वह फिर संकुचित हो उठता है। रात के घने अन्धकार में जीवन-रहस्य और भी घना हो जाता है। सृष्टि के कोने-कोने से उदास प्रश्न सन्ध्या के तरल अन्धकार में मानो पर्दे की आड़ लेकर सामने आ खड़े होते हैं। एकाएक ऐसा लगता है जैसे उन्होंने चारों ओर से आदमी को घेर लिया हो। उन मूक प्रश्नों को इन्सान सुन लेता है, पर समझ नहीं पाता, फिर भी वे उत्तर पाने के लिए जुल्म ढाते रहते हैं। कई बार सन्ध्या के सन्दिग्ध अन्धकार में खड़े-खड़े कृष्ण द्वैपायन महसूस करते हैं—*मनुष्य कितना क्षुद्र, कितना कमजोर है, फिर भी उसके जीने* का आग्रह कितना विराट्, व्यापक और भयानक होता है! 'ब्रह्माण्डे ये गुणा सन्ति ते वसन्ति कलेवरे'—मनुष्य इतना व्यापक और विराट है, इसलिए उसमें दीनता और इतनी शून्यता होती है। उसकी इच्छा में इतनी व्याकुलता भरी होती है, इसीलिए वह पाकर भी तृप्त नहीं होता। वह इतना देना चाहता है, इतना पाना चाहता है, इसीलिए वह देकर ले नहीं पाता और न लेकर दे ही पाता है।

बगीचे में लम्बे-लम्बे डगों से चक्कर लगाते हुए कृष्ण द्वैपायन को याद आया—पद्मादेवी की इच्छा चाहे जितनी असम्भव हो, पर उनकी शिकायतें झूठी नहीं हैं। सचमुच मेरी उम्र अधिक हो गयी है। बाइबिल के अनुसार तीन-बीसी-दस होने में ज्यादा दिन नहीं हैं। जिन्दगी को मैंने खूब भोग लिया है। मेरे अतीत में कितनी घटनाएँ, कितने लोग और कितनी विचित्रता भरी

सोनामुखी नदी के बाँध का उद्घाटन हुआ, हजारों लोगों के
अनजाना-अनचीन्हा गाँव कुसुमपुर अवर्णनीय रूप से खिल
से प्रधानमन्त्री आये थे। सोनामुखी अबाध नदी थी। गर्मी
थी, पर बरसात में ध्वंसकारिणी और प्रगल्भा बन जाती।
ाल झील बनायी गयी है, मानो सागर का ही एक टुकड़ा हो।
रास्ता खुला हुआ है। उसी मार्ग से भयंकर गर्जन करती हुई
ही है। पास ही में बिजली का नया कारखाना बना है। युग-
कृतिक नदी ने जाने कैसी एक विचित्र उदारता से अचानक
अनाज, फूल, फल और प्रकाश से भर देने के लिए अब नया
लिया है। उस दिन बार-बार मेरे मन में यही आ रहा था कि
कृपा करके उदयाचल का रूपान्तरण मुझसे करा रहे हैं। भाग्य-
तक सम्मान और मर्यादा आज मुझे प्राप्त है, भले ही मैं उसके
उसे अपमानित तो न करूँ।
ा कहा था, "बहुत हो चुका, अब छोड़ो। अब इन सबसे छुट्टी

ृष्ण द्वैपायन के होंठों पर फीकी हँसी फैल गयी। सुदर्शन दुबे,
ठी और महेन्द्र बाजपेयी एकसाथ मिलकर मुझे हटाने की कोशिश
उनके प्रयासों को मैं करीब-करीब असफल कर ही चुका हूँ। पर
क ही कहा है—इतने दिन तक जो मुझे नहीं करना पड़ा, आज
मैंने हराया है। इतने दिनों तक बिना कोई कीमत दिये राज
र आज राज करने के लिए कीमत देनी पड़ी। चलो। अगर
ा तो इससे कहीं बहुत ज्यादा कीमत देकर मुख्यमन्त्री हरिशंकर
दर्शन दुबे बनते। कृष्ण द्वैपायन कौशल को मुख्यमन्त्री बनाये रखने
उदयाचल-जैसे पिछड़े प्रान्त में भी कांग्रेस कमजोर हो जाती है, तो
ल ही क्या है? उसका अर्थ तो इतना ही निकल सकता है कि
रस लेकर वह जिन्दा थी, उस मिट्टी की सारवस्तु शायद एकदम
है।
, क्या मैंने बहुत भारी कीमत दी है?'—अँधेरे में कृष्ण द्वैपायन
से अपने से पूछा। उत्तर मिला, 'बहुत भारी नहीं तो बहुत कम
है।' उन्होंने प्रतिवाद किया, 'दुर्गाभाई को तो मैं छोड़ नहीं रहा
मिला, 'उनके पर भी तो तुम काटे ले रहे हो। जिस तरह से मन्त्रि-
रोगे, उसमें दुर्गाभाई शामिल हुए बिना नहीं रहेंगे'''जायेंगे भी तो

कहाँ ?···पर उनका इतने दिनों से अर्जित यश और प्रभाव नहीं बच पायेगा।' कृष्ण द्वैपायन को हँसी आ गयी, बोले, 'लोग-बाग बड़े चतुर हैं। अपना नाम बचाये रखने के लिए सबकुछ कर सकते हैं। अगर नाम का इतना ही मोह है तो मन्त्रिमण्डल में न आयें।' जवाब मिला, 'उस पवित्र आदमी को साथ बनाये रहे, इसलिए तुम्हारा भी नाम था, शक्ति भी। अब तो तुम उन्हें भी कलंकित कर रहे हो। मन्त्री न रहें तो जायें कहाँ ? वनवास ? लाज-शरम को तिलाजलि देकर मन्त्रिपद के लिए तुम्हारे पास ही आयेंगे। विवेक के साथ जैसे-तैसे समझौता कर लेंगे। पर इस पवित्र आदमी को नीचे कर तुमने खुद अपने को भी तो कमजोर बना लिया है।"

कृष्ण द्वैपायन ने प्रतिवाद किया—'नहीं, यह सच नहीं है। दुर्गाभाई को मैं वित्तमन्त्री बनाये ही रहूँगा, उनकी शक्ति और प्रभाव को मैं ज्यों-का-त्यों बनाये रखूँगा।' जवाब मिला, 'यह बात सच नहीं है। तुम सुदर्शन दुबे को मन्त्री बनाने जा रहे हो। आज ही रात को तुम्हारा समझौता होगा। नये मन्त्रिमण्डल का गठन तुम्हारे अकेले नहीं, बल्कि दोनों के नेतृत्व में होगा। *सुदर्शन दुबे को शामिल करने का मतलब ही दुर्गाभाई को अपाहिज बनाना है।'* वह बोल उठे, 'नहीं, दोनों को एक-दूसरे के विरोध में लड़ाकर दोनों को कमजोर रखूँगा।' जवाब मिला, 'तो फिर तुम भी कमजोर हो जाओगे। असली साथियों को कमजोर रखोगे, तो तुम्हारी शक्ति भी असल में कमजोर ही होगी।'

उन्होंने कहा, 'हरिशंकर त्रिपाठी को मन्त्रिमण्डल में नहीं लूँगा। मेरा यह निश्चय क्या कम महत्त्वपूर्ण है ?' उत्तर आया, 'कुछ महत्त्वपूर्ण जरूर है, पर बहुत नहीं, क्योंकि थोड़े ही दिनों में तुम हरिशंकर को फिर बुलाकर खुश करने के लिए किसी और पद पर रख दोगे। इसके अलावा सरोजिनी सहाय के बारे में तुम्हारा विचार ठीक नहीं है।' उन्होंने कहा, 'नहीं-नहीं, मैंने अभी कुछ भी तय नहीं किया है।' उत्तर मिला, 'अपने-आपको मत ठगो। तुम्हें मालूम है कि तुमने पेचीदा योजना बना ली है।'

उन्होंने प्रतिवाद किया—'सरितसागर कोठारी को मैंने रख लिया है। स्वायत्त-शासन-बिल पास कराकर ही मानूँगा।' उत्तर मिला, 'अबकी बार तुम मिलावट किये बिना कुछ नहीं कर पाओगे। शासन, न्यायनीति, जीवनदर्शन सबमें तुम्हें मिलावट करनी पड़ेगी। इससे तो अच्छा हो कि फिर से दल का नेता चुने जाने के बाद पद्मादेवी की सलाह के अनुसार सबकुछ छोड़ दो। यदि ऐसा कर सको तो तुम्हें बड़ा गौरव मिलेगा, उदयाचल के इतिहास में तुम अमर हो जाओगे।'

कृष्ण द्वैपायन को अब क्रोध आया। असहाय उत्तेजना से काँपते हुए बोले, 'यह सब छोड़कर मैं कहाँ जाऊँगा ? मुख्यमन्त्री हूँ, इसीलिए आज मेरा यह

सम्मान और प्रभाव बना है। एक मामूली नागरिक के रूप में कृष्ण द्वैपायन कौशल को रतनपुर में कल कोई नहीं पहचानेगा। अगर रास्ते पर पैदल चल रहे हों, तो लोग उन्हें नमस्ते करना भी भूल जायेंगे। क्या कह रहे हो? राज्यपाल? राज्यपाल का राज्य नहीं होता। वह पाल उड़ाकर चल रही नाव की तरह ही होता है। वह जिन्दगी मुझसे एक दिन भी नहीं बर्दाश्त होगी। केन्द्रीय मन्त्री? उसके लिए इस उम्र में नया जोर-जुगत करना पड़ेगा, तावेदारी करनी पड़ेगी और दूर दिल्ली से यही देखूंगा कि हमारे उदयाचल पर सुदर्शन दुबे तथा हरिशंकर त्रिपाठी का झण्डा उड़ रहा है। आजन्म मैं उदयाचल को ही जानता रहा हूँ—इसका एक-एक जिला, महकमा, थाना—सबकुछ मेरा देखा हुआ है। करीब-करीब हर आदमी को पहचानता हूँ। सिर्फ उनकी जबानी बातें नहीं, मैं उनके मन की भाषा भी समझ लेता हूँ। उदयाचल के आकाश में प्रभात का रंग कैसा होता है, सूरज उगने के साथ-साथ वे रंग कैसे बदलते रहते हैं, गर्मी के दिनों में अपराह्न में पेड़ के पत्ते कितने कातर हो उठते हैं, शाम को किस तरह क्षितिज पर रहस्य घना हो उठता है—मैं सब जानता हूँ। आज जीवन के इस सन्ध्याकाल में सुदूर प्रवास में जाकर दूसरों की कृपा से मिला हुआ राजसम्मान भी मेरे लिए असह्य होगा।'

आज आधा घण्टे से ज्यादा नहीं टहल सके। कृष्ण द्वैपायन दफ्तर की ओर बढ़ने लगे। रास्ते में दीनदयाल ने आकर कहा, "मांजी आपको एक बार अन्दर बुला रही हैं।"

"ओह, ठीक है। चलो।"

अन्दर-कोठी में जाते ही पद्मादेवी से भेंट हुई।

"तुम आज बहुत व्यस्त हो, फिर भी मैं तुम्हें बार-बार बुला रही हूँ—जरा बैठ जाओ, कुछ बातें करनी हैं।"

कृष्ण द्वैपायन अपने सोने के कमरे में जाकर बैठ गये। पीछे-पीछे पद्मादेवी भी आकर बैठ गयी। कृष्ण द्वैपायन ने उनकी ओर देखा। पद्मादेवी के चेहरे पर थकावट, उदासीनता, वेदना, सबने मिलकर एक अजीब-सा वैराग्य का रूप ले लिया था।

छाती के अन्दर किसी पुराने तार पर अचानक दर्द का राग झनझना उठा।

पद्मादेवी ने कहा, 'मैं आज रात की गाड़ी से काशी जा रही हूँ।"

"क्यों? रात को क्यों?"

"सुविधा रहती है। दिन में ही काशी पहुँच जाऊँगी।"

"साथ में किसे ले जा रही हो?"

"चन्द्र जा रहा है।"

"ठीक है। साथ में पैसे कुछ ज्यादा ले जाना और जितनी जल्दी हो सके लौट आना।"

पद्मादेवी के चेहरे पर एक मलिन मुस्कान फैल गयी—"तुमने मेरी नहीं सुनी।"

"नहीं। वह सम्भव नहीं था।"

"सावधानी से कदम रखना। जहाँ तक हो सके, अपना गौरव बनाये रखना।"

कृष्ण द्वैपायन ने पूछा, "बहू के पास गयी थी?"

थोड़ी देर चुप रहकर पद्मादेवी बोलीं, "हाँ। कमला ने जेवर तो ले लिये, पर रुपये लेने के लिए नहीं राजी हुई। उसकी लड़की को मैंने हार दे दिया है।"

"सुना है लड़की बहुत खूबसूरत है?"

"हाँ, मानो लक्ष्मी की मूर्ति हो।"

"अच्छा। अब मैं चलूँ!"

"जरा-सा रुक जाओ। एक बात पूछ रहा हूँ, सच-सच जवाब देना।"

कृष्ण द्वैपायन खड़े हो गये थे, फिर बैठ गये।

"आज के दिन दुर्गाप्रसाद को इस घर के दरवाजे पर बुलाकर पुलिस के हवाले न कर देते, तो क्या तुम्हारा मुख्यमन्त्री-पद न बचता?"

पद्मादेवी की आवाज काँप उठी। आँखें भर आयीं। कृष्ण द्वैपायन फिर उठ पड़े। बोलते समय गला रुँध गया। जोर से खखारकर बोले, "और कोई चारा नहीं था।"

"क्यों? लोगों से कुछ कम वाहवाही मिलती? ऐसा करते समय तुमने एक बार मेरे बारे में भी नहीं सोचा?"

"आज जुलूस के बाद शाम को दुर्गाप्रसाद की पार्टी ने सार्वजनिक सभा का आयोजन किया था। इसके पीछे सुदर्शन दुबे का समर्थन था। एकाएक पता चला कि हरिशंकर ने दो गुण्डे तैनात किये हैं। जिस समय दुर्गाप्रसाद भाषण दे रहा हो, उस समय उसे घायल करने का इरादा था। हरिशंकर जानते हैं कि वक्त आने पर सुदर्शन दुबे उन्हें छोड़ देगा, और उन्हें यह भी मालूम है कि मेरे नये मन्त्रिमण्डल में भी उन्हें स्थान नहीं मिलेगा। वह मुझे अभी आखिरी चोट देंगे, यह मैं पहले ही समझ गया था। रिपोर्ट पाकर मैंने सोचा, शायद यही उनकी अन्तिम चोट हो। अवश्य, यह झूठ भी हो सकता है। सुना यह भी था कि दुर्गाप्रसाद की तबियत ठीक नहीं रहती। चन्द्रप्रसाद ने ही मुझे बताया था। मैंने भी देखा कि वह कमजोर हो गया है, रंग बिल्कुल उड़ गया है। सोचा, उसे दो महीने आराम मिल जायेगा।"

पद्मादेवी की ओर देखकर कृष्ण द्वैपायन थोड़ा-सा हँसे। हाथ उठाते हुए बोले, "प्रणाम की कोई जरूरत नहीं है। सावधान रहना और लौटने में देर मत लगाना।"

तेईस

दफ्तर से लौटकर कृष्ण द्वैपायन अपने खास कमरे में जाकर तकिया के सहारे आराम से बैठ गये। मन के किसी कोने में विषाद जम गया है, साथ ही कुछ थकान भी। पर अधिकांश शक्ति संघर्ष में अपनी विजय को निश्चित और पूर्ण करने में लगी हुई है। एक फाइल खोलकर कृष्ण द्वैपायन कुछ क्षण देखते रहे। चेहरे पर प्रसन्नता की आभा फैल गयी।

अवस्थी पानीय ले आया। कृष्ण द्वैपायन ने तृष्णा-भरे आग्रह से चमकीला ग्लास पकड़कर चुस्की ली। गले से आवाज निकली—"वाह!"

अवस्थी ने कहा, "एडीटर साहब बड़ी देर से प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

कृष्णा द्वैपायन ने कहा, "थोड़ी देर और रहने दो।"

टेलीफोन की घण्टी बजी।

"कौशल।"

"मैं, पिताजी, चन्द्रप्रसाद हूँ।"

"कहो।"

"माँ को आज रात की गाड़ी से काशी ले जा रहा हूँ।"

"जानता हूँ। सावधानी से जाना।"

"और कोई काम है क्या, पिताजी?"

"पण्डित ओंकारनाथ से काशी विश्वनाथ की पूजा करवानी होगी, अवस्थी कल तार देगा।"

"बहुत अच्छा पिताजी!"

"तुम कब तक लौटोगे?"

"दो दिन रुककर माँ का सारा इन्तजाम कर देने के बाद लौट आऊँगा।"

"ठीक है, लौटकर मिल लेना। डाक्टर लेकर दुर्गाभाई के यहाँ गये थे?"

"जी हाँ।"

"डाक्टर ने क्या कहा?"

"ज्यादा परिश्रम और चिन्ता के कारण थकावट है। हफ्ते-भर आराम करने

के लिए कहा है।"

"चिन्ता की कोई बात तो नही है न ?"

"नही।"

"अच्छा।"

"एक प्रार्थना है, पिताजी !"

"कहो।"

"आप जरा सावधान रहिएगा।"

"रहूँगा।"

"धृष्टता क्षमा करें, पिताजी, कल मैं रतनपुर मे नहीं रहूँगा, इसलिए आपकी विजय पर आज ही बधाई दे देना चाहता हूँ।"

"बहुत चालाक हो गये हो। क्यों, पैसे-वैसे चाहिए ?"

"नही, पिताजी, अभी हैं।"

कृष्ण द्वैपायन ने सुभाष चट्टोपाध्याय को बुलाया, तब तक उनका मिजाज ठीक हो चुका था। चेहरे पर से थकान मिट चुकी थी। आँखों में कौतुकपूर्ण हँसी चमक उठी—"आओ, चटर्जी, आओ। तुम्हें काफी देर इन्तजार करना पड़ा। आज मैं समय का हिसाब-किताब नहीं रख पाया।"

"एक अमरीकन ने कहा है, दुनिया के ज्यादातर आदमियो ने हफ्ते में सिर्फ बयालीस घण्टे काम करने की माँग की है और जिनके बल पर दुनिया चल रही है, वे चाहते हैं कि हर दिन में बयालीस घण्टे हों।"

"सही बात है, पर मैं आज तो बिल्कुल नही चाह रहा हूँ। मेरा धीरज खत्म हो रहा है। मैं चाहता हूँ कि अब तुरन्त इस नाटक का पटाक्षेप हो जाये।"

सुभाष चट्टोपाध्याय ने कहा, "इसका मतलब, सब ठीक है।"

कृष्ण द्वैपायन बोले, "तुम्हे इसीलिए बुलाया है कि अब समय नहीं है। सब बहुत संक्षेप में खत्म करना होगा। पहली बात तो यह है कि कल तुम्हारे अखबार की राजनीतिक रिपोर्ट कैसी होगी। मैं बोले देता हूँ, तुम लिख लो। जैसा मैं बोल रहा हूँ, ठीक वैसा ही रहने देना। एक शब्द का भी हेर-फेर न होने पाये। तुम खुद प्रूफ देखना। सारी जिम्मेदारी तुम पर है।"

"ठीक है। रात को प्रेस में ही रहूँगा।"

"लिखो, उदयाचल मन्त्रिमण्डल का संकट दूर हो गया। आज शाम को संसदीय कांग्रेस दल की बैठक में कृष्ण द्वैपायन का फिर से चुना जाना निश्चित हो गया।

"आशा की जाती है कि उनका यह चुनाव सर्वसम्मति से होगा, अर्थात् संगठन और सरकार—कांग्रेस के ये दोनों हाथ फिर से मिलेंगे। हाई कमान के इस

प्रयास को पूरी सफलता मिलने की सम्भावना है और इसका श्रेय मुख्यमन्त्री श्री कौशल और प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष श्री सुदर्शन दुबे की सम्मिलित चेष्टा को है।

"कल सबेरे श्री दुबे के साथ मुख्यमन्त्री की जो सद्भावनापूर्ण वार्ता शुरू हुई थी, वह करीब आधी रात को दोनों की दूसरी बैठक में सन्तोषजनक परिणाम के साथ समाप्त हो गयी। इस बीच मुख्यमन्त्री दिन-भर विभिन्न जिलों के कांग्रेसी नेताओं से बातें करते रहे। वार्ता से यह प्रमाणित हो गया कि दल के अधिकांश सदस्यों को श्री कौशल के नेतृत्व पर पूरी आस्था है। प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष भी मुख्यमन्त्री की तरह कांग्रेस की एकता और दृढ़ता को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील हैं। उन्होंने भी कई कांग्रेसी नेताओं से बातें की जिनके फलस्वरूप एकता और दृढ़ता का उनका आग्रह और भी गहरा हो गया है।

"दोनों पक्षों के आग्रह के फलस्वरूप ही रात को मुख्यमन्त्री और प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष की बैठक हुई। यह बैठक गहरी प्रीति और बड़े सौहार्द्रपूर्ण वातावरण में होती रही। प्रायः एक घण्टे बाद सभी विषयों पर पूर्णतः सहमति होने के बाद दोनों ने एक-दूसरे से विदा ली।

"उदयाचल के नागरिक जब निश्चिन्त निद्रा का आनन्द ले रहे थे, उस समय प्रान्त के दो कर्णधार साथ बैठकर प्रदेश की निर्बाध प्रगति का मार्ग निश्चित कर रहे थे।

"आशा की जा रही है कि आज की बैठक में श्री दुबे की ओर से मन्त्री श्री प्रजापति शेवड़े नेतापद के लिए श्री कौशल का नाम प्रस्तावित करेंगे और मन्त्री श्री निरंजनसिंह उनका समर्थन करेंगे।

"बैठक के अध्यक्ष वित्तमन्त्री श्री दुर्गाभाई देसाई होंगे। उदयाचय के इस महाप्राण, सच्चे और त्यागी नेता को भी कांग्रेस की एकता और दृढ़ता को बनाये रखने के लिए कुछ कम मेहनत नहीं करनी पड़ी है।

"नये मन्त्रिमण्डल का गठन करते समय श्री कृष्ण द्वैपायन कौशल विभिन्न मतों के प्रतिनिधियों का भी ध्यान रखेंगे। वर्तमान मन्त्रिमण्डल में पुराने नेताओं की संख्या बहुत अधिक है, इसीलिए उनकी यह भी इच्छा है कि कांग्रेस के नवोदित नेताओं को मन्त्रिमण्डल में शामिल करके उन्हें आगे बढ़ने का मौका दिया जाये। कांग्रेस दल के अन्दर जिन्हें वामपन्थी गुट का समझा जाता है, मुख्यमन्त्री उन्हें भी मन्त्रिमण्डल में लेना चाहते हैं। साथ ही मन्त्रिमण्डल में ग्रामीणों के प्रतिनिधित्व का भी ध्यान रखा जायेगा। इन विषयों में मुख्यमन्त्री श्री दुबे और श्री देसाई से सलाह लेकर काम करेंगे। वर्तमान में वे एक-दूसरे से पूरी तरह सहमत हैं।

"वर्तमान मन्त्रिमण्डल के कुछ सदस्यों को नये मन्त्रिमण्डल में लेना शायद सम्भव न हो। पर उनके प्रशासनिक अनुभव, राजनीतिक नेतृत्व और उनकी

योग्यता से उदयाचल भविष्य में भी वंचित न हो, मुख्यमन्त्री इसके लिए हमेशा प्रयत्नशील रहेंगे।

"हमारे विशेष संवाददाता को मुख्यमन्त्री ने एक संक्षिप्त भेंट में बताया कि 'कांग्रेस का एकमात्र आदर्श जन-सेवा है और एकमात्र लक्ष्य है जनकल्याण। हमारे मतभेदों का कारण गुटबाजी या स्वार्थ-संघर्ष नहीं है, लक्ष्य और आदर्श भी नहीं है, मार्ग और नीति भी नहीं है। छोटी-मोटी बातों पर ही मतभेद होते हैं, उन्हें हम अनायास ही समाप्त भी कर सकते हैं। अपने साथी श्री दुबे और श्री दुर्गाभाई देसाई के सहयोग से आज मैं पहले से भी अधिक शक्तिशाली हूँ।'"

डिक्टेशन लेते समय सुभाष चट्टोपाध्याय बार-बार विस्मित हो उठता था, यह बात कृष्ण द्वैपायन से छिपी नहीं रह सकी।

डिक्टेशन देने के बाद कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "बगल के कमरे में जाकर इसे अपने हाथ से टाइप कर लाओ। दो कापियाँ करना। एक मेरे पास रहेगी, दूसरी तुम्हारे पास। किसी और को देखने-सुनने को न मिले। इसके साथ लगाया जानेवाला कारबन पेपर भी मुझे देते जाना। रात को बारह बजकर दस मिनट पर मुझे इस नम्बर पर टेलीफोन करना। यदि मैं कहूँ तो यह रिपोर्ट सवेरे अखबार में छपवा देना।"

सुभाष चट्टोपाध्याय रिपोर्ट टाइप करके ले आया, तो कृष्ण द्वैपायन बहुत गम्भीर थे। उनका गोरा चेहरा लाल हो उठा था। नाक पर कठोर तर्जन का-सा भाव आ गया था।

रिपोर्ट लेकर दत्तचित्त होकर उसे पढ़ा। दो शब्दों को बदला—दोनों प्रतियों में। एक बार और पढ़ा। फिर एक प्रति और कारबन अपने पास रख लिया और दूसरी प्रति सुभाष को दे दी।

"अच्छा, अब जा सकते हो।"

"एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ।"

"प्रश्न तुम्हारे एक नहीं, बहुत-सारे हैं, एडीटर साहब, मैं जानता हूँ, पर अभी मेरे पास समय बिल्कुल नहीं है।"

"जी, राजनीतिक प्रश्न नहीं है, व्यक्तिगत प्रश्न।"

"लगता है छोड़ोगे नहीं, फिर पूछ ही डालो।"

"आप फिर से मुख्यमन्त्री होंगे, यह हम जानते हैं। इसके बाद 'मार्निंग टाइम्स' के मैनेजिंग एडीटर क्या जगमोहन अवस्थी बनेंगे ?"

"यह तुमसे किसने बताया ?"

"नाम नहीं बता सकता, पर किसी जिम्मेदार आदमी से ही न सुनता तो इतनी रात को यह प्रश्न आपसे न पूछता।"

"कुछ और भी कहना है ?"

"जी हाँ। जगमोहन ग्रवस्थी को मैनेजिंग एडीटर बनाने से पहले कृपया मेरा त्यागपत्र स्वीकार कर लें।"

कृष्ण द्वैपायन का चेहरा लाल पड़ गया। आँखें सुर्ख हो उठीं। चेहरा गम्भीर हो गया। वह सुभाष चट्टोपाध्याय की आँखों में देखते रहे। शायद जरा-सी तीखी मुस्कान होंठों पर आयी। बोले, "मैं याद रखूंगा। अब तुम जाओ। बारह बजकर दस पर टेलीफोन करना।"

दीनदयाल रात का खाना ले आया। एक गिलास दूध, एक बड़ा-सा लाल सुर्ख सेब, थोड़े अंगूर।

"माँजी की गाड़ी कितने बजे जाती है ?"

"दस बजकर कुछ मिनट पर जायेगी, हुजूर !"

"तू स्टेशन जा रहा है ?"

"नही, हुजूर।"

"क्यों ?"

"अगर आपको कोई जरूरत पड़ी तो···?"

"मुझे कुछ नहीं चाहिए। तू साथ जाना। सामान ठीक से ले जाना। स्टेशन से लौटकर मुझे हाल बताना।"

"अच्छा, सरकार !"

खाना खत्म होने के थोड़ी देर बाद ही सरोजिनी सहाय आकर उनके सामने बैठ गयी। कृष्ण द्वैपायन को ऐसा लगा जैसे बहुत पहले इसे कहीं देखा है। किसी का चेहरा देख लेने पर वह कभी नही भूलते। नाम याद रखने की भी एक अजीब-सी शक्ति उनमें है। फिर भी वह आज नही याद कर पा रहे थे कि सरोजिनी सहाय को कहाँ देखा है। चित्र देखा है क्या ? पर उससे बाहर की भी कोई स्मृति उभरना चाहती थी।

देखने से उम्र करीब तीस की लगती है। रंग बहुत गोरा न भी हो, पर साफ है। चिकने-चौड़े माथे पर सुन्दर भौंहें कान तक फैली हुई हैं। आँखें छोटी-छोटी हैं, पर बुद्धिमत्ता और लास्य से जगमगाती हुई। चेहरा गोल है, पर ठुड्डी दबी हुई। नाक भी छोटी है, पर पतली और सुन्दर। घुंघराले बालों के कई गुच्छे माथे पर लटक आये थे। होंठ धनुष की तरह। ठीक ऐसे ही होंठ किसी और के भी थे। बहुत दिन पहले की बात है। किसी और जिन्दगी की बात। फिर भी याद है। उस महिला का नाम कौशल्या था। सरोजिनी मराठा हथकरघे की महीन नीली साड़ी पहने हुए थी। उसी के मेल का ब्लाउज। इकहरा, सुन्दर शरीर। वह सीधी बैठी थी।

कृष्ण द्वैपायन बोले, "आपके साथ परिचय का सौभाग्य नहीं मिला था, पर आपके काम-काज से मैं परिचित हूँ।"

मृदु स्वर में सरोजिनी बोली, "मैंने सुना है कि इस प्रान्त में एक भी ऐसा राजनीतिक नेता नहीं है, जिसकी एक-एक नस से आप परिचित न हों।"

"नस-नस जानते हुए भी हर चेहरे को नहीं पहचानता, यह तो आप स्वयं देख रही हैं।"

"सचमुच, क्या आपको सबका सबकुछ मालूम हो जाता है ?"

"ये सब बातें मेरे मित्रों का प्रचार हैं। पर सारी जिन्दगी उदयाचल में ही बीती, बहुत-से लोगों को पहचानता हूँ। उदयाचल को अच्छी तरह जानता हूँ।"

"मैंने कई बार आपसे भेंट करने की कोशिश की।"

"मुझे तो ऐसा नहीं याद आता कि कभी भेंट करने से इन्कार कर दिया हो।"

"नहीं। मैं सुनती थी कि आप भेंट नहीं करेंगे।"

"किसने कहा ?"

"बड़े-बड़े लोगों ने।"

"कारण क्या था ?"

"कारण यही था कि मैं वामपन्थी हूँ।"

"देखिए, 'वाम' के सम्बन्ध में मेरी कुछ कम जानकारी है, पर 'वामाओं' के बारे में बिल्कुल न जानता होऊँ, ऐसा नहीं है।"

"आप क्या सचमुच हम लोगों के खिलाफ हैं ?"

"आप लोग, कौन ?"

"कांग्रेस का वामपन्थी गुट।"

"यह तो सोने से बनी पथरी-जैसा है।"

"क्यों ?"

"सारी कांग्रेस ही तो वामपन्थी है। समाजवाद हमारा लक्ष्य है, सर्वोदय हमारा काम्य है।"

"लक्ष्य चाहे जो हो, पर कार्यरूप में हम समाजवाद का निर्माण न कर धनतन्त्र बना रहे हैं।"

"ऐसी बात है ?"

'क्यों, क्या आप अस्वीकार करते हैं ?"

"जरूर, इसे स्वीकार करने का मतलब राजनीतिक आत्महत्या है।"

सरोजिनी हँस पड़ी—"आप ऐसा नहीं करना चाहते।"

"बिल्कुल नहीं। अभी मरने के लिए तैयार नहीं हूँ—न अपने हाथों, न किसी दूसरे के।"

"आप स्वीकार न भी करें, पर हमारी शिकायत सच है।"

"कौन-सी शिकायत ? क्या मैं समाजवाद के बदले पूंजीवाद का हामी हूँ ?"

"जी हाँ।"

"फिर भी मैंने कुछ बनाया तो है, आप लोग तो कुछ भी नहीं बना रहे हैं।"

"मौका कहाँ मिलता है ?"

"कैसा मौका चाहती हैं ? मैं आपको एक हजार एकड़ जमीन देने के लिए तैयार हूँ। ट्रैक्टर आदि खरीदने के लिए रुपया भी दूंगा। सामूहिक खेती का एक आदर्श देशवासियों के सामने रखिए। शर्त बस एक ही रहेगी। अगर दस सालों में आप आशा के अनुकूल सफलता न दिखा सकीं, तो जनता के बीच खड़े होकर कहना पड़ेगा कि आपका रास्ता गलत है।"

"समाजवाद इस तरह नहीं तैयार होता। समाजवाद के दिखावे के लिए यह पूंजीवाद के सागर में एक-दो टापू भर होंगे। इससे कुछ नहीं बनने का।"

"फिर ?"

"समाजवाद के सागर में पूंजीवाद का एकाध टापू भले बने रहने दिया जा सकता है।"

"इसलिए आप पहले सागर बनाना चाहती हैं ?"

"अर्थात् पहले हुकूमत अपने हाथों में आना जरूरी है।"

"यह तो क्रान्ति है।"

"नहीं, हम क्रान्ति पर विश्वास नहीं करते, वह तो कम्युनिज्म है।"

"मुश्किल है। मैं आप लोगों की बातें ठीक से नहीं समझ पाता। असल में बचपन में ठीक से पढ़ाई-लिखाई नहीं हुई, पर मैं खेलने के लिए तैयार हूँ।"

"क्या मतलब ?"

"यानी आप लोगों को मौका देने के लिए। आपके गुट में कितने लोग हैं ?"

"दस। अशोक आप्टे को आप जानते हैं ?"

"जरूर जानता हूँ। अक्ल बहुत कम है।"

सरोजिनी हँस पड़ी, बोली, "पर आदमी अच्छा है।"

"निर्बुद्धि लोग अच्छे ही होते हैं। आप लोग मन्त्रिमण्डल में शामिल होना चाहते हैं, यही बात है न ?"

"मौका मिले तो अच्छा है।"

"आइए न ! मैं तो नया खून, नयी विचारधारा चाहता ही हूँ।"

"यह बात है ? मैं तो सुनती आ रही हूँ कि आप यह सब बिल्कुल नहीं चाहते ?"

"मेरे मित्र ऐसा कुछ फैलाते रहते हैं। अगर मैं मन्त्रिमण्डल बनाऊँ, तो आपमें से दो को लेने के लिए तैयार हूँ। पर एक शर्त है।"

"क्या ?"

"उनमें से एक आप होंगी ।"

"मैं ?"

"हाँ, आप । आप विधान सभा की सदस्या नहीं हैं, पर आपको सदस्य बनाने में मुश्किल नहीं होगी, तीन सीटें खाली हैं । आपसे मैं समाजवाद सीखूँगा ।"

"आपको सिखा सकूँ तो यह मेरा सौभाग्य ही होगा ।"

"तो आप मेरी उपमन्त्री होंगी । पंचवर्षीय योजनाओं की जिम्मेदारी आपकी होगी ।"

"आप सच कह रहे हैं ?"

"हाँ । हरिशंकर त्रिपाठी अगर मुख्यमन्त्री बने, तो उस मन्त्रिमण्डल में आपके लिए स्थान नहीं होगा ।"

"मैं जानती हूँ ।"

"मैं आपको स्थान दूँगा, पर हरिशंकर त्रिपाठी को नहीं ।"

"सुदर्शन दुबेजी को ?"

"आशा है कि वह नये मन्त्रिमण्डल में शामिल होंगे ।"

"हमारे गुट के दूसरे आदमी को आप किस पद पर लेंगे ?"

"संसदीय मामलों का सचिव ।"

"किसे लेंगे ?"

"आप बताइए ।"

"अशोक आप्टे ?"

"नहीं ।"

"विपिन झा ?"

"वह भी नहीं ।"

"यानी मेरी पसन्द का कोई भी नहीं ?"

"आपने ठीक कहा । दूसरा व्यक्ति मैं चुनूँगा । पर सुदर्शन दुबे और दुर्गाभाई देसाई को यही मालूम हो कि उसे आपने चुना है ।"

सरोजिनी चुप रही ।

"तैयार हैं या नहीं, बताइए ? पर हाँ, एक और बात जान रखिए, आपके गुट का समर्थन मिले बिना भी मैं ही फिर से मुख्यमन्त्री चुना जाऊँगा ।"

"मैं तैयार हूँ, आप नाम बताइए ।"

"सूर्यप्रसाद कौशल ।"

"वह हमारे गुट के नहीं हैं ।"

"आपको मालूम नहीं है, चार दिन पहले वह आप लोगों के साथ मिल गया है ।"

सरोजिनी ने दाँतों से होंठ काटकर कहा, "ठीक है, ऐसा ही होगा।"

कृष्ण द्वैपायन को लगा जैसे भीतर-ही-भीतर उनके मन में एक खुशी फैल गयी है। शरीर की थकान दूर हो रही है। राजनीतिक चर्चा छोड़कर किसी कोमल भाव में खो जाने का मन हुआ। सुन्दर-सुन्दर कविताएँ याद आने लगीं। रस से भरपूर कविताएँ। मन कैसा सरस हो रहा है। हल्की बातें करने का जी हो रहा है। जोर से हँसने का मन हो रहा है। बोले, "बहुत राजनीति हुई, आइए, अब कुछ और बातें करें। सवेरे से राजनीतिक बातें करते-करते मैं दारुब्रह्म बन गया हूँ।"

"दारुब्रह्म क्या चीज है?"

"आप लोगों के साथ यही तो मुश्किल है। विदेश में लिख-पढ़ लेने से आप लोग अपने देश को नहीं पहचान सकतीं। रोम के सिस्टिन चैपल की मूर्तियाँ आप लोगों की जानी-पहचानी हैं, पर पुरी के जगन्नाथ मन्दिर के दारुब्रह्म आपके लिए बिल्कुल अनजान हैं।"

"दारुब्रह्म का मतलब क्या है?"

"विष्णु, जो सूखकर लकड़ी हो गये।"

सरोजिनी हँस पड़ी—"क्यों? किस दुख में?"

"दुखों की क्या कोई सीमा है? जगन्नाथ तर्कपंचानन नाम के एक पण्डित थे। उन्होंने कहा था, 'एकाभार्या प्रकृतिमुखरा चंचला च द्वितीया।' विष्णु की एक पत्नी मुखरा, दूसरी चंचला, एकमात्र बेटा दुर्निवार कामुक। वाहन एक पक्षी। शैया पानी के ऊपर, साँपों की। ऐसे संसार की बात सोचकर सूखकर लकड़ी न हों, तो और क्या हों? 'स्मारं स्वगृहचरितं दारुभूतोमुरारी:'—हम सब अपने-अपने घर की परिस्थितियों के अनुसार ही रूप धारण करते हैं।"

कृष्ण द्वैपायन जोर से हँस पड़े।

"आपकी पूरी बातें मैं नहीं समझ पायी। आप बहुत संस्कृत जानते हैं, क्या?"

"जैसे आप लोग अंग्रेजी जानते हैं।"

"सुना है आप एक महान कवि हैं?"

"आपने गलत सुना।"

"आपका लिखा हुआ एक महाकाव्य भी तो है।"

"सो तो है।"

"किस विषय पर लिखा है?"

"कृष्णलीला।"

"आपकी सहायिका बनूँगी, तब कभी-कभी महाकाव्य सुनायेंगे न?"

"सुना सकता हूँ। कवियों में काव्य सुनाने का भयंकर मर्ज होता है।"

"केवल सुनायेंगे ही नहीं, समझाना भी होगा।"

ही इसका स्वाद आपको भी मिल जायेगा। अच्छा। तो फिर वही बात रही। दो दिन बाद ही हम सहकर्मी बन जायेंगे।"

"तो आज मैं चलूं ?"

"चलिए, आपको थोड़ा पहुँचा दूं। कितना बजा ?"

"दस।"

"चलिए। थोड़ा देख आऊँ, अभी जायेंगे कि नहीं।"

"कौन ? किसके बारे में कह रहे हैं ?"

"ऐं ? नहीं, कोई नहीं। बादल, बादल चले जायेंगे, पूर्वमेघ :

तस्याः किंचित् करधृतमिव प्राप्तवानीरशाखं
हृत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधोनितम्बम्।
प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विवृतजघनां को विहातुं समर्थः।"

सीढ़ी से उतरने में तो तकलीफ नहीं हुई, पर बाहर आकर कमजोरी महसूस होने लगी। दीनदयाल पीछे-पीछे था, उसके कन्धे पर हाथ रख दिया।

"बूढ़ा हो गया हूँ। अब रात को चलने में जरा सहारा मिले, तभी ठीक रहता है।"

"बूढ़े आप बिल्कुल नहीं हुए हैं। बस, एक चश्मे-भर की जरूरत है।"

"लेना ही पड़ेगा। समाज को देखने के लिए चश्मे की जरूरत होगी।"

गाड़ी में बैठते हुए सरोजिनी ने पूछा, "दुबेजी से कुछ कहूँ ?"

"ऐं ? ओह, सुदर्शनजी को ?"

"कुछ कहना है ?"

"कहिएगा, रात के बारह बजे तक मैं दफ्तर में ही रहूँगा, आधी रात तक।"

"अच्छा।"

"नमस्ते।"

"नमस्ते। पर आपकी सहायिका बन जाने के बाद मुझे आप नहीं कह सकेंगे, तुम्हें कहना पड़ेगा।"

"जरूर, जरूर। नमस्ते।"

गाड़ी स्टार्ट होकर फाटक से बाहर निकल गयी।

कृष्ण द्वैपायन ने देखा—अन्दरकोठी के सामने घर की गाड़ी खड़ी है। बोले, "दीनदयाल, मेरे साथ रहो।"

अबकी दीनदयाल का सहारा नहीं लेना पड़ा। वह खुद ही आगे बढ़ चले। दीनदयाल साथ-साथ चल रहा था। गाड़ी में सामान रख दिया गया था। चन्द्रप्रसाद अन्दर बैठा हुआ था, उतर पड़ा—"आप क्यों आये, पिताजी ?"

"यों ही आ गया। तुम्हारी माँ कहाँ हैं ?"

"पूजाघर में काफी देर हो गयी।"

"अब पूजा से कोई फायदा नहीं, राजकुमार, हिसाब-किताब हो गया।"

"पिताजी, आप अन्दर जाइए।"

"अपनी माँ को आने दो।"

पद्मादेवी पूजा के कमरे से बाहर आयी। उनके साथ पुत्रवधू राधा भी थी। गाड़ी में बैठने ही जा रही थीं कि सामने कृष्ण द्वैपायन को देखा।

"स्टेशन तक चलकर तुम्हें गाड़ी में बैठाने का मन हो रहा है। पर कोई उपाय नहीं है। मैं तुम्हारा पति कहाँ हूँ, मैं तो मुख्यमन्त्री हूँ।"

"तुमने फिर शुरू कर दिया?" क्षोभ के कारण पद्मादेवी की आवाज तीखी हो गयी थी।

"आज खास दिन है। हिसाब बिल्कुल मिल गया, मैंने जैसी आशा की थी, बिल्कुल उसी तरह।"

"मतलब तुम जीत गये?"

"यानी कल जीत जाऊँगा।"

"विश्वनाथ तुम्हारी रक्षा करें!" पद्मादेवी गाड़ी में बैठ गयी।

चन्द्रप्रसाद पिता को प्रणाम करके ड्राइवर की बगल में बैठ गया। गाड़ी स्टार्ट हो गयी।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "सावधान रहना, जल्दी आना।" फिर बगल में खड़े दीनदयाल को देखकर पूछा, "तू साथ नहीं गया?"

"माँजी ने आपके साथ रहने के लिए कहा है।"

"तो फिर साथ ही रह। चल, अन्दर चल।"

अवस्थी पानीय ले आया। कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "बस करो, अब नहीं।"

अवस्थी ने जाने के लिए पैर बढ़ाये तो बोले, "जाओ मत, बैठो।"

अवस्थी थोड़ी दूर पर बैठ गया।

कृष्ण द्वैपायन ने देखा, उसके गले, माथे और कानों के बगल की काली चमड़ी सूखकर लटक आयी थी। पीली आँखों में मूक दृष्टि। माथे पर सिकुड़नों के बीच आकर जमी हुई मैल बिजली की तेज रोशनी में चमक रही थी।

"तुमसे कुछ कहना है।"

पीली, मौन आँखें फर्श पर गड़ी रहीं।

"आज शाम की सभा में दुर्गाप्रसाद भाषण देता, यह तुम्हें मालूम था?"

"नहीं।"

"तुम्हें मालूम था। अगर नहीं भी मालूम था तो तुम्हें मालूम होना चाहिए था।"

अवस्थी की नीरव दृष्टि फिर फर्श पर गयी।

"तुम्हारे और सब काम बहुत अच्छे हुए हैं। तुमने बहुत मेहनत की।"

"आपकी सेवा में···"

"तुमने जिन्दगी लगा दी। तुम्हें भी मैंने कम नहीं दिया।"

"आपकी कृपा।"

"तब फिर ऐसा मत सोचना कि तुम जो भी चाहोगे, वही मिलेगा।"

"मैं ऐसा तो कुछ नहीं चाहता।"

"हाँ, चाहते हो। तुम 'मार्निग टाइम्स' के मालिक बनना चाहते हो।"

"आपने ही एक बार कहा था।"

"उस समय बात और थी। अब वह सम्भव नहीं है। उसे तुम भूल जाओ।"

"जी।"

"क्या बोले ? समझ में आ गया ?"

"आपकी चाकरी में सारा जीवन बीत गया। अपने निजी आदर-मान···"

"हाँ। याद आया। तुम अपनी योग्यता के सहारे भद्र समाज में प्रतिष्ठा चाहते हो, यही न ?"

"अगर आपकी कृपा हो तो।"

"तुम्हारा बाप क्या करता था ?"

अवस्थी की दृष्टि फिर फर्श पर पड़ गयी।

"वह नाई था। आज से पन्द्रह साल पहले की बात है, काशी में तुमने मेरा साथ पकड़ा था।"

"जी।"

"लोग जानते है कि तुम ब्राह्मण हो।"

"जी।"

"तुम कितने गाँवों के जमींदार हो ?"

"तीन।"

"पढ़ाई कितनी की थी ?"

"मैट्रिक पास किया था।"

"तुम्हें दो और गाँव मिलेंगे।"

"आपकी कृपा।"

"प्रेस की बात भूल जाओ।"

"जी।"

"तुम भद्र तो हो ही। तुम मेरे निजी सचिव हो। सब तुम्हारी कितनी इज्जत करते हैं। पांच सौ पचहत्तर रुपये तुम्हारी तनख्वाह है। सरकारी मकान

मिला है, टेलीफोन मिला है। मेरी गाडी से ग्राते-जाते हो। तुम्हारे-जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति उदयाचल में ग्रौर कितने हैं ?"

"ग्रापकी ग्रसीम कृपा है, पर ग्रापकी ग्रनुपस्थिति में कुछ नहीं रह जायेगा।"

"पैसा भी तुमने कम नही बनाया है। तुम्हारे गुप्त-व्यवसाय भी मुझसे नही छिपे हैं। थोड़े दिनों पहले ही किसी ग्रौर के नाम से तुमने देशी शराब की दूकान ली है, सही है न ?"

"जी हाँ।"

"फिर ऐसा काम कभी न करना। ग्रच्छा, ग्रब तुम जा सकते हो, मैं बारह बजकर दस मिनट पर सोने जाऊँगा।"

कृष्ण द्वैपायन ने एक बार फिर ग्रवस्थी की ग्रोर देखा, उसकी ग्राँखों-में-ग्राँखें डालकर बोले, "यही सोऊँगा।"

"जी, ग्रच्छा।"

ग्रवस्थी के चले जाने के बाद कृष्ण द्वैपायन ने दीवार के पास सावधानी से रखी हुई बहुत जरूरी ग्रौर गुप्त फाइलों मे से एक फाइल निकाल ली। प्यास बहुत थी, पर निश्चय कर लिया था कि ग्रब पानीय नही। ग्राधी रात होने में घण्टे-भर से ज्यादा बाकी है। ग्राज के नाटक का ग्रन्तिम दृश्य ग्रभी तक नही खेला गया।

फाइल पर लाल स्याही से लिखा था—जगमोहन ग्रवस्थी। फाइल खोलकर कई कागजों पर फिर से सरसरी निगाह डाली। कृष्ण द्वैपायन यह सब पहले ही पढ़ चुके हैं। पर किसी के बारे मे कोई शक हो या उसके सम्बन्ध में फिर सोचना पड़े, तो उसकी फाइल पर वह फिर निगाह दौड़ा देते हैं। फाइल देखने के बाद कृष्ण द्वैपायन के होंठो पर तृप्ति की हँसी फैल गयी ग्रौर उन्होंने फाइल को बन्द करके उसे फिर जहाँ-का-तहाँ रख दिया।

खुली खिड़की के बाहर निःस्तब्ध रात्रि में शान्त ग्राकाश ग्रसंख्य तारों की ज्योति में बड़ा सुन्दर दिख रहा था। दीवार पर एक छिपकली ने झट से एक मकड़े को पकड़ लिया, तो खुशी से दुम पटकने लगी। बहुत दूर से कुत्ते के भौंकने की ग्रावाज सुनायी पड़ रही थी, पास ही कही से मुर्गे की भी ग्रावाज सुनायी पड़ रही थी।

कृष्ण द्वैपायन के मन में ग्राया, सरोजिनी सहाय काफी हद तक कौशल्या की तरह है। कौतुक से मन प्रसन्न हो रहा था। ग्रजीब जिन्दगी होती है। किसी चीज का ग्रन्त नही होता। ग्राज ग्राकस्मिक ग्रनुभूति के रूप में जो समाप्त हो जाता है, दूसरे दिन किसी ग्रौर रूप में दूसरी महफिल में फिर उससे मुलाकात हो जाती है।

उन्होंने गाकर आवृत्ति की—

आँख न मूँदूं कान न रूंधूं, काया कष्ट न धारा।
खुले नयन में हँस देखूं, सुन्दर रूप निहारा।

एकाएक याद आया, दुर्गाभाई देसाई के घर फोन करके हाल पूछ लें।

वसन्त ने टेलीफोन उठाया।

"मैं के० डी० कौशल बोल रहा हूँ।"

"मैं बसन्त हूँ, कक्काजी, नमस्ते!"

"बेटी, अभी तक सोयी नहीं?"

"नहीं कक्काजी, देर तो नहीं हुई है।"

"पिताजी कैसे हैं, बेटी?"

"ठीक हैं।"

"डाक्टर देख गये न?"

"जी हाँ।"

"चन्द्रप्रसाद साथ था?"

"जी हाँ।"

"डाक्टर ने क्या कहा?"

"ज्याद मेहनत और चिन्ता से थकावट आ गयी है। थोड़े दिन आराम करने के लिए कहा।"

"दुर्गाभाईजी सो गये हैं?"

"शायद अभी नहीं। लेटे हैं। फोन पिताजी को दूं?"

"नहीं-नहीं, पर कल सवेरे उन्हें बता देना, बेटी, कि रात को मैंने फोन किया था।"

"कह दूंगी।"

"और सब अच्छा है, बेटी?"

"हाँ कक्काजी!"

"तुम्हारी माताजी, भाई सब ठीक हैं?"

"जी हाँ।"

"एक दिन मेरे पास आना। तुम्हें बहुत दिनों से नहीं देखा। सुना है खूब बड़ी और बहुत खूबसूरत हो गयी हो?"

"आपको किसने बताया?"

"चन्द्रप्रसाद ने।"

"धत्!"

हँसते हुए कृष्ण द्वैपायन ने टेलीफोन रख दिया। जिन्दगी बुरी नहीं है, अच्छी ही है। विशाल उन्मुक्त आकाश की तरह चाहे जितनी दूर चाहो चले

जाम्रो, इतना बिस्तृत तो नहीं है, फिर भी कितनी विचित्र घटनाम्रों से, ग्रनुभूतियों से, व्यथा-प्रानन्द, व्यर्थता-सार्थकता, जय-पराजय से परिपूर्ण है। एक ही इन्सान की जिन्दगी में कितने प्रादमियों का जुलूस चलता रहता है। कितनी ही किस्म के कामों की पुकार, कितनी ही नयी-नयी जिम्मेदारियां ग्रौर कितने ही ग्रभिनय संघर्ष ! कितनी भयानक प्यास ग्रौर भूख, कितना विचित्र मोह, कितना उदार बिखराव ! जिन्दगी भी परमात्मा की तरह ही हरियाली में हरी, पर्वत के रूप में उन्नत, नदी के रूप में चंचल ग्रौर सागर के रूप में कितनी गम्भीर है ! ग्रपार हर्ष से जिन्दगी बार-बार जाने किस ग्रमृत के स्पर्श से सीमा तोडकर महान् उच्छ्वास से बह निकलती है। फिर कभी अँधेरी रात के काले ग्रासमान की तरह मौन !

जीवन कृष्ण द्वैपायन को बहुत भा गया। जीवन की जलन भी भली ही लगी। जीवन मे कितनी ग्रनन्त ज्वाला है ! मृत्यु भी उसके ग्रागे मात खा जाती है।

ग्रासमान की ग्रोर देखते हुए कृष्ण द्वैपायन ने ग्रावृत्ति की—

कुसुम शयनं न प्रत्यग्रं न चन्द्र मरीचयो
न च मलयजं सर्वांगीणं न वा मणियष्टयः।
मनसिज रुजं सा वा दिव्या ममालपोहितुम्
रहसि लघयेदारब्धा वा तदाश्रयिनी कथा।

उन्हे याद ग्राया—कृष्णलीला काव्य लिखते समय कालिदास का यह श्लोक उन्होंने उद्धृत किया था। राजा की तरह श्रीकृष्ण ने भी उनके काव्य मे कहा है—मेरी ज्वाला शान्त नहीं होती। कुसुम शैया, विमल ज्योत्स्ना, मलयज चन्दन का प्रलेप या मणिमुक्ता की हार—ये सब मेरी ज्वाला को ग्रौर भी बढ़ा देते हैं। यदि मेरी ज्वाला शान्त करना हो, तो ग्रनुपम ललना राधा को ले ग्राग्रो, या मेरे पास बैठकर राधा की ही बातें करो।

याद ग्राया—कौशल्या को गीत-गोविन्द सुनना बहुत ग्रच्छा लगता था। उसके चलने का ढंग देखकर कृष्ण द्वैपायन ग्रक्सर एक श्लोक ग्रावृत किया करते थे, सुनकर कौशल्या बहुत खुश होती थी—

त्वदभि शरणभसेण वलन्ति
पतति पदानि कियन्ति चलन्ति।

—मैंने देखा कि हृदय में व्याकुल ग्राग्रह लेकर उसने ग्रभिसार के लिए पग बढ़ाये, पर चल नहीं सकी, दो-चार पग चलते ही ग्रवश धरती पर लोट गयी।

कौशल्या हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती। उसकी साडी का ग्रांचल··· कितने साल बीत गये, फिर भी न जाने क्यों यह सब भूला नहीं···उस कौशल्या

के शरीर पर से साड़ी का आँचल गिर जाता था।

···टेलीफोन की घण्टी बजी। कृष्ण द्वैपायन 'आग्नेय मुस्कान' लिये टेली-फोन की ओर देखते रहे। दो बार घण्टी बजने पर उन्होंने रिसीवर उठा लिया।

"कौशल!"

"नमस्ते, कौशलजी!"

"अच्छा, दुबेजी? नमस्ते-नमस्ते। इतनी रात को कैसे···"

"सरोजिनी से आपका सन्देश सुना।"

"अच्छा! जरा और कान लगाकर सुनिए, दुबेजी! कहीं सोने के नूपुर बज रहे है, शायद मेरे हृदय में ही। आप सुनेंगे कि आपकी ही अन्तरात्मा से आवाज आ रही है।"

सुदर्शन दुबे हँस पड़े—"आप रसिक व्यक्ति हैं।"

"बरगद हूँ, दुबेजी! माधव देशपाण्डे मुझे बरगद कहा करते हैं। ईंट, चूना, पत्थर से भी मैं रस खींच लेता हूँ। मैं कहता हूँ कि ऐसा हो भी सकता है, पर बरगद तो निष्फल वृक्ष है। उसकी छाया में और कुछ नही पनप सकता। मेरी छाया से भी क्या उदयाचल ऐसा ही हो गया है?"

"कौशलजी, आज सबेरे मैंने आपसे भेंट की थी।"

"इसके लिए मैं अत्यन्त आभारी हूँ। नहीं-नहीं, झूठ-मूठ का शिष्टाचार नहीं है। आपके सुदर्शन चेहरे का सबेरे-सबेरे दर्शन किया था, आज का दिन व्यर्थ नही गया।"

"हाँ, सबेरे से आधी रात तक में हालात में काफी परिवर्तन हो गये हैं, यह तो मानना ही पड़ेगा।"

"दुबेजी, आप अगर यह मान सकते हैं, तब तो आप महानुभाव हैं। पर सब बातें तो फोन पर हो नहीं सकती। अगर हुक्म हो तो कल सबेरे आपके पास हाजिर होऊँ?"

"सो तो मेरा परम सौभाग्य होगा, कौशलजी! पर कल सबेरे आपके पास समय होगा? सुना, आप किसी गाँव में जा रहे हैं, शाम को लौटेंगे।"

"ठीक-ठीक!"

"आप क्या बहुत थके हुए हैं?"

"नहीं, बिलकुल नहीं।"

"मैं अभी आपके पास आ सकता हूँ?"

"जरूर। मगर आपको कष्ट न हो तो।"

"तब फिर आ रहा हूँ। पन्द्रह मिनट के अन्दर ही पहुँच जाऊँगा।"

"अकेले ही आ रहे हैं न?"

"जी हाँ, अकेले ही। आप भी तो अकेले हैं न?"

"अकेला। बिल्कुल अकेला। आइए।"

टेलीफोन रखकर कृष्ण द्वैपायन ने सोने के कमरे में झाँका।

उनका बिस्तर बिछाया जा रहा था। जो बिछा रहा था, उसे देखा।

"अवस्थी!"

अवस्थी जैसे दीवाल फोड़कर सामने आ खड़ा हुआ।

"सुदर्शन दुबे आ रहे हैं, पाँच-सात मिनट के अन्दर ही।" कहकर उन्होंने सोने के कमरे की ओर देखा।

अवस्थी समझ गया, बोला, "ठीक है।"

"दुबेजी शर्बत पसन्द करते हैं, तैयार रहना।"

"जैसी आज्ञा।"

पर्सनल असिस्टेंट मथुराप्रसाद को बुलाकर कृष्ण द्वैपायन करीब तीन मिनट तक लिखाते रहे, फिर बोले, "पाँच मिनट के अन्दर इसे टाइप कर लाओ।"

मथुराप्रसाद ने टाइप करके कागज वापस किया, दत्तचित्त होकर कृष्ण द्वैपायन ने उसे पढ़ा, फिर बोले, "ठीक है, अब तुम जा सकते हो। रुस्तम को आधा घण्टा और ठहरने के लिए कह दो।"

रुस्तम खान दूसरा पी० ए० है। उन्होंने घडी की ओर देखा।

सुदर्शन दुबे के आने का वक्त हो गया। एक बार सोचा कि नीचे जाकर सुदर्शन दुबे का स्वागत करें, पर रुक गये। इतनी रात को बार-बार सीढ़ियों से उतरने-चढ़ने का मन नहीं हुआ। इसके अलावा, कृष्ण द्वैपायन ने मन-ही-मन सोचा, सुदर्शन दुबे अब प्रार्थी बनकर आ रहा है। सवेरे बडी-बडी माँगें लेकर आया था। सोचा था कि भाग्य का सोता उसी की ओर बह रहा है और अब आ रहा है, हारी हुई उच्चाकांक्षा का खण्डहर लेकर। आने दो। जगमोहन अवस्थी के साथ आ जायेगा।

गाड़ी की आवाज सुनायी दी। फाटक पर गाड़ी रुकी। दरबान ने फाटक खोल दिया। गाड़ी अन्दर आकर एकदम दफ्तर के सामने खड़ी हो गयी। सुनायी पड़ा—अवस्थी सुदर्शन दुबे का स्वागत कर रहा था।

"कौशलजी कहाँ हैं?"

"ऊपर हैं। आपका इन्तजार कर रहे हैं, चलिए।"

आहट जब बिल्कुल पास से सुनायी देने लगी, तब कृष्ण द्वैपायन खड़े हो गये। दरवाजे तक आकर उन्होंने सुदर्शन दुबे का आलिंगन कर लिया।

"आइए-आइए दुबेजी, आपको देखकर बड़ी खुशी हो रही है—

शम्भु समय तेहि रामहिं देखा,
उपजा हिय अति हरषु बिसेषा।

भरि लोचन छबि-सिन्धु निहारी,
कुसमय जानि न कीन्हि चिन्हारी ।।

सुदर्शन अप्रस्तुत हो गये। वह ठीक से समझ नही पाये कि कृष्ण द्वैपायन विनोद या व्यंग्य कर रहे हैं, या यह उनका विजयोल्लास है।

उन्होंने कहा, "सरोजिनी भी कह रही थी कि आज आप कवि बने बैठे हैं। जबान से लगातार काव्यसुधा की वर्षा हो रही है। काव्य तो अतिशयोक्ति होता ही है, स्त्री के चेहरे को चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर बताया जाता है। इसलिए मुझे देखकर राम-दर्शन का आनन्द आपके हृदय में यदि न भी हो, तब भी जबान पर ऐसी बातें आ जाना कुछ विचित्र नहीं है, कौशलजी!"

"जिन्दगी में कुछ भी विचित्र नही है।" कृष्ण द्वैपायन ने सुदर्शन दुबे को आराम से बैठाया और स्वयं भी तकिया से टेक लगाकर बैठ गये—"आपको देखकर राम-दर्शन का आनन्द क्यों न होगा, बताइए तो? पहली बात तो राम सर्वत्र सर्वभूत में व्याप्त है, आपमे, मुझमें, यहाँ तक कि हरिशंकर त्रिपाठी में भी। दूसरी बात यह है कि तुलसीदास की कुछ पंक्तियाँ आप ही को देखकर याद आ गयी सो आप पुण्यशाली तो हैं ही।"

"आप भी कुछ कम पुण्यशाली नही है। हम सब पुण्यशाली हैं।"

"आप ही पुण्यशाली हैं, सुदर्शनजी!" तुलसीदास ने कहा है—

काम-क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि।
तिन्ह महँ अति दारुण दुखद माया रूपी नारि ।।

सुदर्शन दुबे के कान जलने लगे, बोले, "आधी रात को धर्म-चर्चा नही हो पायेगी, कौशलजी! आपको मालूम ही है कि मैंने शास्त्रों का अध्ययन बहुत कम किया है। जो कुछ कहना चाहते हों, दूसरों की रची कविताओं में नही, सीधी-सीधी अपनी बोली में कहिए। यह सब मेरे दिमाग में नहीं धँसता।"

"आपने ठीक ही कहा। अब रात का दूसरा प्रहर हो गया है। इस समय कौन जागता है, मालूम है?"

"कौन?"

"हम लोग।

पहले प्रहर में सब कोई जागे
दूसरे प्रहर मे भोगी।
तीसरे प्रहर मे तस्कर जागे
चौथे प्रहर में जोगी।

जरा शर्बत पीजिए, दुबेजी! काम की बातें तो होती ही रहेंगी, जरा शर्बत भी पी लीजिए।"

दीनदयाल पत्थर के ग्लासों में शर्बत ले आया। सुदर्शन दुबे और कृष्ण

द्वैपायन दोनों ने शर्बत के ग्लास ले लिये। चुस्की लेकर सुदर्शन दुबे ने कहा, "वाह, बहुत अच्छा है!"

कृष्ण द्वैपायन ने भी थोड़ा-सा पीकर पूछा, "अच्छा लग रहा है न, दुबेजी? बिना प्रसन्नता के कोई बड़ा काम नहीं हो पाता। सन्तान को जन्म देते समय माँ को प्रसववेदना में भी आनन्द होता है। आप और मैं उदयाचल के कोटि-कोटि मनुष्यों के कल्याण के लिए कुछ करने जा रहे हैं। यदि मन प्रसन्न न रहा तो, इतने लोगों की भलाई कैसे करेंगे? लीजिए, पीजिए।"

चन्द मिनटों में ही शर्बत का ग्लास आधा हो गया। सुदर्शन दुबे का मन हल्का हो गया। आँखों में से सन्त्रस्त भाव चला गया। वह विस्मय से कृष्ण द्वैपायन की ओर देखने लगे। सवेरे की बात याद आयी। पूजा के कमरे से तुरन्त ही निकले हुए कृष्ण द्वैपायन के गोरे शरीर पर अतिरिक्त दीप्ति थी और अब दिन-भर के काम के बाद आधी रात को, अपनी विजय की निश्चित शान्ति से कृष्ण द्वैपायन कोमल रस से भर उठे हैं। सुदर्शन दुबे को डर था कि कृष्ण द्वैपायन बहुत गर्वीले हो उठे होंगे। बातें काफी तीखी होंगी। विद्रूप और हँसी उड़ाकर प्रतिद्वन्द्वी को जर्जर कर देंगे। पर यह तो बिल्कुल कुछ और ही बन गये हैं।

सुदर्शन दुबे शर्बत पीकर फिर बोल उठे, "वाह! वाह!"

"प्रसन्नता हो रही है न, दुबेजी?" कृष्ण द्वैपायन उत्साहित होकर कहने लगे, "जीवित हैं यही आनन्द है। हम जीवित हैं, अकेले नहीं, दूसरों से अलग नहीं हैं, नक्षत्रों से भरे आकाश, रंगभरी अपूर्व सुन्दरी प्रकृति और इतने अनगिनत लोगों के साथ जीवित हैं। एक विशाल जीवन-स्रोत में हमारा भी अंश है। तो फिर देखिए, हमारी सत्ता कितनी महान है! जब हम इतनों के साथ सम्मिलित हैं तो हम अकेले कैसे? यदि जीवन को इस रूप में देखें, तो समझ जायेंगे कि मनुष्य मिलने के लिए ही पैदा हुआ है, अकेले खड़े होने के लिए नहीं। उसकी रक्त-धारा एक से ही अनन्त धाराओं में प्रवाहित हो रही है, उसका असीम, गहरा मन विश्व से मिलन के लिए उत्सुक है। और तो और, ब्रह्म, जो अद्वितीय है, उसने भी अकेला नहीं रहना चाहा, दुबेजी! इसीलिए उपनिषद में कहा गया है—'स वै नैव रेमे।' यानी एकान्त उन्हें नहीं रुचा, क्योंकि उसमें उन्हें आनन्द नहीं मिलता, आनन्द-रूप का प्रकाश नहीं होता। इसीलिए 'स द्वितीयमिच्छति' यानी उन्होंने द्वितीय कामना की। अपने को दो बनाया और तब रूप, रस, शब्द, स्पर्श और गन्ध से मिश्रित यह विचित्र विश्व तैयार हुआ।"

सुदर्शन दुबे कह उठे, "आनन्द रूपममृतं यद् विभाति।"

"ठीक कहा दुबेजी, ऐतरेय उपनिषद में कहा गया है—ब्रह्म का जो सबसे

प्रकट रूप है, वह आनन्द-रूप है। 'रसो वै सः।' वह रसिक है, सुप्रिय है, रस-लोभी है।···दीनदयाल, दुवेजी को और शर्बत दो।···रसं हि एवायं लब्धानन्दी भवति।" रस का अनुभव करके उन्हें आनन्द मिलता है। और रस तो कहीं अकेले अनुभव नहीं किया जा सकता दुवेजी, इसके लिए कोई एक और चाहिए। यदि दो में जान-पहचान, परिचय-प्रीत न हो, तो रस की धारा कहाँ से बहेगी? और याद रखिए, यह जो द्वैत है, यह बहुत का ही रूपान्तर है। एक से ज्यों ही आप दो हुए कि बस, इसके बाद अनेक होते देर नहीं।"

शर्बत के दूसरे गिलास में चुस्की लेते हुए सुदर्शन दुवे ने कहा, "सच है, बिल्कुल सच।"

कृष्ण द्वैपायन ने एक बार जल्दी से घड़ी की ओर देख लिया, फिर बोले, "इसीलिए सोच देखिए; दुवेजी, मैं और आप अगर लड़ाई न करके एक-दूसरे से हाथ मिलाकर उदयाचल की सेवा करें, तो क्या ज्यादा अच्छा नहीं होगा?"

"जरूर।"

बहुत धीरे, जैसे रात भी न सुन पाये, धीरे से, पर विचित्र-सी दृढ़ता से, कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "कल के चुनाव में आप हार गये।"

इन शब्दों से सुदर्शन दुवे की छाती में बन्दूक की गोली की तरह चोट लगी। प्रतिवाद करने की शक्ति नहीं रह गयी थी। बोले, "देख तो यही रहा हूँ।"

फिर उसी तरह बहुत धीरे से, पर बड़ी दृढ़ता के साथ, कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "वह भी ऐसी-वैसी हार नहीं, आप कम-से-कम अस्सी वोटों से हारेंगे।"

"हो सकता है।"

"मैं नहीं चाहता कि आप हार जायें। उससे मेरा कोई फायदा नहीं है। आपको तो बिल्कुल ही नहीं होगा। और सबसे बड़ा नुकसान उदयाचल का होगा। हारकर आप फिर लड़ेंगे और जीतकर मैं आपको और भी दबाने की कोशिश करूँगा। इससे उदयाचल की कांग्रेस कमजोर हो जायेगी।"

सुदर्शन दुवे ने एक ही घूँट में गिलास खाली कर दिया। दीनदयाल आकर फिर उनका गिलास भर गया।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "बेहतर होगा कि हम मिलकर काम करें। आप मन्त्रिमण्डल में आ जाइए। आपके मिलने से मन्त्रिमण्डल मजबूत होगा, कांग्रेस में एकता आयेगी। उदयाचल की प्रगति और गतिशील होगी। मैं आपका सहयोग चाहता हूँ। मन्त्रिमण्डल में आइए।"

"किस शर्त पर?"

"शर्त कोई नहीं। बस इतना ही कि आपका सहयोग और मित्रता मिले। दुर्गाभाई से पूछने पर आपको पता लग जायेगा कि मैंने मन्त्रियों को अपने-अपने मन्त्रालय चलाने की पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है। अपनी मान-मर्यादा सब मेरे

हाथों में सौंप दीजिए, आपको कभी अफसोस नहीं करना पड़ेगा।"

"यानी आपके सामने बिना शर्त आत्मसमर्पण करना पड़ेगा।"

"यह बात नहीं। मन्त्रिमण्डल में न आने से आपको शासन-व्यवस्था का अनुभव नहीं होगा। मेरे बाद आप ही मुख्यमन्त्री बनेंगे, उसके लिए अभी से तैयार होइए। दुर्गाभाई कभी भी मुख्यमन्त्री-पद नहीं लेंगे। आपके और उनके बीच में जो खाई है, उसे भी भरना पड़ेगा। मैं और कितने दिन रहूँगा? मेरे बाद आप या और कोई आ जायेगा।"

"आप मुझे उत्तराधिकार दे जायेंगे?"

"अगर आपमें योग्यता हो तो जरूर दे जाऊँगा। कांग्रेस-संगठन में आपकी कामयाबी सबको मालूम है, अब शासन के कामों में अपनी खूबी दिखाइए।"

"आप मुझे कौन-सा विभाग देंगे?"

"अभी निश्चित नहीं है, पर महत्त्वपूर्ण मन्त्रालयों में से ही एक आपको अवश्य मिलेगा।"

"गृह-मन्त्रालय आपके हाथ होगा, वित्त-मन्त्रालय दुर्गाभाईजी के हाथ होगा ···उद्योग धन्धा और वाणिज्य-मन्त्रालय मुझे देने को तैयार हैं?"

थोड़ा सोचकर कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "ठीक है।"

"और···?"

उसी तरह बहुत धीरे, पर कठोर स्वर में कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "और कुछ भी नहीं। आपकी अब एक भी शर्त और नहीं मानूंगा।···आप शर्त रखेंगे तो फिर कल चुनाव होगा, आपका गुट बुरी तरह से हारेगा और साल-भर के अन्दर प्रदेश कांग्रेस का नेतृत्व भी आपके हाथों से निकल जायेगा।"

सुदर्शन दुबे थोड़ी देर चुप रहे, फिर शर्बत के गिलास से चुस्की लेकर बोले, "मेरी और कोई शर्त नहीं है। पर कुछ प्रश्न हैं, जवाब दीजिएगा?"

"जरूर।"

"सुन रहा हूँ, हरिशंकर त्रिपाठी को नये मन्त्रिमण्डल में शामिल नहीं किया जायेगा। सच है?"

"त्रिपाठीजी को कोई और उत्तरदायित्व देने की इच्छा है।"

"महेन्द्र बाजपेयीजी?"

"और किसी के बारे में कुछ कहना अभी सम्भव नहीं है। पर नये मन्त्रिमण्डल में कुछ नया खून शामिल करने की इच्छा है, खासकर कुछ कम उम्रवालों को मैं मौका देना चाहता हूँ।"

"यानि मन्त्रिमण्डल बढ़ेगा?"

"हो सकता है।"

"सरोजिनी को मन्त्रिमण्डल में शामिल करेंगे क्या?"

"इच्छा है।"

"वह तो सूर्यप्रसाद को भी मन्त्रिमण्डल में शामिल करना चाहती है ?"

"मुझसे भी यही कह रही थी। मैं दुर्गाभाई और आपके साथ बातें करके और आप लोगों की सम्मति से ही मन्त्रिमण्डल बनाऊँगा। अपने बेटे को मन्त्री बनाने का आग्रह मुझे तो है नहीं, पर अगर सरोजिनी सहाय की बात आप लोग मान लेंगे तो मैं भी मान लूँगा।"

सुदर्शन दुबे चुपचाप शर्बत पीने लगे। उनका चेहरा गम्भीर हो रहा था।

"और कुछ पूछना है, दुबेजी ?"

"नहीं।"

"अब मुझे कुछ कहना है। सवेरे आपने मुझे एक वक्तव्य पर दस्तखत करने के लिए कहा था। अब रात को मैं आपसे किसी वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने के लिए कहूँगा।"

डरी आवाज में सुदर्शन दुबे बोल उठे, "कैसा वक्तव्य ?"

"आपने मुझसे 'दास-खत' पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा था। मैं आपसे इतना नहीं कहूँगा, बस सहयोग के लिए वचन चाहता हूँ। एक वक्तव्य की रूप-रेखा मैंने तैयार कर रखी है, हम दोनों उस पर हस्ताक्षर करके पी० टी० आई० को दे देंगे। पढ़ लीजिए···इसमें यही है कि उदयाचल के मन्त्रिमण्डल में जो मतभेद आ गया था, आप और मैंने मिलकर उसका समाधान कर लिया है। आपने मेरा सरकारी नेतृत्व मान लिया है, मैंने आपका संगठन का नेतृत्व। उदयाचल के वृहत्तर स्वार्थ के लिए आप इच्छा न होते हुए भी मेरे अनुरोध पर मन्त्रिमण्डल में शामिल होने के लिए राजी हो गये हैं। कल की दल की बैठक मे दल के नेता के पद के लिए आप स्वयं मुझे मनोनीत करेंगे। हम दोनो यही आशा करते हैं कि उदयाचल कांग्रेस अब और भी मजबूत होगी। अन्त-विरोध खत्म हो जायेंगे। मन्त्रिमण्डल मन-वचन-कर्म से जनकल्याण में लग जायेगा। वक्तव्य का हर शब्द एवं वाक्य आपके मान-सम्मान का ध्यान रखकर तैयार किया है, पढ़ लीजिए···"

फाइल से एक टाइप किया हुआ कागज निकालकर कृष्ण द्वैपायन ने सुदर्शन दुबे के हाथ में दे दिया। उसे पढ़कर सुदर्शन दुबे ने कुछ सोचा और फिर जेब से कलम निकालकर दस्तखत कर दिया। सुदर्शन दुबे के दस्तखत के नीचे कृष्ण द्वैपायन ने अपना दस्तखत किया, फिर अवस्थी को बुलाकर कहा, "यह वक्तव्य लेकर तुरन्त पी० टी० आई० चले जाओ। सुन्दरराजन से कहना कि इस संयुक्त वक्तव्य पर सुदर्शन दुबे और मैं अभी-अभी दस्तखत करके तुम्हारे हाथ भेज रहा हूँ। आज रात को हम लोग किसी और से भेंट नहीं करेंगे। कल सवेरे आठ बजे सुन्दरराजन मुझसे भेंट करें।"

अवस्थी कागज लेकर चला गया।

कृष्ण द्वैपायन ने कहा, "मन्त्री बनकर देखिएगा, अच्छा ही लगेगा, दुबेजी! आइए, थोड़ा और शर्बत पिया जाये। दीनदयाल, शर्बत लाओ।"

एक ही बार में कृष्ण द्वैपायन ने ग्लास खत्म कर दिया—"आह! दुबेजी, इतने गम्भीर क्यों हैं?"

"आप राजा हैं। खुश होना आप ही को शोभा देता है।"

"ऐसा क्यों? मैंने अपने राज में कोई मातम मनाने की तो घोषणा नहीं की है। दुष्यन्त ने अवश्य की थी। उन्हें शकुन्तला याद आ रही थी, सो राज्य-भर में वसन्तोत्सव रोक दिया गया। निरानन्द का कितना सुन्दर वर्णन! सुनिएगा, दुबेजी—

चूतानां चिरनिर्गतापिकलिका बध्नाति न स्वंरजः,
सन्नद्धं यदपि स्थितं कुरुवकं तत्कोरकावस्थया।
कण्ठेषु स्खलितं गतेऽपि शिशिरे पुंस्कोकिलानांरुतम्,
शंके संहरति स्मरोऽपि चकितस्तूणार्धकृष्टं शरम्॥

राजा ने मना किया है, इसलिए वसन्त विकसित नहीं हो पाया। पेड़-पौधे, फूल-पक्षी सबने राजा का आदेश माना है। आम्रमंजरी कबकी आयी हुई है, पर आज तक उसमें पराग नहीं आया। कुरुवक के फूल आते-आते रह गये, सिर्फ कली-भर रह गयी। शीत कबकी खत्म हो चुकी, पर कोयल अभी तक नहीं कूकी। राजा का आदेश भंग करने का साहस किसी में नहीं है। और तो और, भुवनविजयी कन्दर्पदेव, जिन्होंने वसन्त के आगमन पर अपने तूणीर से बाण प्रायः निकाल ही लिया था, उन्होंने भी राजा का आदेश सुनकर, अस्त-व्यस्त होकर बाण को फिर तूणीर मे रख लिया।"

"मैं अब चलूँ, कौशलजी! शर्बत कुछ ज्यादा पी लिया। आँखें नींद से भारी हो रही हैं।"

"अच्छा। कल दल की बैठक ही में भेंट होगी। घर जाकर आनन्द से सो जाइए—

दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।
हो जाय न पथ मे रात कहीं।
मंजिल भी तो है दूर नहीं
यह सोच थका दिन का पन्थी भी—
जल्दी-जल्दी चलता है।
दिन जल्दी-जल्दी ढलता है।"

कृष्ण द्वैपायन ने घड़ी की ओर देखा।

बारह बजकर आठ मिनट।

खिड़की के बाहर स्थिर नीरव आकाश।

अन्धकार लुभावनी-रमणी के करस्पर्श की भाँति कोमल लग रहा था।

कृष्ण द्वैपायन कौशल ने सुदर्शन दुबे से हाथ मिलाया।

"नमस्ते, मुख्यमन्त्रीजी!"

"नमस्ते, उद्योगमन्त्रीजी!"

सुदर्शन दुबे दीनदयाल के साथ सावधानी से सीढ़ी उतरने लगे।

कृष्ण द्वैपायन आसमान ही की ओर ताकते रहे।

टेलीफोन की घण्टी बजी।

"कौशल।"

"मैं सुभाष हूँ, कौशलजी!"

"राइट टाइम। वेरी गुड। गो अहेड।"

"जो हुक्म।"

"तुम खुद सब देख रहे हो न?"

"अखबार निकल जाने के बाद घर जाऊँगा।"

"ठीक है। एक काम और है। पी० टी० आई० को एक वक्तव्य भेजा है—पर उस पर सुदर्शन दुबे और मेरे दस्तखत हैं। तुम्हें अभी मिल जायेगा। उसे अच्छी तरह से पहले पृष्ठ पर छापना, साथ मे मेरी, सुदर्शन दुबे और दुर्गाभाई की तस्वीर देना। दुबेजी बीच में रहेंगे, समझे! सम्पादकीय लेख तुमने जरूर लिख लिया होगा, उसमें भी इस वक्तव्य का उल्लेख होना जरूरी है—यानी तुम्हें उसे फिर से लिखना पड़ेगा···क्या? लिख लोगे? बहुत अच्छा। हाँ, सुनो, सुन्दरराजन को फोन करो···तुम्हारे साथ मेरी बातें हुई हैं और जो राजनीतिक खबर छाप रहे हो, उसका थोड़ा हिस्सा उसे दे दो। दूसरे अखबारों में भी तो छप जाना जरूरी है। समझ गये न? ठीक है। वेरी गुड।"

"आपको बधाई दे रहा हूँ, कौशलजी!"

"बधाई? आज नहीं, कल रात को। कल रात को मेरे यहाँ खाना खाओगे। गुडनाइट।"

चौबीस

आधी रात बीत गयी। दिन-भर के काम की गौरवमय समाप्ति। अब विश्राम। अब सोना चाहिए, ताकि नये सूर्योदय के साथ-साथ नये संग्राम की तैयारी हो सके।

अवस्थी के लौटने से पहले ही सुदर्शन दुबे दीनदयाल के कन्धे पर हाथ रखकर सावधानी से जीना उतरकर चले गये थे। कृष्ण द्वैपायन ने तकिया पर शरीर टिकाकर नक्षत्रों-भरा आकाश देखते-देखते दुबेजी की गाडी जाने की आवाज सुनी थी। वही आवाज सुनते-सुनते अधजमे चाँद से कह रहे थे—

तुहुँ जैंछे रसवन्ती कानु रसकन्द,
बड़ पुण्य रसवन्ती मिले रसवन्त।
तुहूँ जदि कहसि करिय अनुसंग,
चोरि-पिरीति होय लाखगुण रंग॥

बहुत पुण्य से रसवन्ती के साथ रसवन्त का मिलन होता है। कृष्ण द्वैपायन की नाक के नीचे तीखी हँसी आ गयी। प्रेम के साथ चोरी मिला लो तो आनन्द दुगुना हो जाता है। कृष्ण द्वैपायन हँस पड़े। हँसते-हँसते उन्होंने देखा, अवस्थी आकर दरवाजे पर खड़ा हो गया है।

अवस्थी ने निवेदन किया—"रात बहुत हो गयी है। साढ़े बारह बज गये।"

"हाँ, अब उठूँगा। कागज-पत्र समेट दो।"

अवस्थी ने कागज, फाइल, बही, सब समेटकर रख दिये। जरूरी फाइल कृष्ण द्वैपायन ने अपने हाथों से सँभालकर रख दी। कुछ कागज बक्स मे रखकर खुद उसमे ताला बन्द किया।

"मुझे जरा सहारा दो। कमर मे फिर वही दर्द···"

जगमोहन अवस्थी के कन्धे पर हाथ रखकर कृष्ण द्वैपायन खडे हो गये। हिरन के चमड़े की चप्पल अवस्थी ने उन्हे पहना दी। दरवाजा पार करके बरामदा है। एक ओर कैबिनेट हॉल और दूसरी ओर एकदम छोर पर विश्राम-कक्ष, यानी सोने का कमरा। साथ ही मे लगा हुआ गुसलखाना।

अवस्थी कृष्ण द्वैपायन को दरवाजे तक ले गया। मुख्यमन्त्री-भवन एकदम शान्त था। रात ने मानो सबकुछ अपने गहरे आलिंगन मे बाँध लिया हो। कोई अब कुछ नही देख रहा है। कुछ नही सुन रहा है। कुछ भी नही जान पा रहा है। किसी की आँखो या चेहरे पर कोई प्रश्न नही है। अब शून्यता-भर रह गयी है।

गुसलखाने के पास जाकर अवस्थी रुक गया।

धोती, बनियान, तौलिया, साबुन लेकर गुसलखाने के सामने कोई खडी थी। वह आगे बढी।

अवस्थी दो कदम पीछे हट गया।

कृष्ण द्वैपायन ने हाथ बढ़ाकर गुसलखाने का दरवाजा पकड लिया।

अवस्थी चुपचाप जल्दी से चला गया।

दफ्तर की बत्ती बुझ गयी। अवस्थी गाड़ी पर बैठा। गाड़ी चली गयी।

दीनदयाल नीचे की मंजिल में अपने कमरे में चला गया।

फाटक पर बन्दूक लिये खड़ा हुआ दरबान बोल उठा—"रामा हो रामा।"

कृष्ण द्वैपायन गुसलखाने में जाकर मुलायम गद्दीदार कुर्सी पर बैठ गये। उसने गुनगुने गरम पानी और साबुन से उनके हाथ-पैर धो दिये। मुंह स्वयं कृष्ण द्वैपायन ने ही धो लिया। उसने बड़े यत्न से मुंह और कन्धे पोंछ दिये। कुर्ता-बनियान उतारकर उजली बनियान पहना दी। धोती बदलकर जब वह बाहर आये तो मन बिल्कुल हल्का हो गया था और शरीर आराम मांग रहा था।

गुसलखाने से उसी के कन्धे पर हाथ रखकर कृष्ण द्वैपायन सोने के कमरे में गये। बिस्तर उसने पहले ही बिछा रखा था—नरम, सुखद शैया पर मणिपुरी पलंगपोश और गुलदस्ते में लाल गुलाब के गुच्छे। सारे कमरे में मृदु सुगन्ध छायी हुई थी। कृष्ण द्वैपायन बिस्तर और दीवार के बीच में पड़ी आराम-कुर्सी पर बैठ गये।

दो कोमल-कोमल हाथ बहुत सहमी-सहमी सावधानी से उनका माथा और कन्धा दबाने लगे।

गुसलखाने में जाने के समय से ही कृष्ण द्वैपायन बातें किये जा रहे थे, पर लगातार नहीं, थोड़ा रुक-रुककर। नीरव अन्धकार में जुगनू की रोशनी रह-रहकर चमक उठती। कृष्ण द्वैपायन किसी को लक्ष्य करके नहीं बोल रहे थे, अपने से भी नहीं। पर बोले बिना कोई चारा नहीं था, इसीलिए बोले जा रहे थे।

उनकी बातें किसी के मन को तनिक भी नहीं छू सकीं।

उसने कुछ भी नहीं सुना, कुछ भी नहीं कहा, वह कुछ भी नहीं समझी।

दफ्तर में रात बिताते समय कई बार कृष्ण द्वैपायन सुखनिद्रा के लिए उसकी सेवा ग्रहण करते हैं।

दिन-भर की थकान के बाद सिर, माथा, कन्धा, पीठ कमर दबा देने से नींद अच्छी आती है। दिन-भर के बाद बहुत रात को काम खत्म होने पर कृष्ण द्वैपायन कभी-कभी शर्बत पीते हैं। ज्यादा पी लेने पर बातें करने का मन होता है। दीर्घ चर्चा से जिन कवियों की कविताएँ उन्हें याद हो गयी हैं, वही कविताएँ झरने की तरह बह निकलती हैं। कृष्ण द्वैपायन की जबान से काव्यरस बहने लगता है।

सेवा उन्हें मिलती रहती है—नरम और कोमल हाथों की सेवा। आँखों को भी आराम मिलता है। देखने में वह सुन्दर है।

वह अगाध शान्त है, एक बात भी नहीं सुनती, एक बात भी नहीं समझती। जगमोहन अवस्थी की परित्यक्ता, गूंगी-बहरी, पर सुन्दरी बेटी।

कृष्ण द्वैपायन कौशल की सेविका।

दिन बुरा नहीं बीता। सुदर्शन दुबे हार गये। जो वह सवेरे सोच भी नहीं सकते थे, वही उन्हें आधी रात को करना पड़ा। सवेरे कह गये थे कि आसमान में दो सूरज, दो चांद एकसाथ नहीं रह सकते। सुदर्शन दुबे और कृष्ण द्वैपायन एक ही मन्त्रिमण्डल में रहकर एक-दूसरे को सहयोग नहीं दे सकते। वही सवेरे का सूरज आधी रात को ज्योतिहीन तारामात्र रह गया। कल सवेरे वह फिर सूरज नहीं बन सकेगा। अब दिन में भी उसे तारा बनकर रहना पड़ेगा। सुदर्शन दुबे को थोड़ी और तसल्ली दे सकते तो अच्छा होता। शर्बत पीकर सुदर्शन दुबे बहुत गम्भीर हो गये थे। उन्हें नींद आ गयी। अगर उनसे कहा जाता कि दुख या शोक से कोई फायदा नहीं, जो काम आज नहीं हो पाया, शायद कल हो जाये, तो ठीक रहता। पर शायद ऐसा कभी नहीं होगा। जो हो गया उतना भी क्या कम है? महाभारत में भी विदुर ने धृतराष्ट्र से यही कहा था, और इससे बड़ी एक बात कही थी—समय निरपेक्ष है। वह न तो किसी से प्यार करता है, न किसी से घृणा। बस, आकृष्ट-भर करता है। '*न कालस्यप्रियः-कश्चिन्न द्वेष्यः कुरुसत्तम। न मध्यस्थः क्वचित्कालः सर्वं कालः प्रकर्षति।*' काल सभी को आकर्षित करता रहता है। मुझे भी करता है।···इतने जोर से नहीं, धीरे-धीरे हाथ चलाओ···कन्धे पर दर्द-सा था। बासठ वर्ष की उम्र में काल के आकर्षक से डरने की बात नहीं है। मैं जब मिट जाऊँगा तब सुदर्शन दुबे उदयाचल के मुख्यमन्त्री बनेंगे। क्यों नहीं? उनसे योग्य व्यक्ति तब और कौन होगा? ऐसा दिन भी आयेगा, और उसे आने में बहुत देर भी नहीं है, तब मन्त्री आज के मन्त्रियों से कुछ अलग तरह के होंगे। वे अंग्रेजी पढ़े-लिखे नहीं होंगे। वे गांव और जिले कांग्रेस से आयेंगे। नये हिन्दुस्तान के असली नेता। क्यों न होगा? राजनीति में कौन आ रहा है? गांव के अमीर किसान···दस तरफ के बेकार लोग···जिन्हें कुछ नहीं करने को है, वही अब राजनीति कर रहे हैं। अच्छे-अच्छे लड़के इंजीनियर, डाक्टर, वैज्ञानिक, प्रशासक बन रहे हैं। वे यह नहीं समझते कि गणतन्त्र राज्य में असली नीति तो राजनीति है। पहले राजा, फिर प्रजा। शैय्या पर पड़े भीष्म ने युधिष्ठिर से कहा था—पहले किसी राजा का आश्रय लेना चाहिए, फिर पत्नी ग्रहण करनी चाहिए, और उसके बाद धन अर्जित करना चाहिए। राजा न रहे तो पत्नी भी नहीं रहेगी, धन भी नहीं रहेगा। 'राजानम् प्रथमं विन्देत् ततो भार्या ततो धनम्। राजन्यसति लोकस्य कुतो भार्या कुतो धनः?' राजा का मतलब 'किंग' नहीं, राजा का मतलब सरकार। पहले देश में सुशासन होगा तभी घर में पत्नी रह सकेगी, धन भी इकट्ठा हो सकेगा। भारत का शिक्षित वर्ग इस बात को कहां समझ पा रहा है? राजनीति की बागडोर जिनके हाथों में देकर वे निश्चिन्त हैं, वे देश का रथ अधिक दिन नहीं हांक सकेंगे, क्या इस पर कभी लोगों ने सोचा?

मेरे मरने या अवकाश लेने के बाद उदयाचल के 'राजा' बनेंगे सुदर्शन दुबे, उनके बाद शायद गोविन्द सहाय बनें, जो शायद उनसे भी तीन सीढ़ी गये-गुजरे हैं।...दुर्गाभाई देसाई ? दुर्गाभाई का वक्त खत्म हो गया। सुदर्शन के साथ मेरे समझौते से दुर्गाभाई दुखी होंगे। सोचेंगे कि मैंने जब उन्हें लाँघकर यह किया है तो उनका असम्मान किया। अस्वस्थ जानकर आज उन्हें तकलीफ नहीं दी, पर उनसे बताना पड़ेगा। मान-मंजन में देर नहीं लगेगी। सुदर्शन दुबे के साथ वह मन्त्रिमण्डल में नहीं रहेंगे ? जरूर रहेंगे। नहीं रहेंगे तो जायेंगे कहाँ ? गांधी-आश्रम अब नहीं चलने का। हम जो मन्त्री बने हैं, सो मन्त्रित्व के अलावा हम लोगों के करने को अब कुछ नहीं है। मन्त्रित्वहीन हो हम तो बेकार हो जायेंगे, और आलसी दिमाग शैतान का कारखाना होता है। दुर्गाभाई को मन्त्री बनाना ही पड़ेगा। सुदर्शन दुबे और दुर्गाभाई देसाई एक-दूसरे को दबाये रखेंगे ताकि इनमें से कोई भी ज्यादा प्रभावशाली न बन सके। दोनों ही कमजोर होकर मेरे काबू में रहेंगे। स्वयं बृहस्पति ने कहा है—राजा का श्रेष्ठतम कर्तव्य अपने स्वार्थ की यत्न से रक्षा करना है।

कल सवेरे रतनपुर में लोगों के आश्चर्य का वारापार नहीं रहेगा। लोगों ने सोचा था कि के० डी० कौशल का पतन हो गया, फिर से उनका उत्थान देखकर वे दंग रह जायेंगे। उदयाचल के नेता के० डी० कौशल का कभी पतन नहीं होगा। बस मौत ही यह काम कर सकती है। मरते दम तक वह उदयाचल की सेवा करते रहेंगे। इसके बिना उनकी आत्मा की तृप्ति नहीं हो सकती। उदयाचल के इतिहास में के० डी० कौशल अमर रहेंगे। उनका नाम केवल के० डी० कौशल एवन्यु, के० डी० कौशल महिला कालेज, कौशल पोलिटेकनिक और के० डी० कालोनी के नामों में ही नहीं रहेगा, बल्कि उदयाचल के इतिहास में भी वह अमर होकर रहेंगे। कृष्ण द्वैपायन कौशल, उदयाचल के एक अद्वितीय नेता।

नेता कैसे बनते हैं ? किस मसाले से ? किस जादू से ? देशसेवा से ? तब तो उदयाचल के नेता दुर्गाभाई देसाई ही बन सकते थे। गुटों के षड्यन्त्र से ? फिर तो यह सम्मान सुदर्शन दुबे को प्राप्त होता। नेतृत्व का जादू कुछ और ही है, जो कृष्ण द्वैपायन कौशल के पास है, पर दुर्गाभाई या सुदर्शन दुबे के पास नहीं है। महाभारत में कहा गया है—'नेता सूर्य की तरह अँधेरे स्थानों को प्रकाशित करते हैं, वायु की तरह घुटन-भरे स्थानों में जीवन प्रवाहित करते हैं।' पर यह नेता तो स्वयं श्रीकृष्ण हैं। और भारतवर्ष में, वर्तमान युग में, श्रीकृष्ण-लीला-काव्य में उन्हें रूप दिया है कृष्ण द्वैपायन कौशल ने। उदयाचल के अन्धकार में वह प्रकाश लाये हैं। वायुहीन उदयाचल में प्राणधारण के लिए वायु प्रवाहित की है उन्होंने। उदयाचल के एकमात्र नेता कृष्ण द्वैपायन कौशल ही हैं।

फिर भी एक ने कहा था—'सब छोड़ दो, बनवासी हो जाओ।' एक वृद्धा नारी ने कहा था। उनका नाम पद्मादेवी है। कृष्ण द्वैपायन कौशल की धर्मपत्नी। कहती थीं—'कायर की तरह लड़ाई के मैदान से भाग जाओ।' नहीं, ऐसा नहीं कहा था उन्होंने। कहा था—'विजय प्राप्त हो जाने के बाद ताज को धरती पर रखकर वानप्रस्थ ले लो।' राजी नहीं हुआ तो आज रात को वह काशी चली गयीं। कहा था—'इस विजय को पाने के लिए तुम जो मूल्य देने जा रहे हो, उससे तुम लुट जाओगे।' ऐसी क्या कीमत देनी पड़ी? सुदर्शन दुबे को उद्योग और वाणिज्य-मन्त्रालय? सरोजिनी सहाय को मन्त्रिमण्डल में शामिल कर लेना? दो सौ कांग्रेसी सदस्यों की छोटी-मोटी माँगों को पूरा करना? हिकमत से अपने बेटे को संसदीय सचिव बना लेना? यह क्या इतनी बड़ी कीमत है कि इसे देने में कृष्ण द्वैपायन लुट जायेंगे? क्या उदयाचल के० डी० कौशल के नेतृत्व के लिए इतनी थोड़ी-सी कीमत भी नहीं दे सकता?

रमणी अच्छी है। नाम सरोजिनी सहाय। ताज्जुब की बात है, वह बहुत हद तक कौशल्या-जैसी दिखती है। शिक्षित, सुसंस्कृत, चुस्त, देखने में बड़ी सुन्दर है। रसिकता समझ लेती है। उसमें उच्चाकांक्षा है। रमणी अच्छी है। उसे अगर तैयार कर लिया जाये तो काम बन जायेगा। मुख्यमन्त्री की उपमन्त्री बनने का आश्वासन पाकर बहुत खुश हो गयी है। इतनी उम्मीद नहीं की थी। सोचा होगा कि बहुत होगा तो पार्लियामेंट्री सेक्रेटरीभर बन जायेगी। देने के लिए भी दिल चाहिए। जब देना ही पड़े तो खूब दो। लेनेवाले का हाथ भर दो। जब जानते हो कि नहीं दोगे तो एक बूँद भी देने की प्रवंचना मत करो। धीरे-धीरे दोगे तो देखोगे कि दान का नाम भी नहीं रह जायेगा, गर्मी में तपी हुई धरती पर जलबिन्दु की तरह उसका भी कोई चिह्न नहीं रह जाता। इसीलिए मैंने सरोजिनी को दोनों हाथ भरकर दिया है। केवल उपमन्त्री का ही पद नहीं, बल्कि मुख्यमन्त्री के साथ रहने का सौभाग्य। वह काम कर सकेगी। राजनीतिक उच्चाकांक्षा है। सुशिक्षित, सुसंस्कृत। रस ग्रहण कर सकती है। चेहरे पर एक प्रच्छन्न विषाद है, शायद उसके मन में कहीं कोई दर्द छिपा हुआ है। दाहिने गाल को हाथ पर रखकर बातें सुन रही थी। बहुत अच्छी लग रही थी, जैसे सन्ध्या को प्रतिपदा के चाँद की कला। यह लो, जयदेव की भाषा याद आ रही है—

त्यजति न पाणितलेन कपोलम्।
क्लेशविनमिव सायमलोलम्॥

अजीब बात है कि अपनी धर्मपत्नी पद्मादेवी को लेकर कवि कृष्ण द्वैपायन के मन में कभी काव्यधारा नहीं बह सकी। पद्मादेवी तपस्विनी हैं, रमणी नहीं। उनका स्थान पूजाघर में है, कठोर नीति-बोध में है। कर्तव्य की कठिन

माँगों को लगातार प्रश्नहीन निपुणता से पूरा करते रहना ही उनका काम है। यही उनके हृदय का विवेक है। उन्हें लेकर बहुत-कुछ हो सकता है, पर काव्य नहीं। जिन्दा रहने के उष्ण आनन्द को नहीं अनुभव किया जा सकता। इस उम्र में जाने कैसे काव्य का सोता सूखता जा रहा है। लगातार राजनीतिक और राज-काज से अवसर ही नहीं मिलता, फिर भी दिल चाहता है कि मरने से पहले एक महाकाव्य की और रचना करूँ। सरोजिनी सहाय क्या काव्यरस समझ सकेगी?

> विचल दल कललितानन चन्द्रा
> तदधर पान रभस कृततन्द्रा।
> चंचल कुण्डल ललित कपोला
> मुखरित रसन जघन गतिलोला॥
> दयित विलोकित लज्जित हसिता
> बहुविध कूजित रतिरस वसिता।
> विपुल पुलक पृथु वेपथुभंगा
> *स्वसित निमीलित विकसित नंगा॥*

युग-युग से सभी कवि इसी तरह काव्य-लक्ष्मी-सरस्वती ढूँढ़ते आये हैं। जिसके मुखचन्द्र पर केश के गुच्छे उड़-उड़कर पड़ रहे हों, प्रिय मुख के चुम्बन के सुख से आँखें अधमुँदी हो गयी हों, ललित गालों पर मणिकुण्डल लटक रहा हो, बार-बार जंघा हिलाने से मेखला की झंकार हो रही हो, प्रिय को देखकर वह कभी हँसी से खिल उठती है, और कभी प्रेम की लज्जा से लाल हो उठती है। रतिरस से विभोर होकर उसके मुँह से जाने कितने अस्फुट स्वर निकल रहे हैं। कभी परम पुलक से कम्पित हो उठती है, कभी द्रुत श्वास लेने से और कभी नेत्रों की दृष्टि से उसका रतिरंग प्रकाशित होता रहता है।

सुदर्शन दुबे भी एक बार काँप उठे थे, रतिरंग से नहीं, बल्कि पराजय की विभीषिका से। पर सुदर्शन सचमुच पराजित नहीं हुए हैं। आगामी मन्त्रिमण्डल में वह धीरे-धीरे द्वितीय पुरुष बन जायेंगे। दुर्गाभाई देसाई धीरे-धीरे डूबते ही जायेंगे। धैर्य और बुद्धि हो तो उदयाचल के आकाश में एक दिन सुदर्शन दुबे सूर्य बनकर चमक उठेंगे। कांग्रेसी राज अभी बहुत दिनों तक चलेगा। यह टूटते-टूटते भी राज करता रहेगा। कारण यह है कि कांग्रेस कोई एक दल नहीं है, बल्कि बहुत-से दलों-उपदलों का मिला हुआ रंगमंच है। कोई दूसरा दल भारत में अभी बहुत दिनों तक नहीं पनप सकेगा। यही मामूली-सी बात वह दुर्गाभाई को किसी तरह नहीं समझा पाये। इस देश की आबोहवा, इतिहास, संस्कृति, किसी भी वस्तु को यह पवित्र नहीं रहने देती। हर चीज में मिलावट करके उस पर भारतीय होने का ठप्पा लगा देती हैं। उसी को हम समन्वय

कहते हैं। हर जगह यही समन्वय दिखायी देता है। कई दलों की राजनीति का नाम लेकर एक ही दल लगातार राज्य कर रहा है। गणतन्त्रवाद और समाजवाद के साथ धन-तन्त्रवाद का एक अजीब समन्वय है। हिन्दुस्तान में साम्यवाद हो चाहे समाजवाद, सबमें मिलावट है। पर इस बात को दुर्गाप्रसाद किसी तरह नहीं समझ सका। समझ सकता तो अवश्य ही कांग्रेस छोड़कर वामपन्थी न बनता। उसने तो खुद ही अपनी राजनीतिक कब्र खोद ली। आज अगर दुर्गाप्रसाद कांग्रेस में होता, तो कभी उदयाचल का मुख्यमन्त्री बन जाता। उसमें पिता के उत्तराधिकार की पूरी योग्यता है। मैं भी उसे सारी बातें बड़े यत्न से सिखाता। मैंने जो कुछ भी पाया है, सब उसके हाथों में सौंप जाता। पर ऐसा नहीं हो पाया। बाप के रास्ते को बेटे ने नहीं अपनाया। साथी नहीं बना। उसने विपथ चुना। दोनों के रास्तों के बीच का फासला बढ़ता ही गया। दुर्गाप्रसाद अब बाप के आदेश से ही जेल के सीखचों में बन्द है। मेरी विजय में उसे खुशी नहीं थी। मैं हारता तो उसे दुख नहीं होता। मैं अपने रास्ते पर चल रहा हूँ। बस, अन्तिम मंजिल-भर बाकी है। दुर्गाप्रसाद व्यंग्य विद्रूप कर रहा है, शिकायतें और प्रतिवाद कर रहा है, क्षीण प्रतिरोध भी कर रहा है। ये प्रतिरोध उसकी माँ के कातर अनुरोध-जैसे नहीं, विरोधी राजनीतिक ताकत की तरह होते हैं। फिर भी उसे कभी विजय नहीं मिलेगी। नाखून गल जाने, दाँतों के गिर जाने पर भी कांग्रेस ही राज करेगी और दुर्गाप्रसाद शरीर से, मन से, निराशा से बूढ़ा हो जायेगा। पर कुछ होने-जाने का नहीं। कोई चारा नहीं। उसे लौटाने की ताकत मेरे अन्दर नहीं है। सुदर्शन दुबे को मैं अपने साथ खींच सकता हूँ। पर पुत्र दुर्गाप्रसाद मेरे काबू से बाहर है—

> विधि निषेध के बन्धन, जग के
> व्यंग कहाँ उपहास कहाँ?
> ताने मो ताने सुनने का
> समय यहाँ अवकाश कहाँ?
> निज पथ पर चलते रहते हो
> मिला तुम्हें गति का निर्वाण
> दूर देश के अथक पथिक है
> हे कवि, हे अद्भुत, अनजान!

कवि दूर-देश का अनजान पथिक है। वह राही है, इसलिए उसे राह का बोझ उठाना ही पड़ता है। कवि केवल बोलना चाहता है। जीवन-क्रम में उस बोलने का अन्त नहीं होता। 'दिन की जितनी कथाएँ हैं, चाँदनी रात, बादल, प्रकाश की छटा—मैं उसे ही कहता जाता हूँ।' मैं बोल रहा हूँ, पर तुम सुन नहीं सकतीं। तुम बोल भी नहीं सकती। तुम बोलतीं नहीं, सुनती नहीं, फिर

तुम पाषाणी अहल्या नही हो। रक्त-मांस से बनी रूपसी स्त्री हो। तुम्हारा स्पर्श मोहक है। तुम्हारे शरीर की लुभावनी और शान्त उष्णता आकर्षक है, तुम्हारी सेवा सुन्दर है। फिर भी तुम्हारी गहरी काली आँखों में प्राण का प्रकाश नहीं है। तुम्हारी घनी, काली, मृदु सुगन्धित केशराशि में कामना नहीं है। तुम बोलती नहीं हो, तुम सुनती नहीं हो, फिर भी तुम्हें मालूम है कि मैं क्या चाहता हूँ, तुम्हें क्यों यहाँ आना पड़ता है और कब तुम्हें चले जाना पड़ता है। तुमसे कुछ भी नहीं माँगना पड़ता, तुमसे कुछ भी नहीं कहना पड़ता। बात करता हूँ, पर तुम्हारे चेहरे पर कोई भी भाव-परिवर्तन नहीं दिखायी पड़ता। मैं रात के एकान्त में कितना-कुछ कह जाता हूँ, एकमात्र जीवित प्राणी तुम मेरे साथ रहती हो, पास में रहती हो, फिर भी सुन नही पाती। तब भी इतनी रात को जब सोने आता हूँ तो तुम्हारी यह मौन संगति मुझे अच्छी लगती है। तुम सेवा करती हो।

हम भी सेवा करते हैं। हम देश के नेता नही, देशसेवक हैं। बहुत साल पहले देश की मुक्ति के लिए दीक्षित होकर हम संग्राम में कूद पड़े थे। दुनिया की सबसे बड़ी हिंसक शक्ति को अहिंसा से पराजित करके हम लोगों ने हिन्दुस्तान का एक अनोखा इतिहास बनाया है।

—'भाइयो और बहनो, साथियो! आप एक पल के लिए भी उस गौरवमय इतिहास को न भूलें! हममें से कोई भी नेता नहीं है। हम अभी तक भारतमाता के आज्ञाकारी सैनिक हैं। परिस्थिति के बदल जाने से कर्तव्य का रूप ही बदल जाता है। पुण्य-दीप्त कुरुक्षेत्र के दो युध्यमान शिविरों के बीच खड़े होकर भगवान कृष्ण ने अर्जुन को समझाया था कि उस परिस्थिति में उसका कर्तव्य वध करना है, दुर्योधन को परास्त करना और युद्ध जीतना है। आज हमारे कर्तव्य का रूप ही बदल गया है, पर उनकी अन्तरात्मा नही बदली है। अब हमने शासन की जिम्मेदारी अपने हाथों में ली है, पर यह भरत के अयोध्या का राज-काज सँभालने के ही बराबर है। भरत श्रीरामचन्द्र की स्वर्णखचित पादुका लेकर अयोध्या लौटे थे। वही पादुका राज्य में न्याय-विचार करती थी। हमने भी देश के आबालवृद्ध की ओर से शासन की जिम्मेदारी उठायी है। सारे देशवासियों की उच्चरित-अनुच्चरित आज्ञा, उनकी कामनाएँ, उनकी आशाएँ, उनके दुःख और उनकी कमियाँ—यही सब जनता के शासन को कल्याणकारी पथ पर ले जा रही है। ऊपरी दृष्टि से आपको ऐसा लग सकता है कि सत्ता पाकर हम आरामतलब और विलासी हो गये हैं, हम अंग्रेजों द्वारा छोड़े गये महलों में रहते हैं, मोटरों पर सफर करते हैं, जनता से बड़ी दूर जा चुके हैं। पर भाइयो, मेरा नम्र निवेदन है कि यह आप लोगों की गलत-फहमी है। हमें याद है कि पिछले विश्वयुद्ध से पहले भी अंग्रेजों ने एक बार

कहते हैं। हर जगह यही समन्वय दिखायी देता है। कई दलों की राजनीति का नाम लेकर एक ही दल लगातार राज्य कर रहा है। गणतन्त्रवाद और समाजवाद के साथ धन-तन्त्रवाद का एक अजीब समन्वय है। हिन्दुस्तान में साम्यवाद हो चाहे समाजवाद, सबमें मिलावट है। पर इस बात को दुर्गाप्रसाद किसी तरह नहीं समझ सका। समझ सकता तो अवश्य ही कांग्रेस छोड़कर वाम-पन्थी न बनता। उसने तो खुद ही अपनी राजनीतिक कब्र खोद ली। आज अगर दुर्गाप्रसाद कांग्रेस में होता, तो कभी उदयाचल का मुख्यमन्त्री बन जाता। उसमें पिता के उत्तराधिकार की पूरी योग्यता है। मैं भी उसे सारी बातें बड़े यत्न से सिखाता। मैंने जो कुछ भी पाया है, सब उसके हाथों में सौंप जाता। पर ऐसा नहीं हो पाया। बाप के रास्ते को बेटे ने नही अपनाया। साथी नहीं बना। उसने विपथ चुना। दोनों के रास्तों के बीच का फासला बढ़ता ही गया। दुर्गाप्रसाद अब बाप के आदेश से ही जेल के सीखचों में बन्द है। मेरी विजय में उसे खुशी नहीं थी। मैं हारता तो उसे दुख नहीं होता। मैं अपने रास्ते पर चल रहा हूँ। बस, अन्तिम मंजिल-भर बाकी है। दुर्गाप्रसाद व्यंग्य विद्रूप कर रहा है, शिकायतें और प्रतिवाद कर रहा है, क्षीण प्रतिरोध भी कर रहा है। ये प्रतिरोध उसकी माँ के कातर अनुरोध-जैसे नही, विरोधी राजनीतिक ताकत की तरह होते हैं। फिर भी उसे कभी विजय नही मिलेगी। नाखून गल जाने, दाँतों के गिर जाने पर भी कांग्रेस ही राज करेगी और दुर्गाप्रसाद शरीर से, मन से, निराशा से बूढ़ा हो जायेगा। पर कुछ होने-जाने का नहीं। कोई चारा नहीं। उसे लौटाने की ताकत मेरे अन्दर नही है। सुदर्शन दुबे को मैं अपने साथ खींच सकता हूँ। पर पुत्र दुर्गाप्रसाद मेरे काबू से बाहर है—

विधि निषेध के बन्धन, जग के
व्यंग कहाँ उपहास कहाँ?
ताने भो ताने सुनने का
समय वहाँ अवकाश कहाँ?
निज पथ पर चलते रहते हो
मिला तुम्हें गति का निर्वाण
दूर देश के अथक पथिक है
हे कवि, हे अद्भुत, अनजान!

कवि दूर-देश का अनजान पथिक है। वह राही है, इसलिए उसे राह का बोझ उठाना ही पड़ता है। कवि केवल बोलना चाहता है। जीवन-क्रम में उस बोलने का अन्त नहीं होता। 'दिन की जितनी कथाएँ हैं, चांदनी रात, बादल, प्रकाश की छटा—मैं उसे ही कहता जाता हूँ।' मैं बोल रहा हूँ, पर तुम सुन नहीं सकती। तुम बोल भी नही सकती। तुम बोलती नहीं, सुनती नही, फिर

भी तुम पाषाणी अहल्या नहीं हो। रक्त-मांस से बनी रूपसी स्त्री हो। तुम्हारा कर-स्पर्श मोहक है। तुम्हारे शरीर की लुभावनी और शान्त उष्णता आकर्षक है। तुम्हारी सेवा सुन्दर है। फिर भी तुम्हारी गहरी काली आँखों में प्राण का प्रकाश नहीं है। तुम्हारी घनी, काली, मृदु सुगन्धित केशराशि में कामना नहीं काँपती, तुम सुनती नहीं हो, फिर भी तुम्हें मालूम है कि मैं क्या चाहता हूँ, तुम्हें क्यों यहाँ आना पड़ता है और कब तुम्हें चले जाना पड़ता है। तुमसे कुछ भी नहीं माँगना पड़ता, तुमसे कुछ भी नहीं कहना पड़ता। बात करता हूँ, पर तुम्हारे चेहरे पर कोई भी भाव-परिवर्तन नहीं दिखायी पड़ता। मैं रात के एकान्त में कितना-कुछ कह जाता हूँ, एकमात्र जीवित प्राणी तुम मेरे साथ रहती हो, पास में रहती हो, फिर भी सुन नहीं पातीं। तब भी इतनी रात को जब सोने आता हूँ तो तुम्हारी यह मौन संगति मुझे अच्छी लगती है। तुम सेवा करती हो।'

हम भी सेवा करते हैं। हम देश के नेता नहीं, देशसेवक हैं। बहुत साल पहले देश की मुक्ति के लिए दीक्षित होकर हम संग्राम में कूद पड़े थे। दुनिया की सबसे बड़ी हिंसक शक्ति को अहिंसा से पराजित करके हम लोगों ने हिन्दुस्तान का एक अनोखा इतिहास बनाया है।

—'भाइयो और बहनो, साथियो! आप एक पल के लिए भी उस गौरवमय इतिहास को न भूलें! हममें से कोई भी नेता नहीं है। हम अभी तक भारतमाता के आज्ञाकारी सैनिक हैं। परिस्थिति के बदल जाने से कर्तव्य का रूप ही बदल जाता है। पुण्य-दीप्त कुरुक्षेत्र के दो युध्यमान शिविरों के बीच खड़े होकर भगवान कृष्ण ने अर्जुन को समझाया था कि उस परिस्थिति में उसका कर्तव्य वध करना है, दुर्योधन को परास्त करना और युद्ध जीतना है। आज हमारे कर्तव्य का रूप ही बदल गया है, पर उनकी अन्तरात्मा नहीं बदली है। अब हमने शासन की जिम्मेदारी अपने हाथों में ली है, पर यह भरत के अयोध्या का राज-काज सँभालने के ही बराबर है। भरत श्रीरामचन्द्र की स्वर्णखचित पादुका लेकर अयोध्या लौटे थे। वही पादुका राज्य में न्याय-विचार करती थी। हमने भी देश के आबालवृद्ध की ओर से शासन की जिम्मेदारी उठायी है। सारे देशवासियों की उच्चरित-अनुच्चरित आज्ञा, उनकी कामनाएँ, उनकी आशाएँ, उनके दु:ख और उनकी कमियाँ—यही सब जनता के शासन को कल्याणकारी पथ पर ले जा रही हैं। ऊपरी दृष्टि से आपको ऐसा लग सकता है कि सत्ता पाकर हम आरामतलब और विलासी हो गये हैं, हम अंग्रेजों द्वारा छोड़े गये महलों में रहते हैं, मोटरों पर सफर करते हैं, जनता से बड़ी दूर जा चुके हैं। पर भाइयो, मेरा नम्र निवेदन है कि यह आप लोगों की गलत-फहमी है। हमें याद है कि पिछले विश्वयुद्ध से पहले भी अंग्रेजों ने एक बार

हमें मन्त्रिमण्डल में शामिल होने को कहा था, पर जिस क्षण हमारे नेताओं ने संघर्ष का निर्णय किया, देशवासियो की 'आओ लड़ें' की पुकार आयी—बस, उसी क्षण हम लोग सबकुछ त्यागकर फिर सेनानी के साज में मोर्चों पर आ डटे। हम लोगों का असली परिचय यही है। अगर यही पुकार फिर कभी आ जाये तो हम, जो शासन चला रहे हैं और राजमहलों में रह रहे हैं, फिर आगे बढ़कर जनता का नेतृत्व करेंगे। साथियो, हममें से किसी का भी शरीर अक्षत नही है। हमारे बीच ऐसा कोई नही है, जिसके शरीर पर अंग्रेज-पुलिस के अत्याचार का निशान न हो, या जिसकी आत्मा अरसे तक जेल की यातना से जर्जर न हुई हो। भाइयो और बहनो, आप जान लें कि हम कभी नही भूलते, कभी नही भूलते। अगर परदेशी दुश्मन फिर कभी हमारी पुण्यभूमि भारत की स्वतन्त्रता को खतरे में डाले या देश के अन्दर के देशद्रोही हमारे मुल्क को कमजोर, अपाहिज, नि.स्व बनाने के लिए खड़े हों, तो हम फिर से सैनिक बनकर आपकी बगल में आ खड़े होगे, आपसे आगे ही रहेगे, पीछे कभी नही।'

उस दिन बड़े जोर से तालियाँ बजी थी। शरत्‌काल मे विशाल गाधी मैदान में बहुत बडी सभा थी। भीड का वारापार नही था। स्वतन्त्रता की पहली वर्षगाँठ। तालियाँ बजाते-बजाते जनता उन्मत्त हो उठी। दुर्गाभाई ने कहा था, 'ऐसे ओजस्वी भाषण उन्होने अपनी जिन्दगी मे बहुत नही सुने।' जानती हो, मैंने उस दिन क्या किया था? जनता का उल्लास देखकर मैं रो पड़ा था। स्वतन्त्रता हमारे देशवासियो को इतनी प्रिय है, स्वतन्त्रता उनकी छाती में ऐसे पुलक की लहर ला देगी—यह हम पहले नही सोच पाये थे। सच कहा जाये तो उस दिन जिस ढंग से स्वतन्त्रता सामने आ गयी थी, उससे हमारे बीच बहुतेरे सहम गये थे। अन्त तक उन्हीं अंग्रेजों के साथ हमने हाथ मिलाया, उनसे कहा कि तुम और चाहे जो करो, पर कम-से-कम दिखावे के लिए तो विदा हो जाओ। अंग्रेजों ने हमारे देश के दो टुकड़े कर दिये, इसे सब दिन के लिए अपाहिज बना दिया। स्वतन्त्रता पाकर हमने अंग्रेजों को गले लगा लिया और एक-दूसरे का गला काटने लगे—हम हिन्दू, हम मुसलमान। पर आजादी का एक और भी पहलू है, जो देश की जनता के मन में जागरण की बाढ़-सी ले आया है, जिसने दासता की मलिनता धोकर जनता का सिर ऊँचा कर दिया है—उसका परिचय मैंने उस दिन की सभा में पाया। मेरा हृदय बार-बार काँप उठा था। मन में लगा था कि यदि इस आश्चर्यजनक शक्ति का हम ठीक-ठीक उपयोग कर सकें, तो हिन्दुस्तान का भविष्य जरूर चमक उठेगा।

दुर्गाभाई भी जरूर डर गये थे। इसीलिए वह मेरे भाषण के बाद राम-चरितमानस से राम-भरत-मिलन प्रसंग की आवृत्ति करने लगे—

सभा सकुच बस भरत निहारी।
रामबन्धु धरि धीरजु भारी॥
कुसमउ देखि सनेहु सँभारा।
बढ़त बिन्धि जिमि घटज निवारा।
सोक कनक लोचन मति छोनी।
हरी विमल गुन गन जगजोनी॥
भरत बिबेक वराह बिसाला।
अनायास उधरी तेहि काला॥
करि प्रनामु सब कहँ कर जोरे।
रामु राउ गुरु साधु निहोरे॥
छमब आजु अति अनुचित मोरा।
कहउँ बदन मृदु बचन कठोरा॥
हिय सुमिरी सारदा सुहाई।
मानस तें मुखपंकज आई॥
बिमल विवेक धरम नय साली।
भरत भारती मंजु मराली॥

जनता शान्त हो गयी। थोड़ी देर पहले का उन्मत्त कर देनेवाला तूफान मानो शान्त पड़ गया। जनता दुर्गाभाई के साथ मिलकर तुलसीदास की चौपाई गाने लगी—

बिमल बिबेक धरम नय साली।
भरत भारती मंजु मराली॥

बाद में एक दिन दुर्गाभाई ने कहा था, 'स्वराज्य हो या चाहे जो हो, जनता को उत्तेजित नहीं होने देना चाहिए। ऐसा होने से वह अहिंसा भूल जायेगी, उच्छृंखल हो जायेगी। उसे फिर शान्त नहीं किया जा सकेगा। इसीलिए तो गांधीजी ने जननायक होते हुए भी जनता को कभी पागल नहीं होने दिया, उसे हमेशा शान्त ही रखने की कोशिश की। चौरीचौरा याद है न? उन्होंने सत्याग्रह-आन्दोलन रोक दिया, परन्तु जनता को हिंसा की राह पर नहीं बढ़ने दिया।'

समझ में आया? जनता को शान्त रखना कोई आसान काम नहीं है। गांधीजी ऐसा कर सकते थे, क्योंकि वह स्वयं शान्तचित्त थे। मेरे चित्त को भी अब शान्त रहना चाहिए। तीन बीसी और दस पूरा होने में अब बहुत देर नहीं है। अब तो शान्त होकर अपने सामने अपार शान्ति देखने के लिए जनता को तैयार करना चाहिए। सूरदास के साथ आवाज मिलाकर अब तो दिन रात गुनगुनाना है—'अँखियाँ हरिदर्शन की प्यासी'। पर मेरा चित्त सदा ही अशान्त

रहता है। जनता के सामने खड़े होकर भी मैं कभी शान्त नहीं रह सका। कैसे तो अनजाने डर, अनचीते आतंक ने मेरे मन में भीड़ इकट्ठी कर रखी है। बार-बार मुझे लगा है कि ये अनगिनत मनुष्य, आज जो चुपचाप बैठकर मेरी बातें सुन रहे हैं, तालियाँ बजा रहे हैं, यदि ये एकाएक उन्मत्त हो उठें तो ? एकाएक यदि ये माँगने लगें—'अन्न दो, वस्त्र दो, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार दो, रहने के लिए मकान, रास्ता, उन्नत कृषि-व्यवस्था, नये-नये शिल्प-उद्योग, सबकुछ दो ?' अगर 'दो-दो' का शोर मचाते हुए ये आगे बढ़कर आग की तरह भड़क उठें तो ? तो इतनी साध से बने गणतन्त्र का क्या हाल होगा ? गणतन्त्र का यह जो समाजवादी ढाँचा है, इसका क्या होगा ? इतने दिनों की हमारी देशसेवा का क्या हाल होगा ?

पर उद्वेलित जनता को शान्त करने के लिए एक बार भी दुर्गाभाई की तरह मेरी जबान से रामचरितमानस के अमृतमय दोहे, चौपाई नहीं निकल पाये, बल्कि मन के किसी गँदले गढ़े में छिपाये हुए पाप की दबी-दबी आवाज आती रही है—जनता नहीं जागेगी···खैरियत है कि भारत की जनता नहीं जागेगी। अपनी माँगों को लेकर कभी भी भभककर नहीं जलेगी। याद रहे कि यह हिन्दुस्तान की जनता है। चार हजार सालों में भी यह नहीं जागी, यह चिरकाल से सोयी रही है, कदा-कदा करवट बदलती है। फिर सो जाती है मुर्दों के टीले की तरह।

जनता की ओर देखकर मन में और भी क्या-क्या आया, मालूम है ? लगा कि एक विशाल नदी जिन्दगी की अनगिनत लहरें लिये सामने से बहती जा रही है। उसे देखते ही फिर एक अदृश्य आतंक मन पर छा जाता है—यदि यही नदी समुद्र बनकर भयंकर गर्जन से हमारी ओर हहराकर बह पड़े तो ? दुर्गाप्रसाद ने एक दिन कहा था—'देशवासी चिरकाल तक आप लोगों के हुक्म से ही उठते-बैठते रहेंगे, ऐसा नहीं होगा। एक-न-एक दिन वे प्रश्न करेंगे ही, और अपने प्रश्नों का उत्तर भी चाहेंगे। एक दिन उनके साथ आप लोगों का आखिरी मुकाबला होगा।' दुर्गाप्रसाद इस देश के लोगों को नहीं पहचानता। यह हमेशा मेरे या सुदर्शन दुबे या ऐसे किसी और के संकेतों से परिचालित होते रहेंगे। आज जो लोग इस जनता को बहकाने के व्यर्थ प्रयास में अपनी जिन्दगी के दिन खराब कर रहे हैं, वे भी उसे अपने संकेतों पर ही चलाना चाहते हैं, स्वयं उसके संकेतों पर नहीं चलते।

तुम्हारे कान में चुपके-से बताऊँ। जनता नारी की तरह है। किसी से भी वह सन्तुष्ट नहीं हो पाती। उसकी भोग-सम्भोग-वासना का वारापार नहीं। उसे कृतज्ञ होना नहीं आता। रामायण में महर्षि अगस्त्य ने श्रीरामचन्द्र से कहा था, सृष्टि के आदि से स्त्री की यही प्रकृति है। वह सम्पन्न व्यक्ति के

प्रति अनुरक्त होती है और विपत्तिग्रस्त को त्यागती है। उसकी चपलता विद्युत की तरह होती है। उसकी तीक्ष्णता अस्त्र की तरह होती है और क्षिप्रता गरुड़ और पवन की तरह होती है—'एषा हि प्रकृतिः स्त्रीणां आसृष्टे रघुनन्दन ! समस्थमनुरंज्यन्ते, विषमस्थं त्यजन्ति च ॥' और तो और, सीता भी लक्ष्मण के प्रति कितनी जल्दी सन्देह कर बैठी थी, याद है ? रामचन्द्र मृगरूपी मारीच के पीछे-पीछे बहुत दूर जाकर भटक गये थे। एकाएक मारीच रामचन्द्र के कण्ठ-स्वर की नकल करके चिल्ला उठा—'लक्ष्मण ! लक्ष्मण !' सीता ने व्याकुल होकर लक्ष्मण को राम की खोज में जाने के लिए कहा, पर सीता को अकेली छोड़ने में विपत्ति समझकर लक्ष्मण जा नहीं पा रहे हैं। इसी समय वाल्मीकि ने सीता के मुख से क्या कहलाया है, मालूम है ?

अहं तव प्रियं मन्ये रामस्य व्यसनं महत्।
रामस्य व्यसनं द्रष्ट्वा तेनैतानि प्रभाषसे ॥
नैतच्चित्रं सपत्नेषु पापं लक्ष्मण यद्भवेत्।
त्वद्विधेषु नृशंसेषु नित्यं प्रच्छन्नचारिषु ॥
तन्न सिध्यति सौमित्रे तवापि भरतस्य वा।
कथमिन्दीवरश्यामं रामं पद्मनिभेक्षणाम् ॥
उपसंश्रित्य भर्तारं कामयेयं पृथग्जनम्।
समक्षं तव सौमित्रे प्राणांस्त्यक्ष्याम्यसंशयम् ॥

सीता कह उठीं—'लक्ष्मण, तुम राम की महाविपत्ति की कामना करते हो। तुम निष्ठुर, कपटी, ज्ञातिशत्रु हो। तुम पाप करोगे, इसमें आश्चर्य क्या है ? तुम्हारी या भरत की मनोकामना कभी सिद्ध नहीं होगी। तुम सोच रहे हो कि राम मर जायें तो मैं तुम्हारी काम-प्रार्थी हो जाऊँगी। पर एक बार जिस नारी ने इन्दीवरश्याम, पद्मनेत्र रामचन्द्र को पा लिया है, वह कभी किसी और की कामना नहीं कर सकती।'

महाभारत में पाण्डव-शिविर में सबसे असन्तुष्ट, अतृप्त विद्रोही कौन था ? द्रौपदी। द्रौपदी के कटुवचनों ने बेचारे युधिष्ठिर के मन पर बार-बार कठोर आघात किये हैं। जनता भी स्त्रियों की ही तरह चिर-अतृप्ता है। उसे जितना भी दिया जाय, वह और चाहेगी। यह कभी नहीं कहेगी कि अब नहीं, बहुत हुआ। दिन का काम और रात का आराम—जनता सब ग्रस लेगी, फिर भी उसे तृप्ति नहीं मिलेगी।

तुम भी न जाने कैसी लास्यमयी हो उठी हो। तुम्हारी जबान में शब्द नहीं है, मन में कुछ है क्या ? एक भी अक्षर तो तुम नहीं सुन पातीं। किसी ने कभी तुम्हारे मुँह से कोई बात सुनी है ? तुम कौशल्या नहीं हो, मैं भी वह कृष्ण द्वैपायन कौशल नहीं रहा। कौशल्या की आँखों में स्वप्न, मोह और कामना

की छाया नाचती रहती थी। चम्पक के फूल की तरह रंग। दो काली-काली आँखें। चंचल हरिणी की तरह थिरककर बातें करती। कौशल्या की ठुड्डी पर एक काला-सा तिल था। 'चुनि चुनि भए कांचुग्र फाटलि'—पहले-पहल तो कौशल्या ऐसी थी, फिर 'धन-धन ग्रांचर कुचयुग कांचर हँसि-हँसि तहि पुनि हेरि'। शकुन्तला को भी एक दिन किसी मुहूर्त में वल्कल वस्त्र बहुत तंग महसूस हुआ था। एक दिन कृपाणपुर स्कूल का निरीक्षण करते समय जब मैंने पहली बार कौशल्या को देखा था, उस दिन भी कालिदास का शकुन्तला का वर्णन मुझे याद आया था, 'नाति-परिस्फुट-शरीर लावण्य।' शरीर में तब तक पूरा लावण्य नहीं खिल पाया था। एक अपूर्व देहलता बहुत-सारे आश्वासन दे रही थी। फिर एक दिन वही देहलता गुच्छे-गुच्छे फूलों की तरह प्रस्फुटित हो उठी। 'मुनिमनसामपि मोहनकारिणी तरुणाकारण बन्धो' हो उठी थी कौशल्या उस दिन। मुनियों के मन को भी मोहित और तरुण मन को अकारण ही उच्छृंखल देनेवाली हो गयी थी वह। मैं मुनि नहीं हूँ। मैं प्रजापालक हूँ। मैं कवि हूँ। तुम मुझे विभ्रान्त नहीं कर सकोगी। कौशल्या के बाद और कोई नहीं ऐसा कर सकी। नहीं, वह भी नहीं कर सकी, जिसका नाम सरोजिनी सहाय है। प्रजापालन के कामों के बीच वह कृष्ण द्वैपायन जाने कहाँ खो गये। मरने से पहले एक बार उनके साथ राजा कृष्ण द्वैपायन का कभी मुकाबला होगा? 'कृष्णलीला' अब फिर कभी नहीं। अब तो नया काव्य आज का काव्य होगा। आँखों देखे, मन से पहचाने लोगों को लेकर कृष्ण द्वैपायन एक महाकाव्य लिखना चाहते हैं। उनसे यह हो भी सकेगा?

'रात का अन्तिम प्रहर है,
झिलमिलाते हैं सितारे,
वक्ष पर युगबाहु बाँधे,
मैं खड़ा सागर किनारे।
वेग से बहता प्रभंजन,
केशपट मेरे उड़ाता,
शून्य में भरता उदधि—
उर की रहस्यमयी पुकारें।
इन पुकारों की प्रतिध्वनि,
हो रही मेरे हृदय में।
है प्रतिच्छायित जहाँ पर,
सिन्धु का हिल्लोल-कम्पन,
तीर पर कैसे रुकूँ मैं,
आज लहरों में निमन्त्रण।

लहरों में निमन्त्रण ! लहरें बार-बार मुझे पुकार रही हैं । अथाह जल का ग्रावाहन हो रहा है । सबकुछ छोड़कर अजाने-अचीन्हे के बीच निरुद्देश्य खो जाना था। पर राजनीति के आसन पर डटा बैठा रहा। फिर राजसिंहासन पर ! बहुत दिनों से उदयाचल का बेताज बादशाह हूँ । एक बार यह मिल गया है, तो अब छोड़ने का नहीं । प्रजापालन में कोई त्रुटि नहीं होने दी । गणतन्त्र कहो चाहे समाजवाद, यह प्राचीन भारत है । यहाँ जो राज-काज देखता है, वह राजा ही होता है । जनता प्रजा है । मैं राजा की तरह ही उसे पालता आ रहा हूँ, पल-भर भी आराम नहीं किया । अविश्रमो लोकतन्त्राधिकारः । लोकतन्त्र में जो अधिकारी बना है, जो राजा है, उसे आराम कहाँ ? यह तो सूर्य की तरह अनन्त-अविराम पृथ्वी की प्रदक्षिणा करता रहता है, वायु की तरह दिन-रात एक समान प्रवाहित होता रहता है, अनन्त देव की तरह 'सदैव वाहित भूमिभारः' है । मैं भी कवि की भूमिका की अपेक्षा राजा की भूमिका में ज्यादा उलझ गया हूँ । उदयाचल के गगन पर सब दिन सूर्य की तरह गौरवशाली बनकर जगमगाते रहना चाहा है । मेरे हाथ गन्दे नहीं हैं, गन्दगी मेरे मन को भी नहीं छू पायी है । दुर्गाप्रसाद के चले जाने के बाद दूसरे लड़कों के लिए मैंने जो कम-से-कम हो सकता था, उतना ही किया है, जितना मैंने किया है, अगर उतना न करता तो भविष्य में कृष्ण द्वैपायन कौशल का बेटा कहकर परिचय देने लायक उनकी सामाजिक मर्यादा न होती । हाँ, एक मकान मैंने बनवाया है । बहुत दिनों की अपूर्ण साध पूरी कर ली मैंने । उसमें भी मैंने ऐसा कुछ नहीं किया है जो गैर-कानूनी हो । उदयाचल के मुख्यमन्त्री के जीवन में कोई स्त्री नहीं है, यह बात सबको मालूम है । तुम तो परिचारिका मात्र हो ।

नींद आ रही है । तुम अच्छी लग रही हो । नरम-नरम, तुम्हारी शर्म मेरे मन को भा रही है । नींद से आँखें भारी हो रही हैं । मेरा नाम जानती हो ? कृष्ण द्वैपायन । यानी वेदव्यास । महाभारत के रचयिता । मैं भी नये महाभारत के उदयाचल-पर्व का रचयिता हूँ । कृष्ण द्वैपायन के जन्म की कहानी जानती हो ? उनके पिता पराशर मुनि थे । एक दिन मत्स्यगन्धा सत्यवती अपने पिता की आज्ञा से अपनी नाव पर लोगों को यमुना के पार उतार रही थी । ऋषि पराशर भी आकर नाव पर बैठे । सत्यवती को देखकर पराशर कामातुर हो उठे । उन्होंने समागम की कामना की । सत्यवती ने कहा, 'इस स्थान पर नाव में इतने लोगों के सामने वह कैसे सम्भव होगा ?' ऋषि पराशर ने कुहासे की सृष्टि की और बोले, 'मेरे साथ समागम के बाद भी तुम्हारा कौमार्य बना रहेगा । तुम मत्स्यगन्धा हो, पर अब सुगन्धयुक्ता बन जाओगी ।' सत्यवती को फिर आपत्ति का कोई कारण नहीं रहा । कुहासे की आड़ में पराशर-सत्यवती के समागम के फलस्वरूप वेदव्यास का जन्म हुआ । कृष्ण द्वैपायन । जन्म से ही

ध्यानमग्न, पर जीवन से विमुख नहीं। बाद में सत्यवती शान्तनु की रानी बनी थी। शान्तनु से सत्यवती को दो पुत्र हुए, चित्रांगद और विचित्रवीर्य। दोनों निःसन्तान ही मर गये। तब सत्यवती ने कृष्ण द्वैपायन को बुलाकर आदेश दिया कि वह उन दोनों की पत्नियों—अम्बिका और अम्बालिका—के गर्भ से पुत्र उत्पन्न करें। आजन्म तपस्वी कृष्ण द्वैपायन ने माता की आज्ञा का पालन किया। बोले, 'माता, केवल धर्मपालन के उद्देश्य से ही मैं आपके इच्छानुसार कार्य करूँगा।'

कृष्ण द्वैपायन ने यह भी कहा कि दोनों रानियों को एक वर्ष तक व्रत करके शुद्ध होना पड़ेगा। सत्यवती सहमत नहीं हुई। बोली, 'अभी ही रानियों को पुत्र चाहिए।' कृष्ण द्वैपायन ने कहा, 'तो फिर मेरा कुत्सित रूप, शरीर की दुर्गन्ध और गन्दे वस्त्र उन्हें सहन करने पड़ेंगे।' सत्यवती ने बहुत समझा-बुझाकर अम्बिका को शयन-कक्ष में भेजा। अम्बिका शैय्या पर पड़ी-पड़ी भीष्म और दूसरे वीरों का स्मरण करती रही। तभी प्रकाशमान-कक्ष में कृष्ण द्वैपायन ने प्रवेश किया। उनका काला रंग, आग्नेय दृष्टि और पिंगल जटा देखकर अम्बिका ने भय से नेत्र मूँद लिये। माता के अपराध से पुत्र धृतराष्ट्र अन्धा हुआ। अम्बालिका ने नेत्र नहीं मूँदे, पर भय से उसका चेहरा पीला पड़ गया। माता के अपराध से बेटा पाण्डुवर्ण का हुआ।

मैं कृष्ण द्वैपायन हूँ—के० डी० कौशल। के० डी० वेदव्यास का उत्तराधिकारी। आजन्म तपस्वी नहीं हूँ। ब्राह्मण-सन्तान हूँ। ब्राह्मण होकर भी राजा हूँ, इसीलिए मैं विश्वामित्र हूँ। हम सब एक-एक विश्वामित्र हैं—मैं, सुदर्शन दुबे, दुर्गाभाई देसाई। हमारे हाथों से नये महाभारत का सृजन हो रहा है। हमने भी विश्वामित्र की तरह क्षत्रिय-बल को धिक्कारा है। विश्वामित्र ने कहा था, 'ब्रह्मतेजोबलं बलम्।' उन्होंने ही कहा था, 'बलाबलं विनिश्चत्य तप एव परं बलम्।' बलाबल देखकर निश्चित ज्ञान प्राप्त हो गया कि तपस्या ही परम बल है। राजनीति हमारी तपस्या है। हम इस युग के विश्वामित्र कहा करते हैं कि राजनीति ही परम बल है।

कल शाम को गांधी मैदान में जनसभा होगी। कृष्ण द्वैपायन कौशल की विजय पताका फहरायेगी। उदयाचल कांग्रेस में पूर्ण एकता हो जाने से जनता प्रसन्न होगी। के० डी० कौशल के फिर से राजा बन जाने के कारण वह उनका अभिनन्दन करेगी। सुदर्शन दुबे भाषण देंगे। दुर्गाभाई देसाई भाषण देंगे और सरोजिनी सहाय भी। गांधीवाद के साथ तरुण समाजवाद भी मिल जायेगा, नीतिवादियों के साथ नीति-विमुख लोगों का सम्मिलन होगा। कृष्ण द्वैपायन की जयध्वनि से रत्नपुर का आकाश गूँजने लगेगा। पर गंगाजल से पवित्र काशी तक वह जयध्वनि नहीं पहुँच सकेगी।

फूलों की माला के बोझ से कृष्ण द्वैपायन नहीं झुकेंगे। कल विजय का मणि-हार उनके गले में खूब शोभा देगा। जन-समुद्र की ओर देखते हुए फिर उनकी छाती काँप उठेगी—वही पुरानी कँपकँपी। *अब कृष्ण द्वैपायन जनता को* भड़काना नहीं चाहेंगे। जनता नदी बनकर ही रहेगी, समुद्र बनकर नहीं। जनता 'दो-दो' की माँग की आग से भभकती हुई आगे नहीं बढ़ेगी।

तुम लोग मेरा अभिनन्दन करने आये हो? दो, माला दो, फूलों का हार दो, मणि-हार दो, मैं तुम्हारा मुख्यमन्त्री हूँ। गणतन्त्र का राजा हूँ। तुमने ही वोट देकर मुझे राजा बनाया है। मैं इस युग का गोपालदेव हूँ। तुम लोगों ने मुझे राजा क्यों बनाया? मैं तुमसे बहुत बड़ा हूँ, बहुत ऊँचा हूँ, इसीलिए। शक्ति का कैसे सदुपयोग किया जाये, यह मुझे मालूम है, इसीलिए। मुझे शासन-कौशल मालूम है, इसीलिए। मैं तुम लोगों के बारे में सब-कुछ जानता हूँ। साढ़े पाँच साल तक मैंने तुम्हारे ऊपर राज किया, अभी बहुत दिनों तक और भी ऐसा करता रहूँगा, जब तक इस शरीर में ताकत रहेगी, तब तक। तुम लोग मुझे हरा नहीं सकोगे। मैं तुम्हारी कमजोरियों को खूब अच्छी तरह जानता हूँ, इसीलिए तुम्हीं लोग हारते रहोगे। सिर्फ मुझे ही क्यों, कांग्रेस को भी तुम लोग कभी नहीं हरा सकोगे। तुम्हारी पुरानी कमजोरियों के कारण ही तो कांग्रेस की ताकत बनी है। भूखों मरते हुए भी तुम कांग्रेस को ही वोट दोगे। पुराना भारतवर्ष एक-जैसा ही चल रहा है, उसका बाहर का चेहरा भले ही बदला हो, पर भीतर का नहीं। तुम लोगों ने एक बार मुझे हराना चाहा, पर तुम्हीं हारे। फिर ऐसा चाहोगे तो फिर तुम्हीं हारोगे। कांग्रेस को हराना चाहो, तब भी तुम्हीं हारोगे। तुम लोग जो कांग्रेस को हराना चाहते हो, यह नहीं जानते कि यही कांग्रेस रोज-रोज तुम्हें कमजोर बनाती जा रही है। कांग्रेस की तरह कृष्ण द्वैपायन कौशल भी कुहासे की आड़ से तुम्हारी कमजोरियों को बढ़ा देंगे, तुम्हारी कमजोरियों से खेलेंगे और मरते दम तक तुम्हारे ऊपर राज करते रहेंगे।

मैं तुम्हारी भलाई करूँगा, तुम्हारा कल्याण करूँगा, राजा जो हूँ! तुम्हारा मंगल ही मेरी एकमात्र कामना है। तुम लोग शान्त, सुशील प्रजा हो और मैं न्यायवान, सच्चा और प्रजावत्सल राजा हूँ। तुम्हारे निवेदन मैं गौर से सुनूँगा। तुम्हारे लिए और भी बहुत-कुछ करूँगा देख लेना, उदयाचल में और भी सड़कें बनेंगी। नदियों के ऊपर बाँध बनेंगे। बिजली का उत्पादन बढ़ेगा। नये-नये कारखाने खुलेंगे। कृषि की तरक्की होगी। ढेर-सारे विद्यालय और अस्पताल बनेंगे। फिर भी तुम्हारे पेट में भूख बनी ही रहेगी। घर-घर में युवक बेकार रहेंगे। सत्तर प्रतिशत से ज्यादा लोग निरक्षर रहेंगे। हर गाँव में भारत का वही पुराना अन्धकार छाया रहेगा और हर पाँचवें साल विवश, शान्त और

सुशील जनता—तुमको, कांग्रेस को वोट देती रहेगी।

मेरे शासन का मूल मन्त्र रहेगा—द, द, द।

पुराने जमाने में प्रजापति ने स्वयं विद्यादान के लिए एक आश्रम खोला था। कुल तीन छात्रों में एक देवता, दूसरा दानव और तीसरा मानव था। बारह वर्ष तक विद्यादान के बाद समावर्तन के समय प्रजापति ने उन्हें बुलाया—शिष्य गुरु से अन्तिम उपदेश लें।

पहले देवता आया। प्रजापति के चरणों में प्रणाम करके कहा, "गुरुदेव, मुझे कुछ उपदेश दीजिए।"

प्रजापति ने कहा, "द।"

शिष्य ने फिर से प्रणाम किया तो प्रजापति ने मुस्कराकर पूछा, "समझ गये ?"

"हाँ। आपने मुझसे कहा, "दाम्यत' अर्थात् दमन करो।"

अब मानव आया, उसने भी उपदेश मांगा।

प्रजापति ने फिर कहा, "द।"

मानव प्रणाम करके खड़ा हो गया।

"समझ गये ?"

"जी हाँ, आपने मुझसे कहा है, 'दत्त' अर्थात् दान करो।"

अब दानव आया। उसकी उपदेश देने की प्रार्थना सुनकर फिर प्रजापति ने कहा, "द।"

फिर पूछा, "समझ गये ?"

"जी हाँ, आपका उपदेश है, 'दमध्वम्'। दया करो।"

बरसात में आकाश जब बादलों से छा जाता है, मेरा मन विषण्ण और गम्भीर हो उठता है, तब उसी गम्भीरता के साथ ताल मिलाकर मेघ भी गरजने लगते हैं। वे क्या कहते हैं, जानती हो ?

वही जो उपनिषद के ऋषियों ने कहा है—द, द, द।

प्रजापति का वही अमर उपदेश—द, द, द।

देवता, तुम्हारी शक्ति की कोई सीमा नहीं है। तुम चाहो तो सारी सृष्टि का ध्वंस कर सकते हो। इसीलिए तुम 'दाम्यत' हो। दमन करते हो। आत्मदमन करते हो।

मानव, तुम लालची हो। सदैव भोग की इच्छा से आतुर रहते हो। इसीलिए तुमसे 'दत्त' कहा गया। दान करो। दस के साथ मिलकर भोग करो।

दानव, तुम्हारा मन्त्र है हिंसा। हिंसा से तुम स्वयं जलते हो और दूसरों को भी उत्पीड़ित करते रहते हो। इसीलिए तुम 'दमध्वम्' हो। दया करो। सबको क्षमा करो।

मनुष्य, तुम एक ही में देवता, मानव और दानव हो।

तुम्हारी क्षमता असीम है। तुम सृष्टि का विनाश कर सकते हो। तुम्हारे लोभ का कोई अन्त नहीं है। धरती का रक्त-मांस सबकुछ तुम भोग सकते हो, और हिंसा से सबकुछ जला सकते हो।

इसीलिए प्रजापति ने तुमसे कहा है—द, द, द। दमन करो, दान करो, दया करो।

कृष्ण द्वैपायन कौशल, तुम उदयाचल के राजा हो। तुम मुख्यमन्त्री हो। द, द, द।

उदयाचल के मुख्यमन्त्री श्री कृष्ण द्वैपायन कौशल सो गये।

बाहर बादलों का मृदु गर्जन सुनायी दिया—द, द, द।

कमरे के अन्दर नाक से गुरु गर्जन होने लगा—द, द, द।

जगमोहन अवस्थी दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया।

देखा, एक निपट गूंगी और बहरी सुन्दरी स्त्री सोते हुए कृष्ण द्वैपायन के चेहरे की ओर देख रही है।

उसे यह जरूरी नहीं लगता कि अपनी अस्तव्यस्त वेश-भूषा को वह ठीक कर ले।

सुशील जनता—तुमको, कांग्रेस को वोट देती रहेगी।

मेरे शासन का मूल मन्त्र रहेगा—द, द, द।

पुराने जमाने में प्रजापति ने स्वयं विद्यादान के लिए एक आश्रम खोला था। कुल तीन छात्रों में एक देवता, दूसरा दानव और तीसरा मानव था। बारह वर्ष तक विद्यादान के बाद समावर्तन के समय प्रजापति ने उन्हें बुलाया—शिष्य गुरु से अन्तिम उपदेश लें।

पहले देवता आया। प्रजापति के चरणों में प्रणाम करके कहा, "गुरुदेव, मुझे कुछ उपदेश दीजिए।"

प्रजापति ने कहा, "द।"

शिष्य ने फिर से प्रणाम किया तो प्रजापति ने मुस्कराकर पूछा, "समझ गये?"

"हाँ। आपने मुझसे कहा, 'दाम्यत' अर्थात् दमन करो।"

अब मानव आया, उसने भी उपदेश माँगा।

प्रजापति ने फिर कहा, "द।"

मानव प्रणाम करके खड़ा हो गया।

"समझ गये?"

"जी हाँ, आपने मुझसे कहा है, 'दत्त' अर्थात् दान करो।"

अब दानव आया। उसकी उपदेश देने की प्रार्थना सुनकर फिर प्रजापति ने कहा, "द।"

फिर पूछा, "समझ गये?"

"जी हाँ, आपका उपदेश है, 'दमध्वम्'। दया करो।"

बरसात में आकाश जब बादलों से छा जाता है, मेरा मन विषण्ण और गम्भीर हो उठता है, तब उसी गम्भीरता के साथ ताल मिलाकर मेघ भी गरजने लगते हैं। वे क्या कहते हैं, जानती हो?

वही जो उपनिषद के ऋषियों ने कहा है—द, द, द।

प्रजापति का वही अमर उपदेश—द, द, द।

देवता, तुम्हारी शक्ति की कोई सीमा नहीं है। तुम चाहो तो सारी सृष्टि का ध्वंस कर सकते हो। इसीलिए तुम 'दाम्यत' हो। दमन करते हो। आत्मदमन करते हो।

मानव, तुम लालची हो। सदैव भोग की इच्छा से आतुर रहते हो। इसीलिए तुमसे 'दत्त' कहा गया। दान करो। दस के साथ मिलकर भोग करो।

दानव, तुम्हारा मन्त्र है हिंसा। हिंसा से तुम स्वयं जलते हो और दूसरों को भी उत्पीड़ित करते रहते हो। इसीलिए तुम 'दमध्वम्' हो। दया करो। सबको क्षमा करो।

मनुष्य, तुम एक ही में देवता, मानव और दानव हो।

तुम्हारी क्षमता असीम है। तुम सृष्टि का विनाश कर सकते हो। तुम्हारे लोभ का कोई अन्त नहीं है। धरती का रक्त-मांस सबकुछ तुम भोग सकते हो, और हिंसा से सबकुछ जला सकते हो।

इसीलिए प्रजापति ने तुमसे कहा है—द, द, द। दमन करो, दान करो, दया करो।

कृष्ण द्वैपायन कौशल, तुम उदयाचल के राजा हो। तुम मुख्यमन्त्री हो। द, द, द।

उदयाचल के मुख्यमन्त्री श्री कृष्ण द्वैपायन कौशल सो गये।

बाहर बादलों का मृदु गर्जन सुनायी दिया—द, द, द।

कमरे के अन्दर नाक से गुरु गर्जन होने लगा—द, द, द।

जगमोहन अवस्थी दरवाजे पर आकर खड़ा हो गया।

देखा, एक निपट गूंगी और बहरी सुन्दरी स्त्री सोते हुए कृष्ण द्वैपायन के चेहरे की ओर देख रही है।

उसे यह जरूरी नहीं लगता कि अपनी अस्तव्यस्त वेश-भूषा को वह ठीक कर ले।